आर्य रत्न प्रो. उत्तम चन्द 'शरर'

अभिनन्दन ग्रन्थ

मेरे अहसास की दुनि[illegible]र कर देखो
फिर न कहना कि कोई [illegible]रा ही न था
-शरर

"मानगीय बहन नन्दिता जी को सप्रेम भेंट"

भेटकर्ता
शशि या आर्य

नवजागरण के पुरोधा

महर्षि दयानन्द सरस्वती

आर्य रत्न

प्रो. उत्तम चन्द 'शरर'

आर्य रत्न प्रो. उत्तम चन्द 'शरर'

अभिनन्दन ग्रन्थ

अप्रैल २००३
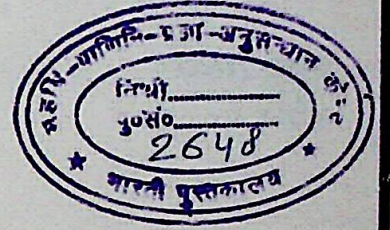
सम्पादक मण्डल

डॉ. राणा प्रताप गन्नौरी
प्रमुख सम्पादक

श्री सुधीर शास्त्री

श्री टेकचंद गुलाटी

प्रकाशक
प्रो. उत्तमचंद 'शरर' अभिनंदन समारोह समिति
पानीपत

आर्य रत्न प्रो. उत्तम चंद 'शरर' अभिनंदन ग्रंथ

प्रकाशक :
प्रो. उत्तम चंद 'शरर' अभिनंदन समारोह समिति, पानीपत-१३२१०३

प्रथम संस्करण
अप्रैल २००३

मूल्य : ३००/- रुपये

प्राप्ति का स्थान :

१. राजेश आर्य, ८०६, सै. १२, हुड्डा, पानीपत-१३२१०३
२. आर्य प्रकाशन, कुण्डेवालान, अजमेरी गेट, नई दिल्ली
३. सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, ३/५ आसिफ़ अली रोड, नई दिल्ली
४. डॉ. राणा प्रताप गन्नौरी, १५६०, सै. १२, हुड्डा, पानीपत

मुद्रक : मयंक प्रिन्टर्स, २१९९/६४, नाईवाला करोल बाग, नई दिल्ली-५
दूरभाष : २५७८३४०९, २५७५१३३०

"मनुष्य उसी को कहना जो मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दुःख, हानि-लाभ को समझे। अन्यायकारी बलवान से न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे।"

महर्षि दयानंद सरस्वती

"मनुष्यों को चाहिए कि जो इस जगत् में श्रेष्ठ विद्वान् हैं, उनके प्रति सदैव प्रिय वचन कहें और अनुकूल आचरण करें और उनके गुण, कर्म, स्वभावों को अपने में ग्रहण करें।"

महर्षि दयानंद सरस्वती

सर्वस्व त्यागी पं. लेखराम आर्य मुसाफ़िर

क्या विचित्र विह्वलता लेकर तू आया था॥

दीपक पर जलते पतंग को भी देखा है।
तेरे भावों की उमंग को भी देखा है॥
वह जलता है पर जैसे कुछ सोच सोचकर।
दीपक के चहुं दिश मंडरा, साहस बटोर कर॥
पर तू सीधा दीपक की लौ से टकराया।
तेरी विह्वलता को रुकना तनिक न भाया॥
क्या अरमान हृदय में जलने के लाया था।
क्या विचित्र विह्वलता लेकर तू आया था॥

विह्वलता जो रुकी न संघर्षों से जूझकर।
किया निमन्त्रित मृत्यु को भी जान बूझकर॥
जिसके वश हो विकल हृदय कुछ सोच न पाया।
हँसते हँसते अन्धकार में कदम बढ़ाया॥
हृदय रक्त से सींच दिया उजड़े गुलशन को।
प्राणों में अंगार धधकता-सा पाया था॥
क्या विचित्र विह्वलता लेकर तू आया था॥

पुत्र मोह जिससे दशरथ को मरते देखा।
पुत्र मोह मानव मन की कोमलतम रेखा॥
छोड़ न पाए थे प्रताप भी जिस ममता को।
लेखराम! तू ने जीता उस दुर्वलता को॥
अमर रहेगा नाम तेरा रहती दुनिया तक।
दयानन्द की पीड़ा हिय में भर लाया था।
क्या विचित्र विह्वलता लेकर तू आया था॥

—प्रो. उत्तमचंद 'शरर'

अनुक्रमणिका

॥ ओ३म् ॥

अभिनन्दन समारोह समिति के अधिकारी एवं सदस्यगण

१. श्री रामचन्द आर्य	गुड़गाँव	संरक्षक
२. श्री सेठ ज्वाला प्रकाश आर्य	पानीपत	प्रधान
३. श्री जगदीश मित्र जी	रोहतक	उपप्रधान
४. श्री जसवन्त मठारू	पानीपत	महामन्त्री
५. श्री सुरेश चन्द्र आर्य	पानीपत	मन्त्री
६. श्री ज्ञान चन्द आर्य	पानीपत	कोषाध्यक्ष
७. श्री के.आर. छोकर	पानीपत	सहकोषाध्यक्ष
८. श्री पं. नरेन्द्र शास्त्री जी	पानीपत	संयोजक
९. श्री सेठ राम किशन जी एवं कृष्ण कुमार	पानीपत	स्वागताध्यक्ष
१०. श्री देवराज आर्य	पानीपत	सदस्य
११. श्री राजेश आर्य	पानीपत	सदस्य
१२. श्री वेद प्रकाश आर्य	रोहतक	सदस्य
१३. श्री देशराज आर्य	रोहतक	सदस्य
१४. श्री अजीत कुमार	फ़रीदाबाद	सदस्य
१५. श्री मनोहर लाल आनन्द	फ़रीदाबाद	सदस्य
१६. श्री चमन लाल आर्य	पानीपत	सदस्य
१७. श्री मुनीश चन्द अरोड़ा	पानीपत	सदस्य
१८. श्री महेन्द्र धींगड़ा	पानीपत	सदस्य
१९. श्री मनोहर लाल मुखीजा	पानीपत	सदस्य
२०. श्री कस्तूरी लाल आर्य	पानीपत	सदस्य
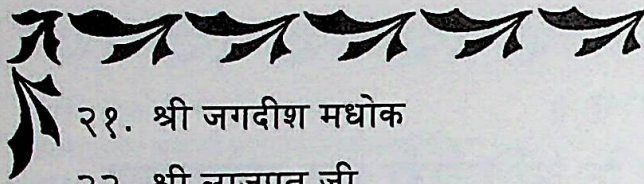
२१. श्री जगदीश मधोक	करनाल	सदस्य
२२. श्री लाजपत जी	करनाल	सदस्य
२३. श्री एस.के. बाहरी	पानीपत	सदस्य
२४. श्रीमती कमलेश लीखा	पानीपत	सदस्य
२५. श्रीमती धर्म देवी	पानीपत	सदस्य
२६. श्री वीरेन्द्र काठपालिया	ग़ाज़ियाबाद	सदस्य
२७. श्री हरीश चन्द मुटनेजा	पानीपत	सदस्य
२८. श्री वागीश शर्मा	मुंबई	सदस्य
२९. श्री रघुबीर सांगवान एडवोकेट	पानीपत	सदस्य
३०. श्रीमती रेणु आर्य	पानीपत	सदस्य
३१. श्रीमती कुसुम धीमान	पानीपत	सदस्य
३२. श्री सुभाष गुगलानी	पानीपत	सदस्य
३३. श्री कुलभूषण आर्य	पानीपत	सदस्य
३४. श्री रामभक्त लांगयान उपायुक्त	फ़तेहाबाद	सदस्य
३५. श्री राकेश आर्य	पानीपत	सदस्य
३६. श्री अर्जुन देव मुखीजा	पानीपत	सदस्य
३७. श्री राजेन्द्र जिज्ञासु	अबोहर	सदस्य

संपादक मंडल

डॉ. राणा प्रताप गन्नौरी, प्रमुख सम्पादक

श्री सुधीर शास्त्री

श्री टेकचंद गुलाटी

सम्पादकीय

आदरणीय का आदर, पूजनीय की पूजा, सम्माननीय का सम्मान, अभिनन्दनीय का अभिनन्दन जहां होता है वहां सद्भावों, सद्गुणों, सद्वृत्तियों का विकास होता है और जहां नहीं होता वहां इनका ह्रास होता है। सद्गुणों, सद्वृत्तियों, सात्विकता, उत्सर्गभावना, सरलता और सहजता समाज के पोषक तत्त्व हैं जबकि छलछद्म, असात्विकता, जटिलता, स्वार्थ और कुटिलता समाज के शोषक बल्कि घातक तत्त्व हैं। सद्गुणी व्यक्ति का अभिनंदन होना ही चाहिए। पानीपत नगर, यहां की आर्य समाजें, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देश-विदेश के मनीषी इस बात के लिए बधाई एवं साधुवाद के पात्र हैं कि उन्होंने कर्त्तव्यबोध का परिचय देते हुए श्रद्धेय प्रो. उत्तम चंद 'शरर' जी की ऋषि भक्ति, वेद-निष्ठा, सरल व्यक्तित्व और प्रखर कृतित्व के दृष्टिगत उनका अभिनंदन करने, उनके बारे में अभिनंदन-ग्रंथ छापने और उसे लोकार्पित करने की योजना का सूत्रपात किया है। यह उत्तम नाम के किसी व्यक्ति का नहीं बल्कि उनकी उत्तम वृत्तियों, सतत् सेवाओं का अभिनंदन करने की योजना है जिसमें ग्रंथ सम्पादन के कार्य मे जुड़ने का सौभाग्य मुझे भी अनायास ही मिल गया है।

श्रद्धेय 'शरर' जी अग्निषोम व्यक्तित्व के स्वामी हैं। ऋषियों ने सृजनशील मनुष्यों को 'सोम' और 'अग्नि' का संघात माना है। उनमें शीतलता और ज्वाला, समगति और ऊर्ध्वगति का चामत्कारिक संयोग रहता है और यह चामत्कारिक संयोग श्रद्धेय 'शरर' जी के रूप में मूर्त हो उठा है। वह अत्यंत सौम्य व्यक्ति हैं, अत्यंत ओजस्वी वक्ता हैं, अत्यंत निर्भीक आर्यसमाजी हैं, अत्यंत कुशल संगठन कर्ता हैं, अत्यंत सुयोग्य प्राध्यापक और अत्यंत प्रभावशाली कवि हैं। कविवर हरिवंशराय बच्चन (स्वर्गीय) के शब्दों में—"शीतल वाणी में आग लिये फिरता हूँ"—और यही शरर जी का अग्निषोमत्व है। वह छोटे कद के बहुत बड़े आदमी हैं।

शरर जी के अभिनंदन की योजना बनी, उन्होंने बड़े संकोच के साथ इसके लिए स्वीकृति प्रदान की। प्रेमी, श्रद्धालु और सुधी महानुभावों को पत्र लिखे गए। शरर जी के कद्रदानों ने योजना का समर्थन करते हुए तन, मन, धन से सहयोग देने का आश्वासन दिया। अभिनंदन समिति के सदस्यगण निर्धारित कर्तव्यों के निर्वाह में जुट गए। सामूहिक

सहयोग से सद्संकल्प पूर्ण हुआ। स्वप्न साकार हुआ। हम सब कृतकार्य हुए। यह सद्प्रेरणा प्रदान करने के लिए प्रभु का, अपने उद्गारों को लिपिबद्ध करके भेजने के लिए कलमकारों का, सफलता की कामना करते हुए संदेशों से अनुगृहीत करने के लिए मान्य महानुभावों एवं नेतागण का, संचित सामग्री का कुशल सम्पादन करने के लिए सम्पादक मंडल का, संरक्षण एवं प्रोत्साहन प्रदान करने के लिए सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का, पानीपत के आर्यबंधुओं एवं आर्य समाजों का, ग्रंथ के मुद्रण की सुंदर व्यवस्था करने के लिए श्री राकेश भार्गव, मयंक प्रिन्टर्स का हम हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं साथ ही प्रभु से प्रार्थना करते हैं कि समाज के हर अभिनंदनीय व्यक्ति का अभिनंदन करने की भावना समाज में बलवती हो, पुष्ट हो।

यह अभिनंदन ग्रंथ कहानी है शरर जी के अभिनंदनीय कृत्यों की, कुछ अक्षरों की ज़बानी कुछ चित्रों की ज़बानी। मनुष्यकृत प्रत्येक कार्य में कमियां रह जाने की संभावनाएं बनी रहती हैं। पाठक बंधुओं से विनम्र अनुरोध है कि इस ग्रंथ को उदारभाव से स्वीकार करते हुए जाने अनजाने में रह गई त्रुटियों से हमें अवगत कराने का कष्ट अवश्य करें।

विनीत—

राणा प्रताप गन्नौरी

प्रमुख सम्पादक

१५६०, सै. १२, हुड्डा, पानीपत-१३२१०३

दूरभाष : ०१८०-२६६५९२८

संस्कृत-कविता

जीव्यात् शतं च शरदां भुवि चन्द्र एषः

आ. डॉ० विशुद्धानन्द मिश्र 'विद्यामार्तण्ड' पूर्व कुलपति, वदायूं (उ.प्र.)

हिन्दीं स्वसंस्कृत-गिरामपि पारसीयाम्, उर्दूं सुभावभरितां समधीत्य विज्ञः।
वेदद्रुहः कलुष-भावपरीत-बुद्धीन्, सन्मार्गदर्शन-प्रदीप इवावभासे ॥१ ॥

यो जीवनं त्वगगयत् श्रुति सम्प्रसारे, पाखण्ड-खण्डन-रुचि रुचिरां दधानः।
विद्वत्-प्रसादन करीं प्रतिभां समर्चन्, आर्याग्र्यमूर्धमणिरुज्जयताद् बुधेन्द्रः ॥२ ॥

आर्यां स्वसंस्कृतिमिमांवरविश्ववाराम्, संरक्षयन् शुचि चरित्रवतां वरिष्ठः।
विद्याविलासविलसद्-विदुषां वरेण्यः, लोके जयत्यभिनवो ह महर्षिभक्तः ॥३ ॥

यो भासते प्रखर-सत्-प्रतिभा-प्रभावः, तर्कार्कनाशित विपक्ष-मतान्धकारः।
धर्मप्रचारक-शिरोमणि-सत्यवृत्तिः, जीव्यात् शतं च शरदां भुवि चन्द्र एषः ॥४ ॥

शास्त्रार्थ-कौशल-कलां रुचिरां दधानः, तर्कार्क-दीप्तकिरणैरव भासमानः।
सद्यः प्रजात-नवल-प्रतिभोत्तरैर्यः, स्यस्मापयत् सपदि विद्वदशेषवृन्दम् ॥५ ॥

सूर्यो दिवा प्रकुरुते सुलभं प्रकाशम्, रात्रौ प्रसारयति चान्द्रमसीं विधुः सः।
व्योम्नि श्रुतिद्युतिमथार्य समाजमञ्चे, नक्तन्दिवानरवरोत्तम चन्द्र एषः ॥६ ॥

छिन्दन्ति भौतिकतमो विधुभास्करीयाः, तारागणस्य किरणा नभसि प्रकामम्।
हृद्-व्योम-विस्तृततमः श्रुतिरश्मिभिस्तु, छेत्तुं क्षमो नर वरोत्तम चन्द्र एषः ॥७ ॥

धन्यं त्वभूत् कुलमिदं खलु जन्मजाते, धन्या पवित्रतमभारतमातृभूमिः।
धन्यः पिता समभवयपि मातृकुक्षिः, धन्या वयं ह्यपि सुहृत् तव सङ्गमेन ॥८ ॥

संस्कृत-कविता का भावार्थ

अभिनन्दनीय श्री उत्तमचन्द 'शरर' जी शतायु होवें

—आचार्य डा. विशुद्धानन्द मिश्र 'विद्यामार्त्तण्ड'

हिन्दी, फ़ारसी, उर्दू तथा अपनी देवभाषा संस्कृत का अध्ययन कर विज्ञ-प्रवर श्री 'शरर' जी, कलुषित भावों से परिपूर्ण बुद्धि वाले वेद-शास्त्रों के विद्रोही जनों को अपने प्रभावी प्रवचनों केद्वारा सन्मार्ग पर लाते हुए मार्ग के प्रदीपस्तम्भ की भाँति सदा चमकते रहे हैं ॥१॥

पाखण्ड-खण्डन की सुन्दर रुचि को धारण करते हुए 'श्री शरर जी' ने वैदिक-सिद्धान्तों के प्रचार और प्रसार में ही अब तक अपने जीवन को लगा दिया। विद्वद्‌जनों को प्रसन्न करने वाली नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा का ही समादर किया। ऐसे आर्यों के अग्रज-शिरोमणि विद्वत् प्रवर 'श्री शरर जी' का सर्वत्र जय जयकार हो रहा है ॥२॥

हे पवित्र चरित्र सम्पन्न विद्वद् वरेण्य! आपने अपनी इस श्रेष्ठ विश्ववारा संस्कृति का सदा संरक्षण किया है, विद्या में विलास करने वाले महर्षि दयानन्द के अनन्य भक्त आपकी अभिनवकीर्त्ति लोक में सदा आलोक भरती रहती है ॥३॥

जो सदा अपनी प्रखर काव्यमयी प्रतिभा के प्रभाव से अपने तीक्ष्ण-तर्क-भास्कर की प्रबल किरणों से विपक्ष विधर्मियों के मतान्धकार को छिन्न-भिन्न करते रहे, सत्य निष्ठा से प्रतिष्ठित होकर वैदिक सिद्धान्तों का प्रचार करते रहे, ऐसे आप भूतल के चन्द्र बनकर जन जन में आह्लाद भरते हुए शतायु होवें ॥४॥

शास्त्रार्थ करने की कला में कुशल, तर्क भास्कर की किरणों से देदीप्यमान, तात्कालिक सूझ-बूझ पूर्ण समाधानों के द्वारा सम्पूर्ण विद्वत् समाज को चकित व विस्मित करते रहे हैं ॥५॥

भगवान् भुवन भास्कर तो दिन में प्रकाश प्रदान करते हैं और रात्रि में चन्द्रमा अपनी चाँदनी सब ओर बिखेर देता है। परन्तु आर्य समाज के मंच रूप आकाश में वेदों के प्रकाश को रात और दिन दोनों में ही विद्वान् श्री उत्तमचन्द जी बिखेरते रहते हैं ॥६॥

सूर्य, चन्द्र और तारागण की किरणें तो यथेष्ट भौतिक अन्धकार को नष्ट करती हैं, परन्तु हृदय रूपी व्योम में विशाल रूप में फैले हुए अज्ञान अन्धकार को श्रेष्ठ पुरुष श्री उत्तमचन्द रूपी चन्द्र अपनी प्रवचन किरणों से विनष्ट कर देता है ॥७॥

हे सुहृद्वर! आपके जन्म से यह कुल धन्य हो गया, भूमण्डल में पवित्रतम यह भारत मातृभूमि भी धन्य हो गई। आपके पिता एवं पूजनीया मातृकुक्षि भी धन्य धन्य हो गई और आपकी उत्तम संगति से हम आर्यजन भी धन्य और भाग्यशाली हुए हैं ॥८॥

वेदार्थ कल्पद्रुम प्रणेता, पूर्व कुलपति, बदायूँ (उ.प्र.)

प्रो. उत्तम चंद शरर : जीवन परिचय

—सुधीर शास्त्री, पुरोहित आर्य समाज हुड्डा, पानीपत

जिस परिवार में महात्मा उत्तमचंद 'शरर' का जन्म हुआ वह सर्वथा पौराणिक परिवार था। पूर्वज भी आर्य समाजी नहीं थे, लेकिन जिस गोद में बालक उत्तमचंद खेला वह धार्मिक अवश्य थी। 'शरर' जी को धार्मिकता के संस्कार माता-पिता से मिले और आर्यसमाजी बनाया पूर्व जन्म के संस्कारों ने तथा आसपास हो रही आर्य सामाजिक गतिविधियों ने।

महात्मा शरर जी का जन्म ५ नवम्बर १९१६ को वर्तमान पाकिस्तान के ज़िला मुज़फ़्फ़रगढ़ की तहसील अलीपुर के गाँव सीतपुर में श्री मंगुराम बजाज के घर हुआ। प्राथमिक व माध्यमिक शिक्षा उर्दू-फ़ारसी विषयों के साथ सीतपुर में ही सम्पन्न हुई। इसकेसाथ धार्मिक व अन्य साहित्य का अध्ययन भी गांव में घर पर ही होता रहा। प्राज्ञ की परीक्षा पौराणिक विद्यालय अलीपुर से पास की। देश-विभाजन के पश्चात् भारत आने केबाद उच्च शिक्षा प्राप्त करते हुए बी.ए., एम.ए. की उपाधियां पंजाब विश्वविद्यालय से प्राप्त कीं। परिवार के लोग तथा अलीपुर विद्यालय के आचार्य जी प्रयत्न करते रहे कि उत्तमचंद पौराणिक बने, किन्तु आप थे कि दिन रात आर्य समाज जाते थे। आपके मन पर आर्य समाजी संस्कार दृढ़ होते गए। आर्य समाज जाने पर अनेक बार घर में पिटाई भी हुई किंतु संस्कार पूर्व जन्मों के थे गहराते ही चले गए। सीतपुर में रहते किशोरावस्था में ही शरर साहब में भावी शास्त्रार्स्थ कौशल के लक्षण दिखाई देने लग गये थे। वे धर्माडम्बर एवं रूढ़िवाद के विरुद्ध मुखर हो उठे थे। आर्ष ग्रन्थों के अध्ययन में रुचि बढ़ने लगी थी।

१९३८ ई. हैदराबाद आंदोलन

उत्तमचंद अभी केवल २२ वर्ष के ही थे कि हैदराबाद सत्याग्रह शुरू हुआ। चचेरे भाई देवदत्त ने सत्याग्रह में चलने को प्रेरित किया और एक दिन खेत में बैठे बैठे शरर जी ने सत्याग्रह में जाने का निर्णय ले लिया। घर में किसी से भी चर्चा नहीं की। विवाहित थे अतः मन में प्रश्न उठा कि परिवार की ज़िम्मेदारी कौन पूरी करेगा? मन ने ही उत्तर भी दिया जो मरने केबाद करेगा वही अब भी करेगा। उत्तम नाम उत्तम विचार। स्वयं शरर जी के शब्दों में—

"मैं, जयदेव, धर्मदेव, घनश्यामदास सभी ने देवदत्त को चलने के लिए हामी भर दी। सभी तैयार होकर तांगा स्टैण्ड पर आ गये। वहां चाचा सोहन लाल खड़े थे। हम फिर भी चल दिये। अलीपुर, मुज़फ्फ़रगढ़, मुलतान होते हुए लाहौर पहुंच गए। लाहौर आर्य समाज केलोगों ने हमें जाने से रोका। फिर हम लोग सत्यानन्द जी के पास गए। उन्होंने बताया कि अमृतसर से आशानंद जी जत्था लेकर जाएंगे। हम अमृतसर पहुंचे। आशानंद जी ने हमें अपने जत्थे में शामिल कर लिया। पचास सत्याग्रहियों का जत्था चला। प्रसिद्ध संन्यासी रामप्रकाश जी साथ थे। पैदल चलकर यह जत्था जालंधर पहुंचा। वहां जत्था जल्दी भेजने के लिए तार मिला। हम सब गाड़ी में सवार होकर शोलापुर पहुंचे। वहां महाशय खुशहाल चंद 'खुरसंद' (महात्मा आनंद स्वामी जी) का जत्था मिला। हम भी उसमें शामिल हो गए। वहां से गुलबर्ग पहुंचे। डेढ़ सौ व्यक्तियों के इस जत्थे को गिरफ़्तार करके जेल में डाल दिया गया। जेल में एक बहरा व अंधा व्यक्ति था। उससे पूछा गया किक्या तुम जेल से जाना चाहते हो? तो उसने बिना सुने समझे कहा—मुझे भारी काम न दिया जाए। फिर पूछा गया कि जाना चाहते हो क्या? वह बोला—मुझे दूध ज्यादा दिया जाए। मुझे बवासीर है। सभी हँस पड़े। जब उससे इशारों से पूछा गया तो उसने हाथ हिला कर मना कर दिया।"

जेल में रहते हुए श्री शरर जी का परिचय चन्द्रकरण शारदा तथा म. नारायण स्वामी से हुआ। कुछ सत्याग्रहियों की जेल में मृत्यु भी हुई जिसके कारण कुछ साथियों ने जेल में अनशन कर दिया जिसके परिणामस्वरूप शरर जी को व उनके कुछ साथियों को सिंगारेड्डी जेल भेज दिया गया। सिंगारेड्डी जेल में एक बीमारी फैली कि घुटने में से अंकुर की तरह एक धागा निकलता था और वह जैसे जैसे बढ़ता था वैसे-वैसे दर्द बढ़ता जाता था। पंडित वाचस्पति रोगियों की देखरेख करते थे। शरर जी रोगियों से बचते थे। वाचस्पति रोगियों की सेवा करते करते खुद रोगी हो गए थे। यहां तक कि चलने में भी असमर्थ हो गए थे। ये वे दिन थे जब निज़ाम की आर्य समाजियों से समझौता वार्ता चल रही थी। आख़िर निज़ाम को झुकना पड़ा और जेलों के दरवाज़े खोल देने पड़े। सभी लोग अपने बिस्तर बांध कर घर जाने को तैयार हो गए। अकेले वाचस्पति जी जाने में असमर्थ थे। उनको शौचादि के लिए भी उठा कर ले जाना पड़ता था। शरर जी उनके प्रिय शिष्य थे। उन्होंने शरर जी को सम्पूर्ण योगदर्शन कण्ठस्थ कराया था। चलते समय शरर जी से वाचस्पति जी ने लेटे-लेटे ये स्वर्णिम शब्द कहे थे—

"नाहिकल्याणकृतकश्चित् दुर्गतिं तात गच्छति"

किसी का भला चाहने वाला व्यक्ति दुर्गति को कभी प्राप्त नहीं होता। शरर जी वाचस्पति जी की इस धनात्मक सोच पर मुग्ध थे।

रोहतक शास्त्रार्थ (१९५२)

किशारोवस्था में जगी शास्त्रार्थ की अभिरुचि रोहतक आने पर अपने यौवन पर पहुंच गई। शरर जी तब रोहतक में एक स्कूल में अध्यापक थे। एक दिन स्वा. सोमानन्द जी स्कूल में आए और उनसे बोले—'माधवाचार्य रोहतक में धूम मचा रहा है और मुनादी करा रहा है कि कोई माई का लाल आर्यसमाजी मेरी बातों का जवाब दे। शरर जी, आप जाते क्यों नहीं? आर्य समाज की प्रतिष्ठा हेतु जान भी देनी पड़े तो क्या है।" शरर जी ५ आर्यवीरों के साथ चल दिये। अब आगे उन्हीं के शब्दों में सुनिये—

"हम दुर्गा भवन पहुंचे जहां जलसा हो रहा था। पंडाल श्रोताओं से भरा हुआ था। पंडित जी ने आरम्भ में कहा—यदि कोई आर्यसमाजी हो तो मेरे प्रश्नों का उत्तर दे। मैंने बीच में खड़े होकर पूछा-समय बाद में देंगे या पहले? बोले—बाद में। पंडित जी सत्यार्थ प्रकाश पर आलोचना करने लगे। मैं 'प्वाइंट्स' नोट करने लगा। इसी बीच एक साधु कभी मेरी तरफ़ आता था, कभी दौड़कर वापस लौट जाता था। मुझे कुछ शंका हुई। मैं समझ गया कि दाल में कुछ काला है। उनके भाषण की समाप्ति पर मैंने समय मांगा तो साधु बोला—हम आर्य समाजियों को समय नहीं देते। मैं धन्यवाद कर बैठने लगा तो मेरे सिर पर लाठी का प्रहार हुआ, साथियों को एक तरफ़ फैंक दिया। जनता मुझ पर टूट पड़ी। कपड़े फट गए। मुझे उठा कर हवन कुण्ड में डालना चाहा तो कृष्णचंद्र व जितेन्द्र ने मारपीट करके मुझे छुड़ाया। बाहर आर्यों का हुजूम था। वे मुझे हास्पिटल ले गये। इलाज उपचार हुआ और रात के एकबजे मैं घर लौटा। प्रातः एक सज्जन आए कि थाने बुलाया है। मैं हाथ मुंह धोकर थाने गया। थाने पर आर्यसमाजी व सनातनधर्मी दोनों थे। उनमें सनातन धर्म रोहतक के प्रधान कल्याणदास भी था। उसने हाथ जोड़कर मुझसे मुआफ़ी मांगी। सोमानंद जी ने कहा—हम हाईकोर्ट जाएँगे। इतने में श्री रामरंग वकील वहां आ गए। बोले—केस करने पर तो कुछ झूठ भी बोलना पड़ सकता है। मैंने कहा यदि झूठ बोलना पड़े तो मैं केस नहीं करता। ऋषि दयानंद ने अपने हत्यारे को क्षमा कर दिया था। मैं उनका अनुयायी हूं। मैं भी इस मामले को यहीं शांत करता हूं। कल्याणदास रोकर बोला—आर्यसमाजी इतने उदार भी होते हैं? मैंने तो सोचा ही नहीं था। परन्तु सोमानंद जी के हृदय की कसक पूरी नहीं हुई। उन्होंने निर्णय ले लिया कि आ. भगवानदेव (अब स्वा. ओमानंद) की अध्यक्षता में और जगदेव सिद्धांती के संरक्षण

में हरियाणा का पहला आर्य सम्मेलन हो, शास्थार्थ की चुनौती दी जाए। जलसे की तैयारी शुरू हुई और शानदार जुलूस निकाला गया। जुलूस में जनता का उत्साह देखते ही बनता था। जुलूस का एक सिरा रेलवे स्टेशन पर था दूसरा दयानंद मठ पर। रात को जलसा हुआ। पं. बुद्धदेव ने पौराणिक लीला की पोल खोली। दूसरे दिन फिर बोलते हुए उन्होंने कहा—मैंने कल तो क्लोरोफ़ार्म सुंघाया था आपरेशन तो आज करूंगा। उन्होंने फिर पौराणिक घटनाओं का विस्तृत विश्लेषण किया जिससे पौराणिकों की हिम्मत नहीं हुई कि आर्य समाजियों के मुंह लगें।

रोहतक में शरर साहब १९४७ से १९५८ तक रहे। इस अवधि में जहां उन्होंने अध्यापन कार्य किया, उच्च शिक्षा का अर्जन किया, शास्त्रार्थ की चुनौतियां स्वीकार कीं वहीं शिवाजी कालोनी आर्यसमाज की स्थापना की, सफल पारिवारिक सत्संगों का प्रचलन किया। शरर जी रोहतक को अपनी कर्मभूमि मानते हैं। यहीं रहते हुए ही उन्होंने १९५७ में हुए हिन्दी आंदोलन में सक्रिय भाग लिया। जिसका वर्णन आगे किया गया है। उच्च शिक्षा की दृष्टि से शरर जी ने भारत आने के बाद रोहतक में रहते हुए बी.ए., एम.ए. (हिन्दी और संस्कृत) की उपाधियां प्राप्त कीं।

यहीं रोहतक में रहते हुए शरर जी ने आर्यसमाजों के मंच पर कवि सम्मेलन आयोजित कराने का प्रचलन कराया जो बहुत सफल रहा। हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश, राजस्थान के विभिन्न नगरों-ग्रामों में शानदार और यादगार कवि सम्मेलन हुए। कविता-विविध भाषीय कविता के माध्यम से ऋषि का संदेश ऋषि भक्तों तक पहुंचाने और बलिदानी आर्यवीरों को स्मरण करने का सफल उपक्रम इन कवि सम्मेलनों के माध्यम से हुआ। प्रायः कवि सम्मेलनों के अध्यक्ष और संचालक का दुहरा दायित्व शरर जी निभाते थे। इनकी इच्छा रहती थी कि आर्य कवि व्यावसायिक कवियों की तरह पारिश्रमिक की मांग न कर मिशनरी स्पिरिट से कवि सम्मेलनों में सम्मिलित हों। और सब आर्यकवि ऐसा ही करते थे।

हिन्दी आन्दोलन (१९५७)

"संसार में आवश्यकता ही आविष्कार की जननी है" इस कहावत को चरितार्थ किया था हिन्दी आन्दोलन के आन्दोलन कारियों ने। जिस वक्त पंजाब सरकार के मुख्यमंत्री प्रताप सिंह कैरों ने अपनी दमनकारी नीतियों से समस्त पंजाब में पंजाबी भाषा को थोप दिया और हिन्दी पर प्रतिबन्ध लगा दिया तब हरियाणा भर के समस्त आर्य समाजियों ने एकजुट होकर इसके विरुद्ध मोर्चा सम्भाला। स्वामी आत्मानन्द जी

की अध्यक्षता में समस्त हरियाणा में आन्दोलन हुए। रोहतक में भी इसका व्यापक असर था। यहाँ के लोगों ने बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया। इनमें से एक प्रमुख नाम है प्रो. उत्तम चंद शरर जिन्होंने इस आन्दोलन की प्रेरणा बनकर शहर के प्रत्येक चौराहे पर अपनी ओजस्वी वाणी से लोगों में जान फूंकी। हैदराबाद आन्दोलन के समय तो इनके पिताजी जिन्दा थे इसलिए रोटी की व अन्य समस्यायें नहीं थीं। परन्तु इस बार हालात बदल चुके थे। पिताजी थे नहीं। बड़े भाई सोहनलाल दुकान करते थे और स्वयं शरर जी आर्य स्कूल रोहतक में नौकरी करके परिवार का पेट पालते थे, इसलिए जेल से बाहर रहकर लोगों को प्रेरित करने का कार्य करते रहे। इनके द्वारा दिये गये उत्तेजक भाषणों की सूचना सरकार को मिली जिसके परिणामस्वरूप एक रात को पुलिस आई, दरवाजा खटखटाया, शरर जी ने पूछा कौन? उत्तर मिला पुलिस। शरर जी जेल जाने को तैयार नहीं थे परन्तु पुलिस ने कहा आप गिरफ़्तार हो चुके हैं। बेटा न्यूमोनिया से पीड़ित था, माता जी की सेहत ठीक नहीं थी, ऐसी हालत में शरर जी ने पत्नी से कहा कि परिवार का ध्यान रखना और चल दिये। अगले दिन शरर जी गन्नौर जेल में थे। एक रात शरर जी ने एक सिपाही से पूछा कि क्या आपके सन्तान है। सिपाही ने कहा क्या मतलब? शरर जी ने कहा कि आपके यदि सन्तान है तो उसके मोह का भी पता होगा। मेरा बेटा बीमार है उसका पता करवा दें। शरर जी ने अपना रोहतक का पता दिया फिर उस सिपाही ने मनोहर लाल को भेजा। मनोहर लाल ने आकर ख़बर दी कि बेटा ठीक है। इसी बीच एक घटना घटी।

अगले दिन उनको फिर थाने में बुलाया गया। दोस्तदार डरे कि शायद मार पड़े लेकिन वहां जाने पर कुर्सी पर बैठाया गया। पूछा गया मुझे कोई तकलीफ़ तो नहीं? उस पुलिस कर्मचारी ने बताया कि एक लड़की को आप पढ़ाते हैं। उसने मुझे बाध्य कर दिया है कि मैं आपका हाल पूछूं और ख़याल रखूं। वह मेरी पत्नी है। शिष्या की गुरुभक्ति को मन ही मन साधुवाद दिया। अच्छे कर्म का अच्छा फल मिला। शुक्रवार को ज़मानत हुई। घर पहुंचा। शनिवार घर पर रहा। इतवार को नहाने चला था कि साहब का बुलावा आया। बिना स्नान किये चला गया। साहब ने फ़रमाया आप गिरफ़्तार हैं। मैं टूट गया। बीमार मां को मिलने की अनुमति नहीं मिली। भोजन नहीं करने दिया गया। २ बजे एक जेल में भेज दिया गया। रात को नाभा जेल रवाना कर दिया गया।

१९५८ में आप आर्य कालेज पानीपत में प्राध्यापक नियुक्त हुए। दस वर्ष यानि १९५८ से ६८ तक यहां अध्यापन कार्य करने के बाद १९६८ से ७० तक लुधियाना

और १९७० से ७८ तक करनाल डी.ए.वी. कालेज फ़ार विमेन में कार्य करने के बाद करनाल से १९७८ में सेवानिवृत्त हुए। उनसे पढ़े हुए उनके विद्यार्थी उनके प्रति गहरी श्रद्धा भावना रखते हैं।

नैरोबी यात्रा (१९७८)

शरर जी के अपने शब्दों में इस सुयोग का वर्णन सुनिए—

"मुझे विदेश जाने का शौक नहीं था, बल्कि डर लगता था। क्योंकि हवाई जहाज़ का सफर भयानक प्रतीत होता था। एक दिन एक परिवार में व्याख्यान दे रहा था कि मेरा बेटा सुरेश सार्वदेशिक सभा का पत्र लाया। पत्र में था मैं नैरोबी (अफ्रीकी देश केन्या की राजधानी जहां भारतीय मूल के और आर्य समाजी निष्ठा के हजारों लोग रहते हैं) जाऊं क्योंकि वहां के आर्यों ने टिकट भिजवाया है। मैंने बहुत सोचा। अंततः घरवालों के आग्रह पर जाने को तैयार हो गया और निश्चित तिथि व समय पर दिल्ली हवाई अड्डे पर पहुंचा। श्री वीरेन्द्र (जालंधर), श्री ओम प्रकाश त्यागी और श्री रामनाथ सहगल मेरे सहयात्री थे। हम लोग कराची होते हुए नैरोबी पहुंचे। मैं जिज्ञासा लिये हुए था कि मुझे यहां बुलाने वाला कौन है? वहां के आर्य समाज के प्रधान ने बताया कि हमारी समाज ने बुलाया है। आतिथ्य में उनका कोई सानी नहीं हो सकता। एक दिन मेरा व्याख्यान हुआ जो पसंद किया गया और अगले दिन रात को कवि सम्मेलन था। उससे पहले एक व्यक्ति मिले, बोले—मैंने आपको गुरु बनाया है। मैंने कहा—मैं भारत में रहता हूं, आप नैरोबी में। इस गुरु-शिष्य के नाते का मतलब? उसने बताया कि मेरे पिताजी के पास भारत से 'आर्य गज़ट' पत्र आता था। उसमें आपकी कविताएँ होती थीं, जिनको पढ़कर मैंने अपने मन में आपको गुरु मान लिया। मेरा सौभाग्य है कि इतनी दूर से यहां आकर आप ने दर्शन दिये हैं। कुंआं स्वयं प्यासे के पास आ गया है। सच ही तो कहा गया है कवि का सत्कार सर्वत्र होता है।

रात को कवि सम्मेलन था जिसकी अध्यक्षता मुझे करनी थी। मैं साधारण से वस्त्र पहन कर आया और सोचता रहा कि इन प्रवासी बंधुओं के मध्य क्या कहूं। फिर ख़याल आया इनके पास सुंदर पहनावा सही मेरे पास सुंदर प्रभावकारी भाषा तो है। कलकत्ता से पधारे श्री उमाकांत उपाध्याय से मैंने अनुरोध किया कि कवि सम्मेलन का समारम्भ करते हुए आप वेदवाणी के पाठ स्वरूप चार वेदमंत्र पढ़ें। उन्होंने टालते हुए कहा—मैं कवि सम्मेलन में शामिल नहीं होऊंगा क्योंकि मैं काव्य में रुचि नहीं रखता। मैंने जैसे तैसे उनको मनाया। कवि सम्मेलन के प्रारम्भ में उन्होंने वेदमंत्रो का पाठ किया और

उसके बाद जो कवि सम्मेलन आरम्भ हुआ तो ४ घंटे चला और आश्चर्य कि श्री उमाकांत उपाध्याय लगातार ४ घंटे बैठे रहे। काव्य के रस का जादू सिर चढ़कर बोल उठा। श्रोता अतृप्त थे, और सुनाने का आग्रह कर रहे थे। मैंने समयाभाव के दृष्टिगत कवि सम्मेलन की समाप्ति की घोषणा की। मुझे नैरोबी आने का निमंत्रण देने वाले आर्य नेताओं ने गदगद भाव से मुझे गले लगा लिया। सब लोग कवि सम्मेलन की सफलता पर प्रसन्न थे। नैरोबी (किन्या) में पहले से पहुंच कर शोभायमान हुआ हुआ महर्षि दयानन्द सरस्वती का सुंदर चित्र देखकर मन बड़ा आनन्दित हुआ। मन ने कहा यह बाबा (स्वा. दयानंद) बड़ा तेज़ है सब जगह हम भक्तों से पहले पहुंच जाता है। नैरोबी की एक मास की प्रचार यात्रा समाप्त कर हम प्यारी भारत-भूमि पर लौट आए।

पारिवारिक जीवन

'शरर' साहब का विवाह सन् १९३८ ई. में हुआ। इनकी धर्मपत्नी का नाम श्रीमती लाजवंती है, जो अत्यंत शांत एवं धार्मिक वृत्ति की महिला हैं। शरर साहब की आठ संतानें हैं—छः पुत्र एवं २ पुत्रियां। सुभाष, सुरेश, वीरेन्द्र, महेश, राजेश और राकेश उनके सुपुत्र हैं। सतवंती और कांता उनकी सुपुत्रियां हैं। सुभाष की पत्नी पुष्पा, सुरेश की पत्नी सुनीता, वीरेन्द्र की पत्नी शांति, राजेश की पत्नी रेणु और राकेश की पत्नी नीलम, शरर जी की सुशील सेवादार पुत्रवधुएं हैं। शरर साहब का रहन सहन, खानपान, वस्त्र-परिधान सब बहुत सादा है, सहज है। उनको प्रभु की कृपा से पारिवारिक सुख, सामाजिक यश-कीर्ति अैर आत्मिक-आनन्द प्राप्त है। इंसान को इससे अधिक क्या चाहिये। शरर साहब सच्चे आर्यवीर हैं, आर्यवीर दल केकुशल संचालक हैं, तन-मन से स्वस्थ हैं, अत्यंत सहनशील हैं, नियमित आसन-प्राणायाम और प्रातः सायं भ्रमण करते हैं। मनोबल के धनी हैं। प्रचारार्थ उत्तरप्रदेश में किसी जगह गए हुए थे जब मंच पर बैठे बैठे इन पर फ़ालिज का आघात लगा। प्राथमिक उपचार लेने के बाद मनोबल के बल पर ही लम्बी यात्रा करके सकुशल पानीपत पहुंच गए और यहां नियमित उपचार के बाद एकनया जीवन प्राप्त कर लिया जो प्रभु कृपा और मनोबल के बग़ैर किसी तरह सम्भव नहीं हो सकता था।

शरर जी के जीवन के उल्लेखनीय वर्ष

सम्मान तथा उपलब्धियाँ

३.१०.९१	चंडीगढ़	हरियाणा उर्दू अकादमी द्वारा सम्मान, शरर जी के ७५ वर्ष की आयु प्राप्त कर लेने पर।
३१.१०.९३	जालंधर	आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब द्वारा सम्मान।
१५.५.९६	पानीपत	ख़ैल बाज़ार आर्य समाज द्वारा अभिनंदन।
१६.८.९७	कलकत्ता	आर्य समाज सरणी मार्ग द्वारा वैदिक विद्वान के रूप में अभिनंदन।
१६.१०.९७	रोहतक	आर्य प्र. सभा हरियाणा द्वारा स्वतंत्रता की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर शरर जी का आदर्श स्वतंत्रता सेनानी के रूप में अभिनन्दन।
२३.१.९७	पानीपत	तत्कालीन मुख्यमंत्री चौ. बंसीलाल के कर कमलों से स्वतंत्रता सेनानी का ताम्रपत्र प्रदान किया गया।
अक्टूबर ९८	देहली	ब्रह्मचारी राज सिंह के कर कमलों से दूसरा ताम्रपत्र आर्य वीरदल देहली की ओर से प्रदान।
	कानपुर	आर्य समाज गोविन्द नगर स्वर्ण जयन्ती समारोह में आर्य समाज के कोहेनूर की उपाधि।
	रोहतक	आर्य वीर दल हरियाणा द्वारा शरर जी को सिक्कों से तोल कर सम्मानित किया गया।
४.८.२००१	पानीपत	जैमिनी अकादमी पानीपत द्वारा "समाज-रत्न" सम्मान।
१०.२.२००२	बम्बई	आर्य समाज शांताक्रुज द्वारा वेदोपदेशक पुरस्कार।
१४.४.२००२	नई दिल्ली	आर्य समाज राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली ने ५०वें वार्षिकोत्सव परं सम्मानित किया।
१६.११.२००२	पानीपत	लायन्ज़ क्लब पानीपत द्वारा सम्मान।

शुभकामनाएँ

कैप्टन देवरत्न आर्य

प्रधान
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,
नई दिल्ली

संदेश

बहुत प्रसन्नता का विषय है कि आर्य जगत् के प्रसिद्ध विद्वान् व स्वतन्त्रता सेनानी प्रो. उत्तम चन्द शरर के जीवन पर अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशित किया जा रहा है। मैं पानीपत की अभिनन्दन समारोह समिति के अधिकारियों को धन्यवाद देता हूँ, जिन्होंने ऐसे विद्वान् के अभिनन्दन की योजना बनाई है।

प्रो. शरर साहब से मैं काफ़ी समय से परिचित हूँ। यह कई बार मुम्बई आर्य समाज के उत्सव में आते रहे हैं। प्रो. शरर ने अपनां सारा जीवन आर्य समाज की सेवा में लगाया है। ऐसे विद्वान् का अभिनन्दन करके सभा स्वयं को गौरवान्वित अनुभव कर रही है। परम पिता परमात्मा से मेरी यही प्रार्थना है कि उन्हें शतायु करे। अभिनन्दन समारोह की सफलता हेतु मेरी शुभकामनायें।

धन्यवाद

देवरत्न आर्य

आई.डी. स्वामी
आई.ए.एस. (सेवानिवृत्त)
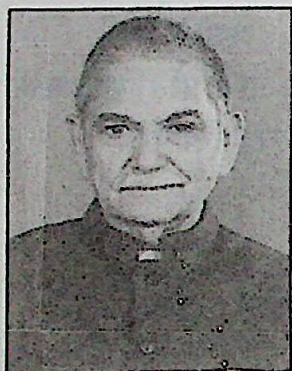
राज्य मंत्री
गृह मंत्रालय
नार्थ ब्लाक,
नई दिल्ली-११०००१

संदेश

मुझे यह जानकर अति हर्ष हो रहा है कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली तथा अभिनन्दन समारोह समिति, पानीपत के संयुक्त तत्वावधान में प्रो. उत्तम चन्द शरर के व्यक्तित्व पर अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशित किया जा रहा है। इस ग्रन्थ से युवा पीढ़ी को प्रेरणा मिलेगी।

प्रो. शरर ने अपना सारा जीवन आर्य समाज के प्रचार में लगाया है, हैदराबाद सत्याग्रह में भाग लेकर भारत की आज़ादी में विशेष भूमिका निभाई है। ऐसे विद्वान्, स्वतन्त्रता सेनानी का अभिनन्दन होना ही चाहिये, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का यह प्रशंसनीय कार्य है।

इस ग्रन्थ के प्रकाशन के लिए किए जा रहे प्रयासों के लिए श्री ज्वाला प्रकाश आर्य, प्रधान, अभिनन्दन समारोह समिति, पानीपत तथा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा बधाई के पात्र हैं।

आई. डी. स्वामी

सतवीर सिंह कादियान
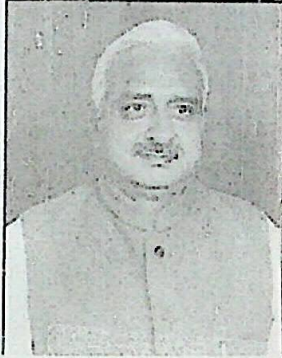
Speaker,
Haryana Vidhan Sabha
Chandigarh (India)

संदेश

यह अति हर्ष का विषय है कि प्रो. उत्तम चन्द शरर अभिनन्दन समारोह समिति, पानीपत तथा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली आर्य जगत के सुप्रतिष्ठित विद्वान्, कवि, वंदनीय शिक्षक एवं अभिनंदनीय स्वतन्त्रता सेनानी प्रो. उत्तम चंद शरर पानीपती का अभिनन्दन समारोह कर रहे हैं और इस सुअवसर पर उनका अभिनंदन ग्रंथ प्रकाशित करने जा रहे हैं। प्रो. उत्तम चन्द शरर जी के बारे में जितना कहा जाए उतना ही कम है। वह एक उच्च कोटि के विद्वान्, कवि, शिक्षक तथा स्वतन्त्रता सेनानी हैं। उनकी सेवाओं का आर्य समाज की गतिविधियों में अमूल्य योगदान है, जिसे कोई भी कभी भुला नहीं सकता। मेरा यह विश्वास है कि यह समारोह आर्य समाज की गतिविधियों और आर्य समाज की ओर से किए जाने वाली मनुष्य जाति के लिए कल्याणकारी सेवाओं के लिए एक प्रेरणा स्रोत बनेगा और प्रकाशित होने वाला ग्रंथ लोगों को सही रास्ता दिखाता रहेगा। इन्हीं शब्दों के साथ मैं इस समारोह की और अभिनन्दन ग्रंथ की सफलता की हार्दिक कामना करता हूं।

सतवीर सिंह कादियान
अध्यक्ष
हरियाणा विधान सभा

श्री अजय सहगल

सम्पादक
टंकारा समाचार
दिल्ली

सन्देश

हर्ष का विषय है कि आर्य समाज के प्रसिद्ध कवि, स्वतन्त्रता सेनानी, युवकों के हृदय सम्राट श्री उत्तम चन्द जी शरर के अभिनन्दन ग्रन्थ को आप प्रकाशित करवा रहे हैं। इस ग्रन्थ के सफल प्रकाशन हेतु मेरी हार्दिक शुभकामनायें प्रेषित हैं।

अभिनन्दन ग्रन्थ जहां व्यक्ति द्वारा जीवन भर किये गये सुकार्यों का अभिनन्दन है, वहीं उनसे प्रेरणा प्राप्त असंख्य ऐसे युवक जो वर्तमान में आर्य वीर दल अथवा आर्य समाज के क्षेत्र में कार्य कर रहे हैं की ओर से गुरु दक्षिणा भी है।

मुझे याद आ रही है उन दिनों की जब दिल्ली में आर्य वीर दल इतना सक्षम नहीं था, इस कारण मुझे पिताजी ने आर्य वीर दल हरियाणा के अन्तर्गत लगाये गये शिविरों में गुड़गाँव भेजा। मुझे गुड़गाँव में लगाये गये शिविरों में कई वर्ष जाने का सुअवसर प्राप्त हुआ और वहीं इन शिविरों में श्री शरर जी के व्यक्तित्व से मैं अपने बाल्यकाल से ही प्रभावित रहा। उनकी वीर रस की मन को झकझोर देने वाली कवितायें और एक विशेष उत्तेजक शैली में उनके कविता पाठ की आज भी मन मस्तिष्क में गहरी छाप लिए हुए हूं। यदि यह कहें कि परमपिता परमात्मा ने उत्तम चन्द शरर एकही उत्पन्न किया है तो इसमें कोई अतिशयोक्ति न होगी क्योंकि उन सा आर्य समाज और आर्य वीर दल को समर्पित कवि शायद ही कोई देखने को मिले।

परमपिता परमात्मा से प्रार्थना है कि श्री शरर जी दीर्घायु हों और वह निरन्तर हमारे प्रेरणा स्रोत बने रहें।

अजय सहगल

श्रीमती विमल महता

के.एल. महता दयानन्द पब्लिक स्कूल्ज़, फ़रीदाबाद

सन्देश

सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा के तत्वावधान में मनाये जा रहे "प्रो. उत्तमचन्द जी शरर के अभिनन्दन-ग्रन्थ-विमोचन" समारोह सम्बंधी पत्र मिला। यह जानकर अत्यन्त हर्ष हुआ कि आर्य समाज में लेखनी तथा वाणी वीरों का सम्मान अभी शेष है। महर्षि दयानन्द के सिद्धान्तों के कर्मठ प्रचारक, वेद-मनीषी, आर्य समाज के प्रचार-प्रसार से आजीवन जुड़े शरर जी का सम्पूर्ण आर्य जगत् अभिनन्दन करता है और मैं, विशेष रूप से आर्य केन्द्रीय सभा, महर्षि दयानन्द शिक्षण संस्थान एवं आर्य समाज नेहरू-ग्राऊण्ड फ़रीदाबाद की ओर से उनके स्वास्थ्य एवं दीर्घायु के लिए ईश्वर से प्रार्थना करती हूं। उनकी छत्रछाया हम पर बनी रहे।

विमल महता

पद्मश्री ज्ञान प्रकाश चोपड़ा

प्रधान
डी.ए.वी. कालेज प्रबंध समिति एवं
आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा,
नई दिल्ली

सन्देश

यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा तथा प्रो. उत्तमचन्द शरर अभिनन्दन समारोह समिति के संयुक्त तत्वावधान में आर्य समाज के सुप्रसिद्ध प्रकाण्ड विद्वान प्रो. उत्तमचन्द शरर पानीपती का आप अभिनन्दन समारोह कर रहे हैं तथा उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर एक अभिनन्दन ग्रन्थ भी प्रकाशित कर रहे हैं।

प्रो. उत्तमचन्द शरर केअभिनन्दन से आर्य समाज के मूर्धन्य विद्वानों एवं स्वतन्त्रता सेनानियों का मान बढ़ेगा तथा इससे अनेक आर्य विद्वानों व युवा पीढ़ी को प्रेरणा मिलेगी।

प्रो. शरर का देश के स्वाधीनता आन्दोलन में महान योगदान रहा है जिस को भुलाया नहीं जा सकता। उनका साहित्य सृजन, लेख एवं काव्य, विशेषरूप से उनके "इन्द्रधनुष" नामक संग्रह की भावात्मक शैली हृदय को छू लेने वाली है।

ऐसे विद्वान शिक्षक, बहुमुखी प्रतिभा के धनी प्रो. उत्तमचन्द शरर पानीपती की दीर्घायु की पूरे डी.ए.वी. परिवार एवं आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा की ओर से कामना करता हूं।

शुभेच्छु,
ज्ञान प्रकाश चोपड़ा

श्री वेदव्रत शर्मा

मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,
नई दिल्ली

संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि पानीपत के प्रबुद्ध आर्यजनों ने आर्यजगत् के प्रख्यात विद्वान् प्रो. उत्तमचन्द शरर जी का अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशित करने का निर्णय लिया है।

प्रो. शरर अपने अध्यापन काल से लेकर आज तक वैदिक धर्म व संस्कृति के प्रचार प्रसार में सदैव संलग्न रहे। उन्होंने हैदराबाद आर्य सत्याग्रह में भाग लिया और भारत सरकार की ओर से स्वतन्त्रता सेनानी का भी सम्मान प्राप्त किया। उन्होंने अपने जीवन काल में कई पुस्तकों का लेखन कार्य भी किया, जिनमें फूल और कांटे, आर्यों का शिकवा जवाब शिकवा, इन्द्रधनुष, सामगान आदि प्रमुख हैं। वे एक उच्च श्रेणी के कवि भी हैं उन्होंने आर्यजगत् के विभिन्न समारोहों के अवसर पर आयोजित कवि सम्मेलनों एवं कवि दरबारों की अध्यक्षता भी की है।

आशा है कि उनके इस अभिनन्दन ग्रन्थ से सामान्य जनता को भी उनके जीवन कार्यों की जानकारी मिलेगी, जिससे वे भी उनके जीवन से प्रेरणा ले सकेंगे। महर्षि दयानन्द के अनुयायी होने के नाते उन्होंने अपना सारा जीवन हिन्दी के प्रचार-प्रसार में लगाया।

मैं सार्वदेशिक सभा की ओर से प्रो. शरर जी के शतायु होने की कामना करता हुआ अभिनन्दन ग्रन्थ समारोह समिति के सभी प्रबुद्ध सदस्यों का धन्यवाद करता हूं तथा अभिनन्दन ग्रंथ के सफल प्रकाशन की कामना करता हूँ। शुभकामनाओं सहित,

वेदव्रत शर्मा

बलवीरपाल शाह
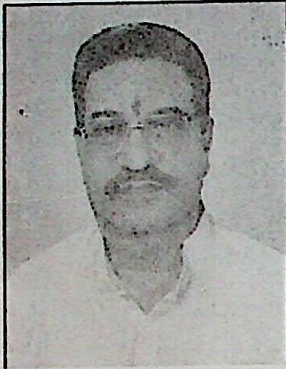
विधायक, पानीपत

सन्देश

मुझे यह जानकर अति प्रसन्नता हुई है कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली तथा अभिनन्दन समारोह समिति पानीपत की ओर से आर्य जगत के प्रतिष्ठित विद्वान, मूर्धन्य कवि, शिक्षक एवं स्वतन्त्रता सेनानी प्रोफ़ेसर उत्तम चन्द शरर का अभिनन्दन किया जा रहा है।

मैं समझता हूं कि प्रोफ़ेसर उत्तम चन्द जी शरर जैसे व्यक्तित्व का अभिनन्दन समारोह करके आर्य प्रतिनिधि सभा स्वयं गौरवान्वित हो रही है। क्योंकि जिस श्रद्धा, ईमानदारी व देशभक्ति से श्री शरर जी ने समाज एवं देश की सेवा की है वह अपने आप में अनुकरणीय उदाहरण है। श्री शरर जैसे लोग विरले ही होते हैं जो मज़हबो-मिल्लत से ऊपर उठकर देश व समाज की सेवा में तत्पर रहते हैं तथा अपना पूरा जीवन देश को समर्पित कर जाते हैं।

प्रोफ़ेसर उत्तम चन्द जी शरर एक विद्वान शिक्षक भी रहे हैं। उनके चरणों में बैठकर मुझे भी शिक्षा ग्रहण करने का अवसर मिला है, वे दिन मैं आज भी नहीं भूला हूं।

प्रोफ़ेसर साहब जैसे सुप्रतिष्ठित विद्वान को सम्मानित करने के लिये मैं एक बार पुनः आर्य प्रतिनिधि सभा व अभिनन्दन समिति का आभार प्रकट करता हूं तथा अपनी शुभकामनाएं अर्पित करता हूँ।

बलवीरपाल शाह

एम. आर. आनन्द

उपायुक्त, पानीपत

सन्देश

मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है कि आप द्वारा आर्य जगत् के प्रतिष्ठित विद्वान, कवि, शिक्षाविद् एवं प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी प्रोफ़ेसर उत्तम चन्द शरर पानीपती के अभिनन्दन के उपलक्ष्य में अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशित करवाया जा रहा है। ऐसी महान विभूति पर न केवल पानीपत वासियों को बल्कि प्रदेशवासियों को भी गर्व है जिन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में अपने ज़िला, प्रदेश व राष्ट्र के गौरव को बढ़ाया है।

श्री शरर जी के अभिनन्दन ग्रन्थ के प्रकाशन से युवा पीढ़ी को प्रेरणा मिलेगी जिससे वे उनके पद चिह्नों पर चलकर अपने जीवन को सफल बना सकेंगे।

मैं इस ग्रन्थ के प्रकाशन के लिए प्रकाशक मंडल के सभी सदस्यों को अपनी हार्दिक शुभ कामनाएं देता हूं।

आपका

एम.आर.आनन्द
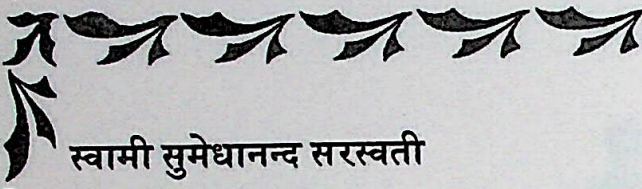
स्वामी सुमेधानन्द सरस्वती

अध्यक्ष दयानन्द मठ, चम्बा (हि.प्र.)
एवं अध्यक्ष आर्य प्रतिनिधि सभा, हि.प्र.

सन्देश

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा तथा अभिनन्दन समारोह समिति पानीपत प्रो. उत्तमचन्द जी शरर का अभिनन्दन करने जा रही है, यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई। सन् १९३९ में प्रो. शरर जी ने हैदराबाद सत्याग्रह में जा कर कारावास की सज़ा काटी। ऐसे विद्वान्, कवि, वक्ता को मैंने भी कई बार चम्बा बुलाया है।

महर्षि दयानन्द के सपनों को साकार करने के लिए प्रो. उत्तम चन्द शरर ने अपना जीवन प्रचार में लगा दिया। विदेश में भी प्रचार के लिये गये। ऐसे विद्वान् के अभिनन्दन में सम्मिलित होने का पूरा प्रयास करूंगा। परमपिता से यही प्रार्थना है कि यह शतायु हों। इस समारोह की सफलता के लिये मेरी शुभ कामनायें।

स्वामी सुमेधानन्द सरस्वती
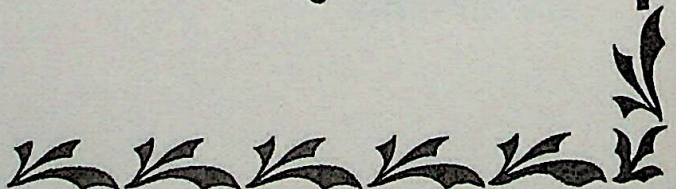
आर्य तपस्वी सुखदेव
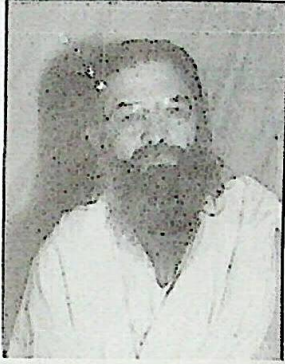
वैदिक प्रवक्ता
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,
नई दिल्ली

सन्देश

मृत्योः पदं योपयन्तो यदैत, द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः।
आप्यायमानाः प्रजया धनेन, शुद्धाः पूता भवत यज्ञियासः।

ऋ. १०/१८/२ अथर्व. १२/२/३०

वेद के इस मन्त्र अनुसार जो प्राणी इस संसार में आकर भीतर व बाहर से पवित्र व निर्मल बन कर, ईश्वर का सच्चा पुत्र बनकर अपने जीवन को कर्मशील बनाते हुए संसारवासियों के ए कल्याणकारी कार्य करता है, वह अपने शरीर को आयु के बोझ से मरे शरीर की तरह नहीं ढोता अपितु प्रभु की वाणी से प्रेरणा लेकर स्वयं भी सत्य ज्ञान के प्रकाश से सुगंधित करता है और संसार को सुगंधित करते रहने का पुरुषार्थ करता रहता है।

अत्यंत तपमय जीवन प्रो. उत्तम चन्द शरर जी का रहा है। प्रभु इन्हें इस प्रकार का पवित्र जीवन तथा दीर्घायु प्रदान करे और ऐसे कार्य करते रहने का बल प्रदान करे।

इन्हीं शुभ कामनाओं के साथ,

आर्य तपस्वी सुखदेव

डा. आर.बी. लांगायन
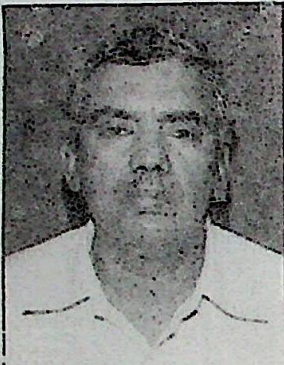
आई.ए.एस.
उपायुक्त, फतेहाबाद

सन्देश

विनम्रता की मूर्ति प्रो. उत्तम चन्द शरर

आर्य समाज के सहतीर पंडित लेखराम जी उनकी प्रशंसा करने वालों को कहा करते थे कि प्रशंसा ऋषि मुनियों व महापुरुषों की करनी चाहिए, उन्हीं का गुणगान करना चाहिए। ठीक यही बात मैंने प्रो. उत्तम चन्द शरर में देखी। अहंकार, पद, नाम से हमेशा वे दूर रहे। सादा जीवन व उच्च विचार को अपने जीवन की खुराक समझते हुए एक लम्बी उमर पाई। आर्य समाज को समर्पित उनका योगदान कभी विस्मृत नहीं किया जा सकता। एक अच्छे पुरुष की भांति उन्होंने अपने आसपास सुगन्ध बिखेरी। वेदों के प्रकाण्ड विद्वान् की लेखनी कभी रुकी नहीं। वेदों का अनुवाद किया। सारी उमर शिक्षा जगत् से जुड़े रहे। कितने ही युवकों को उन्होंने जीवन दान दिया। परिवार में रहते हुए भी वे एक सन्यासी की तरह जीवन यापन करते रहे। उन्होंने सिद्ध कर दिया कि गृहस्थी रहते हुए भी इन्सान समाज की महान् सेवा कर सकता है। उनका जीवन आदर्शमय है और पानीपत वासियों ने उनके जीवन से सदैव प्रेरणा ली है और उनको सम्मान भी दिया है। जीवन की ढलती उमर में उनकी स्मृति में अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशित करना सचमुच एक महात्मा का सम्मान करना है। इसे प्रकाशित करके पानीपत वासियों ने और विशेषकर आर्यजगत् ने अपना उत्तरदायित्व निभाया है। इस ग्रन्थ से भावी पीढ़ियां प्रेरणा लेंगी और उनकी याद चिरस्थायी बनी रहेगी ऐसी मेरी कामना है। मैं परमपिता परमात्मा से उनकी दीर्घायु की कामना करता हूं ताकि वे अनुभव और ज्ञान को और भी समाज में बांट सकें।

डा. आर.बी. लांगायन

प्रधान, महर्षि दयानन्द सेवाधाम ट्रस्ट
संरक्षक आर्य वीर दल हरियाणा

सन्देश

मुझे यह जानकर अत्यधिक प्रसन्नता हुई कि श्रद्धा के पात्र प्रो. उत्तमचन्द शरर को सम्मानित करने का प्रोग्राम बनाया गया है। शरर जी ने आर्य समाज की सेवा स्वार्थ और लोभ से ऊपर उठकर त्याग और समर्पित भाव से की है जो एक मिसाल है। उन्होंने हैदराबाद और हिन्दी रक्षा आन्दोलन में बढ़-चढ़ कर भाग लेकर एक अनुशासित आर्य वीर का परिचय दिया। धन देकर सेवा करना आसान है, पर सारा जीवन निःस्वार्थ भाव से सेवा और प्रचार करना अति कठिन है जिसमें वह पूर्ण रूपेण सफल हुए हैं।

हरियाणा में आर्य वीर दल को पुनः खड़ा करने का सबसे ज़्यादा श्रेय प्रो. साहिब और लाला लक्ष्मण दास आर्य पांच भाई साबुनवालों को जाता है।

मैं इस आयोजन की पूर्ण रूपेण सफलता की हार्दिक कामना करता हूं और कर्मठ आर्यों से आशा करता हूं कि वह सच्चे-सुच्चे छवि के समर्पित कार्यकर्ताओं को सम्मानित करने की परम्परा को बलवती बनायेंगे, जिससे कार्यकर्ता उत्साहित होकर ऋषि के मिशन को प्रचण्ड स्वरूप देने में जी जान से जुट सकें।

मनोहर लाल आनन्द

अध्यक्ष, संस्कृत सेवा संस्थान
७७६/३४, हरिसिंह कालेनी, रोहतक

सन्देश

आर्यजगत् के महारथी : प्रो. उत्तम चंद 'शरर'

आपका पत्र मिला। यह जानकर अति प्रसन्नता हुई कि आर्य जगत् के एक महारथी प्रो. उत्तमचन्द शरर का अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशित किया जा रहा है।

प्रो. उत्तम चन्द शरर के मैंने भारत-विभाजन के उपरान्त दयानन्द-मठ रोहतक में प्रथम दर्शन किये थे। जब कि प्रो. शरर जी माननीय श्री परमानन्द जी विद्यार्थी के साथ समाज के निर्बल वर्ग में विद्यालय/पाठशाला आदि की स्थापना के माध्यम से समाजसेवा में संलग्न थे। प्रो. शरर जी आर्य भाषा हिन्दी के उद्भट विद्वान् हैं और उन्हें कवित्व शक्ति प्रभु-कृपा से प्राप्त हुई है। प्रो. शरर जी आर्य समाज को अपनी माता मानकर हैदराबाद सत्याग्रह, हिन्दी आन्दोलन और आर्य वीर दल के माध्यम से एक सपूत के तुल्य उसकी सेवा में निरत रहे हैं और वैदिक धर्म का देश-विदेश में पवित्र नाद बजाते रहे हैं।

आर्य समाज के सेवक विद्वान् तथा परिव्राजक आदि अपनी आयु के अन्तिम चरण में विपन्न अवस्था में देखते जाते हैं। आशा है प्रो. शरर जी आदि विद्वानों को आर्य समाज पूर्ण संरक्षण एवं सम्मान प्रदान करेगा जिससे आर्य समाज के सेवक उत्साह पूर्वक उसकी सेवा में तत्पर रहें।

प्रो. शरर जी की उत्तम-कविताओं का पृथक् से भी प्रकाशन किया जाना चाहिये।

सुदर्शन देव आचार्य

डॉ. जय नारायण कौशिक

पूर्व निदेशक हरियाणा साहित्य
अकादमी, चंडीगढ़
सी–६०५, सरस्वती विहार,
दिल्ली–११००३४

स्वनामधन्य : प्रो. उत्तमचंद 'शरर'

डा. बीजेन्द्र जैमिनी के माध्यम से यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि प्रो. 'उत्तमचन्द शरर' के अभिनंदन समारोह का आयोजन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली तथा अभिनंदन समिति पानीपत के संयुक्त तत्त्वावधान में हो रहा है। अभिनन्दन समारोह के आयोजकों तथा अभिनंद्य महानुभाव को मेरी ओर से हार्दिक शुभकामनाएँ।

प्रो. साहिब तो अपने 'उत्तम' नाम के कारण स्वयं ही स्वनामधन्य हैं। इनका 'शरर' उपनाम भी प्रेरणाप्रद है। अरबी के इस शब्द का अर्थ है—अग्नि कण, स्फुलिंग या चिनगारी। जिनके नाम में इतनी ऊर्जा हो उसके अभिनंदन में समान गुणधर्मी 'ज्वाला प्रकाश' जी का सहभागी होना स्वाभाविक ही है।

एक ही व्यक्ति में विद्वान्, कवि, वंदनीय शिक्षक और अभिनंदनीय स्वतंत्रता सेनानी के चतुर्वर्ग का समावेश होना असाधारण बात है।

ऐसे गुणी व्यक्ति को निमित्त बनाकर उसके गुणों का बखान करना वर्तमान और भावी पीढ़ियों को सतत प्रेरणा देता रहेगा।

डॉ. जय नारायण कौशिक

महाप्रबंधक
दैनिक भास्कर हरियाणा
पानीपत-१३२१०३

सन्देश

महोदय,

मुझे यह जानकर बेहद प्रसन्नता हुई है किप्रो. उत्तम चन्द शरर जी का अभिनन्दन किया जा रहा है और इस अवसर पर एक अभिनन्दन ग्रन्थ का प्रकाशन किया जा रहा है। जहां तक मैं श्री उत्तम चन्द्र शरर जी को जानता हूं वे अपने नाम के अनुरूप न केवल उत्तम हैं बल्कि सर्वोत्तम हैं। अभिनन्दन समारोह की सफलता के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएं। श्री उत्तम चन्द शरर जी के जीवन पर प्रकाशित अभिनन्दन ग्रन्थ लोगों के लिए प्रेरणा का स्रोत बनेगा।

जगदीश शर्मा

डा. आनन्द प्रसाद जैन

प्राचार्य
आर्य महाविद्यालय, पानीपत

सन्देश

मान्यवर, मुझे यह जानकर प्रसन्नता का अनुभव हुआ कि प्रो. उत्तम चन्द शरर अभिनन्दन समारोह समिति की ओर से अभिनन्दन ग्रंथ का प्रकाशन हो रहा है।

प्रो. उत्तम चन्द शरर आर्य जगत के प्रख्यात विद्वान, रससिद्ध कवि, ओजस्वी वक्ता, कर्मठ नेता और गतिशील व्यक्तित्व हैं। स्वतन्त्रता सेनानी के रूप में आपने राष्ट्र-स्वातन्त्र्य के यज्ञ में अपना योगदान दिया। स्वतन्त्रता के बाद आपने जीवन का ध्येय महर्षि दयानन्द सरस्वती और आर्य समाज के सिद्धान्तों के प्रचार प्रसार को ही बना लिया। देशभर में मिशनरी की तरह घूमते हुए आपने अपनी वक्तृत्व कला से सभी को प्रभावित किया है।

समर्पित शिक्षक के रूप में शरर जी नई पीढ़ी को प्रेरणा देने की क्षमता रखते हैं। मुझे यह गर्व है कि प्रो. शरर जैसा व्यक्तित्व आर्य कॉलेज पानीपत में तीन दशक पूर्व शिक्षण कार्य कर चुका है। प्रो. शरर का जीवन एक खुली किताब की तरह है, जिसे कोई भी पढ़ सकता है। व्यक्तित्व की यही पारदर्शिता आपको आदरणीय बनाती है। शरर जी के अनुकरणीय जीवन को देखकर निम्न पंक्तियाँ स्मरण आ रही हैं—

जीवन वह जो पीड़ा में भी शान्त रहे मुस्काता जाये।
पूजा उसकी जो विष पी ले, नर से नारायण बन जाये॥

जीवन और जवानी वह है लहरों के प्रतिकूल चले जो।
मैं तो दीपक उसे कहूँगा तूफानों के बीच जले जो॥

शरर जी के जीवन और कार्यों पर आधारित प्रस्तुत अभिनन्दन ग्रंथ पठनीय और प्रेरणाप्रद होगा; मेरा विश्वास है।

अभिनन्दन समारोह समिति को इस सारस्वत-यज्ञ के लिए मेरी अग्रिम शुभकामनाएँ।

डा. आनन्द प्रसाद जैन

पूर्व राजदूत
डी २१३, इला एपार्टमैंट्स,
बी-७, वसुन्धरा एन्क्लेव, दिल्ली

मंगलकामनाएँ

साहित्य एवं समाज सेवी महानुभावों का व्यक्तित्व एवं कृतित्व जीवन में सफलता और सार्थकता के लिए प्रकाश-स्तम्भ के समान होता है। ये महानुभाव ध्येय के प्रति पूर्ण समर्पणशीलता, उदारता एवं सदाशयता, सौहार्द एवं सद्भाव, आस्था और आत्मविश्वास, निष्ठा और परिश्रम, निःस्वार्थ सेवा और त्याग आदि गुणों के द्वारा समाज में ऐसे समन्वयवादी, समरस और प्रीतिपूर्ण परिवेश की सृष्टि करने में सहायक होते हैं जिससे लोगों को सच्चे सुख की अनुभूति होती है। अतः हम सभी का यह पुनीत कर्त्तव्य है कि हम इन महानुभावों का समुचित समादर और अभिनंदन करें।

यह परम परितोष की बात है कि सुप्रसिद्ध विद्वान, काव्य-मर्मज्ञ, सम्मान्य शिक्षक, मुक्ति आंदोलन के निर्भीक सेनानी, आर्यजगत के कर्मठ कार्यकर्ता प्रो. उत्तमचंद शरर पानीपती का अभिनंदन किया जा रहा है जिसका आयोजन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली तथा अभिनंदन समारोह समिति, पानीपत संयुक्त रूप से कर रहे हैं। मैं समारोह आयोजित करने वाली संस्थाओं को हृदय से साधुवाद देता हूँ। उनका यह शुभकार्य सर्वप्रकारेण श्लाघनीय है।

अभिनंदन समारोह के अवसर पर एक अभिनंदन ग्रंथ प्रकाशित करने की भी योजना है। यह अत्यंत सराहनीय संकल्प है क्योंकि इस ग्रन्थ के माध्यम से अभिनंदनीय कार्य के लिए स्थायी स्वरूप प्रदान किया जा सकेगा।

मैं श्रद्धेय उत्तमचंद शरर का अभिवादन करते हुए अभिनंदन ग्रंथ के सफल प्रकाशन हेतु हार्दिक मंगलकामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

शुभाकाँक्षी
डा. वीरेन्द्र शर्मा

प्रो. चमन लाल गुप्त
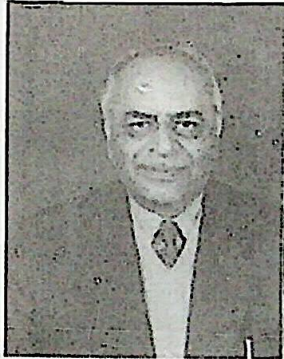
अध्यक्ष,
हिमाचल प्रदेश स्कूल शिक्षा बोर्ड,
धर्मशाला (हि.प्र.)

सन्देश

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई है कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली तथा प्रो. उत्तम चन्द शरर अभिनन्दन समारोह समिति, पानीपत के संयुक्त तत्वावधान में आर्य जगत् के सुप्रतिष्ठित विद्वान कवि, वंदनीय शिक्षक एवं अभिनन्दनीय स्वतन्त्रता सेनानी प्रो. उत्तम चन्द शरर पानीपती के सम्मान में एक अभिनन्दन समारोह का आयोजन किया जा रहा है तथा इस शुभ अवसर पर उनका अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशित किया जा रहा है।

सुप्रतिष्ठित विद्वानों, कवियों, शिक्षकों तथा स्वतन्त्रता सेनानियों का समाज तथा राष्ट्र की प्रगति के लिए दिया गया मार्गदर्शन बहुत ही अमूल्य होता है। समाज का दायित्व बनता है कि इस तरह के व्यक्तित्व का समारोहपूर्वक सम्मान किया जाये तथा उनके पद चिह्नों पर चलने का प्रयास किया जाये।

मैं इस सन्देश के माध्यम से प्रो. उत्तम चन्द शरर जी का हार्दिक अभिनन्दन करता हूं तथा समारोह की सफलता की कामना करता हूं।

प्रो. चमन लाल गुप्त

श्रीमती वेदवती आर्या

प्रधाना
स्त्री आर्यसमाज बड़ा बाज़ार,
पानीपत

सन्देश

मुझे यह जानकर अति प्रसन्नता हो रही है कि माननीय श्री पं. उत्तमचन्द जी 'शरर' का सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा एवं आर्यसमाज पानीपत अभिनन्दन समारोह समिति के संयुक्त तत्त्वावधान में अभिनन्दन समारोह होने जा रहा है तथा इस शुभावसर पर एक अभिनंदन ग्रन्थ का प्रकाशन भी हो रहा है।

वस्तुतः पं. शरर जी वैदिक सिद्धान्तों के मर्मज्ञ विद्वान्, सफल प्राध्यापक, ओजस्वी प्रवक्ता एवं श्रेष्ठ चिन्तक मनीषी हैं। इन जैसे नररत्न पर केवल पानीपत ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण भारतवर्ष के आर्यों को गर्व है। ऋषि मिशन के दीवाने, कर्मठ कार्यकर्ता मान्य पं. उत्तम चन्द जी ने अपनी लेखनी, भाषण तथा संगठन कुशलता द्वारा जो कार्य किया है उससे सारा आर्यजगत् परिचित है। सरलता और सौम्यता की मूर्ति श्रद्धेय शरर जी 'यथा नाम तथा गुण' के अनुसार विचार व व्यवहार में सर्वोत्तम हैं।

मैं महिला आर्यसमाज बड़ा बाज़ार की ओर से अभिनन्दन समारोह समिति के सम्पादक मण्डल को साधुवाद देती हुई मान्य शरर जी की दीर्घायु की कामना करती हूँ।

वेदवती आर्या

श्री बीजेन्द्र कुमार जैमिनी

निदेशक
जैमिनी अकादमी
पानीपत

सन्देश

जय हिन्दी! जय भारत!

जानकर खुशी हुई कि आप प्रो. उत्तमचन्द शरर पर अभिनन्दन ग्रन्थ का सम्पादन कर रहे हैं। कृपया बधाई स्वीकार करें।

प्रो. उत्तम चन्द जी आर्य समाज तथा हरियाणा के गौरव हैं, ऐसे व्यक्तित्व व कृतित्व पर अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशित होना ही चाहिए।

सफलता की कामनाओं के साथ

भवदीय
बीजेन्द्र कुमार जैमिनी

चौ. मित्रसेन सिन्धू

सिन्धु भवन,
सैक्टर-१४, रोहतक

सन्देश

आर्य जगत् के यशस्वी वैदिक विद्वान् प्रोफ़ेसर उत्तमचन्द जी शरर का जीवन आर्य जगत् के लिए एक वरदान सिद्ध हुआ है।

आपने अपने लेखों एवं प्रवचनों में आर्य समाज की मान्यताओं को बड़े ही सुन्दर रूप में प्रस्तुत किया है।

'शरर' जी का विशेष लगाव रोहतक नगर से रहा है। आपके कर कमलों द्वारा ही आर्यसमाज शिवाजी कालोनी की स्थापना हुई।

वैदिक सिद्धान्तों से ओत-प्रोत प्रो. उत्तम चन्द जी शरर का सम्मान होना एक हर्ष का विषय है।

सम्मान समारोह से जुड़ा प्रत्येक कार्यकर्ता बधाई का पात्र है। श्रद्धेय शरर जी के सुस्वास्थ्य एवं दीर्घजीवन की मंगलकामना के साथ,

चौ. मित्रसेन सिन्धू

यशपाल आचार्य
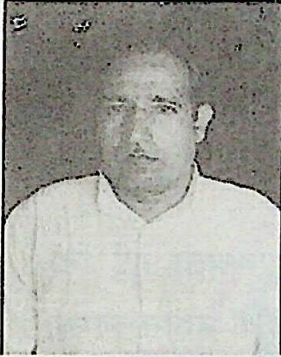
अध्यक्ष, तदर्थ समिति
आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा
दयानन्द मठ, रोहतक

संदेश

उत्तमचन्द जी शरर का अभिनन्दन महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज के बहादुर योद्धा का सम्मान है। आपने आर्य कालेज पानीपत में प्रोफ़ेसर रहते हुए आर्यसमाज की विचारधारा को नवयुवकों के दिल और दिमाग़ में बैठाने का भरसक प्रयत्न किया। आपकी लेखनी से व आपकी वाणी से दयानन्द के मिशन की धारा प्रवाहित होती थी।

आप आर्य वीर दल के प्रधान संचालकों में से हैं, हिन्दी रक्षा हेतु हिन्दी आन्दोलन में भी आपने जेलों की यातनायें सहीं, आप उत्तमकोटि के कवि भी हैं, आर्य कालेज लुधियाना में प्राध्यापक रहते हुये भी आर्यसमाज का प्रचार किया। आप जहां भी रहे आपकी आर्य जगत् में अलग पहचान रही। आर्यसमाज खैल बाज़ार पानीपत की स्थापना में आपका प्रमुख स्थान है। रोहतक सनातन धर्म मंदिर में बहादुरी के साथ आपने पाखण्ड का विरोध किया। आप अकेले होते हुए भी नहीं घबराये, सनातनियों ने इकट्ठे होकर आपको घेर लिया और अग्नि में डालने की कुचेष्टा की, किन्तु मौके पर आर्य वीर दल के कार्यकत्ताओं ने आपका साथ दिया। आपकी बहादुरी के लिए भिवानी स्टैण्ड पर आर्यसमाज की तरफ से आपको सम्मानित किया गया। आप आजीवन ही आर्यसमाज के कार्य के प्रति समर्पित रहे। आपके अभिनन्दन ग्रन्थ के प्रति आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा की तरफ से हमारी हार्दिक शुभ कामना है, तथा ईश्वर से प्रार्थना है कि आपको स्वस्थ दीर्घायु प्राप्त हो।

परिवर्तिनी संसारे मृतः को वा न जायते।
स जातु येन जातेन यातिवंश समुन्नतिम्॥

यशपाल आचार्य

गनपत राय भ्याना
आर्य समाज
झांसी

संदेश

माननीय प्रधान जी, आपका पत्र मिला। पढ़कर प्रसन्नता हुई कि आप सार्वदेशिक सभा के संयुक्त तत्वावधान में आर्य समाज के महान स्तम्भ आदरणीय श्री उत्तमचन्द जी शरर के अभिनन्दन समारोह का आयोजन कर रहे हैं।

आदरणीय शरर जी ने अपना सम्पूर्ण जीवन आर्य समाज के प्रचार एवं प्रसार में लगा दिया। आर्य समाज की विचार धारा उनके खून की बूंद-बूंद में समायी है। वह एक प्राध्यापक होते हुए भी आर्य समाज के एक सशक्त वक्ता भी हैं। आपने भारतवर्ष के कोने-कोने में स्वामी दयानन्द सरस्वती के विचारों का प्रचार करते हुये आर्य समाज को जीवंत रखा है। भारत की ऐतिहासिक नगरी झांसी में लगभग ४० वर्षों तक आपने स्वामी दयानन्द सरस्वती की विचारधारा की झांसी वासियों के हृदय पर अमिट छाप छोड़ी।

इस अभिनन्दन समारोह पर हम सब झांसी वासी श्री शरर जी की दीर्घायु, स्वास्थ्य एवं सुखद जीवन की ईश्वर से कामना करते हैं।

शुभाकांक्षी
गनपत राय भ्याना

शरर जी
का
व्यक्तित्व
औरों की नज़र में

सहृदय एवं सुहृज्जनोद्गार

प्रो. उत्तम चन्द 'शरर' एम.ए. : महर्षि के समर्पित सेनानी

—उमाकान्त उपाध्याय

प्रो. 'शरर' का व्यक्तित्व बहुमुखी है। आजीविका की दृष्टि से वे कालेजों के प्राध्यापक, प्रतिष्ठित-प्रतिभासम्पन्न प्राध्यापक रहे। कवित्व इनकी स्वाभाविक जन्मजात प्रवृत्ति रही है। 'शरर' इनका कविनाम भी अपनी भावना का स्फुलिंग द्योतन करता है। ये व्याख्याता हैं, उपदेशक हैं, श्रोताओं की भावनाओं को एक शुभ कल्याणमयी दिशा में तरंगित-प्रवाहित करने में सर्वथा समर्थ वक्ता हैं। किन्तु इनका जीवन, 'उत्तमचन्द' के प्राण कहाँ बस रहे हैं? आज इस ८६-८७ वर्ष की आयु में भी श्वास प्रश्वास में यौवन की सी प्रतिभामयी स्फूर्ति को जीवन मिल रहा है "वेद-महर्षि दयानन्द और आर्य समाज के मिशन" के प्रति सर्वात्मना समर्पण में। सो, 'उत्तमचन्द' के बहुमुखी व्यक्तित्व का 'उत्तम' भाग इसी समर्पण में निहित है। व्याख्यान हो या उपदेश, सामाजिक हो या आध्यात्मिक, कवि सम्मेलन हो या और कोई प्रसंग, प्रो. उत्तम चन्द की तेजस्विता इस समर्पण में ही अपना स्वाभाविक निखार पाती है।

आर्य समाज कलकत्ता का साप्ताहिक सत्संग था। प्रो. उत्तम चन्द 'शरर' का उपदेश होना था। अग्रज 'शरर' जी उठे। प्रार्थना की। मनुष्य शरीर में भी द्यौ लोक, अन्तरिक्ष लोक आदि लोक हैं और साथ ही शान्ति पाठ के द्यौः शान्तिः आदि की व्याख्या की। फिर बोले—द्रुपद और द्रोण दोनों मित्र थे और दूसरी ओर कृष्ण और सुदामा भी मित्र थे। द्रुपद और द्रोण दोनों मित्रों का द्यौ लोक, मस्तिष्क संस्थान, अशान्त था और यह अशान्ति युद्ध में परिणत हुई। द्रोण ने द्रुपद को अर्जुन के द्वारा बँधवा लिया। यह है द्यौ लोक की अशान्ति का विनाशकारी परिणाम।

कृष्ण सुदामा भी मित्र थे। विपन्न सुदामा कृष्ण के यहाँ जाने के लिए मजबूर हुए। सुदामा की विपन्नता का सजीव चित्रण, कवि शरर के वर्णन में और भी सजीव हो

उठा—

"कोदो सवाँ जुरितौ भरि पेट, न चाहत हौं दधि दूध मिठौती।"

"शीत व्यतीत भयौ सिसियातहि, हौं हठती पै तुम्हैं न हठौती।"

आपकी कारुणिक शैली हृदय को छू रही थी। श्रोता करुणा से विगलित थे। सुदामा पहुँचे द्वारिका और कृष्ण सुदामा का नाम सुनते ही दौड़ पड़े, उन्हें स्वयं महलों में ले गये। मित्रता का प्यार, श्री कृष्ण परात में पानी लेकर उनके कुश काँटों से घायल पैर स्वयं ही धोने लगे—

"ऐसे बेहाल ब्यवाइन तें, प्रभु कण्टक जाल लगे पुनि जोये।
हाय महादुःख पायो सखा, तुम आये इतै न कितै दिन खोये॥
करुणा करिकै करुणा निधि रोये।
पानी परात को हाथ छुयौ नहिं, नैनन के जल सों पग धोये।"

शरर जी भावनाओं में हिलोरें ले रहे थे, श्रोता मैत्री की डोर में झूल रहे थे। यह है शरर जी के कवि की भाव मर्मज्ञता।

श्रोताओं पर मस्तिष्क की शान्ति और मित्रता निर्वाह का जादू सा प्रभाव पंड़ रहा था—"द्यौः शान्तिः" की महिमा का बखान।

नैरोबी के अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन में

१९७८ ई. में अफ्रीका में केन्या की राजधानी नौरोबी में आर्य महासम्मेलन हुआ था। यह नाम से भी सार्वभौम आर्य महासम्मेलन था और कामसे भी **"माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः'** का रूप लिए हुए था। इस समाज, अर्थात् आर्य समाज की सीमा सम्पूर्ण पृथवी, सम्पूर्ण संसार है। केवल भारतवर्ष की समस्याएँ सार्वभौम सम्मेलन में प्रमुखता नहीं पा सकती थीं। आदरणीय प्रो. उत्तमचन्द शरर जी ने अपने व्याख्यान में महर्षि दयानन्द जी के विश्व विराट व्यक्तित्व का अत्यन्त प्रभावपूर्ण कवितामय स्वरूप प्रकट किया। प्रो. शरर जी के पश्चात् व्यवस्थापकों ने, शायद, प्रो. शब्द को नाम के साथ जुड़ा देख कर, मुझे बोलने के लिए रख लिया था। मैंने भी विश्व हितैषी महर्षि के चिन्तन-बौद्धिक विश्व हितकारी स्वरूप और शिक्षा एवं सिद्धान्त को केन्द्रि करके व्याख्यान की रूप रेखा प्रस्तुत की थी। प्रो. शरर जी ने महर्षि के भौतिक, चारित्रिक, प्रतिभामय व्यक्तित्व को प्रस्तुत कियां था, तो मैंने उनके विश्वव्यापकविचार शिक्षा दर्शन को प्रस्तुत किया था। स्व. स्वामी सत्य प्रकाश सरस्वती अध्यक्षता कर रहे थे। उच्च कोटि

के विद्वान्, अतिपैनी तीक्ष्ण बुद्धि के व्यक्ति थे। उनसे यह अदृष्ट न रह सका कि प्रो. शरर ने महर्षि के भौतिक तपस्वी यशः शरीर की व्याख्या की थी और प्रो. उपाध्याय ने उनके वैदुष्य पूर्ण सिद्धान्ती यशः शरीर की महिमा का बखान किया था। हमारे दोनों की पारस्परिक परिपूरकता की व्याख्या एक ओर जहाँ स्वामी सत्य प्रकाश के तीक्ष्ण अवलोकन को प्रकट करती थी, वहीं हम दोनों के व्याख्यान के महत्त्व को भी आकर्षक बनाती थी। परिणाम यह हुआ कि हम दोनों के प्रथम दिन के व्याख्यान की चर्चा समय-समय पर पूरे सम्मेलन में होती रही। (द्र. लेखक की पुस्तक 'व्यतीत के यश की धरोहर' प्र. आर्य समाज कलकत्ता)

नैरोबी सम्मेलन की एक सन्ध्या कवि सम्मेलन के लिए निश्चित थी। कवि सम्मेलन के अध्यक्ष आदरणीय 'शरर' जी ही थे। किन्तु अध्यक्ष ऐसे जो स्वयं ही कवि सम्मेलन का संचालन भी कर रहे थे। कविवर शरर के द्वारा संचालित कवि सम्मेलन की कम से कम दो अविस्मरणीय विशेषताएँ रहती हैं—एक तो शरर जी कवि सम्मेलन की भूमिका ऐसी बना देते हैं कि किसी भी कवि में यह साहस नहीं हो पाता कि वह हल्की या श्रृंगारी या सिद्धान्तहीन कविता का पाठ करे। शरर जी के संचालन की दूसरी विशेषता यह है कि वे प्रत्येक कवि के कविता पाठ के पश्चात्-दो-चार वाक्यों में कविता पर टिप्पणी और दो ही तीन पंक्तियों की छोटी सी चुभती हुई कविता इस लहजे और स्वर में पढ़ देते हैं कि कवियों का हृदय उल्लसित हो उठता है और कवि सम्मेलन की शोभा में चार चाँद लग जाते हैं।

नैरोबी में हमने धीमे से एक और बिन्दु को लक्ष्य किया। श्री शरर जी घनघोर महर्षि भक्त और महर्षि महिमागान के दीवाने हैं। हमारे सम्मेलनों में आरम्भ में वेदमन्त्रों का औपचारिक पाठ किया जाता है—औपचारिक इसलिए किइसमें हृदय कम और परम्परा निर्वाह अधिक होता है। इस सम्मेलन में शरर जी का मन यह था कि कवि-सम्मेलन का प्रारम्भ महर्षि की प्रशस्तिमय श्लोक पाठ से हो। यह कार्य वे मुझसे कराना चाहते थे। वे मेरी महर्षि भक्ति से पूर्ण रूप से परिचित थे। प्रथम दिन के व्याख्यानों की परिपूरकता से हमारी स्नेहिल समीपता और भी बढ़ गयी थी। मुझे अपनी निर्बलता का बोध था। मैं चाहता था कि कोई अधिक समर्थ विद्वान् इस 'महर्शि प्रशस्ति' के कार्य को पूर्णरूप से दक्षता के साथ सम्पन्न करे। शरर जी थे कि मुझे छोड़ते ही न थे। खैर, प्रशस्ति पाठ ठीक ही हुआ। मैंने स्मृति से पाँच श्लोक महर्षि की महिमा

के सुनाये। मेरे लिए संस्मरण यह बन गया कि कवि सम्मेलन संस्कृत कविताओं के पाठ से आरम्भ हुआ, और वह भी महर्षि महिमा से।

मेरा मन था कि मैं १० बजे के लगभग कवि सम्मेलन से उठ आऊँगा। शयन-जागरण में व्यतिक्रम न करूँगा। किन्तु शरर जी ने सम्मेलन को ऐसा जमाया, इतनी सुरुचि सम्पन्नता से सम्मेलन को ऐसा आकर्षक बनाया, कि जो आया वह कवि सम्मेलन का ही हो गया। मैं भी बारह-साढ़े बारह बजे के बाद ही उठ पाया। (द्र. मेरी पुस्तक 'व्यतीत के यश की धरोहर')

आर्य समाज कलकत्ता की शताब्दी

१९८५ ई. में आर्य समाज कलकत्ता की शताब्दी थी। कहने को तो यह कलकत्ता आर्य समाज, एक इकाई, की शताब्दी थी, पर वास्तव में यह पूर्वांचल में आर्य समाज की शताब्दी थी। सम्पूर्ण बंगाल, बिहार, उड़ीसा, पूर्वी बंगाल (बंग्लादेश), उत्तर प्रदेश के बहुत सारे आर्य समाज के भक्त एकत्र थे। सम्पूर्ण भारतवर्ष केकई समर्पित विद्वानों-प्रचारकों का अभिनन्दन किया गया था। इन अभिनन्दनीय विद्वानों में आदरणीय प्रो. शरर जी भी आमन्त्रित थे। उस समय इनकी आर्य समाज के प्रति निष्ठा का हमने और भी एक रूप देखा। आर्य समाज की प्रतिष्ठा के प्रति इनकी आत्मीयता अति सघन रूप में प्रस्फुटित हो आयी थी।

कई अन्य पुरोगमों में एक पुरोगम 'राष्ट्रीय एकता सम्मेलन' भी था। इसमें कलकत्ता के आर्क विशप श्री हेनरी डी.सौज़ा और विशप श्री डी.सी. गोरई आये थे। थे तो सिखों और मुसलमानों के भी प्रतिनिधि, किन्तु वे अधिक आक्रामक न थे। ईसाई प्रतिनिधि डी. सौज़ा बोलने में निपुण और प्रभावशाली सिद्ध हुए। मधुर-मधुर किन्तु तीखा आक्रमण 'आर्य समाज' पर था। ध्यातव्य है उस युग में वि.हि.प. या रा. स्वयंसेवक संघ अपनी आक्रामकता के लिए परिगणित कम थे। यह शुद्धि का काम, आक्रामकता की रणरूढ़ता केवल हमारे ही मैदान में थी। श्री डी. सौज़ा ने नीतिगत आक्रमण किया, मधुर शिष्ट, किन्तु, आक्रमण। वे अंग्रेजी में बोल रहे थे और उनकी वाग्मिता सुस्पष्ट प्रभावपूर्ण थी।

इस मोर्चे पर अपने पक्ष के आक्रमणात्मक उत्तर के लिए प्रो. शरर चिन्तित थे। चेहरा बोल रहा था। मुझे उनकी इस चिन्ता में सुख मिल रहा था। मैं पास ही बैठा था। मैंने अग्रज शरर जी को आश्वस्त किया कि इनका उत्तर मैं ही दूँगा। शरर जी मुझे अंग्रेजी में बोलते विदेशों में सुन चुके थे। मैंने आश्वस्त किया कि आज हमारा आक्रामक

भाषण इसके बाद ही सुन लीजिए। विवाद में सभा पर छा जाना भी व्याख्यान की एक कला है। हमने इसका भरपूर प्रयोग किया।

मैं जब व्याख्यान समाप्त करके बैठा, तो शरर जी का मुखमण्डल विजयभाव से गर्व-दर्पमय चमक उठा था। मैं तो भूल ही चुका होता, किन्तु, शरर जी आज भी उस प्रसंग को सुना देते हैं, मैं उनकी दयानन्दीय निष्ठा की मन ही मन प्रशंसा कर लेता हूँ।

इस शताब्दी में भी एक दिन सायंकाल का पूरा समय ६ से ९ कवि सम्मेलन के लिए निश्चित किया हुआ था। इस कवि सम्मेलन के भी अध्यक्ष, संयोजक, संचालक, सब, आदरणीय शरर जी ही थे। शरर जी के कवि सम्मेलनों की यह विशेषता है कि सम्मेलन में जाना या न जाना, यह किसी व्यक्ति की रुचि-अनुकूलता पर निर्भर करता है, किन्तु इनके कवि सम्मेलन का आकर्षण कुछ ऐसा बनता है कि जो वहाँ गया, वह वहीं का हो गया। कलकत्ता शताब्दी में भी यही हुआ। समय कम पड़ गया, किन्तु लोग जैसे मन्त्र-मुग्ध से जमे ही रहे।

'शरर' जी का एक पद

हमने १९९० में 'सत्यार्थ प्रकाश' पर कई वर्षों के अनवरत अध्यवसाय से एक ग्रन्थ लिखा 'सत्यार्थ प्रकाश सन्दर्भ दर्पण'। इस ग्रन्थ में सत्यार्थ प्रकाश के पक्ष-विपक्ष, खण्डन-मण्डन में प्रकाशित ग्रन्थों के विवरण के साथ ही, इस अमर ग्रन्थ पर चलने वाले अभियोगों का सप्रमाण प्रामाणिक विवरण भी दिया गया है। सरकार और साम्प्रदायिक संगठनों ने सत्यार्थ प्रकाश के विरुद्ध बहुत प्रकार की चेष्टाएँ की हैं—ये विरोधी चेष्टाएँ लेख-पुस्तक लेखन के साथ कोर्ट कचेहरियों में अभियोग दायर करने के रूप में रही हैं। सत्यार्थ प्रकाश के ऊपर इन आक्रमणों का वर्णन करने के पश्चात् उपसंहार के रूप में हमने आदरणीय शरर जी का निम्नपद लिखा है—

"आइना चेहरे का हर दाग़ दिखा देता है,
उसकी फ़ितरत का तकाज़ा है यह, शिकवा कैसा?
आप 'सत्यार्थ' की आलोचना से क्षुब्ध न हों,
अपने चेहरे को ही धो डालिए गुस्सा कैसा?"

'अग्रज शरर जी शतायु हों' यह परमेश्वर से प्रार्थना है।

'ईशावास्यम्' पी. ३०, कालिन्दी हाउसिंग स्टेट,
कोलकाता-७०००८९

हमारे चयन का महत्व बढ़ा

—खुशहाल चन्द आर्य
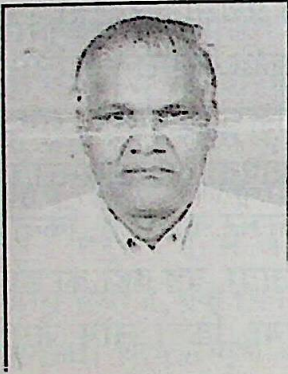
आर्य समाज बड़ा बाज़ार को यह जानकर कि प्रो. उत्तम चन्द जी 'शरर' पानीपत वाले का सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली तथा आर्य समाज पानीपत, दोनों के सामूहिक सहयोग से अभिनन्दन किया जा रहा है जिसके उपलक्ष्य में एक अभिनन्दन ग्रन्थ भी प्रकाशित किया जा रहा है जिसका विमोचन समारोह सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली के तत्वावधान में शीघ्र ही पानीपत में किया जायेगा, तब सिर्फ प्रसन्नता ही नहीं हुई बल्कि गर्व भी महसूस हुआ, कारण जिस महान् व्यक्तित्व का हमारे समाज ने अभिनन्दन किया था, उसी का राष्ट्रीय स्तर पर अभिनन्दन किया जा रहा है। उनका यह निर्णय या चयन निःसन्देह बड़ा उचित, महत्वपूर्ण व सराहनीय है। शरर जी ने अपने जीवन में अनेकों कष्टों को, यहाँ तक कि जेल यातनाओं को भी सहकर तथा आर्य समाज की शिक्षण संस्थाओं में अनेक पदों पर रह कर आर्य समाज जैसी धार्मिक, परोपकारी, वेदोद्धारक, राष्ट्ररक्षक एवं क्रान्तिकारी संस्था की सेवा की है तथा जिनका सम्पूर्ण जीवन देश व विदेशों में वैदिक प्रचारार्थ ही समर्पित रहा है ऐसे कर्मठ, ऋषि भक्त, लगनशील व विद्वान का राष्ट्रीय स्तर पर अभिनन्दन होना ही चाहिए जिससे अन्य सच्चे कार्यकर्त्ताओं को भी प्रेरणा मिले।

'शरर' जी सिर्फ एक अच्छे उपदेशक व वक्ता ही नहीं हैं बल्कि एक अच्छे कवि, शायर व लेखक भी हैं। इनके भाषणों में इनकी ऋषि भक्ति स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है जिससे इनकी भाषण शैली में जादू सा भर जाता है जिसको सुनकर श्रोतागण मन्त्र मुग्ध हो जाते हैं। जब कभी 'शरर' जी कवि सम्मेलन का संचालन करते हैं तब एक ऐसा समा बांध देते हैं जिससे श्रोताओं को इतना अधिक आनन्द आता है जैसे मानो अमृत की वर्षा

हो रही हो। इतने वृद्ध होते हुए भी इनकी कार्य क्षमता, उत्साह व उमंग एक नवयुवक के समान है, इसीलिये इन्होंने हरियाणा आर्य वीर दल का संचालन या प्रधानता वृद्ध अवस्था तक की।

जिस विद्वान को कोई भी आर्य समाज कई बार बुलाता है तो यह उस विद्वान की विद्वत्ता तथा उसकी भाषण शैली में आकर्षित करने की शक्ति को सिद्ध करता है। आर्य समाज कलकत्ता तथा आर्य समाज बड़ा बाज़ार ने 'शरर' जी को अपने वार्षिक उत्सवों व श्रावणी उपाकर्मों में कई बार बुलाया है। उनकी विद्वत्ता, भाषण कुशलता, कर्मठता, सरलता, योग्यता व समाज सेवा को देखकर ही आर्य समाज बड़ा बाज़ार ने अपने १९वें वार्षिक उत्सव पर इनका अभिनन्दन किया था। मेरा परम सौभाग्य था कि उस समय समाज का मैं ही मन्त्री था और अन्तरंग की बैठक में 'शरर' जी का नाम भी मैंने ही प्रस्तावित किया था जिसको सभी सदस्यों ने सहर्ष स्वीकार किया था। साथ ही हमारे इस चयन का पूज्य आचार्य पं. उमाकान्त जी उपाध्याय ने भी अपने हृदय से स्वागत किया था। अधिकतर आर्य समाजों में वार्षिक उत्सव का दायित्व मन्त्री के ऊपर ही ज्यादा रहता है इसलिये सभी विद्वानों को आमन्त्रित करने का भार मुझे ही सौंपा गया। मुझे यह बतलाते हुए बड़ी प्रसन्नता हो रही है कि 'शरर' जी ने मेरे इस निवेदन पर कि हमारे समाज का वार्षिक उत्सव जो १४ अगस्त से १७ अगस्त १९९७ तक हरियाणा भवन में होने वाला है उसमें हमारी अन्तरंग सभा ने आपका अभिनन्दन करने का निश्चय किया है, कृपया आप माताजी के साथ आने का कष्ट करें, उन्होंने मेरे निवेदन को सहर्ष स्वीकार कर लिया और माताजी के साथ समय पर पहुँच गये। इन दोनों का अभिनन्दन दिनांक १९.८.१९९७ शनिवार को करके हमारा समाज कृत-कृत्य हुआ। यहाँ यह बात मैं और बतलाना चाहता हूँ कि उत्तम जी को तो हमने पहले भी कई बार देखा था। उनके गुण, कर्म, स्वभाव से तो हम प्रभावित थे ही लेकिन माताजी के प्रथम दर्शन से ही उनके सच्ची गृहलक्ष्मी के गुण सरलता, विनम्रता व सहृदयता आदि से हम प्रभावित हुए बगैर नहीं रह सके।

ऐसे अभिनन्दनीय आर्य जन का सार्वदेशिक सभा व पानीपत आर्य समाज ने भी अभिनन्दन के लिये चयन किया है इसके लिये ये धन्यवाद के पात्र हैं तथा इस चयन से

मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है। मैं निम्नलिखित पंक्तियों द्वारा अपने हृदय के उद्‌गार, श्रद्धा सुमन के रूप में 'शरर' जी के चरणों में समर्पित करके अपनी आत्मसन्तुष्टि कर रहा हूँ—

"उत्तम" जी ने किये उत्तम कार्य, आर्य समाज की सेवा और वेद प्रचार जिससे इनका जीवन बना कुन्दन।

इन्होंने अपना जीवन और उत्तम बनाने के लिये, तम के विकार, ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, अहंकार के तोड़े सब बन्धन॥

इन्होंने अपने परिश्रम, पुरुषार्थ से किया भरसक यत्न वेद ज्ञान पहुँचाने का, हर घर-घर और जन-जन।

इनकी सेवा त्याग, योग्यता को देख किया आर्य समाज बड़ा बाजार कलकत्ता ने १९.८.९७ को इनका अभिनन्दन॥

"उत्तम" का सुयश फैला देख कर्त्तव्य भाव से अब सार्वदेशिक व पानीपत आर्य समाज भी कर रही है इनका अभिनन्दन।

"खुशहाल" भी खुश होकर समर्पित कर रहा है अपने श्रद्धा सुमन, स्वीकार करो हे! आर्य नन्दन, हे! आर्य नन्दन॥

१८०, महात्मा गाँधी मार्ग (द्वितल),
कोलकाता-७००००७

"पुराना आर्य समाजी जहां भी खड़ा होता था एक प्रकाश छोड़ता था और वह प्रकाश जुगनू का प्रकाश नहीं, अग्नि का प्रकाश होता था।"

बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी : प्रो. उत्तम चन्द 'शरर'

—डॉ. सहदेव वर्मा

प्रसिद्ध विचारक सिसरो का कथन है :- `The best spirit is most strongly attracted by love of glory.' अर्थात् 'महान् आत्मा, गौरव गरिमा की ओर अत्यधिक आकर्षित होती है। उसकी महत्वाकाँक्षा उसे सीमा और स्थिति को पार कर और भी ऊपर उठने की प्रेरणा प्रदान करती है।' इसी सिद्धान्त के अनुसार प्रो. उत्तमचन्द शरर निस्पृह योगी की भाँति जीवन के प्रथम चरण से ही अनेक उर्ध्वगामी लोकोपकारी कार्यों में संलग्न हो गये।

जहाँ तक मैंने प्रो. शरर जी को जाना है, उन्होंने अपनी सांसारिक एषणाओं की पूर्ति के लिए न तो कभी किसी की खुशामद की, और न निजी सुख सुविधाओं के लिए किसी के आगे हाथ फैलाया। जीवन में अनेक अभावों को सहन कर भी आपने विषपायी बनकर लोकोपकार, समाज-सेवा तथा मानवता के कल्याण के लिए अपना जीवन समर्पित किया है। मैंने प्रत्यक्ष तथा परोक्षरूप से देखा और अनुभव किया कि आपने भर्तृहरि के **'मनस्वी कार्यार्थी गणयति न दुःखं न च सुखम्'** कथन को वास्तविक रूप में आत्मसात् किया है। यथास्थान मैं इस कथन की सोदाहरण पुष्टि करूंगा।

मैंने प्रो. शरर जी को कार्यशैली की दृष्टि से कई रूपों में देखा परखा है। जिनमें उनके पाँच रूप तो सर्वविदित ही हैं।

१. सामान्य व्यक्ति के रूप में, २. अध्यापक के रूप में, ३. कवि तथा लेखक के रूप में, ४. वैदिक मिशनरी के रूप में तथा ५. सत्याग्रही के रूप में।

जहाँ तक सामान्य व्यक्तित्व का प्रश्न है, साधारण कद, गेहुँआ रंग, ऊँचा चौड़ा ललाट, पारखी नेत्र, चेहरे पर स्वाभाविक मुस्कराहट, अकृत्रिम चाल ढाल, बातचीत में आत्मीयता, वाणी में माधुर्य, प्रायः धोती कुर्ता तथा जाकट का पहनावा, आत्मगौरव से सराबोर किन्तु गर्व से सर्वथा परे, वैदिक-सिद्धान्तों के प्रति गहरी आस्था, प्राचीनता के प्रति लगाव, नवीनता के प्रति खोजपूर्ण भावना, समाज में व्याप्त अनाचार, भ्रष्टाचार,

आपाधापी और घोर स्वार्थपरता के प्रति मानसिक क्षोभ, इस प्रकार की आकृति तथा प्रकृति वाला व्यक्ति यदि आपको दृष्टिगोचर हो तो समझ लीजिए कि आप प्रो. शरर के सामने खड़े हैं। प्रो. शरर के व्यक्तित्व की विशेषता यह है कि पहली ही मुलाकात में आप उनके होकर रह जाएँगे। क्योंकि वे मनसा, वाचा, कर्मणा एक रस हैं। इस प्रकार प्रो. साहब सामान्य होकर भी विशेष हैं।

उनका दूसरा सफल रूप है, अध्यापक का रूप। वास्तव में सफल अध्यापक वही व्यक्ति हो सकता है, जिसका अध्ययन विस्तृत तथा गम्भीर हो, साथ ही अपने विषय में जो गहरी पैठ रखता हो। उनका अध्यापन-क्षेत्र प्रायः उच्च कक्षाओं से सम्बन्धित रहा है। प्रो. शरर के अध्यापन की विशेषता यह रही है कि वे अपने अन्तेवासी (शिष्य) के हृदय से तादात्म्य स्थापित कर लेते थे। सच तो यह है कि सम्प्रेषणीयता का गुण उनमें सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है। चाहे अध्यापन-कक्ष हो या फिर वैदिक-मंच। उनके अध्यापन की यह भी विशेषता रही है कि उन्होंने जान-बूझ कर कभी भी स्वयं को छात्रों के सम्मुख स्कॉलर के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास नहीं किया। यद्यपि उनका यह वैदुष्यपूर्ण रूप कभी छिपा भी न रह सका। आर्य कॉलिज पानीपत तथा लुधियाना एवं डी.ए.वी. कॉलिज करनाल की वह पीढ़ी, जो उन से पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त कर सकी, आज भी प्रो. साहब के अध्यापन की प्रशंसा करते नहीं अघाती। ऐसा नहीं कि केवल पुस्तकीय ज्ञान तक ही उनका अध्यापन सीमित रहा हो, उनकी वास्तविक शिक्षा तो 'सादा जीवन उच्च विचार' के अन्तर्गत मनुर्भव के लक्ष्य तक ले जाने वाली रही है। यही कारण है कि वैचारिक दृष्टि से विरोधी भी उनकी ओर कभी उंगली उठाने का साहस नहीं कर सके।

उनके कवि तथा लेखक रूप से तो प्रायः सभी सुपरिचित हैं। सरस्वती का वास उनकी वाणी तथा लेखनी पर सर्वदा विद्यमान रहा है। चाहे हिन्दी का कवि-सम्मेलन हो या उर्दू का मुशायरा, या फिर साहित्यकारों की गोष्ठी या विचार मंच प्रो. शरर आपको सर्वत्र दिखाई देंगे। सुखद आश्चर्य तो यह है कि हिन्दी-संस्कृत के विद्वान् होकर भी उर्दू मुशायरों में आपकी मांग काश्मीर से हैदराबाद तक बनी रहती है। आपकी रचनाएँ तोप की गड़गड़ाहट नहीं नश्तर का घाव करती हैं, बिल्कुल उसी भाँति जिनके लिए कहा जाता है 'देखन में छोटे लगें, घाव करें गंभीर।' अपने व्याख्यानों में भी प्रो. साहब यत्र तत्र स्वरचित रचनाओं को उद्धृत करते रहते हैं, जिससे उनकी वक्तृत्व कला में चार चाँद लग जाते हैं।

आपकी अनेक रचनाएँ तथा पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। जिनमें ये तीन तो पर्याप्त

प्रसिद्ध तथा लोक-प्रिय हैं १. फूल और कांटे (उर्दू) २. आर्यों का शिकवा—जवाब शिकवा ३. इन्द्र धनुष (कविता संग्रह)। आपकी फुटकर रचनाएँ तो सैकड़ों की संख्या में हैं, जिनमें देश-भक्ति, समाज सुधार, कुरीतियों पर व्यंग्य आदि विविध विषयों का चित्रण है। इसी ग्रन्थ में विविध विषयानुगामिनी उनकी रचनाएँ आपको मिलेंगी, जिनसे (उनका) कवि रूप उभर कर आपके सामने स्पष्ट हो सकेगा।

प्रो. शरर जी का सर्वाधिक महत्वपूर्ण रूप है, उनका 'वैदिक-मिशनरी' होना। महर्षि दयानन्द तथा आर्य समाज के मन्तव्यों के प्रति आपका अटूट विश्वास एवं गहरी निष्ठा है। आर्यसमाज की वेदी से स्फुरित एवं स्फोटित, प्रकाशपुंज से प्रकाशित, ऋषि की प्रेरणा से प्रेरित हो आगे बढ़ते हुए, सामाजिक तथा धार्मिक चेतना को जागृत कर आप निरन्तर जीवन्त रूप प्रदान करते रहे हैं। मूर्तिपूजा खण्डन, पुनर्जन्म, ईश्वर की सर्वव्यापकता, अछूतोद्धार, नारी-शिक्षा जैसे विषयों पर आपकी गहरी पकड़ है। यदि आवश्यकता हो तो इन तथा ऐसे विषयों पर शास्त्रार्थ केलिए भी आप सदा सन्नद्ध रहते हैं। वस्तुतः आर्य समाज की मान्यताओं की सिद्धि के लिए आपने अपने जीवन तक को दाँव पर लगाने में भी कभी ननु न च नहीं की।

सन् १९५२ में रोहतक नगर में घटी, रोंगटे खड़े कर देने वाली, उस सत्य घटना को क्या कभी विस्मृत किया जा सकता है, जब वहाँ सनातन धर्म के सर्व मान्य नेता श्री माधवाचार्य जी का व्याख्यान हो रहा था। संयोजकों की ओर से घोषणा की गई कि व्याख्यान के पश्चात् प्रश्न पूछे जा सकते हैं। आयोजकों को पूर्ण विश्वास था कि सनातन धर्म के सर्वमान्य दिग्गज नेता के भाषण पर भला कोई क्या टिप्पणी कर सकेगा? किन्तु वे लोग कदाचित् इस बात से अनभिज्ञ थे कि उसी जन-समूह में आर्यसमाज का एक अभिमन्यु भी विद्यमान हैं, जो पाखण्ड के किले को ध्वस्त करने में अकेला ही सक्षम है।

व्याख्यान की समाप्ति पर प्रो. शरर जी ने आर्य वीरोचित ढंग से, निर्भयता पूर्वक सिंह गर्जना करते हुए कहा कि "श्री माधवाचार्य जी ने जो कुछ कहा—ग़लत कहा है।" इससे पूर्व कि प्रो. साहब अपने कथन की पुष्टि करते उस विशाल सभा में सन्नाटा छा गया। ऋषि दयानन्द के अकेले शिष्य का यह दुस्साहस! पण्डाल में खलबली मच गई। धर्मान्ध लोगों की अपार भीड़ उन पर टूट पड़ी। काफ़ी चोटें आईं—शरीर लहूलुहान हो गया और वे मूर्च्छित हो गये। संयोग या सौभाग्य से दो आर्य वीर जितेन्द्र व कृष्ण वहाँ पहुँच गये और प्रो. साहब को बड़ी कठिनाई से वहाँ से निकाला।

इस घटना से आर्य समाजी क्षेत्रों में हलचल मच गई। आर्य समाज ने श्री माधवाचार्य

सहित सनातन धर्मियों को शास्त्रार्थ के लिए ललकारा। प्रसिद्ध विद्वान पं. बुद्धदेव विद्यालंकार ने खुलकर विरोधियों की पोल-खोल कर रख दी। बार-बार शास्त्रार्थ की चुनौती देने पर भी कोई सामने आने का साहस न कर सका। आर्य समाज के आक्रोश को देखते हुए सम्मेलन के संयोजकों ने क्षमा याचना कर अपना भला समझा। प्रो. शरर को स्वस्थ होने में पर्याप्त समय लगा, पर वे द्विगुणित साहस के साथ पुनः कार्यक्षेत्र में नवीन स्फूर्ति व प्रेरणा के साथ उतरे। उनका लक्ष्य था और है—

जो व्यथाएँ प्रेरणा दें उन व्यथाओं को दुलारो।
जूझ कर कठिनाइयों से रंग जीवन का निखारो॥
वृक्ष कट कर भी बढ़ा है दीप बुझ कर भी जला है।
मृत्यु से जीवन मिले तो आरती उसकी उतारो॥

यह तो उनके मिशनरी जीवन की एक घटना है। धर्म प्रचार के लिए आपने न जाने कितने कष्ट सहन किये हैं। वे भलीभांति इस तथ्य से अवगत हैं कि धर्म का मार्ग फूलों की सेज नहीं, काँटों का ताज है।

प्रचारात्मक कार्यक्रमों में वक्तृता का महत्वपूर्ण स्थान है। प्रो. शरर की वक्तृत्व शैली इतनी रोचक, प्रभावोत्पादक तथा हृदयग्राही है कि श्रोता मुग्ध हुए बिना नहीं रह सकता। मुझे तो आपकी काव्यमयी वाणी से निसृत एक एक शब्द भर्तृहरि की इस उक्ति का आभास कराता है :

"वाण्येका समलंकरोति पुरुषं या संस्कृता धार्यते।
क्षीयन्ते खलु भूषणानि सततं वाग्भूषणं भूषणम्॥"

उनके गौरपूर्ण जीवन के सन्दर्भ में किसी कवि की निम्नोधृत पंक्तियाँ सर्वथा सार्थक हैं :

मैं उठाकर शीश अपना विश्व में अविरत चला हूँ।
तुम मुझे क्या रोक सकते आपदाओं में पला हूँ॥
जानता मैं जो विपद् की आँधियों में मुस्कुराते।
वे व्रती जन ही जगत् में शीर्ष पर सम्मान पाते॥

यही नहीं वैदिक ऋचा भी ऐसे व्यक्तित्व का समर्थन करती है :

ओं नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा बृहद्देवासो अमृतत्वमानशुः।
ज्योती रथा अहिमाया अनागसो दिवो वर्ष्माणं बसते स्वस्तये॥

जो पुरुष सदा मानवता के कल्याण में रत रहते हैं, वे ही मोक्ष के अधिकारी हैं। वे

प्रभु के प्रकाश में विचरने वाले, अहिंसक, निश्छल, विद्वान पुरुष जीवन में सर्वोच्च पद प्राप्त कर अमर हो जाते हैं।

प्रो. शरर का सान्निध्य जीवन के प्रायः प्रथम चरण से ही आर्य समाज के लौह पुरुष स्वामी स्वतंत्रानन्द जी महाराज, प्रसिद्ध पत्रकार, लेखनी के धनी, जन-नायक म. कृष्ण, स्वनाम धन्य ला. खुशहाल चन्द 'खुर्सन्द' (आनन्द स्वामी जी महाराज) तथा महर्षि के विशेष अध्येता डॉ. भवानी लाल जी भारतीय जैसे त्यागी, तपस्वी तथा कर्मठ आर्य नेताओं से रहा है, जिनके मार्ग दर्शन तथा प्रेरणा से आपने वैदिक-सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार को ही अपने जीवन का लक्ष्य बनाया। आपने आर्य समाज का प्रचार केवल भारत में ही नहीं किया अपितु केनिया (नैरोबी) आदि देशों में भी ऋषि दयानन्द के शाश्वत-सिद्धान्तों की पताका फहराई। आज ८७ वर्ष की आयु में भी आप में वैदिक धर्म प्रचार हेतु नव युवकोचित-साहस एवं स्फूर्ति विद्यमान है। आर्य समाज के संगठन को ही दृढ़ करने के लिए आपने हरियाणा में 'आर्य वीर दल' का वर्षों तक सफल संचालन कर उसमें नये प्राणों का संचार किया।

प्रो. शरर का एक प्रखर रूप सत्याग्रही का रूप है। वैसे तो प्रत्येक धर्मोपदेष्टा सत्याग्रही होता है, क्योंकि धर्म प्रचार का अर्थ सत्य-प्रचार ही है—**"नहिं सत्यात् परोधर्मः।"** किन्तु अब आधुनिक राजनीतिक संदर्भ में धर्म का अर्थ भी परिवर्तित हो गया है। इस दृष्टि से उनके दो सत्याग्रहों का उल्लेख करना उचित होगा।

सन् १९३९ में हुआ हैदराबाद रियासत में आर्य समाज का सत्याग्रह अब एक ऐतिहासिक तथ्य बन चुका है। उसमें आप लगभग २२-२३ वर्ष की आयु में सत्याग्रह के तीसरे सर्वाधिकारी ला. खुशहाल चन्द जी (बाद में आनन्द स्वामी जी) के जत्थे में सम्मिलित होकर सिंगारेड्डी जेल में बन्द कर दिये गये। वहाँ के निर्मम अत्याचारों का एक अलग इतिहास है, जिसमें लगभग तीस आर्यवीर निजामशाही के अमानुषिक अत्याचारों की बलि चढ़कर शहीद हुए थे। आर्यों का दमन करने के लिए तत्कालीन नवाब ने फ्रंटियर से पर्याप्त संख्या में पठान लोग बुलवाये थे। किशोर वय आर्यवीरों को घंटों चिलचिलाती धूप में खड़े रखना, अनावश्यक रूप से सत्याग्रहियों को प्रताड़ित करना, अकारण ही उन पर लाठी डंडे बरसाना, गन्दी गालियाँ देकर उन्हें उत्तेजित करना तथा खाने के नाम पर दो ज्वार की रोटियाँ दाल के साथ देना, जिसमें दाने तो

शायद ही हों, केवल हल्दी नमक के मिश्रण के साथ खाना देते थे।

जेल के ये सब लक्षण भयानक रोगों को निमंत्रण देते थे। अनेक सत्याग्रही अशुद्ध जल केप्रभाव से कष्ट साध्य रोग से ग्रसित हो गये, आगरे के पं. वाचस्पति जी रात दिन उनकी सेवा में रह रहते थे। एक दिन प्रो. शरर ने उनसे कहा आप इतना कठोर परिश्रम मत कीजिए अन्यथा स्वयं रोगी हो जाएंगे—और अन्त में सत्याग्रह की सफलता से कुछ पूर्व वे बीमार हो ही गये। प्रो. साहब को चिन्ता हुई तो उन्होंने कहा—'शरर जी, भलाई करने वाले का कभी अहित नहीं हो सकता।' बस प्रो. साहब ने सब कष्टों को भुलाकर यही बात गांठ बाँध ली। आज भी उस परोपकारी की बात को याद कर वे सिहर उठते हैं। किसी के अहित की कल्पना भी उनके लिए कठिन है।

दूसरी बार १९५७ में पंजाब में हुए हिन्दी-सत्याग्रह में तो आपको अनेक मानसिक तथा शारीरिक यातनाओं से गुज़रना पड़ा। अभी आप सत्याग्रह में सम्मिलित हो भी नहीं पाये थे—कि आपको डी.सी. की कोठी पर हमला करने का अपराधी घोषित किया गया। इसी से आपके प्रभावी व्यक्तित्व का परिचय मिलता है, अस्तु। ज़मानत हुई—वह शुक्रवार का दिन था। रविवार को प्रातः सी.आई.डी. इन्स्पैक्टर ने पुलिस स्टेशन पर उपस्थित होने का आदेश भेजा। घर में वृद्धा माता तथा असाध्य रोग से पीड़ित बेटा। जैसे ही पुलिस स्टेशन पहुँचे तो इन्स्पैक्टर ने कहा 'आप गिरफ्तार हो चुके हैं, अब कहीं नहीं जा सकते।' उस समय पाँच मिनट केलिए माता तथा बेटे को सान्त्वना देने तककी भी छूट नहीं मिली। आपको तुरन्त गन्नौर भेज दिया गया। पंजाब पुलिस को मनमानी करने की पूरी छूट थी (तब तक हरियाणा नहीं बना था)। हाथों में हथकड़ियाँ, खानेपीने का कोई प्रबन्ध नहीं—जुलाई का उमस भरा महींना। बार-बार माता तथा मौत से जूझते बेटे का ख़याल। कितना मानसिक तनाव रहा होगा, कोई भुक्तभोगी ही अनुभव कर सकता है। आदर्शवाद की बात करने वाले बहुत मिल जायेंगे, किन्तु लक्ष्मण की मूर्च्छा के समय मर्यादा पुरुषोत्तम का धीरज भी डोल उठा था।

छाती पर पत्थर रखकर आपने स्वयं ही पुलिस के एक सिपाही से कहा कि रोहतक से किसी भी प्रकार यह सूचना मँगवा दो कि 'लड़का जीवित है या मर गया?' (ये उन्हीं के शब्द हैं) उस समय प्रो. शरर न जाने किस मानसिक स्थिति से गुज़र रहे होंगे। इसी

ऊहापोह में एक पुलिस अधिकारी का आदेश आया— 'फौरन शरर को बुलाओ।' हथकड़ी सहित पेशी हुई। यह सब एक नाटकीय घटना की भाँति घटित हुआ।

पुलिस अधिकारी ने कहा : 'कुर्सी पर बैठो। यहाँ तुम्हें क्या तकलीफ है?'

कुछ आश्चर्य के साथ प्रो. शरर ने कहा : "जेल है तो तकलीफ़ तो होगी ही। पर आपका क्या मतलब है?"

अधिकारी बोला : "मतलब है तभी तो पूछा। आपने किसी लड़की को कापी में रक्खे पैसे वापिस किये थे?"

"हाँ किये थे, और यह भी कहा था कि यदि पैसे अधिक हैं, तो किसी आर्य समाज को दान कर दो।" पर आप यह सब क्यों पूछ रहे हैं?

पुलिस अधिकारी ने कहा, वह मेरी पत्नी है, और उसने कहा है कि यदि (आप) यहाँ हैं, तो आपका ध्यान रक्खा जाय। इसी बीच यह भी सूचना मिली कि बेटे की हालत कुछ ठीक है।

आपको अगले दिन लगभग दो बजे एक जीप में बैठाकर लम्बी यात्रा पर ले जाया गया। काफ़ी रात होने पर पता चला कि नाभा जेल में नजरबन्द कर दिया गया है। वहीं पर आपकी भेंट प्रसिद्ध आर्यनेता और पत्रकार ला. जगतनारायण, कैप्टेन केशवचन्द्र तथा ज्ञानी पिण्डीदास आदि महानुभावों से हुई। आपको वहाँ छः महीने की नजरबन्दी का कारावास भोगना पड़ा।

वैसे तो में १९५२ में घटी रोहतक की घटना को भी सत्याग्रह का ही एक रूप मानता हूँ क्योंकि वहाँ भी सत्य के लिए ही आग्रह था। ऐसे अनेक प्रकार के उतार-चढ़ावों तथा घटनाओं से प्रो. शरर के जीवन में निखार आया और उनके मन में त्याग और प्रचार की भावना नित्य बलवती होती चली गई।

इस सन्दर्भ में मान्यवर बन्धु श्री मोहन मनीषी जी की ये पंक्तियाँ मन में उभर कर आती हैं—

"पावक की लपटों में पड़ कर सोना कुंदन बन जाता है।
त्याग तपस्या से कोई माथे का चन्दन बन जाता है॥

जीवन में जन सेवा और पुरुषार्थ के बल पर समाज में प्रतिष्ठा पाने वाले अनेक

व्यक्ति आत्मश्लाघा तथा अहं भाव से ग्रस्त होकर प्रायः सत्पथ से विचलित होते देखे गये हैं, किन्तु प्रो. शरर ने अहं भाव से कभी अपने चित्त को विदूषित नहीं होने दिया। महर्षि दयानन्द के चिन्तन और आर्य समाज के संगठन की धारा में जो भी आर्य जन और कार्यकर्ता सक्रिय रहे उन सभी का सहयोग करना आपके चरित्र का अनुकरणीय पक्ष है।

प्रसिद्ध विचारक लुई नाईजर का कथन है :—'जो व्यक्ति केवल हाथ पैरों से अर्थात् शरीर से कार्य करता है वह मज़दूर है। जो हाथ पैर तथा बुद्धि से कार्य करता है वह कारीगर है, परन्तु जो हाथ पैर बुद्धि तथा आत्मा से कार्य करता है, वह न मज़दूर है, न कारीगर वह तो कलाकार है।' मेरे विचार से इस आधार पर प्रो. शरर कलाकार के रूप में खरे उतरते हैं। इसीलिए समस्त भद्रजनों का समादर मिश्रित स्नेह प्राप्त कर वे हमारे लिए सम्माननीय हो गये हैं। उनका मार्ग स्वावलम्बन, स्वाभिमान, निस्वार्थ सेवा, श्रम व त्याग का है। वे सिद्धान्तों के प्रति वज्र से भी कठोर, किन्तु पारस्परिक व्यवहार में पुष्प से भी अधिक कोमल हैं।

अपनी सत्यनिष्ठा, कर्त्तव्यपरायणता, स्पष्टवादिता तथा संघर्षशीलता के बल पर वे वैचरिक धरातल पर अपने विरोधियों के भी आदरणीय एवं श्रद्धा के पात्र रहे हैं। उन्होंने—**"वरं जन हितं ध्येयं केवला न जनश्रुतिः'** सूत्र को सदा प्रेरक माना। वे आपदा में कभी झुके नहीं, विपरीत परिस्थितियों में कभी विचलित नहीं हुए। न्याय के प्रति निष्ठा और अन्याय के प्रति संघर्ष उनके जीवन की कर्मधारा है।

अन्त में मैं कह सकता हूँ कि प्रो. उत्तमचन्द शरर ने एक कुशल कार्यकर्ता, श्रेष्ठ मानव, सहृदय सुकवि, योग्य शिक्षक, साहित्य मर्मज्ञ, निर्भीक धर्म प्रचारक, सुयोग्य वक्ता तथा साँस्कृतिक आन्दोलनों के अध्ययनशील चिन्तक के रूप में जो ख्याति अर्जित की है, उसका एक ही सार है—**"न दैन्यं न पलायनम्।"**

हमारी प्रभु से यही प्रार्थना है कि आप चिरायु हों, तथा चिरकाल तक देश, धर्म तथा मानवता की सेवा करते रहें। वेद के शब्दों में—

"शतभुग्रं वर्चः स्थिरा शवांसि।"

तुम यशस्वी बने रहो—अपनी सुकृतियों में रमे रहो।

पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष, आर्य कॉलिज, पानीपत

अभिनन्दनीय प्रो. उत्तमचंद जी 'शरर'

—डॉ. राणा प्रताप गन्नौरी

महर्षि दयानन्द सरस्वती और उनके आर्य समाज ने जिन अनेक देशभक्तों, कवियों और साहित्यकारों को प्रेरित एवं स्फूर्त किया है उनकी सूची बहुत लम्बी है। लाला लाजपतराय, शहीदे-आज़म भगत सिंह, रामप्रसाद बिस्मिल, चंद्रशेखर आजाद जैसे देशभक्त, प्रो. तिलोकचंद महरम, कवि शंकर, प्रकाश कवि, श्री जैमिनी सरशार, प्रो. उत्तमचंद शरर, जैसे कवियों और शायरों, मुंशी प्रेमचंद, सुदर्शन, महाशय कृष्ण, महात्मा आनंद स्वामी (श्री खुशहालचंद खुरसंद) जैसे साहित्यकारों के व्यक्तित्व और कृतित्व पर आर्य समाज की गहरी छाप दिखाई देती है। ऋषि दयानंद के हज़ारों श्रद्धालु भारत के स्वतंत्रता संग्राम के बलिदानी वीर रहे हैं। सरकारी साक्ष्यों के आधार पर कहा गया है कि स्वतंत्रता संग्राम केदौरान जेलों की कठोर यातनाएं सहने वालों में सर्वाधिक प्रतिशत (लगभग ८० प्रतिशत) आर्य समाजी लोगों का रहा है। समाज सुधार, रूढ़ि विरोध, शिक्षा-प्रचार, अन्याय से संघर्ष आदि सभी क्षेत्रों में आर्य समाज अग्रणी रहा है। इसी आर्य समाज के संस्कारों एवं विचारों से प्रेरित एवं स्फूर्त व्यक्तिव एवं कृतित्व है हमारे अभिनंदनीय सुप्रतिष्ठित कवि, शायर, वक्ता, प्राध्यापक, उपदेशक एवं स्वतंत्रता सेनानी श्रद्धेय प्रो. उत्तम चन्द 'शरर' का। उनका कद छोटा है किंतु व्यक्तित्व बड़ा।

ऋषि भक्त 'शरर' साहब को मैं तब से जानता हूं जब अभी मैं बच्चा था और यह भी नहीं जानता था कि आगे चलकर मैं आर्य समाज का सक्रिय सेवक बनने और कलम की साधना करने का सौभाग्य प्राप्त करूंगा, शेर लिखने लगूंगा और 'शरर' साहब की अध्यक्षता में कविता पाठ करने केअवसर प्राप्त करने लगूंगा। मैं अपने पिता श्री जैमुनी लाल जी भूटानी के साथ जाकर आर्य समाज के उत्सवों में और कवि सम्मेलनों में 'शरर' साहब के प्रभावपूर्ण काव्य और धारा प्रवाह प्रवचनों को मंत्र मुग्ध होकर सुना करता था। उस समय तो मुझमें दो वक्ताओं की तुलना करने की सुध-बुध नहीं थी किंतु आज जब मैं इस दृष्टि से विचार करता हूं तो निष्कर्ष स्वरूप कह सकता हूं कि 'शरर' साहब

को निःसंकोच हमारे इलाके का प्रकाश वीर शास्त्री कहा जा सकता है। मैं ऐसे महानुभावों के प्रवचन सुन सुन कर स्वयं मंच पर कुछ बोलने की प्रेरणा प्राप्त किया करता था। होते-होते वह समय भी आया जब मैं शायरी करने लगा था और सबसे प्रथम कवि सम्मेलन जिसमें मुझे मेरे प्रथम काव्य गुरु श्री हरिश्चंद्र 'नाज़' सोनीपती अपने साथ कविता पाठ के लिए ले गए थे, आर्यसमाज लाजपत नगर सोनीपत का अक्टूबर १९५६ में होने वाला कवि सम्मेलन (मुशायरा) था। बाद में मैंने स्व. श्री मनोहर लाल 'शहीद' अलीपुरी और श्री जैमिनी 'सरशार' सोनीपती साहब से मार्गदर्शन प्राप्त किया तो वे दोनों महानुभाव भी निष्ठावान आर्यसमाजी थे। धीरे-धीरे पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश में आयोजित आर्य महासम्मेलनों में आयोजित होने वाले कवि सम्मेलनों में आमंत्रित किया जाने लगा तो कई विराट् कवि सम्मेलनों में 'शरर' साहब की अध्यक्षता में कविता पाठ करने का सौभाग्य प्राप्त करता रहा। ऐसे महासम्मेलनों में पानीपत, दिल्ली, अलवर, मोही और अमरोहा में आयोजित कवि सम्मेलन यादगार कवि सम्मेलन थे। इस प्रकार 'शरर' साहब मेरे लिए सदैव प्रेरक व्यक्तित्व रहे हैं।

ऊपर मैंने हमारे इलाके की बात की है। व्यापक दृष्टि से हमारा इलाका वह है जिसने पं. चमूपति एम.ए. (बहावलपुर), पं. गुरुदत्त विद्यार्थी (मुलतान), पं. शांति प्रकाश शास्त्रार्थ महारथी (डिरा ग़ाज़ीखां), महात्मा प्रभु आश्रित जी महाराज (जतोई, मुज़फ्फ़रगढ़), महात्मा आनंद भिक्षु जी (झुग्गीवाला, मुज़फ्फ़रगढ़) जैसी वैदिक मिशनरी विभूतियों को जन्म दिया। और यदि संकुचित या सीमित अर्थ में तथा शायरों को जन्म देने वाली एक तहसील को अपना इलाका कहूं तो मेरा अभिप्राय केवल तहसील अलीपुर जिला मुज़फ्फ़रगढ़ से होगा। तहसील अलीपुर को 'शायर-खेज़' यानि कवि-प्रस्विनी माना जाता रहा है। इस इलाके के एक दर्जन से अधिक शायर—सर्वश्री जैमिनी सरशार, मनोहर लाल शहीद, आतिश बहावलपुरी, तबस्सुम अलीपुरी, चंद्रभान 'मफलूक', तेजा लाल मौजी, बेलाराम दीवान, रामचंद खुशदिल आदि दिवंगत तथा उत्तमचंद जी शरर, हरिश्चद्र नाज़, बेताब अलीपुरी, राधाकृष्ण आज़ाद, बोधराज ज़फ़र, तेजभान निश्तर, राणा प्रताप गन्नौरी, ए.वी. भारती, देवराज दिलबर आदि वर्तमान उर्दू, हिन्दी, मुलतानी (सरायकी) शायरी के प्रतिष्ठित हस्ताक्षर हैं। इनमें से अधिकांश एक से अधिक भाषाओं में काव्य सृजन करते हैं। प्रो. उत्तम चंद जी शरर भी उर्दू तथा हिन्दी दोनों भाषाओं में काव्य रचना करते हैं। इस समय जब कि मैं ये पंक्तियां लिख रहा हूं, कह सकता हूं कि हमारे इलाके के सबसे वयोवृद्ध शायर 'शरर' साहब ही हैं। 'शरर' साहब का जन्म

१५ नवम्बर १९१६ ई. को गाँव सीतपुर तहसील अलीपुर जि. मुज़फ्फ़रगढ़ (पाकिस्तान) में श्री मंगूराम बजाज के घर पर हुआ। इनकी माताजी का नाम श्रीमती उत्तमीबाई था।

'शरर' साहब एक विद्या व्यसनी, अध्यवसायी एवं सरल स्वभाव व्यक्ति हैं। उनके जीवन में सादगी भरपूर है, आडम्बर तनिक भी नहीं। उन्होंने हिन्दी तथा संस्कृत में एम. ए. की उपाधि प्राप्त की है। उर्दू का उन्होंने प्राथमिक शिक्षा से ही अध्ययन किया है। तीनों भाषाओं पर समान अधिकार रखते हैं। स्नातक स्तर तक अंग्रेज़ी भी पढ़ी है। और मां ने जिस बोली की घुट्टी डाली है वह है मुलतानी या जिसे अब सरायकी नाम से जाना जाता है। भाव यह कि शरर साहब एक बहुतभाषाविद प्रबुद्ध व्यक्ति हैं। आपने अपना सारा जीवन अध्यापन एवं आर्य समाज के प्रचार में व्यतीत किया है। आर्योपदेशकों में आप का सम्माननीय स्थान है। आप आर्य महाविद्यालय पानीपत, आर्य कन्या महाविद्यालय लुधियाना तथा डी.ए.वी. कन्या महाविद्यालय करनाल में हिन्दी के प्राध्यापक के पद पर कार्य करते रहे हैं और करनाल से ही सेवा निवृत्त हुए हैं। निवास आपका स्थायी रूप से पानीपत में ही रहा है। आर्योपदेशक के रूप में देश भर में आपकी एक प्रभावशाली छवि रही है। पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, गुजरात और महाराष्ट्र में स्थित विभिन्न आर्यसमाजों के वार्षिकोत्सवों की शोभा आप बढ़ाते रहे हैं। आपकी विद्वत्ता की सुगंध भारत की सीमाओं से बाहर भी पहुँची है। कुछ वर्ष पूर्व वैदिक विचारधारा का प्रचार करने हेतु आप अफ्रीकी देश केनिया की राजधानी नैरोबी भी हो आए हैं। चार पांच वर्ष पूर्व जब आपको अचानक 'पैरेलिसिस' का आघात लगा उस समय भी आप उत्तर प्रदेश में बनारस के निकट किराकत आर्यसमाज के मंच पर बोल रहे थे।

आप ईश्वर-विश्वासी और प्रबल बनोबल के धनी व्यक्ति हैं। प्रवास में अचानक 'पैरेलिसिस' का अटैक होने पर आपने हिम्मत नहीं हारी। वहां से प्रारम्भिक उपचार लेने के बाद अकेले ही दिल्ली होते हुए पानीपत आ पहुंचे। यहां पहुंचने पर इनके पितृभक्त सुपुत्रों ने तुरंत इनके सुचारु उपचार की व्यवस्था की और कुछ महीनों में 'शरर' साहब पुनः आर्य समाज की सेवा और वेद प्रचार के कार्य में सक्रिय दिखाई देने लगे। ठीक ही तो कहा गया है मन के जीते जीत है मन के हारे हार। 'शरर' साहब ने संकट पर विजय पाई। अपने यौवन काल से ही संकटों से जूझना उनका स्वभाव रहा है। आर्य समाज के हैदराबाद आंदोलन में भारत के दूर पश्चिमोत्तर में स्थित गाँव सीतपुर से ऋषि दयानंद के धर्म रक्षक सैनिक के रूप में सम्मिलित होकर आपने निज़ाम

हैदराबाद के द्वारा हिन्दू धार्मिक गतिविधियों पर लगाए प्रतिबंधों के विरुद्ध संघर्ष किया था और आर्य समाज के इस विजय-अभियान में कृतकार्य होकर स्वतंत्रता-सेनानी होने के गौरव के अधिकारी बने थे।

साहित्य-सृजन की दृष्टि से आप गद्य-पद्य दोनों में ही कलम के जौहर दिखाते रहे हैं। गद्य में आपने पत्र-पत्रिकाओं और अभिनंदन ग्रंथों के लिए लेख लिखे हैं तो पद्य में उर्दू तथा हिन्दी में कविता के विभिन्न रूपों यथा नज़्म, ग़ज़ल और कतआत (मुक्तकों) में अपने भावों और अनुभवों को अभिव्यक्ति प्रदान करते रहे हैं। नज़्म आपका ख़ास मैदान रहा है। इस समय तक आपकी सात पुस्तकें—आर्यों का शिकवा-जवाव शिकवा, 'फूल और कांटे' (उर्दू में) 'इन्द्र धनुष', "वैदिक स्वर्ग", "तीन अनादि तत्त्व" "सामगान" और "चंद ग़लतियों का अज़ाला" हिन्दी में छप चुकी हैं।

अब तक आपकी और भी न जाने कितनी कृतियां प्रकाशित होकर आपकी कीर्ति फैला चुकी होतीं किंतु मस्तमौला स्वभाव के 'शरर' साहब को इस आत्म प्रचार की दिशा में सोचने की फुरसत ही कहां मिली थी। यहां तक कि अपने काव्य का पुनरवलोकन करने और नोक पलक सँवारने तथा दोष दूर कर लेने का समय भी वह नहीं निकाल पाए। अंग्रेजी भाषा की उक्ति 'रिविज़न इज़ द हाफ़ करैक्शन' को तो जैसे उन्होंने सिरे से ही भुलाए रक्खा। 'शरर' साहब के इन्द्रधनुषी काव्य में वेदमंत्रों के पद्यानुवाद, महर्षि दयानंद और उनके बलिदानी वीर सेनानियों (स्वा. श्रद्धानंद, पं. लेखराम, स्वा. समर्पणानंद, महाशय कृष्ण आदि), आर्य समाज और देशभक्त वीरों के बारे में भावपूर्ण कविताएं (नज़्में), ग़ज़लें और कतआत् सम्मिलित हैं। कुछ ब्लैंक वर्स शैली में लिखित कविताएँ भी हैं। जहाँ अधिकांश रचनाएं उर्दू में हैं वहां कुछ रचनाएँ हिन्दी में भी हैं। जहां तक शरर साहब की रचनाओं के रंगो-आहंग (मुख्यस्वर) का प्रश्न है—देशभक्ति, ऋषि भक्ति, वेद-निष्ठा, स्वाभिमान (खुदी) एवं क्रांति का स्वर हो इनका मुख्य स्वर रहा है। अल्लामा इकबाल की खुदी को बुलंद रखने की धारणा से शरर साहव वहुत प्रभावित रहे हैं। इनकी नज़्मों 'आर्यों का शिकवा जवाब-शिकवा' का प्रेरणास्रोत भी डॉ. इकबाल का 'शिकवा-जवाब शिकवा' रहा है। प्रिंसीपल रामचंद 'जावेद' सम्पादक 'वैदिक धर्म' का मानना था कि 'शरर' साहब आर्य समाज के इकबाल हैं। उनके लहजे में पं. चमूपति की कविताओं का लहजा भी झलकता है। आर्य समाज के विशेप समारोहों का कार्यक्रम 'शरर' साहब के कविता पाठ के बिना प्रायः अधूरा समझा जाता रहा है।

ऋषि दयानन्द जी के जीवन काल में और पूरे स्वाधीनता संग्राम की अवधि में आर्य समाजियों में जो ऊर्जा, ओजस्विता, सत्य निष्ठा, राष्ट्र प्रेम, बलिदान की भावना, वैदिक आस्था, कर्तव्य परायणता, मन, वचन और कर्म की शुचिता देखने को मिलती थी वह अपनी मिसाल आप थी। बजुर्गों से सुनने को मिलता रहा है कि न्यायालय में एक आर्यसमाजी की गवाही अपने आप में सत्य का प्रमाण मानी जाती थी। उच्चाशयता आर्यजन की पहचान समझी जाती थी। इसीलिए तो आर्यसमाजी को लोग महाशय जी कह कर पुकारते थे। आर्य समाज की गतिविधियों में वृद्ध, युवा, पुरुष, स्त्री सभी बढ़-चढ़ कर भाग लेते थे। आर्य समाजों की शोभायात्राएं और प्रभात फेरियां, वार्षिकोत्सव और शास्त्रार्थ दर्शनीय होते थे। आर्य विद्वानों के तर्क सुनने वालों को भीतर तक झकझोर कर रख देते थे। सुनने वाला व्यक्ति कहने वाले को तर्कपूर्ण बात सुनकर अनायास ही पूछ बैठता था—आप आर्य समाजी हैं क्या? यानि एक आर्यसमाजी की सोच जन साधारण से अलग होती थी। किंतु यह वृत्तांत आर्य समाज के स्वर्ण युग का इतिहास है। अब भवन पक्के हो गए हैं, भावना कच्ची हो गई है। कुर्बानियां देने वाली पीढ़ी चुक गई है। आर्य समाज केसत्संगों में प्रौढ़ और वृद्ध लोग ही दिखाई देते हैं, युवा नहीं। किसी संगठन के प्रति जब तक युवाओं का लगाव और सक्रिय योगदान न हो उस संगठन के भविष्य के बारे में चिंता उत्पन्न होना स्वाभाविक है और इस उदासीनता का कुछ क्रियात्मक समाधान सोचा जाना अनिवार्य है। हमारे प्रो. उत्तम चंद जी 'शरर' को इस चिंताजनक स्थिति का निष्क्रिय दर्शक बने रहना स्वीकार नहीं हुआ। उन्होंने समय की चुनौती को स्वीकारते हुए भावी दायित्व बोध युक्त युवा पीढ़ी संगठित करने का संकल्प धारण करके "आर्य वीर दल" का संगठन किया। ज़िला और प्रांतीय स्तर पर शिक्षक नियुक्त करके आर्यवीरों की शाखाएँ लगाने और आर्य-वीर महासम्मेलन आयोजित करके युवाओं में एक नई स्फूर्ति, एक नई ऊर्जा संचारित करने का श्लाघनीय उपक्रम किया। युवाओं के लिए शारीरिक व्यायाम, योगासन, पराक्रम प्रदर्शन और बौद्धिक उद्‌बोधन प्रदान करने की व्यवस्था की गई। 'शरर' साहब के इस अवदान के फलस्वरूप पुनः युवा वर्ग आर्य समाज से जुड़ने लगा है। समय-समय पर लगने वाले उनके शिविरों में जा कर देखने से ज्ञात होता है कि भविष्य के लिए सार्थक समाधान प्रस्तुत हो रहा है। इस सबका श्रेय प्रो. उत्तम चंद 'शरर' जी को ही जाता है। 'शरर' साहब सदैव एक सैनिक की तरह आर्य समाज द्वारा संचालित आंदोलनों में भाग लेने के लिए कटिबद्ध रहे हैं, वह चाहे हैदराबाद आंदोलन हो या स्वतंत्रता प्राप्ति केबाद का हिन्दी आंदोलन

अथवा गोरक्षा आंदोलन। उन्होंने जेल यात्राएं भी की हैं और हँसते-हँसते कष्ट भी सहे हैं। उनका व्यक्तित्व निश्चय ही अभिनंदनीय व्यक्तित्व है।

अब अंत में 'शरर' साहब के काव्य रूपी दर्पण में झांक कर उनके कवि रूप की छवि भी देख ली जाए। मैं सर्वप्रथम उनकी जिस रचना से परिचित हुआ था वह थी उनका 'आर्यों का शिकवा जवाब शिकवा'। मंच पर खड़े होकर वह धारा प्रवाह इस का पाठ करते हुए श्रोताओं को इसके प्रवाह में बहा ले जाते प्रतीत होते थे। संस्कृत तथा हिन्दी भक्ति काव्य के अन्तर्गत कृष्णकाव्य में 'भ्रमरगीत' प्रसंग के रूप में सुंदर उपालम्भ काव्य के दर्शन होते हैं। गोपियां अपने प्रियतम कृष्ण की निष्ठुरता से व्याकुल होकर उलाहने देती हैं। उर्दू काव्य में उपालम्भ काव्य के उदाहरण ग़ज़लों के शेरों में तो अनगिनत मिल जाएँगे किंतु नज़्म की सूरत में डॉ. इकबाल की दो नज़्में शिकवा और जवाब शिकवा 'क्लासिकल काव्य' की हैसियत रखती हैं। इन्हीं दोनों नज़्मों की शैली में प्रो. उत्तम चंद जी 'शरर' ने 'आर्यों का शिकवा और 'जवाब शिकवा' नाम से दो नज़्में लिखीं जो प्रायः हर उत्सव में फ़रमाइश करके उनसे सुनी जाती थीं। 'आर्य का शिकवा' में परिस्थितियों, राजनीति, वेद विरोधी आचरण करनेवालों के हाथों पीड़ित आर्य जन अपने इष्ट सर्वशक्तिमान प्रभु को अपने अनन्य, वेदनिष्ठ भक्तों के प्रति उदासीनता एवं निष्ठुरता का गिला करते हैं और जवाब शिकवा में ईश्वर अपने इन भक्तों को आईना दिखाता हुआ अहसास कराता है कि मेरी कृपा के अधिकारी होने का दावा करने वाले तुम लोग कृपा के पात्र नहीं हो। इन दोनों नज़्मों को अलग से पुस्तकाकार भी छापा गया था और अब 'इन्द्रधनुष' नामक संग्रह के अंत में भी इन्हें सम्मिलित किया गया है। दोनों नज़्में लम्बी नज़्में हैं। यहाँ इनके १२+१७ पदों में से केवल दो-दो पद ही प्रस्तुत किये जा रहे हैं—

आर्यों का शिकवा—

तू ने देखा कि तेरे चाहने वाले आए
हाथ में वेदे-मुकद्दस को सँभाले आए
सामने तीरो-तबर बर्छियां भाले आए
हम ज़माने को तेरे दर पे झुका ले आए
वेद मंत्रों की हर इक सिम्त सदा गूंज उट्ठी
नग़मा-ए-ओ३म् से दुनिया की फ़िज़ा गूंज उट्ठी

★★★

कुश्ताए-तेग़े जफ़ाकार अगर हैं हम हैं
दौलते-दुनिया से नादार अगर हैं हम हैं
ख़स्ता-तन, सोख़्ता-दिल, ख़्वार अगर हैं हम हैं
चश्मे आलम में चुभे ख़ार अगर हैं हम हैं
क्या तेरी भक्ति का इनआम यही होता है?
क्या तेरे भक्तों का अंजाम यही होता है?
जवाब शिकवा—
दफ़अतन आई सदा, चीरती अफ़लाक तमाम
क्या बशर यूं ही ज़माने के हैं बेबाक तमाम?
ख़त्म कर डाली जो शिकवों पे ही इदराक तमाम।
काश! तुम वाकिफ़े अबबि-वफ़ा भी होते
काश! तुम महरमे-असरारे-बक़ा भी होते
★★★★
आज तुम मग़रबी तहज़ीब के दीवाने हो
धर्म क्या चीज़ है? इस राज़ से बेगाने हो
नाम को शम्मे-दयानन्द के परवाने हो
मुझ पे रौशन है जो तुम वेद के मस्ताने हो
वेद अलमारियों में बंद पड़े रहते हैं
रात दिन मन्दिरों पर कुफ़्ल जड़े रहते हैं

'शिकवा-जवाब शिकवा' की इस परम्परा को डॉ. सत्यपाल 'बेदार' सरस ने हिन्दी में 'उपालम्भ-प्रत्युपालम्भ" लिखकर और मैंने मुलतानी (सरायकी) में शिकवा-जवाब शिकवा' लिख कर आगे बढ़ाया है।

महर्षि दयानंद के श्रद्धावान् अनुयायी, कांग्रेस के नेता, गुरुकुल कांगड़ी के संस्थापक स्वा. श्रद्धानंद के प्रति लिखी गई हिन्दी कविता 'जय दिग्विजयी जय पुण्यधाम' की पंक्तियां देखिये—

हे तेजस्वी, हे परिव्राट्! हे सत्य निष्ठ, हे पूर्णकाम!
हे आर्य जाति की धवल कीर्ति, तुझको वंदन तुझको प्रणाम।
तू आर्य जाति का प्रहरी सजग, तू भारत माता का सपूत
तू दयानंद का भक्त प्रवर, तू नवल क्रांति का अग्रदूत।

★★

था कवच संगठन का तेरा, शुद्धि का शस्त्र सजा कर में
रण में निकला तू रणंजयी, रिपु दमन कर लिया पल भर में
कण कण से गूंजी स्वर लहरी जय दिग्विजयी जय पुण्य धाम
हे आर्य जाति की धवल कीर्ति, तुझको वंदन, तुझको प्रणाम।

"दयानन्दे-आज़म" शीर्षक नज़्म में महर्षि दयानंद के व्यक्तित्व का निर्माण करने वाले ओज, शौर्य, धैर्य, शुचिता, गम्भीरता आदि तत्वों का काव्यात्मक शैली में सुन्दर वर्णन किया गया है—

सोच कर तब लिया ख़ालिक ने बहारों से निखार
आबशारों से तरन्नुम, तो घटाओं से खुमार
सोज़ बिजली से तो सूरज से तमाज़त ले ली
हौसला धरती से, आकाश से वुसअ़त ले ली
रौशनी और तबस्सुम महो-अंजुम से लिया
और पाकीज़गी को कतराए-ए-शबनम से लिया
ली समंदर से जो गहराई तो फूलों से हँसी
नग़्मा बुलबुल से, पहाड़ों से बुलंदी ले ली
सारे अजज़ा को मुहब्वत में शराबूर किया
तब कहीं एक तड़पता हुआ दिल वन पाया
और उस दिल को लिए 'मूल' जी बेदार हुए
दुनिया वालों को दयानन्द केदीदार हुए

'शरर' साहब साम्यवादी नहीं हैं, प्रगतिशील लेखक संघ से जुड़े हुए भी नहीं हैं किंतु प्रगतिशील चिंतन के कवि अवश्य हैं। उनकी दृष्टि साम्राज्यवादी और पूंजीवादी शक्तियों को दलितों दमितों के आगे नतमस्तक हुआ हुआ स्पष्ट देख रही है—

यह आफ़तों का सिताया यह हादिसों का शिकार
यही ग़रीब जो तकदीर का भरम तोड़े
तो कुछ अजब नहीं रुक जाए वक्त की रफ़्तार
वकार शाह का पाए-गदा पे दम तोड़े

'शरर' साहब एक स्वाभिमानी एवं क्रांतिकारी रचनाकार हैं। स्वार्थी और वेद-विरोधी परिस्थितियों तथा व्यक्तियों से समझौता करना उन्हें स्वीकार नहीं है। वह पहले आर्यसमाजी हैं फिर शायर या कवि। वह ग़रीबी पर भी गर्वित हैं—

तुझको अफ़सोस कि नादारी है मेरा मकसूम
मुझको अफ़सोस कि तू लुत्फ़े-खुदी से महरूम

★★

मैं शबे-तार नहीं लूंगा सहर को खो कर
ज़र पे थूकूं भी नहीं ज़ौक़े-नज़र को खोकर
कैसे शबनम को खरीदूं में 'शरर' को खोकर
ख़ाक का तोदा बनूं सोज़े-जिगर को खो कर?

ऐसे ओजस्वी कवि, सफल वक्ता और सुयोग्य प्राध्यापक के जौहर को समाज ने पहचाना है, खूब पहचाना है और उनका अभिनंदन करने का निर्णय करके स्वयं अपने आप को सम्मानित क़िया है। इस लेख में मैं उनके बारे में वह सब कुछ तो नहीं लिख पाया हूं जिसके वे अधिकारी हैं। अन्य विद्वान उनके व्यक्तित्व के अन्य अनेक पक्षों पर प्रकाश डालेंगे। मैं तो अपनी लेखनी को विराम देते हुए प्रभु से प्रार्थना करता हूं कि पूज्य शरर साहब स्वस्थ प्रसन्न रहते हुए शतायु हों।

आर्यों के प्रेरणास्रोत : स्वतंत्रता सेनानी प्रो. शरर

—अजीत कुमार आर्य

आर्य समाज के वार्षिकोत्सव हों या आर्य वीर दल के प्रान्तीय सम्मेलन वक्ताओं की सूची में प्रो. उत्तम चन्द शरर का नाम पढ़कर श्रोताओं की भीड़ उमड़ती रही है। निज़ाम हैदराबाद के ख़िलाफ आन्दोलन में भाग लेने वाले स्वतंत्रता सेनानी प्रो. उत्तम चन्द शरर एक ऐसे व्यक्तित्व के धनी हैं जिनमें आर्य समाज के संस्कार कूट-कूट कर भरे हुए हैं। जिनकी सरल, शेरो-शायरी से सुसज्जित भाषण कला श्रोताओं को मन्त्र-मुग्ध कर आर्य समाज से जोड़े रही है। आज भी उनकी वक्तृत्व कला का आकर्षण श्रोताओं के सिर चढ़ कर बोलता है।

प्रो. शरर ने पूरे भारत वर्ष में आर्य समाज के प्रचार-प्रसार में अपना पूरा जीवन लगाये रखा है। प्रत्येक निमंत्रण को सम्मान देना। दक्षिणा का कोई लोभ-लालच नहीं। मार्ग-व्यय तक न मांगना, जिसने जो दे दिया सहर्ष स्वीकार करते हुए अपने कर्त्तव्य एवं धर्म का पालन करते रहना। आज भी उनकी उपस्थिति मात्र से जलसे जुलूसों की रौनक बढ़ जाती है। आर्य जगत उन्हें समय-समय पर सम्मानित भी करता रहा है, प्रेरणा भी लेता रहा है। उनके सरल दृष्टांत आर्यों का मार्गदर्शन करते रहे हैं।

एक बार प्रो. शरर ने अपने भाषण में जीने की कला बताते हुए कहा कि किसी ने एक जलती हुई मोमबत्ती से पूछा तेरे पहले भी अंधकार, तेरे बाद में भी अंधकार तो बता तेरे जलने का क्या लाभ? मोमबत्ती ने मुस्कुराते हुए कहा कि वह नहीं जानती उसके पहले क्या था, वह यह भी नहीं जानती कि उसके बाद क्या होगा परन्तु यह विचार कर उसे पूर्ण संतोष मिलता है कि वह जब तक रही उसने संसार को प्रकाश ही प्रकाश दिया, अन्धकार को दूर किया। इससे अधिक जीवन का महत्त्व क्या हो सकता है? एक बार उन्होंने अपने भाषण में बताया कि आप के जीवन में जो कुछ भी अच्छा है उसका महत्त्व अपने साथियों, मित्रों को दीजिए ओर जो कुछ न्यूनताएं हैं उन्हें आप स्वयं स्वीकार कीजिए फिर देखिए प्यार की धारा प्रवाहित होती है या नहीं।

प्रो. शरर ने जीवन भर कर्त्तव्य-परायणता, समयबद्धता, सच्चरित्रता, देशभक्ति,

शास्त्रार्थ, आर्य वीर दल संगठन के महत्त्व को पूरा महत्त्व दिया है। उन्होंने कवि सम्मेलनों का संचालन कर उनमें अभूतपूर्व जान फूंकी है। आर्य वीरों के तो वे बेताज बादशाह रहे हैं। आर्य वीर दल को अर्धसैनिक संगठन मानते हुए अनुशासन पर पूरा ज़ोर दिया। मुझे भी उनके साथ अनेक वर्षों तक आर्य वीर दल का कार्य करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। मैं उस समय को अपने जीवन का सर्वश्रेष्ठ काल मानता हूं। उनके दिशा निर्देशन में आर्य वीर दल के प्रशिक्षण शिविरों एवं प्रान्तीय महासम्मेलनों ने अभूतपूर्व सफलताएं प्राप्त की हैं। उन्हें लाला लक्ष्मण दास आर्य, पांच भाई साबुन वालों का पूर्ण विश्वास श्रद्धापूर्वक प्राप्त रहा है। हमने सम्मेलनों के लिए पूरे प्रान्त के प्रचार-प्रसार एवं धनसंग्रह हेतु अनेक योजनाबद्ध भ्रमण किए हैं। वे कार्य आज भी मेरे जीवन के अविस्मरणीय धरोहर हैं।

एक बार प्रो. शरर, लाला लक्ष्मण दास आर्य तथा कुछ अन्य आर्य उपदेशकों के साथ मुझे बल्लभगढ़ से फ़तेहपुर बिल्लोच आर्य समाज की स्थापना करने हेतु जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। रात्रि का कार्यक्रम था। खूब स्वागत हुआ। विशाल जनसमूह उपस्थित था। लोगों ने प्रो. शरर का प्रवचन खूब ध्यान से सुना और आर्य समाज की स्थापना की। कार्यक्रम उपरान्त शयन हेतु एक हवेली में व्यवस्था की गई थी। प्रो. शरर, कुछ विद्वान् वक्ताओं, भजनोपदेशकों के साथ मैं भी लेट गया। बत्तियां बुझा दी गईं। गर्मियों का समय था। बिजली का पंखा पूरी गति से घूम रहा था। अभी कुछ समय ही बीता था कि ज़ोर का धमाका हुआ और सभी चिल्लाए क्या हुआ? बत्ती जलाई गई। सबने देखा छत का वह लगभग १५-२० किलो वज़नी पंखा मेरी जंघा से टकरा कर दूर जा गिरा था। घबराहट में सभी मेरा हाल-चाल पूछ रहे थे और मैं अपने आपको पूर्ण सुरक्षित पाकर ईश्वरीय कार्य के चमत्कार को देख रहा था। एक खरोंच भी तो नहीं आई थी। प्रातः कइयों ने मुझे बताया कि घटना के भय से वह रात को सो भी न सके थे। जब प्रातः उठकर मैं अपने स्कूटर से अपने विद्यालय के लिए चला तो सभी आश्चर्य चकित हो देखते रह गये। जब प्रातः यह बात लाला लक्ष्मणदास जी तक पहुंची तो उन्होंने अगले दिन मिलने पर मुझे कहा ईश्वर ने तुम्हें दूसरा जन्म दिया है। अब यह जीवन आर्य समाज एवं आर्य वीर दल के लिए लगा दो।

मैंने उनका आदेश सिर-माथे धारण किया। उस दिन से आज तक आर्य समाज आर्यवीर दल का कार्य अबाध गति से किये जा रहा हूँ। इन्हीं कार्यों के कारण आज भी मैं आर्य वीर दल हरियाणा का सहसंचालक हूँ। आर्य वीर विजय मासिक पत्रिका का

प्रधान सम्पादक हूँ। आर्य केन्द्रीय सभा फ़रीदाबाद का गत छः वर्षों से लगातार महामन्त्री हूँ। आर्य जगत का इस असीम स्नेह एवं सम्मान के लिए मैं आभारी हूँ। गत वर्ष प्रो. शरर से पानीपत में एक शिविर केसमापन समारोह में मिलने का सुअवसर मिला। मुझे भी उनके साथ सम्मानित किया गया। कार्यक्रम उपरान्त मिलने के अंतरंग क्षणों में उन्होंने मुझसे कहा कि आज भी वह जब रात्रि को सोते हैं तो पंखें के बिल्कुल नीचे कभी नहीं सोते, थोड़ा हट कर सोते हैं। यह सुन कर मुझे उस घटना का स्मरण अनायास ही हो आया। मैंने सोचा विद्वानों के साथ समाज कल्याण के कार्य करने का आनन्द अलग ही होता है। इसे न तो खरीदा जा सकता है और न ही भुलाया जा सकता है। ऐसी अनेक घटनाएं आज भी मेरे जीवन की अमूल्य धरोहर हैं।

गत दिनों जब मुझे ज्ञात हुआ कि उनके बारे में अभिनंदन ग्रंथ प्रकाशित किया जा रहा है, उन्हें सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा एवं पानीपत की आर्यसमाजें उनके द्वारा किये गये धर्म प्रचार कार्यों के लिए सम्मानित करने जा रही हैं, तो मुझे भी उनके साथ बिताए गये लम्हों को लिपिबद्ध करने का सुअवसर मिला। मुझे इस अवसर पर असीम प्रसन्नता अनुभव हो रही है। मैं आयोजकों का हार्दिक धन्यवाद करते हुए प्रो. शरर जी की दीर्घायु तथा स्वस्थ जीवन की कामना करता हूँ।

६७१/७बी, फ़रीदवाद-१२१००६

आर्य समाज स्वयं में साध्य नहीं है, बल्कि वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार के निमित्त साधन रूप में खड़ा किया गया आन्दोलन है।

कर्मशील प्रो. उत्तम चंद 'शरर'

—पं. प्रियदत्त शास्त्री

आर्य जगत् में प्रो. उत्तम चन्द जी शरर को कौन नहीं जानता? वे आर्य समाज के उच्च कोटि के वक्ताओं में ख्याति प्राप्त वक्ता और कवि हैं। जब वे वेद मन्त्रों की व्याख्या करते हैं तो जनता मन्त्रमुग्ध होती है। उनका एक-एक शब्द हृदय को छूनेवाला होता है। उनकी वक्तृत्वकला से जनता हमेशा ही प्रभावित रही है। उनके प्रवचनों में ऋषि दयानंद सरस्वती और वेद छाया रहता है। उनका प्रवचन वेद, शास्त्र, उपनिषद् और उर्दू की शेरो-शायरी से सजा हुआ रहता है। वे आर्य कालेज पानीपत और डी.ए.वी. कालेज फ़ार विमेन, करनाल में हिन्दी केप्राध्यापक होते हुए भी वेद प्रचार व प्रसार के लिए भारत में ही नहीं घूमे अपितु विदेशों में भी नैरोबी (कीनिया) तक हो आए हैं। इनका सारा जीवन ही वेद प्रचार व प्रसार में लगा हुआ है। आर्य समाजों के वार्षिक उत्सवों पर कवि सम्मेलन के संयोजक वही होते हैं। उर्दू शेरो-शायरी में आर्य जगत् में उनका समकक्ष कोई नहीं है। हास्य कवि सम्मेलन में वे अपने कवियों को अश्लीलता का सहारा लेने को मना करते और आर्य समाज का मंच साफ-सुथरा रखने का अनुरोध करते हैं। अत्युत्तम धर्म-प्रचारकों में से एकहैं श्री उत्तम चन्द शरर।

स्वामी दयानन्द जी ने ऐतिहासिक मुम्बई नगरी में सन् १८७५ में आर्य समाज की विधिवत् स्थापना की। आर्य समाज अपने जन्मकाल से ही देश और जाति की रक्षा करता आ रहा है। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में आर्य समाज का भरपूर योगदान रहा है। हमारे देश में अनेकों रियासतें थीं। उनमें हैदराबाद रियासत सबसे बड़ी थी। हैदराबाद रियासत का निज़ाम उस्मान अली खाँ बहादुर था। यह साम्प्रदायिक वृत्ति का व्यक्ति था। वह अपने राज्य में मुसलमानों की सुख-सुविधा का ध्यान रखता था और हिन्दुओं को अनेक प्रकार के कष्ट देकर उनके नाक में दम किए रखता था। निज़ाम राज्य

में हिन्दू अपने घर में भी रो नहीं सकते थे। नए मन्दिर बना नहीं सकते थे। ओ३म् ध्वज अपने मंदिर व घर पर लगा नहीं सकते थे। मंदिरों में घण्टे-बजा नहीं सकते थे। अपने पर्व मनाने की भी हमें स्वतंत्रता नहीं थी। बहू-बेटियों की इज़्ज़त लुटना तो आम बात थी। ऐसे क्रूर निज़ाम से आर्य समाज ने धार्मिक अधिकारों की मांग की पर वह न माना। १९३९ में आर्य समाज ने निज़ाम के विरुद्ध सत्याग्रह शुरू किया। इस सत्याग्रह में लगभग २२ हज़ार सत्याग्रही जेलों में कष्ट भोगते रहे। इस सत्याग्रह में उत्तम चन्द शरर जी भी थे। इनको गुलबर्गा जेल में ६ महीने का कठोर कारावास भोगना पड़ा। आख़िर आर्यों की जीत हुई और निज़ाम शाही को झुकना पड़ा। शरर जी आर्य समाज के सक्रिय कार्यकर्ता हैं। इन वीरों के तप और त्याग से ही हम आज स्वतंत्र भारत में स्वतंत्र विचरण कर रहे हैं। भारत सरकार ने इनको स्वतंत्रता सेनानी घोषित करके इन्हें यथायोग्य मानधन देकर सम्मानित किया है। हम सरकार का धन्यवाद करते हैं।

प्रो. उत्तमचन्द जी शरर नवयुवकों के साथ भी जुड़े रहे। वे कई वर्षों तक सार्वदेशिक आर्यवीर दल हरियाणा के संचालक रहे हैं। युवकों के साथ कन्धे-से-कन्धा मिलाकर चलते रहे और आर्य वीर दल के संगठन को अपनी सूझबूझ से मजबूत किया। प्रतिवर्ष हरियाणा में आर्य वीर दल आर्य महासम्मेलन करते रहे। आपका आर्यवीरों को अच्छा मार्गदर्शन मिला। आर्य वीर दल संगठन आर्य समाज की रक्षा वाहिनी फ़ौज है। यह आर्य समाज का रक्षा विभाग है। इस संगठन ने देश को हजारों अच्छे नागरिक दिये हैं। इसका इतिहास स्वर्ण अक्षरों में लिखने योग्य है। इसमें चरित्रवान, बलवान, वेदभक्त और देशभक्त युवक बनाये जाते हैं। पानीपत की जनता अपने प्रिय स्वतन्त्रता सेनानी, प्रसिद्ध वक्ता, विख्यात कवि प्रो. उत्तम चन्द जी शरर का अभिनन्दन कर रही है। यह अत्यंत प्रशंसनीय उपक्रम है। परमात्मा से प्रार्थना है कि वह प्रो. उत्तम चन्द जी शरर को लम्बी आयु और उत्तम स्वास्थ्य दे ताकि वह आर्य समाज की और अधिक सेवा कर सकें।

संचालक
आर्यवीर दल आन्ध्रप्रदेश

सरस्वती के वरदपुत्र प्रो. उत्तम चंद 'शरर'

प्रो. रामविचार, एम.ए.

प्रो. उत्तम चन्द जी शरर आर्य समाज के गौरव हैं। उन्होंने सारा जीवन वैदिक धर्म और आर्य समाज के प्रचार-प्रसार में लगा दिया है।

वे एक निर्व्यसन महानुभाव हैं। निर्व्यसनता आर्यत्व का पहला लक्षण है। वे इस लक्षण पर खरे उतरते हैं। उनमें मादक द्रव्य, मांसाहार, जुआ, अश्लीलता और अनाचार का कोई लक्षण नहीं है। ऐसे महानुभाव आर्य कहलाने के सच्चे अधिकारी होते हैं और प्रचारक-पद के भी योग्य होते हैं।

वे वैदिक धर्म और आर्य समाज के उत्सवों पर जाते रहे हैं। उन्होंने कभी दक्षिणा की माँग नहीं की। उन्हें जो दे दिया गया वे लेकर चलते बने।

वे कर्मकाण्ड के भी पक्के हैं। कर्मकाण्ड से मेरा अभिप्राय सन्ध्या, स्वाध्याय और सत्संग से हैं। वे ईश्वर भक्त, स्वाध्यायशील और सत्संगनिष्ठ महानुभाव हैं।

जहाँ तक वाचिक और मानसिक व्यवहार का सम्बन्ध है वे इसमें बहुत हद तक खरे ही उतरते हैं।

वे व्यवसाय से अध्यापक और प्राध्यापक रहे। प्राथमिक विद्यालय के अध्यापन से महाविद्यालय के प्राध्यापक पद तक पहुँचना उनके अध्यवसाय और परिश्रम का सूचक है। प्रगति और उन्नति के इच्छुक महानुभाव इस दिशा में उनके जीवन से प्रेरणा ले सकते हैं। वे एक सफल अध्यापक और प्राध्यापक रहे हैं। इस दिशा में वे सरस्वती के वरद पुत्र हैं।

वे एक प्रभावशाली वक्ता हैं। उनकी जिह्वा पर सरस्वती विराजमान रहती है। उनका गद्य भी पद्य होता है। वे ऐसी काव्यमयी भाषा का प्रयोग करते हैं कि श्रोता

मन्त्रमुग्ध हो जाते हैं। उनके व्याख्यानों में तर्क और प्रमाणों के स्थान पर उदाहरणों की प्रचुरता रहती है। यही उदाहरणों की प्रचुरता उनके व्याख्यानों को रोचक और आकर्षक बना देती है जिससे कि श्रोता ऊबते नहीं हैं।

जिसमें प्रचार की भावना हो वही अपने नगर से बाहर अन्य स्थानों पर जाकर प्रचार क़र सकता है। यात्रा में कष्ट उठाना, समय-असमय पर भोजन करना, कई बार नींद का भी पूरा न होना—इनके कारण स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव—ये समस्याएं प्रचारकों के सम्मुख आया करती हैं। परन्तु वे प्रचार-भावना के आवेग में इनको भूल कर अपने कर्त्तव्य की पूर्ति करते रहते हैं, परन्तु वक्र-बुद्धि लोग समझते हैं कि ये लोग लोकेषणा की तृप्ति के लिए बाहर जाते हैं।

वे एक प्रभावशाली कवि भी हैं। उनकी यह प्रतिभा ईश्वर प्रदत्त है। उनका एक काव्य संग्रह 'फूल और कांटे' प्रकाशित हुआ था। इसमें वैदिक धर्म, ऋषि दयानन्द और आर्य समाज सम्बन्धी कविताएँ संकलित हैं। उन कविताओं में जीवन के अन्य पक्षों को भी छुआ गया है। उनको उर्दू और हिन्दी दोनों भाषाओं पर समान अधिकार प्राप्त है। वे दोनों भाषाओं के सफल कवि हैं। वे अनेक कवि सम्मेलनों में सम्मिलित होकर उनकी शोभा बढ़ा चुके हैं।

वे वैदिक धर्म, महर्षि दयानन्द और आर्य समाज के अनन्य भक्त हैं। उनके हृदय की गहराई से निकले हुए ये शब्द सदा आर्य जनों को प्रबोधित करते रहेंगे और अकर्मण्यता से गतिशीलता की ओर प्रवृत्त करते रहेंगे—

मुद्दई राहबरी के थे जो ऐसे भटके,
बेख़वर जैसे कभी वाकिफ़े-मंज़िल ही न थे।
लाख कड़वी हो मगर बात यह सच्ची है 'शरर',
हम दयानन्द की मीरास़ के काबिल ही न थे।

परमात्मा करे कि वे स्वस्थ जीवन को प्राप्त करते हुए शतायु हों।

सैक्टर-६, बहादुरगढ़, ज़ि-झज्जर

प्रोफ़ेसर उत्तम चन्द जी शरर शतायु हों

—स्वामी इन्द्रवेश

मुझे यह जानकर अति हर्ष हुआ कि आर्य समाज के दीवाने तपस्वी प्रखर विचारक श्री प्रोफ़ेसर उत्तम चन्द जी शरर का अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशित हो रहा है। मैंने सैकड़ों बार श्री शरर जी को सुना है। सम्मेलनों में उत्सवों में सत्संगों में और संगोष्ठियों में जहां भी उन्होंने अपने विचार रखे वह एक विशेष अंदाज़ में रखे।

जहां शरर जी अच्छे वक्ता हैं वहां कवि और शायर भी हैं। पाखण्ड के ऊपर आक्रमण करना, अपनी बात को निर्भीक होकर कहना यह शरर जी का स्वभाव है। बात १९५५ की है। रोहतक में दुर्गा भवन का वार्षिक उत्सव चल रहा था। सनातन धर्म के कथा वाचक पं. माधवाचार्य आये हुए थे। पं. माधवाचार्य अपने व्याख्यानों में आर्य समाज पर टिप्पणियां करते थे। खिल्लियां उड़ाते थे और बहुत ही हल्के स्तर की आलोचना करते थे। आर्यसमाजी कार्यकर्त्ताओं तक चर्चा पहुंची। उस समय शरर जी आर्य स्कूल में प्राध्यापक थे। शरर जी ने कहा कि हमें पं. माधवाचार्य को शास्त्रार्थ के लिए ललकारना चाहिये। और मैं शास्त्रार्थ के लिए तैयार हूँ। रात के कार्यक्रम में शरर जी के साथ श्री मामचन्द जी, श्री परमानन्द जी, श्री महाशय भरत सिंह जी, श्री धर्मपाल जी, श्री दीनानाथ जी, श्री गुरुदत्त जी, श्री गणेश दास जी आदि कार्यकर्त्ता दुर्गाभवन पहुँचे। पं. माधवाचार्य ने आर्य समाज पर आरोप लगाने शुरू किये, तो शरर जी जनता में खड़े हुए और ललकारते हुए शास्त्रार्थ करने का आह्वान किया। स्टेज पर गुरु चरणदास जी और बख्शी रघुनाथ जी बैठे हुए थे। शरर जी की बात सुनकर अनेक लोगों ने उनको पकड़ कर ऊपर उठा लिया और यज्ञकुण्ड में फेंकने के लिए उद्यत हो गये। उस समय आर्य समाज के कार्यकर्त्ताओं ने साहस के साथ मुकाबला

किया और शरर जी के प्राण बचा लिये। इस घटना की आर्यसमाजी क्षेत्र में तीव्र प्रतिक्रिया हुई।

स्वामी ओमानन्द जी (आचार्य भगवानदेव), पं. जगदेव सिंह सिद्धान्ती, प्रो. शेर सिंह आदि आर्य नेताओं ने इसी मुद्दे पर आर्य महासम्मेलन का आयोजन रोहतक में किया। स्वामी समर्पणानन्द (बुद्धदेव विद्यालंकार), पं. शान्ति प्रकाश शास्त्रार्थ महारथी आदि विद्वान सम्मेलन में पधारे। रोहतक में आर्य समाज की विशाल शोभायात्रा निकाली और लिखित रूप से शास्त्रार्थ की चुनौती दी। जिसके परिणामस्वरूप सनातन धर्म के कार्यकर्त्ताओं ने आर्य समाज के विराट रूप को देखकर समझौता कर लिया और विवाद शान्त हो गया।

शरर जी आर्यसमाज के क्षेत्र में प्रारम्भ से उग्र विचारों के प्रतीक रहे हैं। आर्य युवकों केप्रेरणा दायकरहे हैं। मैं आदरणीय उत्तम चन्द जी शरर का अभिनन्दन करता हूँ। वे शतायु हों और इसी प्रकार वेद प्रचार अभियान को चलाये रखें।

—दयानन्द मठ, रोहतक

अग्नि के स्फुल्लिंग में भी वही गुण होते हैं जो अग्नि में हैं। उसका स्पर्श भी अग्नि के स्पर्श की तरह दाहक होता है।

प्रो. उत्तमचन्द शरर : कवि तथा वक्ता के रूप में

डा. भवानी लाल भारतीय, अध्यक्ष–आर्य लेखक परिषद्

हिन्दी और उर्दू में समान रूप से श्रेष्ठ काव्य रचना करने वाले प्रो. उत्तमचंद शरर अपने जीवन के छियासी वसन्त देख चुके हैं। उनका जन्म १९१६ में पाकिस्तान के मुज़फ्फ़रगढ़ ज़िले के एक ग्राम सीतपुर में हुआ। उनकी आरम्भिक शिक्षा पश्चिमी पंजाब में हुई। देश-विभाजन के पश्चात् वे भारत आये। हिन्दी और संस्कृत में एम.ए. प्रो. शरर ने अपने स्थायी निवास के लिए पानीपत को चुना। उन्होंने कई वर्षों तक आर्य कालेज, पानीपत, डी.ए.वी. कालेज फ़ार विमेन लुधियाना तथा करनाल में हिन्दी के प्राध्यापक के रूप में कार्य किया। १९७८ में वे सेवानिवृत्त हो गये। वे आर्यसमाज के वक्ताओं की श्रेणी में आते हैं। देश-विदेश की आर्यसमाजों ने उनके ओजस्वी व्याख्यानों को दत्त-चित्त होकर सुना है। कवि सम्मेलनों और मुशायरों में उनकी कविताएं श्रोता समाज द्वारा रुचिपूर्वक सुनी जाती हैं।

मेरा प्रो. शरर से परिचय वर्षों पुराना है। कलकत्ता, चंडीगढ़, करनाल, अमरोहा आदि अनेक स्थानों पर हमने आर्य समाज की वेदी से अनेक बार साथ-साथ व्याख्यान दिये हैं। अजमेर के ऋषि मेले के अवसर पर आयोजित कवि सम्मेलन में उन्होंने सफल संयोजन किया तथा अपनी कविता से जनता को भावविभोर कर दिया। वे मधुरभाषी, हँसमुख तथा वाग्विदग्धतायुक्त वाणी के धनी हैं। हास्यरस पूर्ण प्रसंगों का तो उनके पास ख़जाना है और वे अपनी स्मृति में सुरक्षित ऐसे हास्य-रससिक्त प्रसंगों को सुना कर सभाओं में अपनी उपस्थिति दर्ज कराते रहते हैं।

हिन्दी और उर्दू में उन्होंने उत्तम काव्य रचना की है। स्वामी दयानन्द के प्रति अपने श्रद्धायुक्त भावों को कवि रामधारीसिंह दिनकर की प्रसिद्ध कविता 'हिमालय से' के अनुकरण पर निम्न पंक्तियों में व्यक्त किया है—

ओ तुंग हिमालय शृंग तुल्य उज्ज्वल महान।
गम्भीर परम पावन चरित्र गंगा समान।
ओ ब्रह्मचर्य साकार, दिव्यजीवन अनूप।
पाखण्ड दम्भ के लिए उग्र विद्रोहरूप।
ओ तेजस्वी ओ क्रान्तदर्शी ओ सत्यकाम।
युग पुरुष हमारा युग युग तक तुमको प्रणाम॥

हम शरर की उर्दू शायरी के बारे में आर्य समाज के एक उर्दू पत्रकार स्व. रामचन्द्र जावेद की सम्मति उद्धृत करना चाहते हैं—"यदि अतिशयोक्ति न समझी जाये तो मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि आर्यसमाज के सभी दौरों में इतना बुलन्द शायर अभी तक कोई पैदा नहीं हुआ। उनकी कल्पना की उड़ान, कलाम की पुख्तगी, काव्य प्रतिभा, उनकी खुदी और खुद्दारी, उनका मन्तक (तर्क), उनकी भावनाएं, उनका फ़लसफ़ा (दर्शन) यह कहने के लिए मुझे मजबूर करता है कि वे आर्यसमाज के इक़बाल हैं।" यों तो उन्होंने उर्दू में बहुत कुछ लिखा है किन्तु 'आर्य का शिकवा-जवाब शिकवा' उनकी एक लम्बी कविता है जो विदग्धता तथा हाज़िरजवाबी का मुकम्मल नमूना है। सच्ची आस्तिकता तथा वेद ज्ञान के प्रचार में आर्यसमाज के अनुयायियों के पुरुषार्थ को कवि ने वाणी दी है। प्रश्नोत्तर की शैली में लिखी इस कविता के दो पद्य यहां देते हैं—

तू ही बतला कि तेरी धूम मचाई किसने?
कल्बे-मुलहिद में तेरी आग लगाई किसने?
बुतकदों में शम्मे-तौहीद जलाई किसने?
चढ़के मिम्बर से ऋचा वेद की गाई किसने?
हम ही दीवाने थे अलमस्त थे सौदाई थे।
और तो पेट के बंदे या तमाशाई थे॥

शब्द चयन, वक्रोक्ति तथा प्रभावपूर्ण भाषा का प्रयोग एक एक पंक्ति में झलकता है। उत्तर में वेद ज्ञान प्रदाता परमात्मा अपने बंदे से कहता है—

तुमने चाहा कि मिटे कुफ्र भी माया भी रहे।
वेद परचार भी हो, शोहरतो-चर्चा भी रहे।
गर बने तालिबे-हक, तालिबे-दुनिया भी रहे।
वेद देखे भी नहीं, वेद के शैदा भी रहे।
लब से हक, दिल से पर असनाम की चाहत न गई।
'रिन्द के रिन्द रहे हाथ से जन्नत न गई।"

उर्दू काव्य की एक प्रसिद्ध पंक्ति को उक्त पद्य की अन्तिम पंक्ति में किस खूबी से कवि ने फिट किया है, यह काबिले-ग़ौर है। यह तो सत्य है कि सभा-सम्मेलनों में अपनी व्याख्यान कला का जौहर दिखाने तथा कवि सम्मेलनों में अपनी रचनाओं से श्रोता समूह को ब्रह्मानन्द तुल्य काव्यरस का पान कराने के कारण शरर जी काव्य रचना को कम समय दे पाते हैं। वे शतायु हों।

८/४२३, नन्दन वन, जोधपुर

शरर जी की कहानी चित्रों की ज़बानी
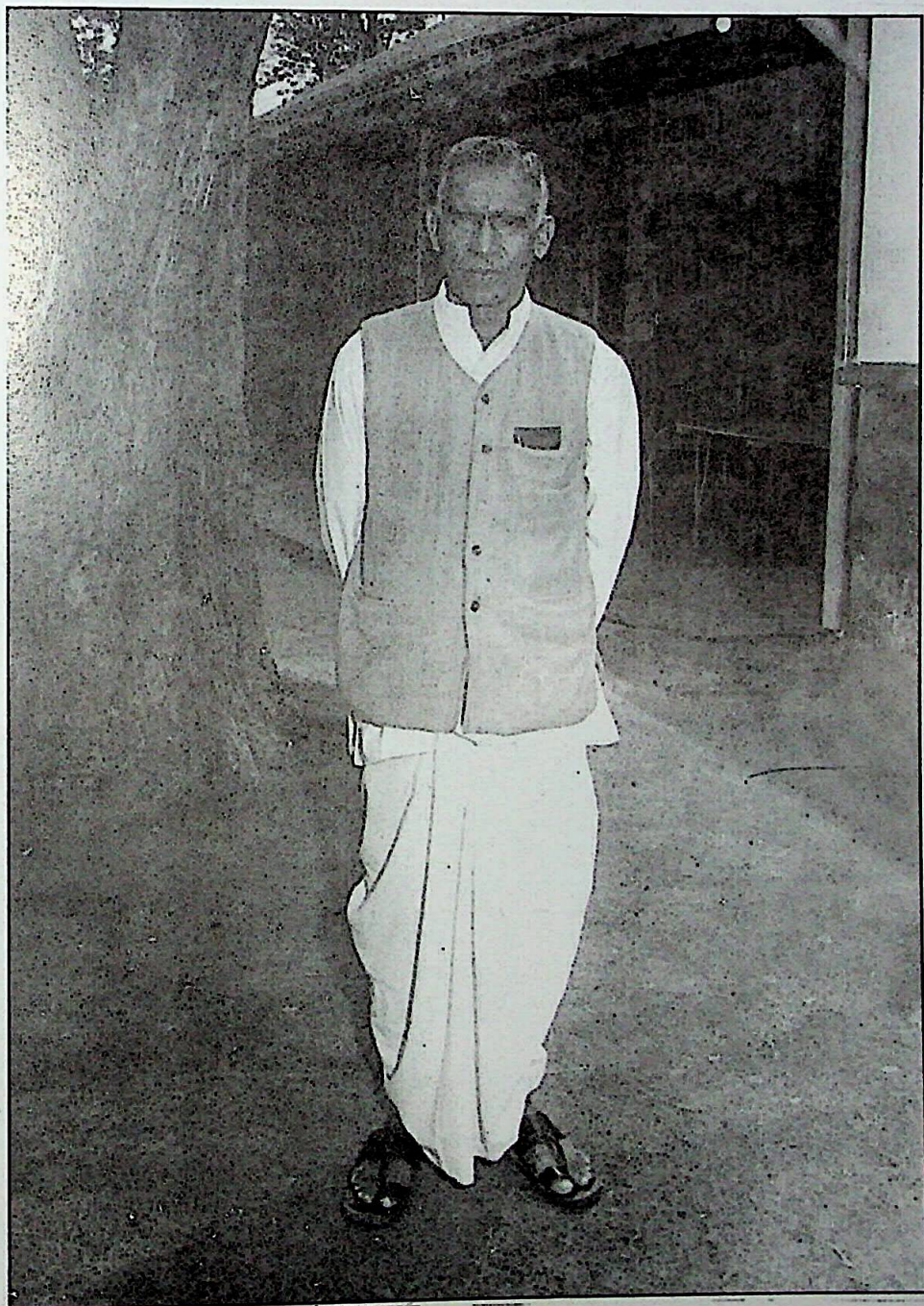
प्रो. उत्तमचंद जी 'शरर' आर्यन लीग नैरोबी (केन्या में)
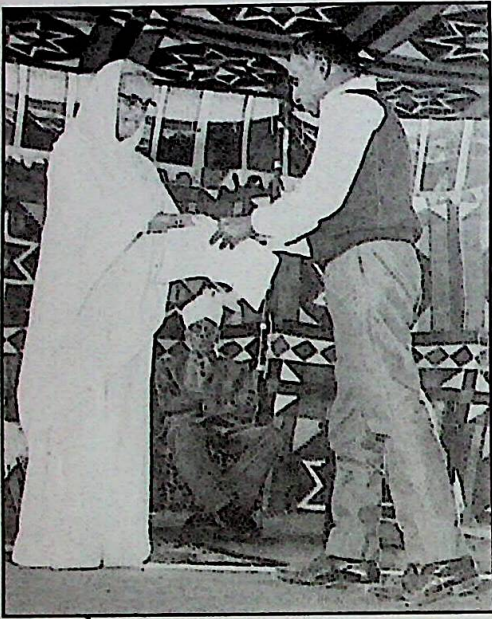
डी.ए.वी. कालेज करनाल के वार्षिकोत्सव पर बहन कमला आर्या को सम्मानित करते हुए श्री शरर जी
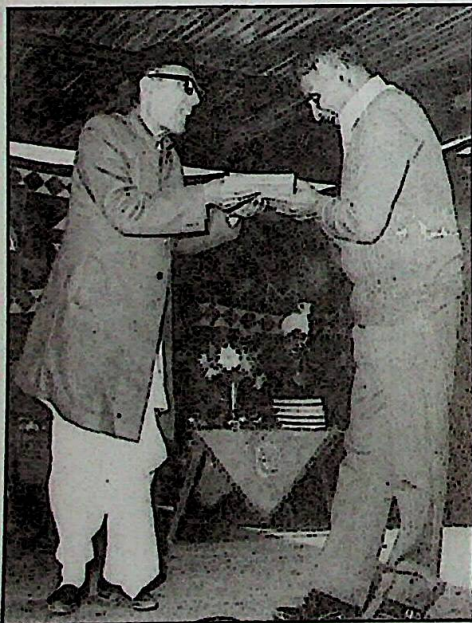
डी.ए.वी. कालेज करनाल के वार्षिकोत्सव पर सार्वदेशिक सभा के तत्कालीन प्रधान श्री रामगोपाल शालवाले श्री शरर जी को सम्मानित करते हुए
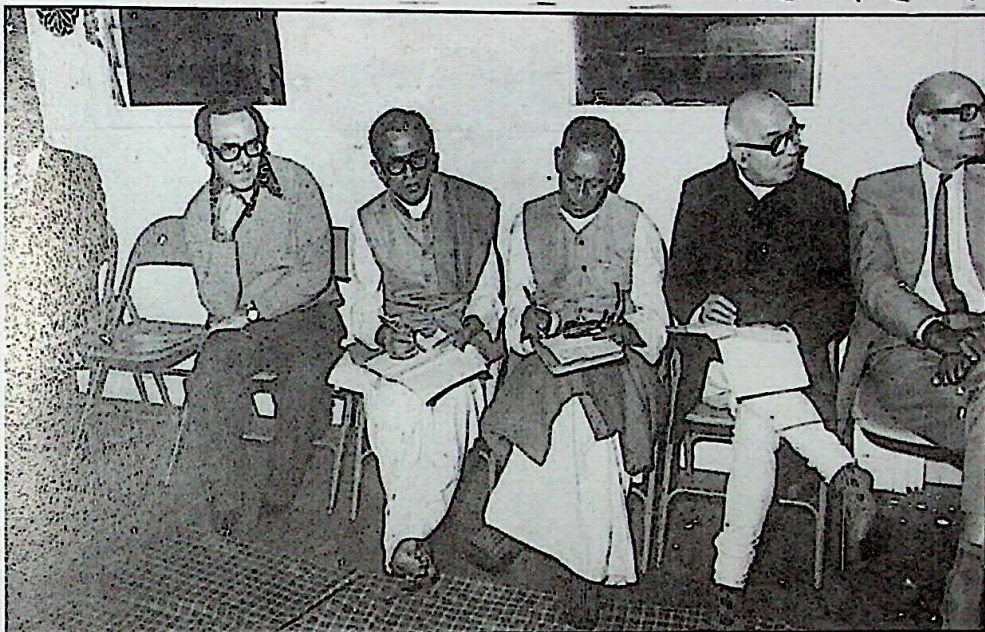
नैरोवी (केन्या) में भाषण प्रतियोगिता में निर्णायक की भूमिका में श्री शरर जी, उनके साथ वाईं ओर बैठे हैं श्री सच्चिदानन्द जी शास्त्री

नैरोवी (केन्या) में वेद प्रचार करते हुए श्री शरर जी। वाईं ओर विराजमान हैं श्री सत्यम् जी

आर्य वीर दल के प्रांतीय सम्मेलन, रोहतक में सिक्कों से तोले जाते हुए श्री शरर जी
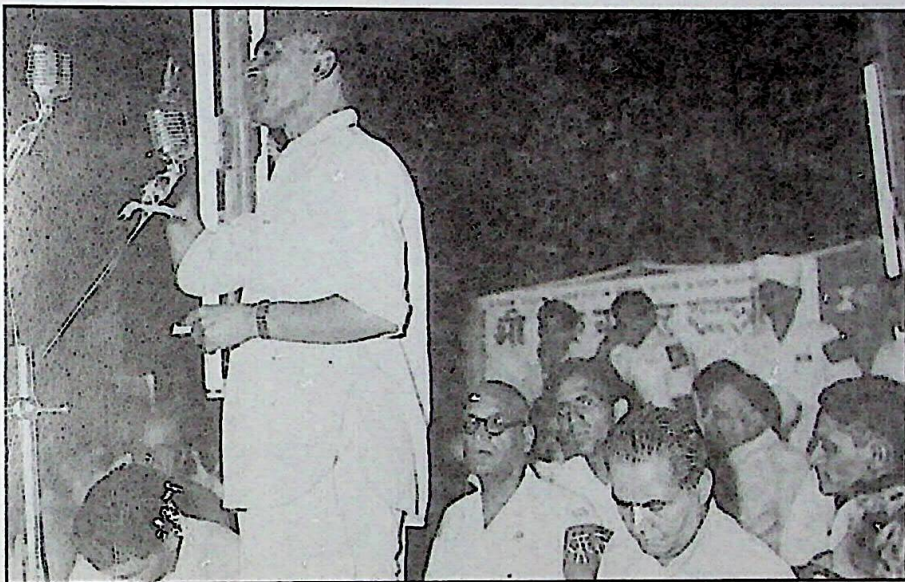
आर्यवीर दल पंजाब के प्रांतीय सम्मेलन लुधियाना में सम्बोधित करते हुए श्री शरर जी

आर्य समाज बल्लभगढ़ (हरि.) के उत्सव पर श्री शरर जी का स्वागत करते हुए अधिकारीगण
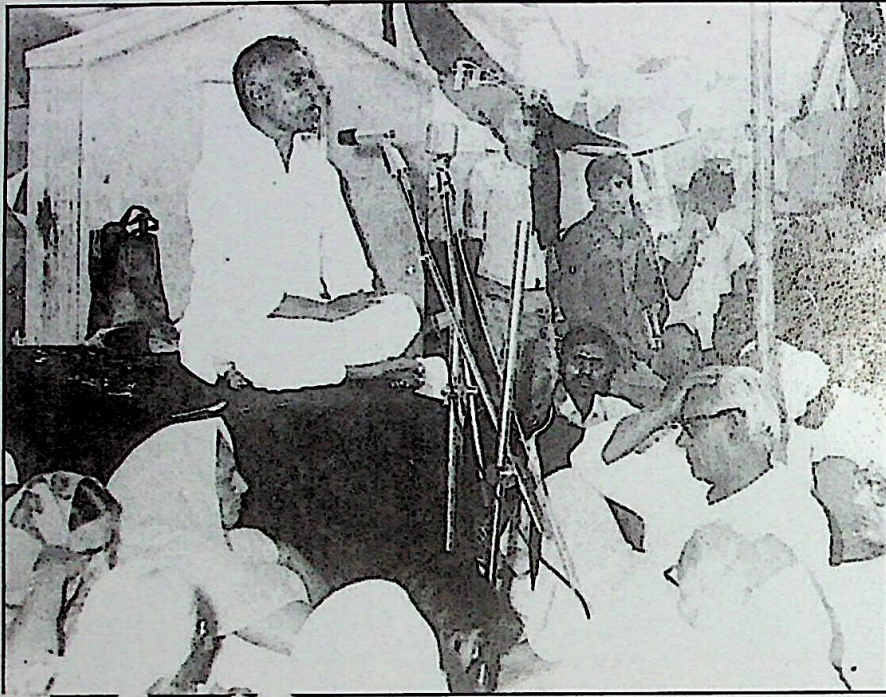
आर्य समाज मिल्लरगंज लुधियाना के वार्षिकोत्सव पर प्रवचन करते हुए श्री शरर जी
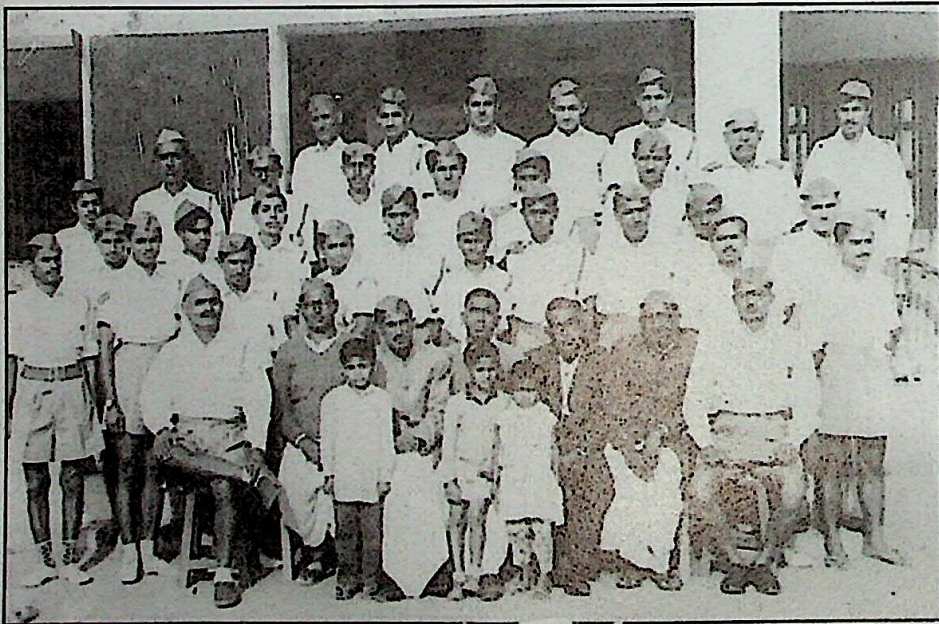
आर्यवीर दल करनाल के वार्षिक शिविर में श्री उत्तमचंद शरर, उनके साथ हैं श्री सतपाल आर्य (पलवल), श्री रामचंद आर्य (गुड़गांव), श्री जगदीश मित्र (रोहतक)

ध्वजारोहण करते पं. प्रकाशवीर शास्त्री के साथ श्री शरर जी
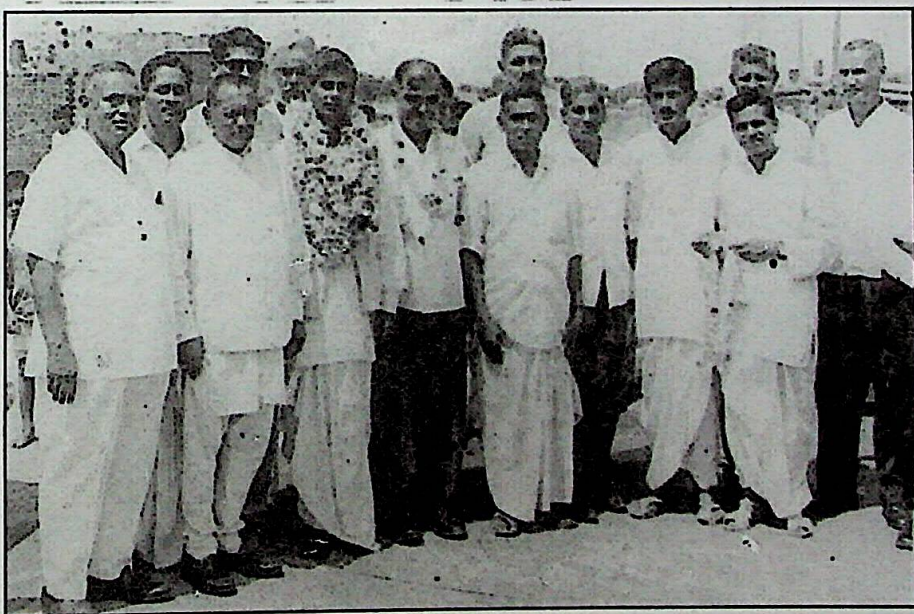
आर्य वीर दल गुड़गांव के शिविर में प्रांतीय संचालक श्री शरर जी के साथ डॉ. गणेशदास, श्री रामचंद आर्य व अन्य

पं. प्रकाशवीर शास्त्री व श्री शरर जी ध्वजारोहण करते हुए
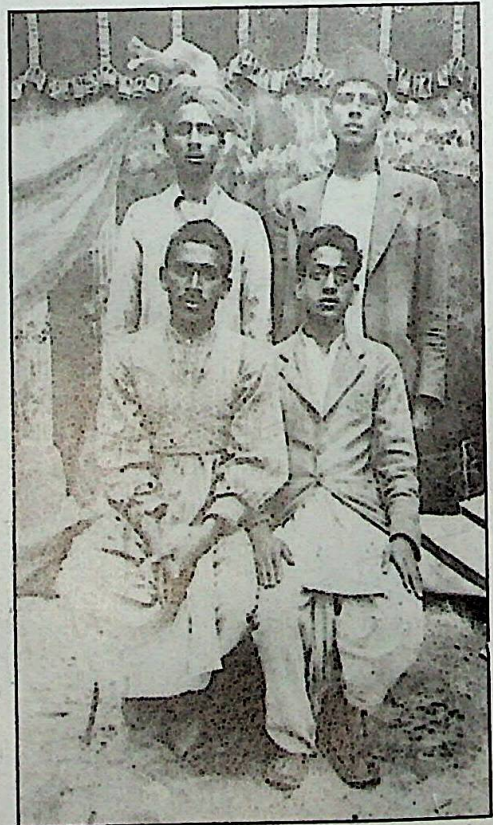
स्वतंत्रता पूर्व १९३९ का एक दुर्लभ चित्र। सीतपुर से हैदराबाद सत्याग्रह में भाग लेने जाने को तत्पर श्री शरर जी (कुर्सी पर बैठे हुए बाएँ) और उनके सहयात्री सर्वश्री जयदेव, घनश्याम, देवदत्त आर्य
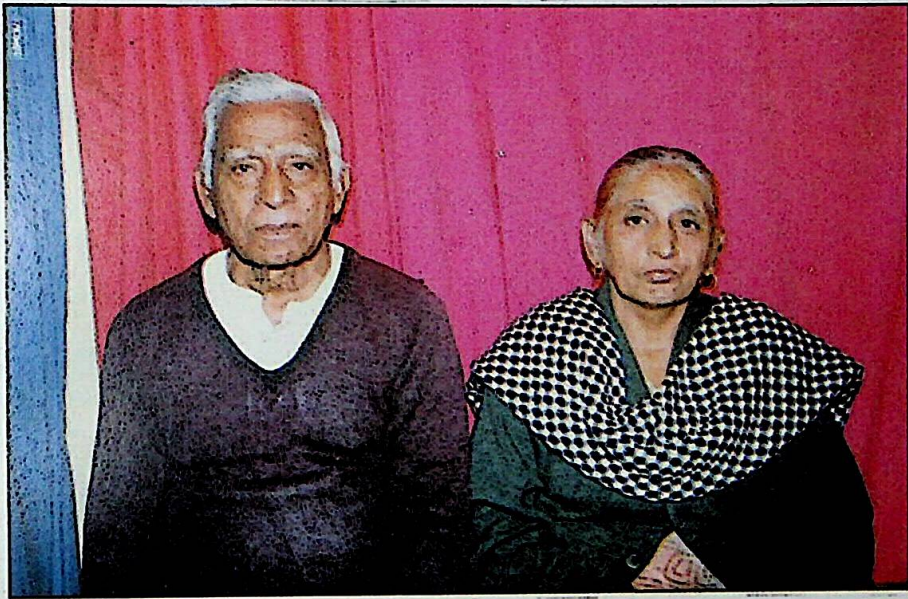
श्री शरर जी अपनी धर्मपत्नी श्रीमती लाजवंती के साथ
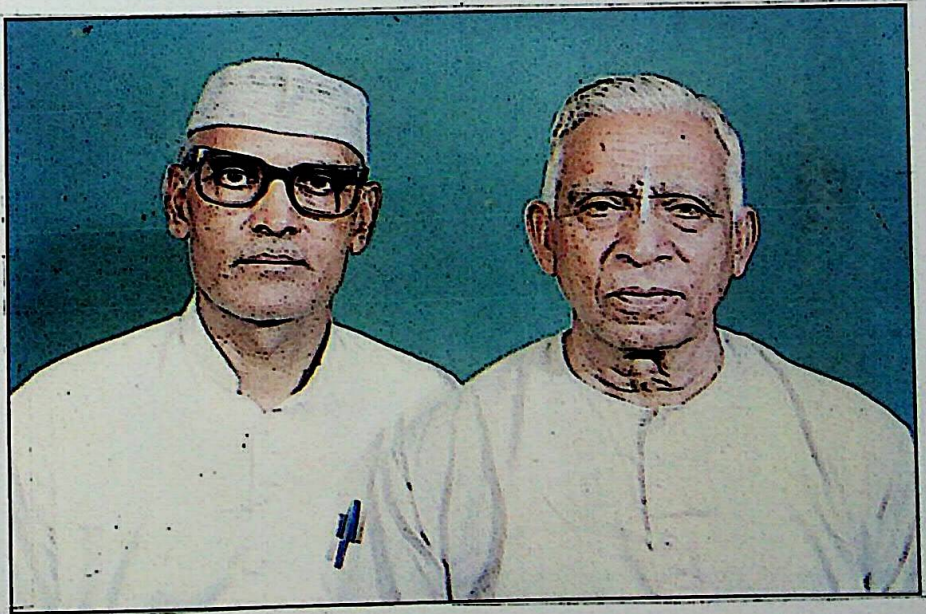
विख्यात भजनोपदेशक श्री सतपाल पथिक अमृतसरी के साथ श्री शरर जी

श्रद्धानंद बलिदान दिवस (२५.१२.२००१) पर श्री शरर जी मुनीश चंद अरोड़ा (प्रधान वेद प्रचार एवं पारिवारिक सत्संग समिति पानीपत) के साथ सेठ ज्वाला प्रकाश आर्य को शाल भेंट कर सम्मानित करते हुए
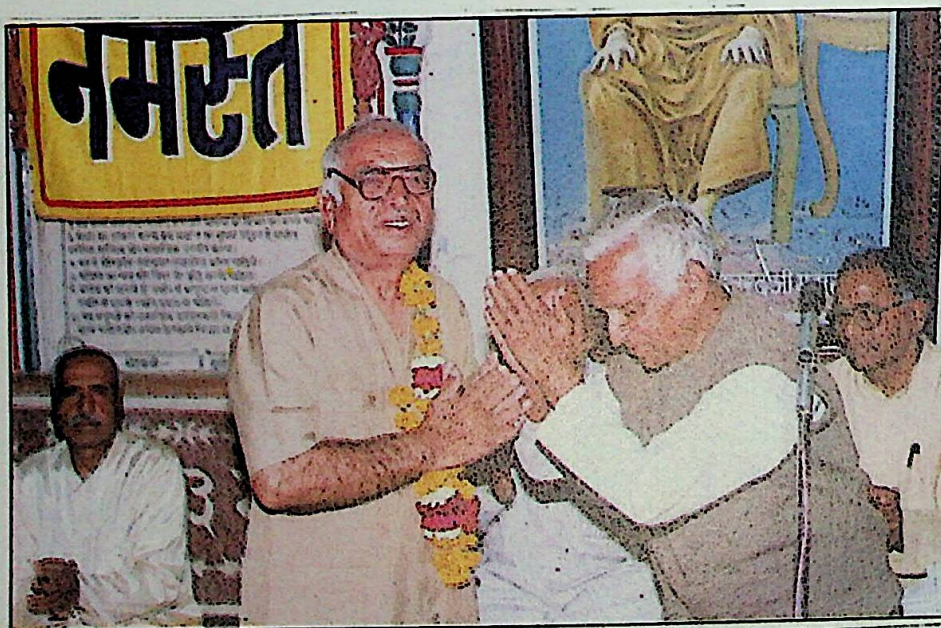
पं. लेखराम आर्य मुसाफ़िर को शहीदी दिवस १७.३.२००२ को श्री शरर जी श्री मुनीश चंद्र अरोड़ा का पुष्पमाला से स्वागत करते हुए। बाईं ओर बैठे हैं सेठ ज्वाला प्रकाश आर्य तथा दाईं ओर हैं श्री चमन लाल आर्य (मंत्री केन्द्रीय सभा पानीपत)

अभिनन्दन समारोह समिति के पदाधिकारी एवं सदस्य गण

सेठ ज्वाला प्रसाद आर्य
प्रधान

श्री जसवन्त मठारू
महामन्त्री

सुरेश चन्द्र आर्य
मन्त्री

जगदीश मित्र आर्य
(रोहतक) उपप्रधान
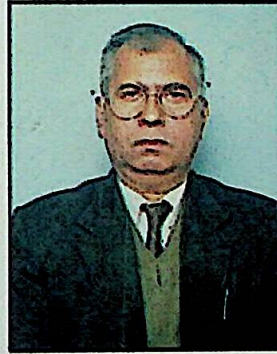
ज्ञानचन्द आर्य
कोषाध्यक्ष
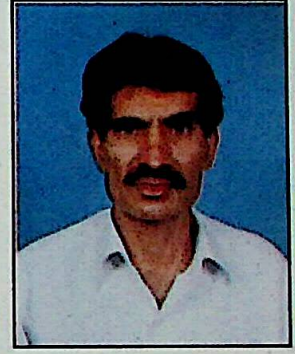
के. आर. छोकर
सह कोषाध्यक्ष
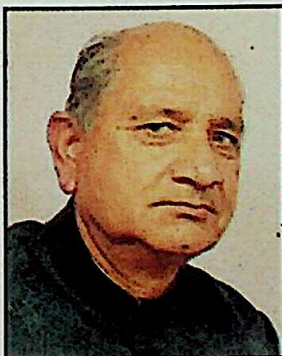
डा. राणा प्रताप गन्नौरी
मुख्य सम्पादक

श्री सुधीर शास्त्री
सह सम्पादक
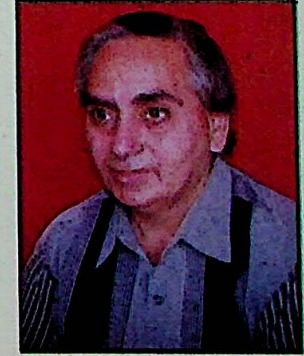
श्री टेक चन्द गुलाटी
सह सम्पादक

अभिनन्दन समारोह समिति के पदाधिकारी एवं सदस्य गण

हरीश मुटनेजा
सदस्य स्वागत समिति

राजेश आर्य
सदस्य स्वागत समिति

मुनीश चन्द्र [illegible]
सदस्य स्वागत समिति
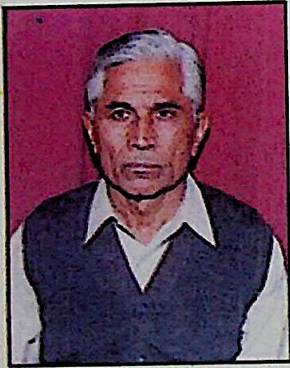
देशराज आर्य
मंडलपति आर्यवीर दल
रोहतक
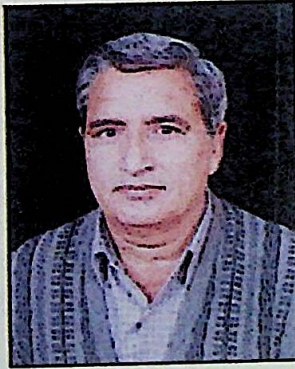
दानवीर देशबन्धु जी
फ़रीदाबाद
सदस्य स्वागत समिति

लाला लक्ष्मण दास जी
संरक्षक आर्य वीर दल
हरियाणा
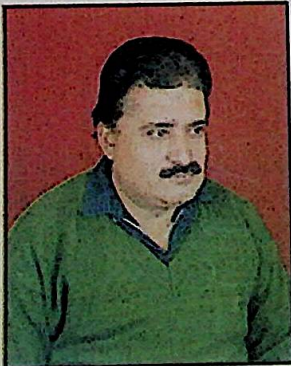
श्री राकेश आर्य
सदस्य स्वागत समिति

श्रीमती कमलेश लीखा
सदस्या स्वागत समिति

श्रीमती कुशल धीमान
सदस्या स्वागत समिति

श्री उत्तमचंद शरर आर्यसमाज गोविन्दनगर, कानपुर में 'आर्यसमाज के कोहेनूर' उपाधि से सम्मानित किए जाते हुए

पूर्व सांसद श्री कैलाशनाथ यादव श्री शरर जी का स्वागत करते हुए।
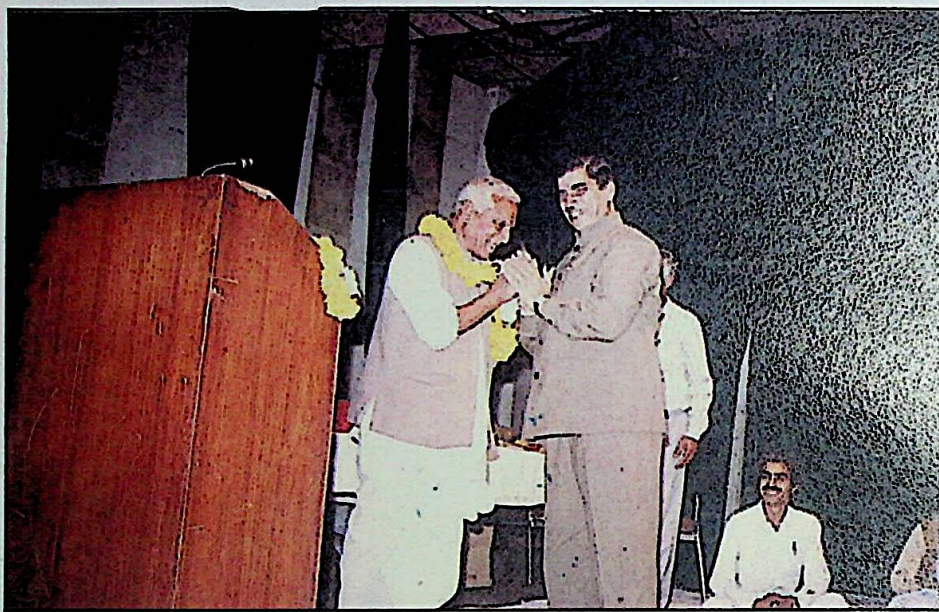
आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली के प्रधान स्व. सूर्यदेव जी, शरर जी को माल्यार्पण करते हुए
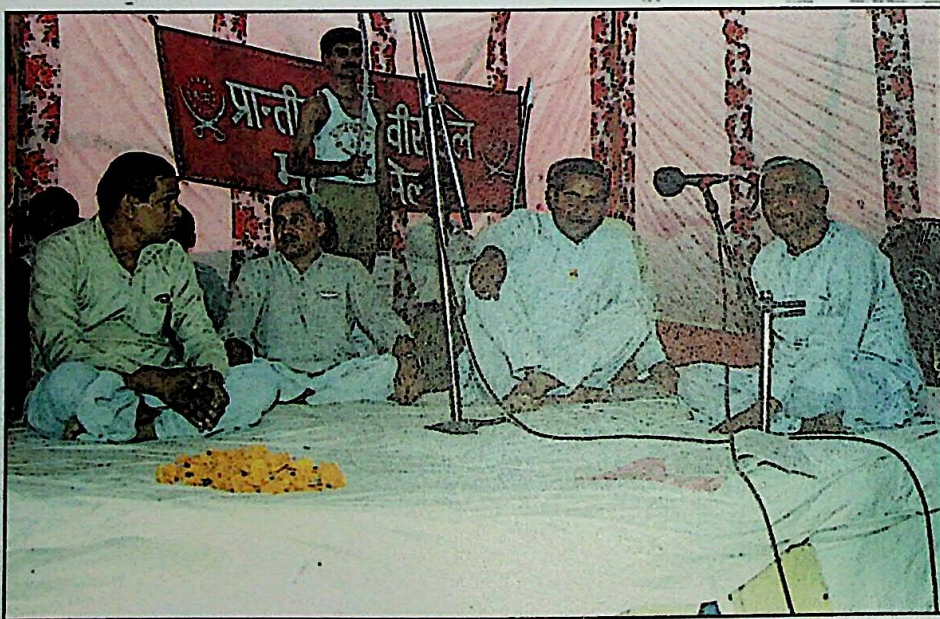
आर्य वीर दल रोहतक महासम्मेलन के मंच पर श्री शरर जी श्री वेद प्रकाश आर्य मंत्री के साथ
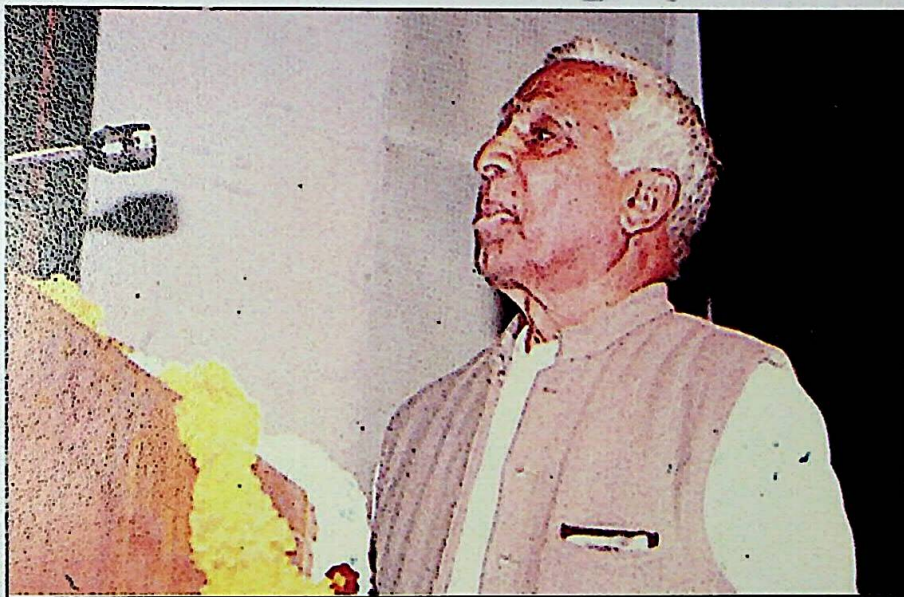
आर्यसमाज स्थापना दिवस २४.३.१९९३ हिमाचल भवन नई दिल्ली में श्रोताओं को सम्बोधित करते हुए श्री शरर जी
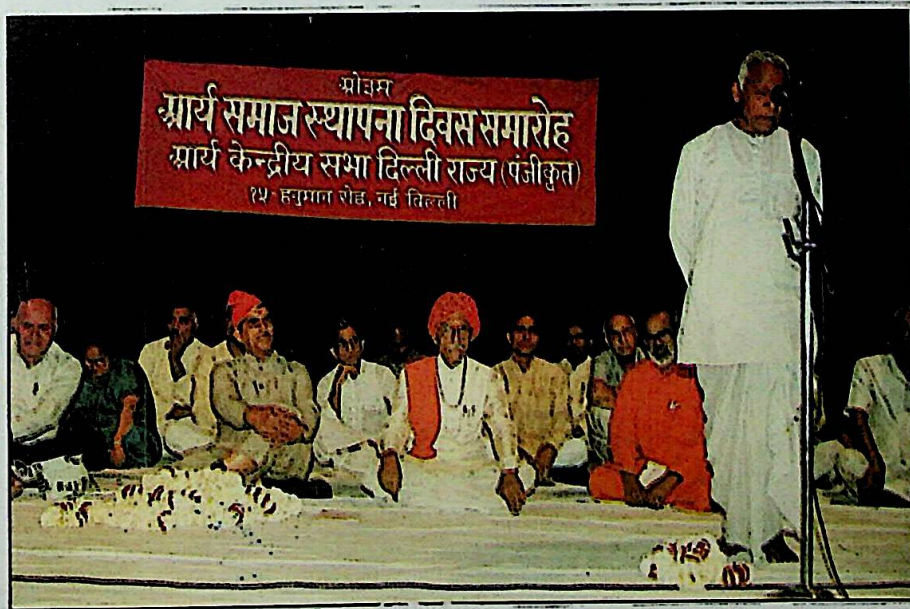
श्री शरर जी सम्बोधित करते हुए। मंच पर आसीन हैं एम.डी.एच. के प्रोपराइटर महाशय धर्मपाल जी अन्य महानुभावाअें के साथ

आर्य केन्द्रीय सभा के मंत्री तथा एम.डी.एच. के प्रोपराइटर महाशय धर्मपाल जी दिल्ली में श्री शरर जी का माल्यार्पण कर स्वागत करते हुए
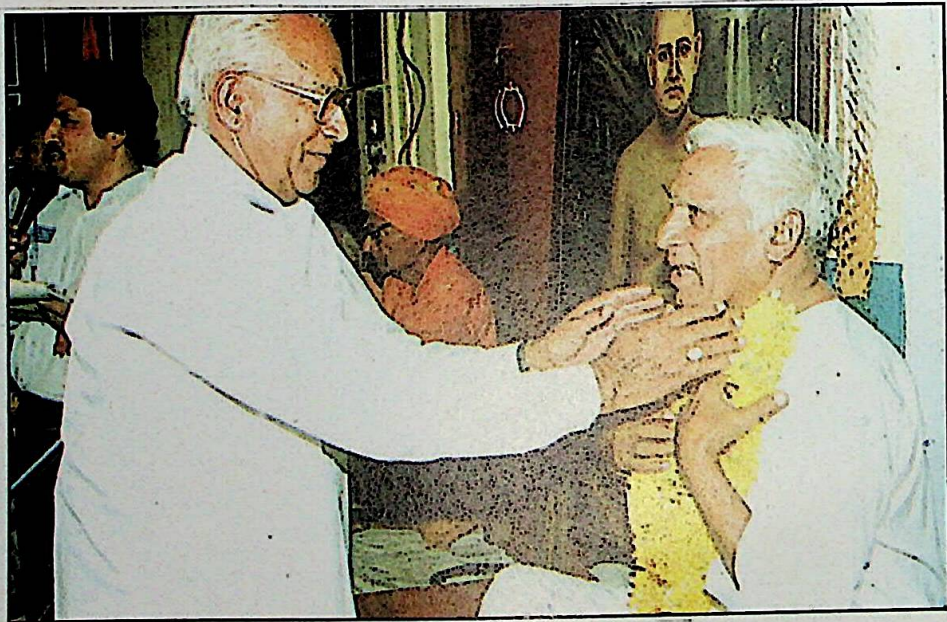
आर्य समाज खैल बाज़ार पानीपत में (१९९६ ई. में) स्थानीय वयोवृद्ध आर्य नेता श्री मेघराज श्री शरर जी का माल्यार्पण कर स्वागत करते हुए

आर्य जगत् की विलक्षण विभूति

— उदय भानु 'हंस' राजकवि हरियाणा
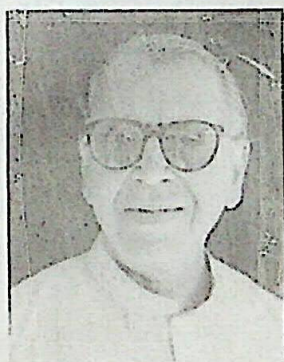
मुझे बचपन से ही आर्यसमाज के महोत्सवों में कितने ही प्रसिद्ध एवं प्रतिष्ठित विद्वानों, संन्यासियों और भजनीकों के प्रवचनों और भजनों-गीतों के सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। आर्यसमाज में कँवर सुखलाल 'आर्य मुसाफ़िर' जैसा निर्भीक, ओजस्वी, मौलिक उद्भावनाओं का रचनाकार भजनोपदेशक मैंने अभी तक दूसरा नहीं देखा, जिसकी लोकप्रियता, सर्वप्रियता अब एक 'किंवदन्ति' बन कर रह गई है।

इसी प्रकार वक्ताओं में देश-विभाजन के पश्चात् प्रकाशवीर शास्त्री की वाग्मिता से मैं बहुत प्रभावित हुआ, परन्तु सबसे अधिक प्रिय और प्रभावशाली महोपदेशक मेरी दृष्टि में प्रो. उत्तमचन्द 'शरर' ही रहे। निःसन्देह आर्यजगत् में बहुत ही विद्वान वक्ता, ओजस्वी वक्ता, प्रखर वक्ता पहले भी रहे हैं और आज भी हैं; किन्तु एक ही साथ जो उच्चस्तरीय उर्दू-हिन्दी का कवि भी हो, वैदिक संस्कृति का विद्वान् भी तथा मर्मस्पर्शी ओजस्वी वक्ता भी हो, इसके साथ किसी स्नातकोत्तर कालिज का वरिष्ठ प्राध्यापक भी, और फिर जिस की चमत्कारी भाषण-कला की धाक देश-विदेश में एक स्वर से स्वीकार की गई हो, वह अकेला और केवल अकेला उत्तमचन्द 'शरर' ही है।

मेरा मन आज फूला नहीं समाता कि आर्य जगत् अपने एक प्रतिभासम्पन्न सुप्रसिद्ध एवं सुप्रतिष्ठित विद्वान् धर्मोपदेशक के जीवन काल में उनके सार्वजनिक अभिनन्दन का आयोजन कर रहा है, भले ही कुछ देर से। मुझे समझ नहीं आता, लोग किसी के मरने के बाद तो व्यक्ति के गुणों का बखान बहुत करते हैं, परन्तु जीवनकाल में, विशेष रूप से वृद्धावस्था में उसका महत्त्व और मूल्य आंकने में तथा सार्वजनिक सम्मान करने से चूक जाते हैं। पानीपत के कृतज्ञ आर्यसमाजी सचमुच बधाई के पात्र हैं, जिन्होंने अपने कर्तव्य को यथासमय पहचान लिया।

मुझे इस बात का विशेष गर्व है कि मुझे कुछ अवसरों पर प्रो. उत्तमचंद 'शरर' के सान्निध्य में कविता-पाठ करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। वे भी मेरी तरह ज़िला मुज़फ्फ़रगढ़ (वर्तमान पाकिस्तान) से विस्थापित होकर आए हैं, (तहसील अलीपुर) जिसने (स्वर्गीय) महात्मा टेकचंद 'प्रभु आश्रित' जी जैसे वैदिक यज्ञानुष्ठान के अधिष्ठाता को जन्म दिया, (तहसील कोट अद्दू) जहां श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकार (स्वर्गीय) जैसे मुंशी प्रेमचन्द्र के बाद हिन्दी साहित्य के एक महान कथाकार तथा आर्यजगत् के सुप्रसिद्ध शास्त्रार्थ-महारथी (स्वर्गीय) पंडित लोकनाथ शास्त्री हुए, जिनकी 'रचना' (यज्ञ प्रार्थना) (बिना जाने) प्रत्येक आर्यसमाजी आज यज्ञ-हवन की समाप्ति पर श्रद्धापूर्वक गाता है— (यज्ञ रूप प्रभो हमारे भाव उज्ज्वल कीजिए) अन्तिम पंक्ति 'नाथ' करुणा रूप करुणा आप की सब पर रहे, में 'नाथ' शब्द लोकनाथ जी का ही उपनाम है। अस्तु

अन्त में आदरणीय बन्धु 'शरर' जी के लिए मंगलकामनाएं—

तुम तो वेदों का अमृत पीते रहो,
दीन-दुखियों के घावों को सीते रहो।
प्रार्थना है यही आज भगवान से,
कम से कम सौ बरस तक तो जीते रहो।

× × ×

तेरी खुशियों का प्याला छलकता रहे,
ज़िन्दगी का चमन भी महकता रहे।
चाँद-सूरज हैं आकाश पर जब तलक,
तेरी किस्मत का तारा चमकता रहे॥

२०२, लाजपत नगर, हिसार-१२५००१
दूरभाष : ०१६६२-२३७४४८

मेरे अत्यन्त आदरणीय 'शरर' जी

—प्राध्यापक राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

मान्य 'शरर' जी को अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट किया जा रहा है, यह सूचना मुझे बहुत विलम्ब से दी गई। मेरा 'शरर' जी से क्या सम्बन्ध है, यह 'शरर' जी जानते हैं, मैं जानता हूँ और या फिर सर्वज्ञ सर्वद्रष्टा परमेश्वर ही जानता है। मैं अपने जीवन के बीते दिनों का स्मरण करता हूँ तो जीवन के हर मोड़ पर 'शरर' जी को अपने अंग संग पाता हूँ। मैं आयु में उनसे छोटा हूँ। मैं बाल्यकाल में दैनिक पत्रों व आर्य समाज के साप्ताहिक उर्दू पत्रों को बड़े चाव से पढ़ा करता था। मैं ५७ वर्ष से उनकी कवितायें बहुत रुचि से पढ़ता चला आ रहा हूँ। मेरा ५० वर्ष से उनसे ऐसा सम्बन्ध है जिसे शब्दों में नहीं बताया जा सकता। मैं छात्र जीवन में ही लिखने लग गया था परन्तु १९५२ से तो निरन्तर लिखता चला आ रहा हूँ।

'आर्यवीर' उर्दू साप्ताहिक के प्रायः प्रत्येक अंक में 'शरर' जी की कविता व मेरा लेख छपा करता था। आर्य गज़ट उर्दू के लिए भी हम दोनों नियमित रूप से लिखा करते थे। आर्यवीर हिन्दी मासिक व अन्य पत्रों के लिए भी हम दोनों ने खूब लिखा। 'शरर' जी की कविताओं में व्याप्त रहने वाली तड़पन व जोश ने उन्हें आर्य जाति का दुलारा व प्यारा बना दिया। उनके लेखों में भी उनकी ऋषि भक्ति, गहन चिन्तन व वैदिक धर्म में उनकी अडिग श्रद्धा का पाठकों पर विशेष प्रभाव पड़ता है। उनकी लेखनी व वाणी दोनों में जादू का सा प्रभाव है। अपनी बात को श्रोताओं को हृदयंगम करवाने की कला के आप एक जाने माने कलाकार हैं। आप हँसमुख हैं, प्रेमल हैं, सहृदय हैं और देश जाति के अथक सेवक हैं।

मेरे ज्येष्ठ भ्राता स्वर्गीय हरबंसलाल बहुत अच्छा गाते थे। वह प्रभातफेरियों और समाज केसत्संगों में 'शरर' जी के आरम्भिक दिनों का एक गीत बड़े प्रेम से गाया करते थे—

'वेद की वंसी हाथ में लेकर महर्षि ने जब गीत सुनाया।'

इस गीत की दो पंक्तियाँ मेरे भ्राता तड़पते हृदय के साथ बड़े भक्तिभाव व जोश से गाया करते थे। इन पंक्तियों को सारा गांव उनके पीछे झूम-झूम कर गाया करता था—

कोई जुबां पर लाये न लाये, महर्षि महिमा गाये न गाये।
दिल से मगर सब मान चुके हैं, योगी ने जो उपकार कमाये॥

कहने की आवश्यकता नहीं कि इस पद्य में पं. लेखराम जी से लेकर श्री पं. शान्तिप्रकाश जी पर्यन्त हमारे शास्त्रार्थ महारथियों की दिग्विजय का, मत पंथों पर छाप का सारा इतिहास समेट कर रख दिया गया है।

'शरर' जी लेखनी व वाणी के ही धनी नहीं हैं, वह मात्र एक उत्कृष्ट कवि व शास्त्रार्थ महारथी ही नहीं हैं, वह एक दिलजले कर्मवीर बलिदानी देशभक्त व धर्मयोद्धा भी हैं। हैदराबाद सत्याग्रह के लिए रणभेरी बजी तो 'शरर' जी परिवार से अनुमति लिये बिना घर से सहस्रों किलोमीटर की दूरी पर आग में कूद पड़े। यह कोई साधारण सी घटना तो है नहीं।

१९५४ में रोहतक के दुर्गा भवन मन्दिर में पौराणिक पण्डित माधवाचार्य ने ऋषि दयानन्द जी पर अनाप-शनाप बहुत कुछ कहा और आर्यों को ललकारा। 'शरर' जी सभा में कुछ पूछने को खड़े हुए तो माधवाचार्य ने शरर जी को आग में (अग्निकुण्ड वहां था ही) फेंकने का संकेत किया। मूर्खों की भीड़ 'शरर' जी को अग्नि में फेंकने पर तुल गई। दो साहसी आर्यवीर श्री मामचन्द व श्री जितेन्द्र कुमार भीड़ को चीर कर पं. लेखराम के मानस पुत्र 'शरर' को निकाल कर बाहर ले आये। इस घटना पर लौह पुरुष स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी को अभिमान था। आर्यसमाज के इतिहास का यह स्वर्ण पृष्ठ है जिसे आज का आर्यसमाज भूल चुका है। मैंने तब इसे पत्रों में पढ़ा तो तड़प उठा। शरर जी की शूरता के कारण मेरे मन में उनके लिए बड़ी श्रद्धा पैदा हो गई।

हिन्दी सत्याग्रह में आपने सोत्साह भाग लिया। जेल के भीतर व बाहर आपने कैरों शाही की यातनायें सहीं। देश के सब भागों में घूम-घूम कर वैदिक धर्म का प्रचार किया। कवितायें तो आप लिखते ही रहते हैं। वैदिक सिद्धान्तों पर आपके विचारोत्तेजक व्याख्यान सुनकर प्रबुद्ध श्रोता फड़क उठते हैं। जैसा कि मैंने ऊपर लिखा है आप एक सिद्धहस्त लेखक भी हैं परन्तु आर्यसमाज ने कभी इस यशस्वी लेखक पर दबाव डालकर या प्रेरित करके उनसे कुछ लिखवाया नहीं। 'शरर' जी पूज्य पं. चमूपति जी की शैली में ५-७ अच्छे मौलिक ग्रन्थ दे सकते थे।

नई पीढ़ी नहीं जानती कि पं. चमूपति जी वाले उर्दू सत्यार्थ प्रकाश का प्रकाशन 'शरर' जी की देखरेख में हुआ था। इस काम के लिए उनके नाम का प्रस्ताव मैंने ही

किया, मेरे प्रस्ताव की पुष्टि शास्त्रार्थ महारथी पं. शान्तिप्रकाश जी ने की। तब पंजाब सभा ने 'शरर' जी को यह काम सौंपा।

पं. चमूपतिकृत दो मौलिक पुस्तकों वैदिक स्वर्ग व जवाहिरे-जावेद को आपने हिन्दी में अनूदित कर दिया। यह आपकी एक अविस्मरणीय देन रहेगी। साहित्यिक व सैद्धान्तिक दृष्टि से आपकी ऊहा को सब नमन करते हैं। इसके दो उदाहरण यहां देता हूँ। आचार्य चमूपति जी ने ऋषि-जीवन की कुछ महत्वपूर्ण घटनाओं पर एक लम्बी कविता लिखी। पं. गुरुदत्त जी के हृदय परिवर्तन वाली कविता में दो पंक्तियां ऐसे छपी मिलीं—

आया था किस ख्याल से और अब है क्या ख्याल।

आंखें बता रही हैं, नहीं हसरते-ख़िज़ाल॥

उर्दू में खिज़ाल शब्द ही नहीं। यह शब्द मुझे किसी भी शब्दकोश में नहीं मिला। मैंने कई एक सुयोग्य मित्रों से पूछा कि यहां क्या होना चाहिये? परन्तु किसी को कुछ भी समझ में न आया। हारकर शरर जी को वह कविता दिखाई। आपने कहा 'खिज़ाल' तो कोई शब्द नहीं। दूसरे ही क्षण आपकी ऊहा ने चमत्कार दिखाया। फड़कता हृदय बोला, यह पंक्ति ऐसे होनी चाहिये :

'आंखें बता रही हैं नहीं हसरते-सवाल'

अर्थात् ऋषि के देह—त्याग का दृश्य देखकर गुरुदत्त के सकल संशयों का निवारण हो गया। अब उसके मन में कोई शंका शेष नहीं थी। प्रश्न क्या करता? कोई प्रश्न पूछने का अब प्रश्न ही नहीं रहा था।

मध्य प्रदेश में कहीं बोल रहे थे। एक मुसलमान भाई ने इस्लाम के एकेश्वरवाद पर बहुत कुछ कहा। अपनी बारी पर आपने कहा, मुझे हर्ष है कि मेरे मुसलमान भाई ने इस्लाम के एकेश्वरवाद पर इतना कुछ कहा परन्तु मेरे घर के पास कलन्दर की कबर पर इस एकेश्वरवाद का भाण्डा फूटता मैं देखता रहता हूँ। पीछे से वही मौलाना तपाक से बोले, "वे सनातनी मुसलमान हैं।"

एकदम शरर जी बोले, "मुझे हर्ष है कि मैं यहां एक आर्यसमाजी मुसलमान के

दर्शन कर रहा हूँ।" इस वाक्य का श्रोताओं ने करतल ध्वनि से स्वागत किया।

'शरर' जी के अरमानों को आज का आर्यसमाज क्या जाने? शरर क्या है? यह पत्रकार शिरोमणि महाशय कृष्ण जी से कोई पूछे। एक बार शरर जी ने श्री वीरेन्द्र का नाम लेकर महाशय जी को अपनी एक समस्या के समाधान के लिए पत्र लिखा। महाशय जी शरर जी से बिगड़ गये कि यह मेरे आर्यत्व का अपमान है। क्या मैं आप का और आप मेरे कुछ नहीं लगते? मेरे पुत्र की सिफ़ारिश का यहां क्या अर्थ?

शरर क्या है? यह लौहपुरुष स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी से पूछिये। श्री महाराज रोहतक आये। पता चला कि पौराणिक आर्य धर्म पर वार कर रहे हैं। मठ से किसी को भेज कर शरर जी को घर से बुलवाया और कहा—रात को आर्यसमाज का जलसा रखो। आप बोलेंगे, मैं बोलूँगा। इन लोगों को उत्तर देना है। हैदराबाद आंदोलन के फ़ील्ड मार्शल स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज के नयनों के तारे, महात्मा आनन्द स्वामी के प्यारे, साहस के अंगारे आर्य जाति के लाल अपने प्यारे भाई शरर जी का अभिनन्दन मैं कैसे करूँ? मन में भावों की बाढ़ है। वह धरती धन्य है जिस ने समाज को देश को पं. गुरुदत्त, पं. चमूपति, डा. बालकृष्ण, स्वामी धर्मानन्द, पं. लोकनाथ, मनोहरलाल शहीद, जैमिनि सरशार, उत्तमचंद शरर, श्री पं. शान्तिप्रकाश व पं. त्रिलोक चन्द्र जैसे रत्न दिये। शहीद जी, शरर जी व सरशार जी तीनों के काव्य पर कुछ लिखूंगा कभी।

वेद सदन, अबोहर-१५२११६

सामाजिक क्रांति श्रद्धानन्द का उत्सर्ग मांगती है, पं. लेखराम और गुरुदत्त विद्यार्थी की दीवानगी मांगती है।

अद्‌भुत व्यक्तित्व के धनी महात्मा उत्तमचन्द जी शरर

आचार्य राजकुमार शर्मा
विद्यावाचस्पति, विद्याभास्कर, एम.ए. वैदिक प्रवक्ता
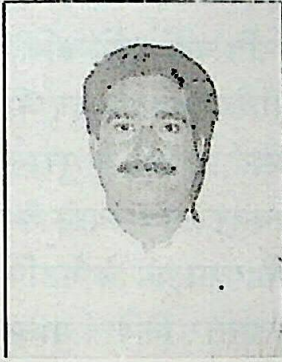
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली द्वारा महात्मा शरर जी का सार्वजनिक अभिनन्दन करने का निर्णय अत्यधिक सराहनीय तथा जनसाधारण केलिए प्रेरक है। सार्वदेशिक सभा आर्य समाज की सर्वोपरि, सर्वांगीण, विकसित शिरोमणि सभा है जो कि सम्पूर्ण विश्व के समस्त आर्य समाजों तथा आर्य संस्थाओं का कुशल संचालन कर रही है। ऐसी शिरोमणि सभा द्वारा यह निर्णय लेना वास्तव में आर्यसमाज की गरिमा को वृद्धि की ओर ले जाने का कार्य है। कोई भी व्यक्ति यश की कमाई तब कर पाता है जब वह त्याग और तप करता है। अपने जीवन को तपाता है। उन्हीं महान् तपस्वी विभूतियों में से एक श्रद्धेय महात्मा उत्तमचन्द जी शरर हैं। व्यक्ति चाहे किन्हीं विपरीत परिस्थितियों में ही क्यों न हो यदि वह संकल्पशील है, यदि वह दृढ़निश्चयी है तो आप यह मान कर चलें कि वह जहां भी रहेगा ऋषियों की पवित्र वाणी वेदों का प्रचार करेगा। अच्छाई का प्रचार करेगा। सच्चाई के मार्ग पर व्यक्ति अकेला ही चलता है बाद में उसके पदचिह्नों पर जनसामान्य आता है।

"सूर्यः एकाकी चरति" यजुर्वेद की यह पवित्र सूक्ति आर्य समाज के पुरानी पीढ़ी के सुयोग्य महोपदेशक, वेद-प्रचारक महर्षि दयानन्द सरस्वती के मिशन के अग्रणी नेता, स्पष्ट वक्ता महातमा शरर जी पर पूर्णरूपेण चरितार्थ होती है। जिस प्रकार से आकाश में सूर्य दिव्यशील पदार्थों में अपना वैशिष्ट्य बनाते हुए पृथक्‌ही चमकता है उसी तरह आर्य समाज के किसी भी प्रचार क्षेत्र में वेदों के सन्देश के प्रसार में महर्षि की पवित्र वैदिक विचारधारा के चिन्तन और मनन में, प्राचीन आर्ष ग्रन्थों के प्रसार एवं प्रचार में, महात्मा शरर जी पृथक् ही देदीप्यमान हो रहे हैं। श्रद्धेय महात्मा जी के विचार,

चिन्तन, मनन, वेदों के प्रति श्रद्धा तथा आशावादी दृष्टिकोण एवं विचारधारा निश्चय ही राष्ट्रवादी चिन्तन के प्रतीक हैं तथा वही चिन्तन जनसाधारण पर अपनी अमिट छाप छोड़ता है।

आदरणीय शरर जी न केवल एक उपदेशक हैं, न केवल एक विचारक हैं, न केवल एक उच्च कोटि के प्राध्यापक हैं अपितु उच्चस्तरीय पुरायुगीन कवियों की श्रेणी के एक सुयोग्य और प्रतिभाशाली कवि भी हैं। कवि का अपना एक पृथक् ही चिन्तन होता है, मनन होता है, योग्यता होती है। प्रतिभा होती है—**"जहाँ न पहुँचे रवि वहाँ पहुँचे कवि"** हिन्दी की यह कहावत शरर जी पर सुचारु रूप से क्रियान्वित होती है। श्रद्धेय शरर जी एक प्राध्यापक होते हुए भी वैदिक धर्म के अच्छे प्रचारक रहे। आर्य समाज के पुराने उपदेशकों और प्रचारकों में महात्मा जी का अपना एक विशिष्ट और उच्च स्थान है। हरियाणा ही नहीं अपितु सम्पूर्ण उत्तर और दक्षिण भारत में महात्मा जी ने महर्षि दयानन्द की वैदिक विचारधारा का दीवानगी के साथ प्रचार एवं प्रसार किया। मान्य शरर जी को देश में ही प्रचार करते सन्तोष नहीं हुआ अपितु दयानन्द के प्रति उनका दीवानापन उन्हें अपनी ओर हठात् खींचता हुआ विदेशों में भी ले गया यथा—नैरोबी (कीनिया) में भी वह प्रचारार्थ पहुंचे। शरर जी के अन्दर एक पीड़ा है, एक दर्द है कि ऋषि की विशाल विचारधारा घर-घर में पहुँच जाए, वेदों का पवित्र सन्देश सब लोगों तक पहुँच जाए और इसके लिए उन्होंने अपने जीवन का सम्पूर्ण आराम छोड़ा और निकल पड़े प्रचार के लिए। अन्धविश्वासों और कुरीतियों पर आदरणीय शरर जी वैदिक विचारधारा से कुठाराघात न करें ऐसा कैसे हो सकता है। महात्मा शरर जी ने वैदिक युग का वह स्वर्णिम काल देखा है जब आर्य समाज के प्रचारकों की टोलियां मिलकर गाँव-गाँव और नगर-नगर में जाती थीं और अहर्निश वेद प्रचार करती थीं। महात्मा जी को वह प्राचीन इतिहास याद है जब एक न्यायाधीश आर्य समाजी के साक्ष्य प्रस्तुत करने पर अपना निर्णय बदल देता है। क्योंकि आर्य समाज सत्य का पर्याय था और इसीलिए ऋषि का वह नियम हठात् ही स्मरण हो आता है जिसमें उन्होंने सत्य पर विशेष बल दिया है। "सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।"

मान्य महात्मा जी के उपदेश व प्रवचन सरल, गम्भीर व सारगर्भित होते हैं। व्यक्ति की आत्मा को झकझोरने वाले होते हैं। आर्य वीरदल का इतिहास चिल्ला-चिल्ला कर यह सन्देश दे रहा है कि उसके प्रचार और प्रसार में, शरर जी का साधारण नहीं अपितु महान् योगदान रहा है। अनेक वर्षों तक "प्रधान संचालक" के पद पर सुशोभित रह कर आपने आर्य वीर दल का सर्वतोमुखी विकास किया है। आज इतनी आयु (८६ वर्ष) होने पर भी उनमें एक ललक है आर्य समाज के लिए एक लगन है। वेद प्रचार के लिए शरर जी कर्मठता की प्रतिमूर्ति है। एकदर्द दयानन्द के विचारों के प्रसार के लिए। उनके मन में कुछ कर गुजरने की तमन्ना है। आर्य समाज खैल बाज़ार उनकी लगनशीलता, उदारता, विद्वत्ता, प्रतिभा, कर्मठता तथा योग्यता का ही बल पाकर आज पानीपत में अपनी अलग पहचान रखता है।

ऐसी महान्, पवित्र विभूति के अभिनन्दन समारोह का पवित्र संकल्प सार्वदेशिक सभा ने लिया है यह अत्यन्त सराहनीय और प्रशंसनीय कार्य है। सार्वदेशिक सभा इसके लिए बधाई की पात्र है। सभा के इस कार्य से प्रचारकों और उपदेशकों को वैदिक कार्य करने की प्रेरणा मिलेगी।

अन्त में सर्वव्यापक सच्चिदानन्द सर्वशक्तिमान प्रभु से प्रार्थना है कि महात्मा उत्तमचन्द जी शरर को दीर्घायु प्रदान करे जिससे वेद का और अधिक प्रचार हो सके।

१९६, शान्तिनगर, मॉडल टाऊन, पानीपत हरियाणा

एकनिष्ठ दयानन्दी : उत्तमचन्द 'शरर'

डॉ. सारस्वत मोहन "मनीषी"
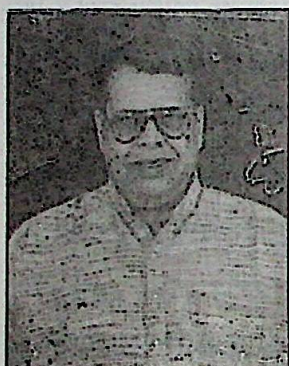
प्रो. उत्तमचन्द 'शरर' से मेरी प्रथम भेंट सन् १९७६ में आर्य समाज राजेन्द्र नगर, दिल्ली के वार्षिकोत्सव पर आयोजित कवि सम्मेलन में हुई। आठ-दस उर्दू, पंजाबी, मुलतानी केकवियों के बीच हिन्दी का मैं अकेला कवि और कवि जीवन का दूसरा कवि सम्मेलन। शंका-आशंका, झिझक-संकोच युवा उमंग और तरंग के मिले-जुले भावोद्वेलन के बीच मैंने महर्षि दयानन्द पर अपना सद्यःरचित गीत सस्वर पढ़ा—

"वेद सिंधु का तीर था, संयम की ज़ंजीर था।
मानवता के माथे पर ऋषि चन्दन और अबीर था।"

शरर जी उस कवि सम्मेलन की अध्यक्षता और मंच संचालन का दुर्वह भार दोनों ही सँभाल रहे थे। मेरे काव्य पाठ और तालियें तथा वाह-वाह की तुमुल ध्वनियों से शरर जी निहाल, आश्चर्यचकित और अभिभूत। शरर जी के मुख से अनायास निकला— "कमाल! अद्भुत!! वाह!!!' कवि सम्मेलन के पश्चात् फिर वही प्रशंसा-सराहना का भाव। "आप तो छुपे रुस्तम निकले! कहाँ थे अब तक? हमारी मण्डली में हिन्दी गीतकार का अभाव पूरा हुआ।" सुप्रसिद्ध भजनोपदेशक भाई गुलाब सिंह राघव को धन्यवाद और बधाई देना भी नहीं भूले शरर जी। क्योंकि वे ही मुझे आर्य समाज प्रधाना मोहल्ला रोहतक में सुनकर दिल्ली आने का निमन्त्रण दे आये थे। इस सारे घटना क्रम में मैंने शरर जी में उदारतायुक्त अकृपण अग्रज के दर्शन किये! सुबह अपनी-अपनी मंज़िल की ओर चलने से पहले शरर जी ने मुझे इंगित करके कहा—

"राह पर ले तो उन्हें आए हैं हम बातों में।
और खुल जायेंगे दो-चार मुलाकातों में।"

धीरे-धीरे शरर जी के आर्य कवि मण्डल से मेरी मुलाकातें आर्य कवि दरबारों में होने लगीं। सहयोगी थे सर्वश्री प्रो. सत्यपाल बेदार 'सरस', डॉ. राणा गन्नौरी, बेलाराम दीवान, विद्यारत्न 'सागर', करतार सिंह 'गुलशन', चन्न ननकानवी, नाज़ सोनीपती, शम्शुद्दीन शम्श, जगदीश साधक, शमीम कश्मीरी, आतिश बहावलपुरी आदि। पूर्ण सौमनस्य के वातावरण में समय बीतता रहा, कवि सम्मेलन चलते रहे, हम मिलते रहे

और मैं शरर जी के आत्मीय वृत्त में सिमटता चला गया। धीरे-धीरे आर्य कवि सम्मेलनों में हिन्दी कवियों की संख्या भी बढ़ने लगी। इसी क्रम में अस्थायी साथियों में तीन-चार नाम और जुड़े। सर्वश्री महावीर प्रसाद 'मधुप', डॉ. सरल भिवानवी, आचार्य रामनाथ 'सुमन' डॉ. वागीश 'दिनकर' और राजगोपाल सिंह। अध्यक्ष और संयोजक दोनों दायित्वों का निर्वहण शरर जी ही करते रहे। यह आवश्यक भी था। आर्य समाज में कवि सम्मेलनों की बढ़ती लोकप्रियता से फ़रमाइशी कवियों की घुसपैठ भी यदा-कदा होने लगी। कभी-कभी ऐसा अवसर भी आया कि आर्य समाज के मंच पर राधा और कृष्ण के लौकिक-मांसल प्रेम पर भी गीत पढ़े जाने की हिमाकत होने लगी। ऐसे में सच्चे दयानन्दी सैनिक की भाँति तुरन्त खड्गहस्त होते हुए मैंने अनेक अवसरों पर शरर जी को देखा है। शरर जी की अध्यक्षता में सिद्धान्तहीनता? असम्भव। ग़ैर आर्य समाजी भी सतर्क होकर कविता सुनाने लगे। काका हाथरसी और पण्डित गोपाल प्रसाद व्यास को बड़े प्यार से फटकारते हुए मैंने शरर जी को देखा है। कोई कितना भी बड़ा क्यों न हो आर्य समाज की वेदी पर मर्यादाहीनता का मधुर विष मैंने शरर जी को कभी पीते हुए नहीं देखा। आर्य समाजों के प्रधान और मन्त्री कवि सम्मेलनीय आयोजन शरर जी को सौंपकर पूर्णतया निश्चिन्त होते रहे हैं।

वह आर्य ही क्या जो पीठ पीछे से वार करे। जो कुछ कहो मुँह पर कहो, सामने कहो, कहकर फिर भूल भी जाओ, मन में गाँठ बाँधे-बाँधे न फिरो। यह विशेषता किसी और की नहीं प्रो. उत्तम चन्द 'शरर' जी की है। किसी एक के हो जाओ और आजीवन उसके ही होकर रहो। निष्ठा बदलने वाले नास्तिकों से भी ख़तरनाक हैं, ऐसा कहते हुए शरर जी अनेक बार सुने जा सकते हैं। यही कारण है कि शरर जी को दयानन्द और वैदिक धर्म के अतिरिक्त और कुछ सूझता ही नहीं। ऐसी एक निष्ठा आज कहीं-कहीं ही देखने को मिलती है अन्यथा अब आर्य समाज में भी गंगा गये तो गंगादास और जमना गये तो जमनादास के उदाहरण खूब मिल जायेंगे। निस्संदेह शरर जी इस दोगली मानसिकता से आहत हैं। निराशा में भी आशा-आसावरी के दर्शन करने वाले 'शरर' जी का कथन अवलोकनीय है—

"तेरी सुलगाई हुई आग पे राख आई है।
रुखे़-पुर नूर पर इक तीरगी सी छाई है॥

....

इन्क़लाब आयेगा—आयेग़ा—ज़रूर आयेगा।"

वैदिक धर्म में अनन्य आस्था रखने वाले उसके प्रखर प्रस्तोता शरर जी के व्यंग्य और वक्रोक्ति अत्यन्त गूढ़ार्थ लिये होते हैं। आर्य समाज अशोक नगर, दिल्ली के कवि

सम्मेलन में मधुरकण्ठी श्री राजगोपाल सिंह अपनी सुप्रसिद्ध ग़ज़ल पढ़ रहे थे—

"आज भी आदम की बेटी हंटरों की ज़द में है।
गिलहरी की पीठ पर कुछ धारियाँ होंगी ज़रूर।"

शरर जी का दयानन्दी और वैदिक तेवर फिर जाग गया और चुटकी लेते हुए कह उठे बिलकुल ठीक कहा। आज भी आदम की बेटी.....हाँ आदम की बेटी ही तो। ..... उनका अभिप्रेत समझने वाले समझकर मुस्कुरा उठे।

एक बार हरिद्वार में बहुत बड़े आर्य महासम्मेलन के आयोजन में कवि सम्मेलन हुआ। कवि सम्मेलन ज़ोरदार हुआ। कवियों को शानदार कोठी में ठहराया गया। दक्षिणा/पारिश्रमिक दिये बिना ही आयोजक भूमिगत हो गये। एक-दो से चर्चा हुई तो उन्होंने भी पल्ला झाड़ लिया। ऐसे में फिर शरर जी का क्षात्र तेज जाग उठा। आयोजक को ढूँढ़ कर ही दम लिया। साथ ही क्षमायाचना सहित अच्छी (आशातीत) दक्षिणा भी दिलवाई।

राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' ने लिखा है **'छीनता हो स्वत्व कोई और तू, त्याग तप से काम ले यह पाप है। धर्म है विच्छिन्न कर देना उसे, बढ़ रहा तेरी तरफ जो हाथ है।"** इन पंक्तियों को मैंने शरर जी को अपने जीवन में चरितार्थ करते हुए देखा है। करनाल में आर्य महासम्मेलन का वृहद् आयोजन। उसमें युवक सम्मेलन की अध्यक्षता शरर जी को करनी थी। यह पहले से ही तय और प्रकाशित था। कुछ महत्वाकांक्षी युवकों ने षड्यन्त्र करके किसी ब्रह्मचारी का नाम अध्यक्ष पद के लिए प्रस्तावित करके समर्थन करवा दिया और सभा की कार्यवाही प्रारंभ करने की कोशिश कर दी। आर्य वीर दल के आर्यवीरों को अपने सेनापति की उपेक्षा सहन नहीं हुई। विरोध, हो-हल्ला, कार्यक्रम कुछ क्षण के लिये अस्त-व्यस्त। फिर तुरन्त शरर जी की अध्यक्षता में विधिवत् युवक सम्मेलन देर तक चला। जिसका पहला वक्ता मैं था। अनायास भूमिका में मेरे मुख से निकला—मैं एक नवयुवक के व्यक्तित्व और कृतित्व को रेखांकित करता हूँ जिससे आज के नवयुवकों को अपने कृतित्व से तुलना करने की आवश्यकता है—

"एक जंगल में नई बस्ती बसा दी तूने।
जोंक पत्थर पे नहीं लगती लगा दी तूने।"

शरर जी को अपने मित्रों में मैंने अत्यन्त विनोद प्रिय देखा है। परन्तु शिष्टता की सीमा-रेखा को कभी लाँघते नहीं पाया। गुड़गाँव भीमनगर के उत्सव पर शरर जी को मैंने एक बार बहुत व्यथित और कारुणिक स्थिति में देखा। बोले "मनीषी जी! आप हमें छोड़ तो नहीं जायेंगे? मैंने शरर जी की आँखों में पीड़ा का पारावार लहराते देखा। मैं समझ गया एक-दो साँझे दुर्वासा और नारद मित्रों ने मेरे बारे में उनके कान भरे हैं। मैंने शरर जी से कहा एक-दो अखिलानन्द, पं. भीमसेन और श्रीराम के जाने से आर्य समाज

पर क्या असर पड़ता है? मैं चला भी गया तो क्या फ़र्क पड़ जायेगा? तब तक मैं आर्य समाज के अतिरिक्त अन्य मंचों पर भी काव्य पाठ के लिए बुलाया जाने लगा था। विघ्न संतोषी मित्रों ने मेरे आर्य समाजी होने पर प्रश्नचिह्न लगाने प्रारंभ कर दिये थे ताकि हम दूर हो जायें। शरर जी ने अपनी आशंका मेरे सामने एक बालक के समान निश्छल मन से रख दी और मैंने भी दृढ़ता से उन्हें आश्वस्त करते हुए कहा कि "इस जन्म में तो दयानन्दी ही रहूँगा, दयानन्दी ही मरूँगा। हाँ अगले जन्म के लिए परमेश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि किसी सच्चे आर्य परिवार में जन्म मिले, गुरुकुल में पढ़ूं और ऋषि कार्य के लिए ही बार-बार जन्म लूँ।" तब से आज तक कितने प्रलोभन मिले हैं दूसरों से और कितनी लांछना मिली है अपनों से यह एक स्वतन्त्र विषय है जिसे कभी विस्तार से लिखा जायेगा।

एक दिन यूँ ही बैठे थे कुछ मित्र तो शरर जी ने बिना किसी भूमिका के अकस्मात् पूछ लिया, "मनीषी जी आप पंजाबी नहीं हैं क्या? मैं इस प्रश्न के लिए तैयार नहीं था। अचकचा कर बोला—हूँ भी और नहीं भी। कैसे? शरर जी बोले। मैंने कहा पंजाब में रहता हूँ इसलिए पंजाबी हूँ। संकीर्ण अर्थ में पंजाबेतर प्रान्तों में जिनको पंजाबी कहा जाता है वैसा पंजाबी मैं नहीं हूँ। एक ठहाके के साथ बात दूसरी तरफ मुड़ गई और मैं आज तक भी नहीं जान सका हूँ कि शरर जी का यह प्रश्न पूछने के पीछे अभिप्रेत क्या था? शायद मुझ कुँआरे का (सन् १९७७) घर बसाना चाहते होंगे।

संस्मरणों की अजस्र धारा बाहर आने के लिए बेचैन है और समयाभाव-स्थानाभाव की सीमाओं को मैं जानता हूँ। वास्तव में प्रो. उत्तमचन्द 'शरर' आर्य समाज रूपी सेना के हरावलदस्ते के समर्पित सेनानी हैं। अपने व्यक्तित्व और कृतित्व से आपने आर्य समाज केइतिहास में नये अध्याय जोड़े हैं। आज भी इतिहास बनाने की ललक आप में है। अभिनन्दन के इस महायज्ञ में मैं भी अपने सद्भावों की समिधा-सामग्री समर्पित करते हुए गौरव का अनुभव कर रहा हूँ। अन्त में एक मुक्तक शरर जी के अग्रजपद को अनुज रूप में समर्पित करते हुए अपनी लेखनी को यहीं विराम देता हूँ—

"पावक की लपटों में पड़कर सोना कुन्दन बन जाता है।
भाव शुद्ध हो नन्हा धागा रक्षा-बन्धन बन जाता है।
संघर्षों की भट्ठी में तप जाना छोटी बात नहीं है
त्याग-तपस्या से मानव माथे का चन्दन बन जाता है।"

"पाञ्चजन्य", ए-१/१३-१४, सैक्टर-११, रोहिणी, दिल्ली-११००८५

श्री उत्तमचन्द 'शरर' अभिनन्दन-ग्रन्थ : एक महत्वपूर्ण दस्तावेज

—टेकचन्द गुलाटी
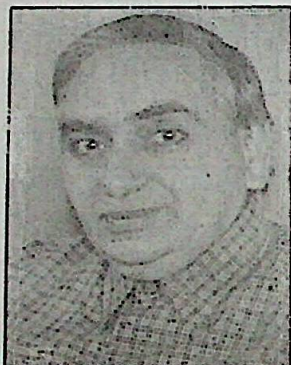
यह बात आठवें दशक के उत्तरार्ध की है, जब सनातन धर्म महाविद्यालय के प्रवक्ता डा. निरंजन सिंह 'योगमणि' जी ने आदरणीय डा. राजेन्द्र कुमार चतुर्वेदी जी (डी.लिट्-लोकवार्ता) से मेरा परिचय यूं दिया था—'यह गुलाटी जी बैंक में हैं और साहित्य में इनकी काफ़ी रुचि है .... और फिर अगली कुछ मुलाकातों में श्री चतुर्वेदी जी को पानीपत की ऐतिहासिक इमारतों, महत्वपूर्ण व्यक्तियों, विद्वानों, लेखकों और साहित्यकारों से मिलवाने का सिलसिला चला। श्री चतुर्वेदी जी ने श्री उत्तमचन्द शरर जी के बारे में काफ़ी तारीफ़ सुन रखी थी, मुझे भी बताई और इन दोनों हस्तियों को मिलवाने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ, हम शरर साहब के घर घन्टा भर रुके और चाय वैग़रा भी पी। श्री शरर साहब का घर, बू-अली शाह कलन्दर साहब की दरगाह के ऐन सामने गली में, श्री हाली साहब के पुराने घर के समीप है। हम नीचे बैठक में ही बैठे थे। फिर, नवें दशक के आसपास मुझे याद आ रहे हैं डा. वेद प्रताप वैदिक जी के पिता जी—श्री जगदीश प्रसाद वैदिक जो इन्दौर से पानीपत पूछते-पूछते मेरे घर आए थे, उन दिनों इन्दौर में सफलतापूर्व 'अंग्रेजी हटाओ आन्दोलन का सम्मेलन हुआ था और वह वैसा सम्मेलन हरियाणा में भी करवाना चाहते थे, इस सिलसिले में मैंने उन्हें श्री उत्तमचन्द शरर जी से, पत्रकार व नवभारत के नगर संवाददाता श्री राकेश मित्तल, प्रवक्ता नीरज ठाकुर व अन्य लोगों से मिलवाया था, वह एक रात पानीपत रुके भी थे। हाँ तो, कहने का भाव यह कि जब कभी कोई, बाहर से, मेरे सम्पर्क में आया, उन्होंने श्री उत्तमचन्द शरर जी से भेंटवार्ता जरूर करनी चाही। ऐसे ही श्री प्रदीप नील, श्री शिवराम 'आर्य', श्री विनय कुमार सिंघल, श्री राजेन्द्र मौर्य व अन्य हस्ताक्षरों को श्री उत्तमचन्द शरर जी से मिलवाने का क्रम जारी रहा। मुझे ऐसा लगा कि हाली जी के बाद जिन हस्ताक्षरों ने पानीपत की प्रतिष्ठा को चार चांद

लगाए हैं, उनकी पंक्ति में श्री उत्तमचन्द शरर जी भी आते हैं। सच में, पानीपत नगर की एक विलक्षण विभूति, जानी मानी हस्ती, आर्य समाज की गतिविधियों को बढ़ाने वाले, एक चलती-फिरती संस्था, इस नगर के वयोवृद्ध स्वतन्त्रता सेनानी, पानीपत के प्रकाश स्तम्भ, श्री उत्तमचन्द शरर इस नगर के गौरव हैं।

कुछ वर्ष पूर्व की बात है मैं और बीजेन्द्र जैमिनी (जैमिनी अकादमी) दिल्ली में हिन्दू महासभा मन्दिर लेन में प्रयागवाले श्रीधर शास्त्री जी के हिन्दी साहित्य सम्मेलन में गए थे, कुछ ही दूरी पर आर्यसमाज में बैनर व झंडियां टांगी जा रही थीं, अगले रोज उनके यहां भी एक समारोह होने वाला था, जैसे ही हम भीतर प्रविष्ट हुए, परिचय की औपचारिकता में पूछने पर हमने उन्हें बताया कि हम दोनों पानीपत से हैं। वह सज्जन बोले, पानीपत से हैं आप तो श्री उत्तमचन्द शरर जी को जानते होंगे, आर्यसमाजी हैं बड़े अच्छे प्रचारक हैं, विद्वान-वक्ता हैं। मैंने कहा—हाँ, हाँ, अच्छी तरह। उनका एक लड़का श्री राजेश आर्य मेरे साथ, बैंक में है। मैं बता नहीं सकता मुझे कितना अच्छा लगा। मेरा कद ऊंचा हो गया। एक बार ऐसा फिर भी हुआ, कानपुर गोविन्दनगर में मेरी ससुराल है वहाँ भी ..... आर्यसमाज और मैं! मेरी ज़ुबान पर पानीपत का नाम आते ही.....श्री शरर साहब का उल्लेख, उनकी कुशलक्षेम। साहित्य सम्मेलनों में भागीदारी करने के लिये कई शहरों में जाने के कई सुअवसर प्राप्त हुए, मैंने महसूस किया कि बाहर के लोग श्री शरर साहब को ज़रूर पूछते हैं। श्री उत्तमचन्द शरर जी पानीपत के पर्याय बन चुके हैं। आपने पूरे भारत में, प्रत्येक राज्य में व विदेशों में भी भ्रमण किया है। वहाँ जा जाकर वेदों के प्रचार में जीवन लगाया है। आपकी एक अच्छी पहचान, अच्छी पैठ बन चुकी है। स्वतन्त्रता आन्दोलन में, हिन्दी आन्दोलन में, समाज सुधार में, रूढ़ियों को तोड़ने में, शिक्षा-प्रसार, जनजागृति अभियानों में आर्यसमाज की अग्रणी भूमिकाएं रही हैं। आर्यसमाज से पूरी तरह ईमानदारी से जुड़े, समर्पित, निष्ठावान उर्दू-हिन्दी के कवि, उपदेशक, प्रचारक, बहुआयामी-व्यक्तित्व के धनी श्री उत्तमचन्द शरर, अपना एक महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। स्वामी दयानन्द जी के द्वारा संस्थापित आर्यसमाज के मिशन को आगे बढ़ाने में आपकी सकारात्मक भूमिका किसी से छिपी नहीं है। श्री उत्तमचन्द शरर एक जीवन्त उदाहरण हैं जिन्होंने ईमानदारी व श्रद्धा के साथ असाधारण मंज़िलों को छुआ है।

एक घटना, आर्यसमाज, खैल बाजार, वार्षिक उत्सव, हाल खचाखच भरा था। तब श्री बलबीरपाल शाह जी तत्कालीन राज्य परिवहन मन्त्री, मुख्य अतिथि थे, ने

सम्बोधन में, कहा कि वे श्री उत्तमचन्द शरर जी से आर्य कालेज, पानीपत में पढ़े हुए हैं। शरर जी ने तब अपने सम्बोधन में, प्रत्युत्तर में कहा था—"माननीय शाह जी, आप आज बहुत बड़ी कुर्सी पर हैं, पर हम सब भी (साथ में हाल में बैठे जनसमूह की ओर संकेत करते हुए) छोटे नहीं हैं। हम सब आपका सम्मान करते हैं। ..... इतने लोगों का सम्मान, शुभाशीष व आशीर्वाद आपके साथ है।"...

मैं उस वक्त श्री शरर जी के कहने के ढंग से गद्गद् हो गया, मैं उसी जनसमूह में था, आपके श्रीमुख से कई वार अच्छी बातें, सटीक अभिव्यक्ति, बात और तर्क को कहने का तरीका, सुनने का मौका मिला... बहुत ही अच्छा लगा। आर्यसमाज के द्वारा आयोजित कवि सम्मेलनों में काव्यपाठ करने का अवसर भी प्राप्त हुआ। आपकी भाषा इतनी सटीक, साफसुथरी, बनावटीपन से परे, छलबल से मुक्त, प्रभावशाली वाक्यावली सुनने वालों को वड़ा आनन्दित करती है।

यही नहीं जहां कहीं अनियमितता या सिद्धान्तहीनता दिखाई दी तो श्री उत्तमचन्द शरर जी की फटकार भी तैयार समझो, किसी प्रकार की मर्यादा का उल्लंघन आपसे सहन नहीं होता। शब्दों से ऐसा लताड़ेंगे कि सामने वाला सीधा हो जाएगा। अपने वक्तव्य में, माईक से ही, बड़े उचित ढंग से समझा देते हैं। बुरा भी न लगे और कह भी दिया जाए, जो कुछ कहना है सामने कहते हैं, पीठ पीछे खुसर-फुसर नहीं करते। सन्त कबीर जैसी अभिव्यक्ति है आपकी।

अभी २ जून २००२ में माडल टाऊन, आर्यसमाज में कवि सम्मेलन के दौरान आपने एक त्रुटि की तरफ सबका ध्यान खींचा। 'अंकन' के बैनर तले श्रीमती इन्दिरा खुराना जी ने वड़ोदरा गुजरात से पधारी 'नारी अस्मिता' से जुड़ी तीन कवयित्रियों के सम्मान में कवि सम्मेलन का आयोजन किया था। सभागार में सरस्वती की मूर्ति पर माल्यार्पण देख अपने भाषण मे श्री उत्तमचन्द शरर जी ने बड़े कड़े शब्दों में, मगर वड़ी कोमलता के साथ सचेत करा दिया कि आईन्दा, आर्यसमाज की मर्यादा का ध्यान रखा जाए। श्री शरर जी के कहने का अपना अन्दाज़ होता है, यही नहीं एक महोदय ने शृंगार रस परक कविता जो पढ़ दी थी, उसे भी, माईक से, आर्यसमाज की मर्यादा का ध्यान रखने की आदेशात्मक-अपील की। यानि श्री उत्तमचन्द जी 'माहौल' वनाते हैं, 'माहौल' में बह नहीं जाते। ऐसा सुन्दर परिवेश बना देंगे कवि सम्मेलनों का, कि कोई भी एकरसता या बोरियत से उचाट नहीं होता। लड़खड़ाते कवि सम्मेलनों को भी दृढ़ता से सम्भाल लेते हैं।

आज के डंकमार युग में जहां छलबल व खलत्व ज़्यादा है, मोरपंखी-कौओं व मुखौटों की बहुतायत है, ले-दे का युग है, आज आदमी सौदेबाज़ हो चला है। असुन्दर ही असुन्दर है, ऐसे में कहीं कुछ 'सुन्दर' दीख पड़ता है, तो अच्छा लगता है। विराट की विश्ववाटिका को सुन्दर, सुभग, चारु बनाने में, मानव-समाज को बेहतरी की दिशा में ले जाने वाले श्री उत्तमचन्द जी जैसे महान व्यक्तियों की आज बहुत ज़्यादा ज़रूरत है।

पानीपत के आर्यसमाजों में पारस्परिक-सहयोग घनिष्ठता व संवाद की स्थिति भी आपके कारण है। इस पानीपत के बहुत से गणमान्य, समाजसेवी, सेठ व प्रभावशाली लोग आपके प्रति अत्यन्त श्रद्धा व सम्मान रखते हैं आपके प्रवचनों में सरलता, सादगी, प्रवाह व रोचकता होती है। आपकी काव्यभाषा छन्दबद्ध, लयबद्ध व प्रभावोत्पादक होती है।

आप निर्भीक कार्यकर्ता, समाजसेवी, पक्के आर्यसमाजी, भारतीय संस्कृति के सच्चे उपासक, राष्ट्रभक्त, कर्मयोगी, मानवता के पुजारी, परिवर्तनकामी, परिवेश को सुरभित करने वाले ऐसे सूरज हैं जिसका रश्मिरथ जहां भी उतरे, उस स्थान को आभामण्डित कर देता है। आपका सम्पूर्ण व्यक्तित्व व कृतित्व ही हृदयग्राही है, प्रेरक है। आप सदा-सदा उत्तम उद्देश्यों केलिए समर्पित रहे हैं। आप निष्काम सेवा, विनम्रता, सहजता, सरलता व श्रेष्ठता के उपासक रहे हैं। साधुता, स्नेह, त्याग, तपस्या, श्रद्धा, संयम, परोपकार, सरलता आदि मानवता के सभी श्रेष्ठ गुण आपमें विद्यमान हैं। आप न कभी थके हैं, न रुके हैं, न झुके हैं। श्री उत्तमचन्द शरर को आप 'अजातशत्रु' (जिसका कोई शत्रु न हो) कह सकते हैं—आपके जीवन में ओजस्विता, प्रखरता तो सदैव रही किन्तु अनुचित या शिष्टता का अतिक्रमण करने वाला जोश कभी नहीं रहा। आपकी वाणी में इतनी आत्मीयता व स्निग्धता है, कि कोई भी जो आपके प्रभावक्षेत्र में आया, वह सदा के लिए आपका हो गया, यह आपके अजातशत्रु स्वरूप का द्योतक है।

आपके जीवन का अधिकांश भाग अध्ययन, अध्यापन व प्रचार-यायावरी में बीता। हिन्दी और संस्कृत में आप परा-स्नातक हैं। उर्दू और हिन्दी भाषा में समानाधिकार रखते हैं। सीमित साधनों के होते हुए भी उत्साह में कभी कमी नहीं आई। साहित्य सृजन में गद्य-पद्य दोनों पर आपकी कलम चली। "फूल और काँटे" उर्दू कृति है जिसमें राष्ट्रप्रेम की रचनाएँ हैं। "सामगान" में सामवेद के मन्त्रों का पद्यानुवाद है। "आर्य का शिकवा जवाबे-शिकवा" आपकी तीसरी कृति है।

आपकी ये पंक्तियां मुझे बड़ी अच्छी लगती हैं—

★ क्या खबर तुझको ग़रीबी हमें क्या देती है?
दिल का सोया हुआ अहसास जगा देती है।

★ तू ही बता कि तेरी धूम मचाई किसने?

★ मेरे हमदम तू मेरे हाल पे अफ़सोस न कर

★ उठ, जाग जाग, मेरे कुमार!

★ लेखनी से काम कवि कब तक करोगे, आज तो तलवार का युग आ गया है

★ विश्व के ये भोग वैभव, ये जगत की लालसाएं
इनसे कह दो अब न सजधज कर मेरे मन को लुभाएं

★ मैंने पीड़ा में लिया है जन्म, पीड़ा में जिऊंगा
मैं अकेला ही बढ़ूंगा

★ जन जन में नवजीवन भर दो

कोई भी संस्था, चाहे वह सामाजिक, धार्मिक, साहित्यिक या राजनैतिक हो, उसकी उन्नति के लिए तीन प्रकार के व्यक्ति आपेक्षित होते हैं—विद्वान्, कार्यकर्ता और धनवान। समुचित सम्मान के अभाव में विद्वान् और कार्यकर्ता मिलने बन्द हो जाते हैं तो संस्था की प्रगति रुक जाया करती है। प्रत्येक समय, प्रत्येक राष्ट्र व समाज को आप जैसे दिव्यगुणों वाले विद्वानों व महापुरुषों की आवश्यकता रहती है। आप जैसी विभूतियों के कार्यकलापों, विचार सरणियों व संकल्प पुंजों को सुरक्षित दस्तावेजों में सम्भाल, सँजोकर रखना अनिवार्य हो जाता है। श्री उत्तमचन्द शरर जी का यह अभिनन्दन ग्रन्थ इसी पुनीत परम्परा का अंग है। आपके इस ग्रन्थ में मुझे 'कुछ' आप पर लिखने का मौका मिला, कुछ ज़िम्मेदारी मिली, कृतज्ञ हूँ। आप पर अभिनन्दन ग्रन्थ निकाल कर आपके प्रति कृतज्ञता ही प्रदर्शित नहीं की जा रही है अपितु आर्यसमाज के कार्यकर्ताओं में भी समाज के प्रति आस्था जागृत की जा रही है। स्वनामधन्य श्री ज्वाला प्रकाश आर्य जी के नेतृत्व में टीम भावना से यह पुनीत कार्य हो रहा है जो समाज की अमूल्य धरोहर सिद्ध होगा।

२६२१, न्यू हाऊसिंग वोर्ड कालोनी, पानीपत
दूरध्वनि : ०१८०-२६६२६१९ (आवास)

प्रेरक व्यक्तित्व : 'यज्ञमय जीवन'

—जगदीश चन्द्र 'वसु'
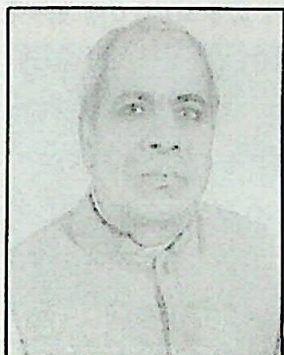
मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हो रही है कि समस्त आर्य जगत की शिरोमणि सभा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली आर्य जगत् के प्रसिद्ध वैदिक विद्वान, प्रखरवक्ता, लेखक कवि स्वनामधन्य मान्य श्री प्रो. उत्तमचन्द जी शरर स्वतन्त्रता सेनानी के यज्ञमय आर्य जीवन से प्रभावित होकर उनका विशेष रूप से सार्वजनिक अभिनन्दन करने के साथ-साथ उन्हें एकचिर-स्मारिका स्वरूप प्रशस्त अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट करने का जो शुभ आयोजन एवं सत्प्रयास कर रही है, वह सर्वथा स्तुत्य और सराहनीय है। किसी विद्वान् ने ठीक ही कहा है कि—

स जातो येन जातेन जाति वंशः समुन्नतिम्।
परिवर्तिनी संसारे मृतः को वा न जायते॥

अर्थात् इस परिवर्तनशील संसार में उसी मनुष्य का जन्म लेना मार्थक है जिसके जन्म लेने से देश जाति और समाज का अभ्युदय होता है, कुल पवित्र होता है, जननी कृतार्थ होती है और वसुन्धरा पुण्यवती कहलाती है। धन्य हैं वे महापुरुष जो अपने समुज्ज्वल व्यक्तित्व एवं अलौकिक कृतित्व के दिव्यालोक से दिग्भ्रान्त संसार को आलोकित करते हैं। वास्तव में यह ध्रुव सत्य है कि प्रत्येक महापुरुष अपने निखरे-सँवरे व्यक्तित्व से युग को प्रभावित करता है। वह अपने प्रदीप्त कृतित्त्व से लोक-कल्याण का सन्मार्ग विस्तृत करता है। ऐसे ही नर रत्न महापुरुषों में मान्य श्री प्रो. उत्तमचन्द जी शरर भी एक हैं।

मैं मान्य श्री शरर जी को गत चालीस वर्षों से जानता हूँ। आर्यवीर दल के माध्यम

से उनके सम्पर्क में आने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। आप अनेक वर्षों तक हरियाणा प्रान्तीय व सार्वदेशिक आर्यवीर दल के प्रधान सेनापति रहकर असंख्य युवकों के प्रेरणादायक रहे हैं। आपने अपना जीवन वैदिक धर्म, आर्य समाज तथा महर्षि देव दयानन्द के विश्व कल्याणकारी सिद्धान्तों एवं मान्यताओं के प्रचार-प्रसार में लगाया हुआ है। आपका व्यक्तित्व भारतीय संस्कति से पूर्णतः अनुप्राणित है। आप एक सच्चे समाज सेवक, निर्भीक कार्यकर्ता तथा सच्चे देशभक्त और मानवता के पुजारी हैं। समाजसेवी संस्थाओं में पीड़ितों के दुःख दर्द को दूर करने में, अन्याय के विरुद्ध आन्दोलनों में, सत्यान्वित संघर्षों में हमेशा अग्रणी रहने वाले धार्मिक पुरुष हैं। असंख्य युवाओं को आर्य समाज में लाने वाले प्रथम पुरुष हैं। आप अपनी सारगर्भित शायरी से, कविताओं से, अनेकों को महर्षि देव दयानन्द व आर्य समाज की ओर आकर्षित करने वाले आर्य जगत् में प्रथम पुरुष हैं। सन्ध्योपासना, यज्ञादि श्रेष्ठ कर्म, स्वाध्याय, परोपकार आदि कर्म आपके जीवन के अभिन्न अंग हैं। आप एक सुलझे हुये प्रभावशाली प्रवक्ता भी हैं।

अन्त में हम उस परमपिता परमेश्वर से आपकी दीर्घायु वर्चस्वी, तेजस्वी, ओजस्वी, सुखद-स्वस्थ जीवन की कामना करते हैं। जिससे आप वैदिक-धर्म, आर्य समाज तथा महर्षि दयानन्द के विश्व कल्याणकारी कार्यों को अग्रसर करने में अपना अमूल्य सहयोग देते रहें। शुभ कामनाओं के साथ। शतम् भूयात्।

वेद प्रचाराधिष्ठाता, आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा हरियाणा,
देसराज कालोनी, पानीपत

संन्यसेत् सर्वकर्माणि वेदमेकं न संन्यसेत्।

"अर्थात् अन्य कार्यों के वर्जन के अवसरों पर भी सब कार्य छोड़े जा सकते हैं, परन्तु वेद के स्वाध्याय के लिये कभी कोई विराम शास्त्रानुमान्य नहीं है।"

संस्मरण

—प्रिंसीपल डा. श्रीमती सच्चिदानन्द आर्या

माननीय श्री उत्तमचन्द जी 'शरर' मेरे स्व. पिता श्री परमानन्द जी 'विद्यार्थी' के परम मित्रों तथा आर्य समाज के कार्यकलापों में प्रमुख सहयोगी रहे। मैंने बचपन में अपने पिता जी से इनके विषय में काफी कुछ जाना, उसी आधार पर कुछ संस्मरण लिख रही हूँ।

सन् १९४७ का देश विभाजन विश्व की प्रथम त्रासदी था तथा दुःख के दूसरे पहलू सुख की अनुभूति का कुछ अंश भी था। क्योंकि इस विभाजन के बाद विभिन्न क्षेत्रों से आए आर्यों का मिलन भी हुआ। शरर जी तथा विद्यार्थी जी का मेल भी क्रान्तिकारियों की कार्य-स्थली रहे आर्य समाज बाबरा मोहल्ला रोहतक में हुआ। दोनों महानुभावों की विचार समता तथा आर्यत्व की दीवानगी ने प्रगाढ़ मेल बना दिया। इसी भावना के साथ यह दोनों विभिन्न कार्यक्रमों चाहे ईसाई परिवारों की शुद्धि का कार्य हो, आर्य वीर दल का कार्य हो, दयानन्द मठ की भूमि का विस्तार हो, हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए स्वामी स्वतन्त्रानन्द रात्रि विद्यालय का कार्य हो, मस्जिदों का रूपान्तर यज्ञस्थली के रूप में करने का कार्य हो, दोनों मित्र बढ़-चढ़ कर भाग लेते रहे।

शरर जी कालिज के प्रोफ़ेसर बन कर पानीपत स्थायी रूप से रहने लगे और पूज्य पिता जी रोहतक ही में रहे।

रोहतक में एक दरगाह थी जिसे इन दोनों महानुभावों ने 'दुर्गा भवन-मन्दिर' बनाने में पूर्ण सहायता की। मूर्ति-पूजा का विरोध करते-करते आर्य दो भागों में बंट गए थे। कट्टरता ने इतनी तीखी प्रक्रिया दी कि वेदानुयायी दो धड़ों में बंट गए। एक पौराणिक (सनातनी) दूसरे आर्य समाजी। इन दोनों महानुभावों ने चिन्तन किया कि अगर हिन्दू जाति में यह फूट बढ़ती रही तो वैदिक धर्मी बने ईसाई पुनः जाति से विमुख हो सकते हैं। वैमनस्य को समाप्त करने के लिए एक पर्व चुना जिसे सभी बिना विरोध के मिलकर मनाने के लिए मान गए। वह पर्व था—'वीर हकीकतराय बलिदान दिवस'।

लेखिका भी बचपन से ऐसे समारोह में शब्दांजलि के माध्यम से सम्मिलित होती रही है। इस उत्सव की रोहतक नगर में धूम होती थी, बिना किसी विरोध के नगर के खुले स्थान पर विशाल मंच सजाकर यह पर्व मना कर हिन्दू-जाति के खून को गर्म किया जाता था। इतिहास की महान घटनायें बच्चों में वीरता का संचार करती हैं। यह पर्व लगातार सन् १९७४ तक रोहतक शहर में सम्मिलित रूप से मनाया जाता रहा। अक्टूबर १९७४ में पिता जी का देहान्त हो गया तथा बिना किसी उत्साही कार्यकर्त्ता के यह कार्यक्रम भी आगे न बढ़ सका।

एक बात 'आर्यवीर दल' के उत्साही कार्यक्रमों, शिविरों, गोष्ठियों तथा संस्कार शिविरों की सुनती थी। दोनों मित्रों की संचालन शक्ति को सारा पंजाब (पंजाब-हरियाणा-हिमाचल प्रदेश) मानता था। आर्य समाज स्थापना शताब्दी के अवसर पर मैंने दिल्ली में आर्यवीर दल का प्रदर्शन कार्यक्रम देखा था। इस प्रदर्शन कार्यक्रम की अध्यक्षता सन् १९७५ में आदरणीय शरर जी ने की। आर्य वीरों ने जब प्रत्यंचा खींच तीर कमान से छोड़ा तो फूल माला मान्यवर अध्यक्ष जी के गले में थी। इस आह्लादिक दृश्य को अनेकों लोगों ने देखा। यह आर्य वीरों ने शरर जी के प्रति अपनी कृतज्ञता दर्शायी थी। स्वतन्त्र-भारत में आर्यवीरों को संगठित कर सुचारु रूप से शाखायें लगवाने का कार्य इन दोनों मित्रों ने आरम्भ किया था जो आज एक विशाल रूप ले चुका है।

आज सार्वदेशिक सभा चाहे स्मरण न रखे परन्तु मैं शरर जी द्वारा स्थापित (रोहतक में) आर्य कुमारी सभा की सदस्या होने के नाते कृतज्ञ हूँ। इन कुमार-कुमारी सभा में हम बच्चे संस्कारित होने केलिए प्रतिदिन सायंकाल पहले दयानन्द-मठ रोहतक में और बाद में आर्य समाज प्रधाना मोहल्ला, रोहतक में जाते रहे।

मान्य शरर जी की दीर्घ आयु तथा यशस्वी जीवन की कामना के साथ—

उप-पात्र स्नेह से भरो कि क्रम

द्युति का आकल्प रहे चलता

दीपक से दीपक है जलता।

७४, प्रेमनगर, करनाल

आर्यवीर दल के संचालक : प्रो. शरर

—रामनाथ सहगल

यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि आर्य जगत् के प्रसिद्ध विद्वान् कवि, स्वतन्त्रता सेनानी, प्रबुद्ध वक्ता प्रो. उत्तमचन्द शरर का अभिनन्दन ग्रन्थ विमोचन समारोह सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली के तत्वावधान में शीघ्र ही पानीपत में मनाया जायेगा। मैं इसकी सफलता के लिए अपनी ओर से, अपने परिवार की ओर से एवं श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा की ओर से हार्दिक शुभकामनायें प्रेषित करता हूँ।

मेरा आदरणीय भ्राता प्रो. उत्तम चन्द शरर से पिछले ५ दशकों से सम्वन्ध है। जब मैं रावलपिंडी में आर्य समाज में अधिकारी था तो वहां प्रो. उत्तम चन्द शरर वार्षिकोत्सव में पधारते थे, जिस दिन उनकी कविता एवं उपदेश होना होता था तो हज़ारों लोग उन्हें सुनने के लिये आते थे। उन्होंने आर्य वीर दल का लगभग ५ दशक संरक्षक रहते हुए हज़ारों आर्य वीरों को आर्य समाज के क्षेत्र में कार्य करने हेतु प्रोत्साहित किया। आज भारत में कोई ऐसी आर्य समाज नहीं होगी जहां उनके द्वारा प्रशिक्षित किया गया आर्य वीर आर्य समाज का कार्य न कर रहा हो। उन्होंने देश विदेशों में अपनी कविता द्वारा जो उपदेश दिया है और सेवा की है, वह सुनहरे अक्षरों में लिखी जायेगी।

उन्होंने लगभग ३५ वर्ष पूर्व करनाल में अखिल भारतीय आर्य वीर दल का समारोह किया था, उसके स्वागताध्यक्ष डॉ. गणेश दास आर्य थे और अध्यक्षता डॉ. मेलाराम बर्क ने की थी। इस समारोह में मुख्य वक्ता के रूप में पं. प्रकाशवीर शास्त्री पधारे थे। मुझे भी इस समारोह में सम्मिलित होने का अवसर मिला था। इसी तरह लगभग ३० वर्ष पूर्व आर्य वीर दल का समारोह फ़रीदाबाद में आयोजित किया गया जिसके स्वागताध्यक्ष श्री के.एल. मेहता थे, जिन्होंने फ़रीदाबाद में आर्य समाज एवं

शिक्षण संस्थाओं का जाल बिछा दिया। इस समारोह में लगभग ५० हज़ार आर्य वीर दल अपने गणवेश में उपस्थित थे, जो शोभायात्रा इस अवसर पर निकाली गई, उसमें भी मुझे सम्मिलित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस तरह के कई आयोजन उन्होंने भारत भर के कोने कोने में आर्य समाज के क्षेत्र में किये जोकि सर्वदा स्मरणीय रहेंगे। इसके लिये वे धन्यवाद एवं बधाई के पात्र हैं। मुझे पूरी आशा है कि यह अभिनन्दन ग्रन्थ समस्त आर्य समाज के लिये प्रेरणा स्रोत बनेगा।

मंत्री, श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा

★ "उत्तरी भारत में पाश्चात्य सभ्यता के प्रवाह को रोकने के लिए आर्य समाज से बढ़ कर और किसी ने कार्य नहीं किया।"

—सर हैनरी काटन

★ "यदि दयानन्द ४० वर्ष बाद में पैदा हुआ होता तो हम इस समय में उत्तरी भारत के तिहाई भाग को अवश्य ईसाई बना चुके होते।"

—मद्रास के लाट पादरी

★ "जिन गुणों के कारण मैं स्वामी दयानन्द जी का सम्मान करता हूँ वे हैं उन की सत्य की खोज, उनकी निडरता, उनका देश प्रेम तथा उनका महान सुधारक होना।"

—भारत हितैषी पादरी रैवरैण्ड सी-एफ़ एण्ड्रयूज़

★ "यदि महर्षि दयानंद ने आर्य समाज की स्थापना न की होती तो मैं अनन्त शयनम् की जगह नूरइलाही या मुहम्मद अली होता।"

—श्री अनंतशयनम् आयंगर पूर्व लोकसभा अध्यक्ष

संघर्षों के शायर हैं शरर

—दीपचन्द्र निर्मोही

काव्य जब स्वयं की संतुष्टि के लिए लिखा जाता रहा, वह समय बीत गया है। समय के साथ-साथ उसकी परिभाषा भी बदल गई। काव्य समाज को सँवारता भी है और उसे दिशा भी देता है। शायद इसी लिए आज की कविता स्वान्तः सुखाय नहीं रही। वह आम आदमी का दुःख-दर्द भी बाँटती है, उसे झकझोरती है और अन्याय के ख़िलाफ़ अपनी आवाज़ बुलन्द करने का हौसला भी जुटाती है। खुद को सजाने और संवारने की धुन भी पहले की तरह अब उसके सर पर सवार होती हुई दिखाई नहीं देती। हो सकता है इसी कारण शरर साहब की कवितायें वादों के विवादों में न फंस कर बेहतर समाज की संरचना के लिए निरन्तर जूझती हुई दिखाई देती हैं। कवि उन लोगों में कतई सम्मिलित नहीं होना चाहता जो मन्दिर-मस्जिद जैसे विवाद खड़े करके आदमी और आदमी के बीच खाई पैदा कर उसके अमन-चैन को छीन लेना चाहते हैं—

तफ़र्का ख़ेज़ मज़ाहिब से सर बसर आज़ाद
हरम की दैर की तकरार से शरर आज़ाद
मैं सोचता हूँ कि किस दर्जा खुश नसीब हूँ मैं।

उसे डर है कि यदि धर्म के नाम पर यूँ ही आपस में लड़वाते रहे तथाकथित धार्मिक लोग तो एक दिन उदासी उतर आयेगी धरती पर। वह पतझड़ कतई नहीं देखना चाहता। वह चाहता है कि हरेक आँगन फूलों की तरह मुस्कुराये, हँसे। इसलिए वह देश के रखवालों को चेताता है—

है यही भय कि कहीं पतझड़ न आये
मुस्कुराते फूल ज्वाला में न झुलसें
और कलियों की जवानी सड़ न जाये
बाग़ के माली! उठो, पलकें उघारो
रक्त दे देकर हर इक बूटा निखारो

शोषण-मुक्त समाज की रचना उसका ध्येय है। इसलिए वह शोषकों के विरुद्ध विद्रोह करता हुआ दिखाई देता है। वह अच्छी तरह जानता है कि पूंजीपति मौज उड़ाता है तो मज़दूर के बल पर, उसकी खून-पसीने की कमाई पर। उसके इस आचरण

के विरुद्ध कवि डंके की चोट कहता है—

कौन-सी चीज़ है मजबूरे-नमू शीशे में
तुझको मालूम है क्या पीता है तू शीशे में
किसी ज़रदार का होता तो यह होना था सफ़ेद
साफ़ मज़दूर का है सुर्ख़ लहू शीशे में।

कवि को इस बात का भारी अफ़सोस है कि आदमी को तो दो जून सूखी रोटी मयस्सर न हो और पत्थर के खुदा हलुवा चाटते फिरें—

जहाँ पत्थर के खुदाओं को तो हलुवा हो नसीब
और फ़ाकों से ही इन्सान तड़पता मर जाये।

कवि इन हालात को बदल देना चाहता है। उसकी इच्छा है कि कोई भी आदमी किसी रात भूखा ही सो जाने के लिए मजबूर न हो। उसे पेट भर रोटी मिलनी ही चाहिए और तन ढकने केलिए कपड़ा। वह यह भी जानता है कि यदि हालात नहीं बदले तो मजदूर अपने हक के लिए लड़ेगा, मरेगा-मारेगा और अपना हक छीनने वालों का सर फोड़ देगा—

वरना ये भूखे, यही नंगे, यही मस्त मलंग
अपने खप्पर से 'शरर' शाहों के सर फोड़ेंगे।

कवि को बन्धनों से सख्त नफ़रत है। वह घड़ी भर के लिए भी उन्हें नहीं स्वीकारता। गुलामी की ज़िन्दगी से उसे मौत बेहतर लगती है—

तेरी बन्दिशों के अन्दर जो जिया तो क्या जिया मैं
मुझे ऐसी ज़िन्दगी से कहीं मौत है गवारा।

यही कारण है किवह मुसीबतों से घबराता नहीं है। संघर्षों से बचकर भागना नहीं चाहता। उसकी दृष्टि अपने लक्ष्य पर है। वह उसे पाने के लिए बेचैन दिखाई देता है और इस उद्देश्य के लिए अपनी किश्ती तूफ़ानों से टकरा देने से भी नहीं घबराता—

मैंने तूफानों को लब्बैक कहा है खुद ही
नाखुदा मेरे लिए फ़िक्रे-रिहाई न करें।

मज़ेदार बात यह है कि इस संघर्ष में वह कभी उदास नहीं होता। घबराता है न टूटकर बिखरता है। थकता भी नहीं। इस लिए कि उसे अटल विश्वास है कि एक दिन ये गहरे अंधेरे छंटेंगे ज़रूर। ज़रूर आयेगा एक दिन सवेरा—

कितनी लम्बी हो मगर ख़त्म तो होगी यह रात
दूर कितना सही आयेगा सवेरा आख़िर।

और सवेरा एक दिन आ जाये तो फिर वह उसे किसी भी शर्त पर खोना नहीं चाहता। बेशक फटेहाल ज़िन्दगी गुज़ारना उसे स्वीकार है। अपनी इस स्थिति के लिए उसे किसी की हमदर्दी की भी ज़रूरत नहीं—

मैं शबेतार नहीं लूंगा सहर को खोकर
ज़र पै थूंकू भी नहीं ज़ौके-नज़र को खोकर
कैसे शबनम को खरीदूं मैं शरर को खोकर
मेरे हमदम तू मेरे हाल पे अफ़सोस न कर।

अपनी ज़िन्दगी के सच को वह किसी से छिपाकर नहीं रखता। जिस हाल में है, उसी में मस्त है। उसे पूरी ज़िन्दगी तंगहाली मंजूर, पर अपने स्वाभिमान की कीमत पर वह कोई भी समझौता करने के लिए तैयार नहीं। यहाँ तक कि इस मूल्य पर वह खुदा से मिलने की इच्छा भी नहीं रखता—

जानता हूँ कि मैं तेरी तरह ज़रदार नहीं
उम्र फाकों में गुज़र पाई है, इन्कार नहीं
पर मेरी वुसअ़ते-दिल से तू खबरदार नहीं
मैं खुदी बेच खुदा का भी तलबगार नहीं।

कवि राह की हर मुसीबत झेलने को तैयार है। हर रुकावट को हटा देने की वह हिम्मत रखता है। हरक ख़तरे से जूझता है, पर रुकता नहीं—

रहे-वफ़ा के ख़मो-पेच, पुरख़तर तस्लीम
बढ़े कदम नहीं रुकते, मगर किसी डर से।

अनभाई बात से समझौता कर लेना उसके स्वभाव में नहीं रहा। यही कारण रहा कि एक सुलझा हुआ विद्वान् प्राध्यापक होते हुए भी प्रबन्धकों के साथ अपनी पटरी नहीं बैठा सका। रोटी-रोजी की परवाह किये बगैर एक अंतहीन यात्रा पर निकल गया भटके हुए लोगों को राह दिखाने के लिए। राह में जहाँ से जितना मिल गया उसी से गुजर किया। कभी हथेली को किसी के सामने सीधा न किया।

यद्यपि आज शरर उम्र की ढलान पर हैं, फिर भी विश्राम की मुद्रा में नहीं लगते। समाज की बेहतरी के लिए कोई जलसा हो या जुलूस, मुशायरा हो या गोष्ठी, वहाँ उनकी उपस्थिति आप ज़रूर पायेंगे।

से.नि. प्राचार्य आर्य उ.मा.वि. पानीपत

आर्यसमाज के सिद्धान्तों के प्रति समर्पित : प्रोफ़ेसर 'शरर' साहब

— डॉ. राजेन्द्ररंजन चतुर्वेदी

प्रोफ़ेसर शरर साहब का नाम आर्यसमाज के क्षेत्र में कितना सम्मानित है, यह बात मुझे श्री टेकचन्द गुलाटी जी से ज्ञात हुई, जब राष्ट्रपति भवन में तत्कालीन राष्ट्रपति जी ने उन्हें सम्मान पत्र भेंट किया था। उनकी अध्यक्षता में स्काई लार्क में एक कविगोष्ठी हुई थी, जिसमें सम्मिलित होने का मुझे भी सौभाग्य मिला और मैंने उनकी विचारोत्तेजक कविता और भाषण को सुना। बड़ा बाज़ार आर्य समाज की सभा में भी एक बार सम्मिलित होने का अवसर मिला, तब उन्होंने आर्य समाज के पक्ष-विपक्ष में काव्यमय प्रश्न और उत्तर प्रस्तुत किये थे।

शरर साहब पानीपत के वरिष्ठतम प्राध्यापकों में से हैं, उन्हें अवकाश प्राप्त किये लगभग २५ साल हो गये हैं, फिर भी वे सक्रिय हैं। एक बार एस.डी. कालेज में अन्तर महाविद्यालयीन काव्यप्रतियोगिता के निर्णायक के रूप में मैंने उन्हें आमन्त्रित किया, तो मेरी प्रार्थना उन्होंने स्वीकार की, हालांकि उस दिन उन्हें एक सभा में व्याख्यान देने दिल्ली जाना था। एक बार देवी मंदिर में तालाब की सीढ़ियों पर बैठे उनके दर्शन हुए और वहाँ बैठकर उन्होंने आर्य समाज से संबंधित अपनी गतिविधियों के विषय में बातें कीं। एक बार वे काफी अस्वस्थ हो गये थे, तब उन्हें देखने के लिए मैं उनके घर गया, तब उन्होंने जो बातें बतलायीं, उनसे मैं चकित हो गया कि इतनी उम्र का व्यक्ति किस प्रकार आर्य समाज के प्रति गहन निष्ठा के बूते पर इतनी दूर-दूर तक अकेले ही यात्रा करता है। वे वरिष्ठ हैं, आर्य समाज के सिद्धान्तों के प्रति समर्पित हैं, उर्दू और हिन्दी के विख्यात कवि हैं। इस रूप में वे मेरे लिए आदरणीय हैं और मैं उनको सादर नमस्कार करता हूँ। वे शतायु हों, स्वस्थ और सक्रिय रहें।

प्रवक्ता, सनातन धर्म महाविद्यालय, पानीपत

आर्यवीर दल हरियाणा के प्रमुख संचालक श्री 'शरर'

—भोपाल सिंह आर्य
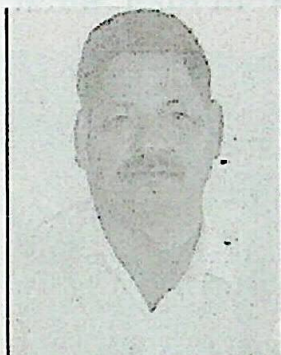
यह जानकर अति प्रसन्नता हुई कि आप आदरणीय प्रो. उत्तमचन्द जी शरर के अभिनन्दन के उपलक्ष्य में अभिनंदन ग्रन्थ का प्रकाशन करने जा रहे हैं। आप इस कार्य केलिए बधाई के पात्र हैं।

आदरणीय शरर जी के साथ आर्य वीर दल के माध्यम से काफी समय कार्य करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। जिस समय आदरणीय शरर जी आर्य वीर दल के प्रांतीय संचालक थे उस समय दल के सामने किसी भी प्रकार की कोई समस्या उत्पन्न होती तो आप उसे बड़े सुंदर ढंग से हल करते थे। दल का बड़े से बड़ा अधिकारी या छोटे से छोटा सैनिक भी आपके आदेश का पालन करने में तत्पर रहता था। मुझे याद है आज से लगभग १६-१७ वर्ष पूर्व तपोवन आश्रम देहरादून में आपके नेतृत्व में प्रांतीय एवं ज़िला स्तर के पदाधिकारियों का एक प्रशिक्षण शिविर लगा था। यह शिविर लगभग १०-१२ दिन का था। उस शिविर में आपने जो मार्गदर्शन आर्य वीरों का किया शायद ही कोई आर्य वीर उसे भुला पाएगा। उस शिविर में महात्मा दयानन्द जी जैसे क्रांतिकारी संन्यासियों का भी आर्यवीरों को आशीर्वाद प्राप्त हुआ। आपके नेतृत्व में आर्य वीर दल हरियाणा ने पूरे भारत वर्ष के अन्दर अपना एक स्थान बनाया। स्थान-स्थान पर शाखाओं का जाल बिछाया गया। आप वास्तव में युवकों के प्रेरणा स्रोत रहे हैं।

आपने केवल युवकों में ही कार्य नहीं किया आपने पूरे भारत वर्ष में घूम-घूम कर जो वैदिक सिद्धान्तों का प्रचार किया उसे कभी भुलाया नहीं जा सकता। आपकी वाणी में एक जादू है। आपको सुनने के लिए आर्य जनता व्याकुल रहती है।

आर्य केन्द्रीय सभा करनाल का मंत्री होने के नाते कई बार आपको करनाल कार्यक्रमों में, पारिवारिक सत्संगों में आमंत्रित किया। जिस समय हम आर्य जनता को यह सूचना देते थे कि प्रवचन आदरणीय शरर जी का होना है, आर्य जनता फूली नहीं समाती थी और आपको सुनने के लिए लालायित रहती है।

परमपिता परमात्मा से प्रार्थना है कि आपकी दीर्घ आयु हो एवं स्वस्थ रहें ताकि आप समाज एवं राष्ट्र की सेवा करते रहें तथा युवा वर्ग आपसे प्रेरणा लेता रहे।

मण्डल पति, आर्यवीर दल ज़िला करनाल
मंत्री आर्य केन्द्रीय सभा करनाल एवं आर्य समाज दयालपुरा करनाल

शरर आग का राग

डॉ. सारस्वत मोहन 'मनीषी'

कथनी-करनी में नहीं अन्तर करते आप।
जिया शरर जी ने सदा दयानन्द का ताप।
मृदुभाषा शालीनता शिष्ट आचरण संग।
भाया है कवि शरर को दयानन्द का रंग।
वैदिक धर्मी शरर जी सैनिक कसे लंगोट।
कहना है वो सब कहा खुल डंके की चोट।
कभी न भाया आपको रंच विरंच प्रपंच।
सच्ची-सुच्ची साधना भाया वैदिक मंच।
एकनिष्ठ व्रत के व्रती पिया ओम् का सोम।
पाँव धरा पर ही रहे सपना वैदिक व्योम।
पानीपत की पत रखी पानी पानीदार।
प्रथम पंक्ति में ही रही शरर-नाव-पतवार।
गये प्रलोभन लौटकर असफल हर अभिशाप।
पुण्य सदा ही पुण्य है पाप सदा ही पाप।
प्राध्यापक कवि शरर ने किया सत्य का जाप।
बना दिया वरदान ही छू निज कर से शाप।
तन-मन-जीवन को कभी मिले न कलुषित दाग़।
निष्कलंक गाते रहे शरर आग का राग।
माली बनकर सींचते रहे वेद - उद्यान।
श्रद्धापूर्वक कर दिया ऋषि-पद-जीवन-दान।
श्रद्धा श्रद्धानन्द सी भक्ति दर्शनानन्द।
'उत्तम' कवि श्री 'शरर' को मिला परम आनन्द।
दीर्घ आयु हों शरर जी रहें स्वस्थ सानन्द।
तमसो मा ज्योतिर्गमय पढ़ें वीरता छन्द।

वरिष्ठ रीडर : रामलाल आनंद कालेज (सान्ध्य) धौलाकुआँ, नई दिल्ली-२१

मरहबा-सद-मरहबा

—हरिश्चंद्र "नाज़" सोनीपती
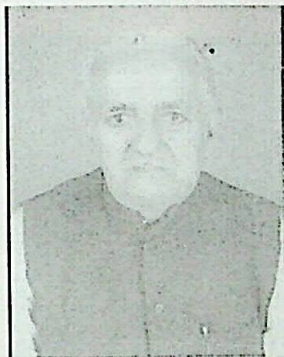
क़ाबिल-ए-ताज़ीम उत्तम चन्द 'शरर'।
आप हैं हम सब के मंज़ूर-ए-नज़र॥
आपके है नाम की दुनिया में धूम।
आपके है काम की दुनिया में धूम॥
आप हैं, इक मर्दे-मैदाने-अमल।
आप हैं इक फ़र्द-ए-मैदाने-अमल॥
आप ने सब तय किए हैं मरहले।
आर्यों का गुलसिताँ फूले फले॥
आप तो सचमुच सरापा-नूर हैं।
ज़ुलमतों से आप कोसों दूर हैं॥
ज़िन्दगी में आप की ज़िन्दा दिली।
फूल झड़ते हैं ज़वाँ से आपकी॥
नेक दिल, शीरीं-ज़वाँ और खुशख़साल।
आपकी जादू बयानी बेमिसाल॥
देवता-सीरत, बशर इक पारसा।
आप सबके रहनुमा, मुश्किल-कुशा॥
आप हैं बिल्कुल निडर, बेलाग भी।
पुर असर है, साफ़गोई आपकी॥
बा-अमल-आलिम हैं इक आली दिमाग़।
ज़ुलमतों में कर दिए रौशन चिराग़॥
आपकी आवाज़ में, जादू भरा।
क़ाबिल-ए-तारीफ़ हर तर्ज़-ए-अदा।
है मुअस्सिर आप की तक़रीर भी।
है मुअस्सिर आपकी तहरीर भी॥

देश के हैं आप बेहद ग़मगुसार।
खूबियाँ हैं आपमें तो बेशुमार॥

आपका एहसास-ए-खुददारी अज़ीम।
आप का हर अज़्म है, अज़म-ए-समीम॥

रब ने बख़्शा आपको जाह-ो-जलाल।
शायरी में भी किया हासिल कमाल॥

आप ने एज़ाज़ जो हासिल किया।
आप को हक़ ने किया है हक़ अता॥

ओ३म् का झण्डा उठाकर चल पड़े।
सबको आँखों में बिठा कर चल पड़े॥

आप जब पहुँचे वहाँ, सद एहतराम।
काँप उट्ठा हैदराबादी निज़ाम॥

नाद, वेदों का बजाया जा-बजा।
मह-ऋषि गुण-गान गाया जा-बजा॥

जब तलक ताबिंदा हैं शम्सो-क़मर।
उम्र लम्बी आपकी हो सर-बसर॥

हर किसी की यह दुआ, दायिम रहे।
सर पे साया आपका कायिम रहे॥

हौसला कितना है ऊंचा आपका।
शेरे-नर, मर्दे-मुजाहिद, मरहबा॥

"नाज़" के दिल की है बर आई मुराद।
ज़िन्दाबाद-ो-ज़िन्दाबाद-ो-ज़िन्दाबाद॥

गढ़ी घसीटा, सोनीपत

पानीपत की पहचान हैं प्रो. शरर

—सुमित्रा दूहन

आर्य जगत के मूर्धन्य विद्वान्, दार्शनिक विचारधारा के धनी, जज़्बात को समेट कर उर्दू में शायरी प्रस्तुत करने वाले सुप्रसिद्ध शायर 'श्री उत्तम चन्द जी शरर' के अभिनन्दन-ग्रन्थ में कुछ शब्द संस्मरण के रूप में लिखने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है। वैसे तो पानीपत के प्रायः सभी आर्य-समाजों के वार्षिक उत्सव एवं अन्य समारोह शरर जी के सन्देश तथा आशीर्वचनों के बिना सपन्न नहीं होते अर्थात् प्रत्येक वैदिक मंच से उनके मुख से काफी गहरा ज्ञान सुनने को मिलता रहता है, लेकिन इनके विषय में एक संस्मरण ने मेरे हृदय पटल पर जो अमिट छाप छोड़ी उस घटना का जिक्र मुख्य रूप में मैं यहाँ करना चाहूंगी।

२३ मार्च २००१ को आर्य समाज स्थापना की १२५वीं वर्षगाँठ के उपलक्ष्य में होने वाले अन्तर्राष्ट्रीय-महासम्मेलन में भाग लेने के लिए मुम्बई जाने की महत्वाकांक्षा जागृत हुई। एक ओर जहाँ मेरे परिवार के सदस्यों ने मुझे भेजने का समर्थन दिया दूसरी ओर वहीं आर्य बाल-भारती स्कूल की प्रबन्ध समिति के अधिकारियों ने भी जाने की अनुमति देकर आर्य समाज के प्रति अपनी उदारता का परिचय देते हुए मुझे जाने को उत्साहित किया।

मेरे साथ मेरे पुत्र आशीष के अतिरिक्त पानीपत के विभिन्न आर्य समाजों के पदाधिकारी एवं सदस्य भी थे जिनमें से प्रमुख रूप से माननीय शरर जी, देवराज जी डावर हमारे साथ गए। मेरे लिए इस महासम्मेलन में जाना जीवन की विशेष उपलब्धियों में से एक था। जैसे ही हम मुम्बई बान्द्रा कुर्ला-कॉम्प्लैक्स पहुँचे तो आयोजकों द्वारा हमें समारोह स्थल पर विशाल पाण्डाल की ओर जाने का संकेत दिया गया। पाण्डाल में जाने के बाद उस समारोह के मुख्य संचालक तथा वर्तमान सार्वदेशिक सभा के प्रधान कैप्टन देवरत्न आर्य ने तुरन्त घोषणा की कि "हमारे बीच जाने माने वैदिक विद्वान प्रोफेसर उत्तम चन्द जी शरर पानीपत से पधार चुके हैं, यहाँ आने पर हम उनका हार्दिक अभिनन्दन करते हैं तथा मंच पर आकर स्थान ग्रहण करने के लिए आमंत्रित
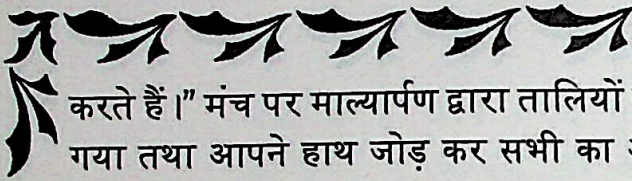
करते हैं।" मंच पर माल्यार्पण द्वारा तालियों की गूँज के बीच शरर जी का स्वागत किया गया तथा आपने हाथ जोड़ कर सभी का अभिवादन स्वीकारते हुए सबका धन्यवाद किया।

अन्तर्राष्ट्रीय महासम्मेलन के इतने बड़े मंच से जब यह सब देखने व सुनने को मिला तो मन एकाएक रोमांचित हो गया, हर्ष की कोई सीमा न रही तथा ऐसे आभास हुआ कि आज मुम्बई जैसे महानगर में देश-विदेशों से आए वैदिक विद्वानों के बीच शरर जी के साथ हम सबका ही नहीं अपितु पूरी पानीपत नगरी का अभिनन्दन इस महानगर में हुआ है। मुझे गर्व था इस बात पर कि हम उस पानीपत नगर के वासी हैं जिस नगर से शरर जी हैं। दूसरे शब्दों में यह कहें कि शरर जी पानीपत जैसे ऐतिहासिक, औद्योगिक व आर्य नगर की शान, मान व पहचान हैं।

मैं परमपिता परमेश्वर से उनके समस्त परिवार के लिए सुख-शान्ति व समृद्धि की कामना करती हूँ। प्रभु से प्रार्थना करूँगी कि ऐसे महान समाज सेवी व आर्य समाज के प्रति समर्पित व्यक्तित्व से जीवन में प्रेरणा प्राप्त करने की हमें बुद्धि व शक्ति प्रदान करें।

कोषाध्यक्ष,

वेद प्रचार एवं वैदिक अग्निहोत्र समिति पानीपत

"वीरता मनुष्य को कर्तव्यारूढ़ करती है और भीरुता कर्तव्य से विमुख करने का साधन है। वीर व्यक्ति विघ्न बाधाओं को हटा कर सफलता के दर्शन करता है, भीरु मनुष्य विघ्नबाधाओं के सम्मुख आने पर घबरा कर धर्म-पथ छोड़ कर अधर्म-पथ-गामी हो जाता है।"

प्रो. उत्तम चन्द 'शरर' एक महान् संघर्षशील व्यक्तित्व

—चमनलाल आर्य
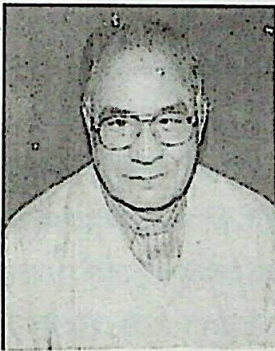
इस संसार में अनेकों नर-नारी जन्म लेते हैं और अपनी संसार यात्रा समाप्त कर चले जाते हैं। पीछे उनका नाम लेवा तक नहीं होता। परन्तु कुछ ऐसे इन्सान होते हैं, जिनकी कीर्ति लोग उनके जीवनकाल में ही करना प्रारम्भ कर देते हैं। इन इन्सानों में एक हैं हमारे आर्य समाज के वयोवृद्ध नेता प्रो. उत्तम चन्द जी 'शरर', जो जीवनपर्यन्त वेद का प्रचार-प्रसार करते रहे हैं, जो स्वामी दयानन्द सरस्वती और आर्य समाज की बात करते हैं, चाहे उनको इसके लिए कितनी भी कुर्बानी क्यों न देनी पड़े। यदि मैं यूं कहूं कि आर्य समाज के इतिहास में पानीपत का नाम ही 'शरर' जी से जाना जाता है, तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है। मुझे आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उप-सभा हरियाणा के महामन्त्री होने के नाते जगह-जगह हरियाणा में तथा भारतवर्ष के प्रान्तों में जाना पड़ता है और जब मैं किसी से कहता हूँ कि मैं पानीपत का रहने वाला हूँ, तो तुरन्त वह आदमी मुझसे सवाल करता है कि हमारे 'शरर' जी का क्या हाल है? तो मन बड़ा प्रसन्न होता है कि आर्य जगत् में पानीपत का नाम 'शरर' जी से जाना जाता है।

प्रो. 'शरर' जी आर्य समाज के एक गंभीर कार्यकर्ता हैं। उन्होंने आर्य समाज में मेल-मिलाप के लिए जीवनपर्यन्त कार्य किया। उन्होंने हरियाणा में आर्य वीर दल का कई वर्षों तक संचालक पद पर रह कर आर्य वीर दल को गतिशील बनाया। उनके समय में आर्य वीर दल ने काफी प्रगति की और प्रो. 'शरर' जी के कार्य की सर्वत्र प्रशंसा की गई। अब भी आर्य वीर दल वाले उनकी सलाह लिए बग़ैर कोई कार्य नहीं करते।

प्रो. 'शरर' जी २० वर्षों तक आर्य कालेज, पानीपत में तथा डी.ए.वी. क़ालेज, करनाल में हिन्दी के प्राध्यापक पद पर रहे और उन्होंने बड़ी ईमानदारी से अपने कार्य को किया। परन्तु साथ ही साथ वह हर रविवार को किसी न किसी आर्य समाज में जा कर महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती तथा आर्य समाज के सिद्धान्तों की चर्चा करते।

वह भारतवर्ष के प्रत्येक प्रान्त में गए और लगभग प्रत्येक प्रान्त के हरेक आर्य समाज में गए और दिलोजान से वेद की बात कही। यदि मैं संक्षिप्त में कहूँ कि प्रो. 'शरर' जी एक सच्चे, सुच्चे, वैदिक विद्वान, ईमानदार, कर्मठ तथा मेहनती इन्सान हैं, तो मैं कोई ग़लती नहीं कर रहा। बड़ी प्रसन्नता की बात है कि उनके सुपुत्र श्री सुरेश चन्द्र आर्य तथा श्री राजेश आर्य भी आर्य समाज की सेवा कर रहे हैं और वह आर्य समाज के अधिकारी भी हैं।

प्रो. 'शरर' जी ने न केवल वेद का प्रचार प्रसार किया परन्तु वह बड़े-बड़े आन्दोलनों में भाग लेने से भी न चूके। वह अपने साथियों सहित हैदराबाद सत्याग्रह में गए और वहां कई महीनों तक जेल में रहे। उन्होंने हिन्दी आन्दोलन में भी बढ़ चढ़ कर भाग लिया और पानीपत का नाम उज्ज्वल किया। वह आज तक हिन्दी दिवस समारोह में प्रवचनों के द्वारा हमारा मार्गदर्शन करते हैं। वह एक महान् कवि हैं। उन्होंने आर्य समाज के उपलक्ष्य में कई कविताएँ लिखीं, जिनको पढ़कर हम उनका आभार प्रकट करते हैं। यदि मैं उनके बारे में ये पंक्तियाँ कहूँ, तो यह सर्वदा सत्य सिद्ध होंगी—

'नई दुनिया बसाने को नए अन्सर नहीं आते।
यही मिट्टी संवरती है, यही ज़र्रे उभरते हैं।
कदम चूम लेती है, खुद बढ़ के मंज़िल,
मुसाफ़िर अगर अपनी हिम्मत न हारे।'

उनके मन में एक तड़प है और हम सबका कर्त्तव्य है कि हम उसे दूर करने का प्रयास करें। पानीपत में कलन्दर साहब का मज़ार है, जहां हर वीरवार को हिन्दू भाई-बहिन जा कर चादरें चढ़ाते हैं और प्रसाद बांटते हैं। प्रो. 'शरर' जी का कहना है कि ऐसा हम क्यों करते हैं? क्या महारे मन्दिर, कम पड़ गए हैं, और क्या हमारा विश्वास ही अपने मन्दिरों से उठ गया है? यदि नहीं तो हम प्रो. 'शरर' जी की बात मान कर कलन्दर के मज़ार पर जाना बन्द कर दें। तभी हमारा कल्याण हो सकता है। हमारा कर्त्तव्य बनता है कि हम कब्र पूजा छोड़ कर प्रतिदिन यज्ञ, संन्ध्या करें और पारिवारिक सत्संगों का आयोजन करें।

मैं अन्त में परम पिता परमात्मा से प्रो. 'शरर' जी की दीर्घायु की कामना करता हूँ और ऐसी अपेक्षा रखता हूँ कि वह हमारा इसी प्रकार मार्गदर्शन करते रहेंगे। **"कीर्तियस्य, सा जीवति"।**

मन्त्री, आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उप-सभा हरियाणा
७००-आर, माडल टाऊन, पानीपत

हैदराबाद सत्याग्रह

—डॉ. राणा प्रताप गन्नौरी

सन् १९३९ ई. में आर्यसमाज के सामने एक बहुत बड़ी चुनौती आ खड़ी हुई। निज़ाम हैदराबाद ने अपने राज्य में आर्य धर्म के प्रचार प्रसार पर प्रतिबंध लगा दिया। अनेक पुराने हिन्दू मन्दिर गिरा दिये और नए मन्दिर बनाना कानूनन बंद कर दिया गया। सम्पूर्ण हिन्दू समाज के लिए यह घोर अपमान की बात थी। इस आपत्ति केसमय केवल आर्यसमाज ऐसी संस्था थी जिसने निज़ाम से लोहा लेने की ठानी। देश भर के आर्य नेता वहां की परिस्थिति का अध्ययन करने हैदराबाद गये। वहाँ के स्थानीय आर्य नेताओं से परामर्श किया। भावी योजना तैयार करने के लिए शोलापुर में आर्य महासम्मेलन हो रहा था कि उसी हैदराबाद के प्रसिद्ध आर्य नेता श्री पं. श्यामलाल का शव शोलापुर आया। सम्मेलन में शव को देखकर भयंकर रोष आ गया। पं. श्यामलाल को निज़ाम सरकार ने बीदर जेल में भयंकर कष्ट देकर मार डाला था। पण्डित जी का शव भी सरकार नहीं दे रही थी। बड़ी कठिनाई और चतुराई से शव प्राप्त किया गया। पण्डित जी के मामा श्री दत्तात्रेय एडवोकेट ने बीदर जेल के जेल विभाग केकिसी उच्च अधिकारी के नाम से तार दिया जिसमें शव दे देने का आदेश था। तार आते ही जेलर ने शव दे दिया और आर्य नेता शव को लेकर शोलापुर पहुंच गये। शव का पहुंचना था कि आर्य महासम्मेलन में उत्तेजना फैल गई। क्योंकि पण्डित जी के शव पर भयंकर चोटों के निशान थे और उनका शरीर मृत्यु से पूर्व ही अस्थिपंजर हो चला था। उत्तेजना के क्षणों में ही सम्मेलन ने निज़ाम से लोहा लेने का निर्णय किया और हैदराबाद सत्याग्रह प्रारम्भ हो गया।

सत्याग्रह के सम्बन्ध में महात्मा गाँधी ने कहा कि "आर्यसमाज ने सत्याग्रह का निर्णय कर बहुत बड़ी भूल की है। उसने अपनी पहली परीक्षा में ही हिमालय से टक्कर ले ली है।" एक अर्थ में उनका कहना ठीक भी था कि निज़ाम की ताकत से आर्य समाज के स्थान पर कोई और संस्था टक्कर लेती तो उसका असफल होना निश्चित था। यह

तो आर्यसमाज ही था जो इस अग्नि परीक्षा में सफल रहा। स्वामी स्वतंत्रानंद जी इस सत्याग्रह के "डिक्टेटर" (सर्वाधिकारी) निर्धारित हुए।

निज़ाम सरकार की नीति एक जगह के सत्याग्रहियों को अलग अलग रखने और कठोर दण्ड देने की थी। सत्याग्रहियों की एकता और मनोबल भंग करने के लिए सब प्रकार के हथकण्डे अपनाए गए। उनसे अत्यधिक कठोर श्रम कराया जाता था। चक्की पीसना, मिट्टी ढोना, पत्थर ढोना और पत्थर तोड़ने जैसे कामों में हर समय जुटाये रखा जाता था। हाथों में छाले पड़ जाते थे तो उनका उपचार करने की बजाए जेल के डाक्टर सुई से उन छालों को फोड़ दिया करते थे। खाने के लिए सड़ी हुई जुआर की सूखी रोटी दी जाती थी। उसके साथ दाल के नाम पर उबला हुआ पानी होता था जिसमें ग़ोता-लगाने पर भी दाल के दानों के दर्शन होना कठिन होता था। सत्याग्रहियों ने इतने भीषण कष्ट सहे कि बारह हज़ार सत्याग्रहियों का छः हजार मन वज़न घट गया। २० सेर वज़न प्रति व्यक्ति कम हो गया। इस पर भी आर्य सत्याग्रहियों ने हिम्मत नहीं हारी और तब तक निरंतर सत्याग्रह करते रहे जब तक कि निज़ाम झुक नहीं गया। अनेक व्यक्ति ऐसे थे जिन्होंने अपने बच्चों सहित सत्याग्रह किया और एक बार छोड़ दिये जाने पर दूसरी और तीसरी बार सत्याग्रह कर सफलता मिलने तक जेल में रहे। आर्य समाज ने असम्भव को सम्भव कर दिखाया। सर्वोच्च राष्ट्रीय नेताओं की दृष्टि में जो हिमालय था उसको झुकना पड़ा। प्रो. उत्तम चंद जी शरर भी इस आंदोलन के वीर सेनानी थे।

इस सत्याग्रह में बालकों ने भाग लिया, युवकों ने भाग लिया, ब्रह्मचारियों, वानप्रस्थियों, संन्यासियों, गृहस्थों सभी ने इसमें भाग लिया। यहां तक कि पंजाब हाईकोर्ट के भूतपूर्व चीफ़ जस्टिस श्री जी.डी. खोसला के पिता श्री मुरारी लाल जी खोसला, अमृतसर के रिटायर्ड डिस्ट्रिक्ट एंड सैशन जज ने भाग लिया। वे साधारण सत्याग्रहियों की तरह गिरफ़्तार होकर गुलबर्गा जेल पहुंच गए। लोकेषणा मुक्त व्यक्ति ऐसे ही होते हैं। अब कहाँ हैं ऐसे लोग?

हरियाणा के तेजस्वी संन्यासी स्वामी ओमानंद जी ने भी अपने सहयोगियों के साथ इस सत्याग्रह में भाग लेकर जेल की यातनाएँ सहन कीं।

(स्वामी ओमानंद अभिनंदन ग्रंथ से साभार)

मेरे श्रद्धेय मेरे आत्मीय

—रेणु आर्या

धन्य है वह माँ जिन्होंने ऐसे उत्तम पुत्र को जन्म दिया। धन्य है वह पत्नी जिसने उत्तम को और उत्तम बनने में सहयोग दिया और धन्य हैं वे पुत्र जिन्हें उत्तम जैसे पिता मिले व उत्तम बनने का मार्गदर्शन मिला।

बहू होने के नाते मैं भी अपने आपको धन्य मानती हूँ जिन्हें उत्तम जैसे श्वसुर मिले। विवाह के बाद पिता का घर छोड़ने के बाद मैंने अपने ऊपर इनका सदा पिता वाला वरद हस्त महसूस किया। कहा जाता है कि **"यस्य नार्यस्तु पूजन्ते रमन्ते तत्र देवता"** इस उक्ति को यथार्थ किया श्रद्धेय पिता उत्तम चन्द शरर जी व श्रद्धेया माता लाजवन्ती आर्या ने। नारी का इस परिवार में जितना सम्मान होता है उतना शायद आज के वातावरण में सपना लगे। बहू को बेटी समझना बल्कि मैं कहूँगी कि बेटी से भी ज़्यादा हमें प्यार मिला है। बहू की परेशानी में दुःख सुख में हमेशा साथ दिया गया है। मुझे याद है कि जब मेरा बैंक का टेस्ट था जिसमें मैं आज कार्यरत हूँ उस दिन इतनी तेज आँधी, तूफान व वर्षा थी लेकिन पति की नौकरी बाहर होने की वजह से आपने मेरा उत्साह कम न होने दिया व मेरे साथ चन्डीगढ़ गये उस क्षण को मैं आज भी याद करती हूँ तो मुझे आप पर गर्व होने लगता है व अपनी सारी प्रगति का श्रेय मैं आपको देती हूँ।

धार्मिक जीवन

आपको हमने सदा वेदों, उपनिषदों व धार्मिक आर्ष ग्रन्थों का निरन्तर स्वाध्याय करते देखा है। आप ऋषि दयानन्द के सच्चे अनुयायी हैं। धर्म के प्रति विश्वास, प्रतिदिन यज्ञ, सन्ध्या व आर्य समाज के सिद्धान्तों को अपने जीवन में उतारते हुए बड़ी नज़दीकी से देखा है। आर्य समाज के प्रचार केलिए हमने आपको हमेशा उत्साही देखा है। स्वास्थ्य ठीक न होने की वजह से बच्चों के मना करने पर आपका चुप हो जाना किसी से बात न करना आपकी नाराज़गी प्रदर्शित करता था लेकिन निमन्त्रण प्राप्त करते ही प्रचार के लिए निकल पड़ना और यह तर्क देते हुए कि यदि मैं वहाँ न पहुँचा तो कार्यक्रम के आयोजकों का उत्साह कम हो जाएगा एकदम कोई प्रबन्ध हो या न हो वे उदास हो

जाएँगे आदि बातें करते हुए चल देना उनकी लगन का सूचक है।

प्रचार के समय दक्षिणा के रूप में मिली धनराशि को आपने कभी महत्व नहीं दिया। आपने आर्य समाज को हमेशा अपनी माँ माना है व आर्यसमाज 'खैल बाज़ार' से आपने कभी भी दक्षिणा नहीं ली। आपका जीवन तपोमय है, यज्ञमय है, त्यागमय है। आप आर्य समाज पानीपत के भीष्म पितामह हैं।

सामाजिक जीवन

समाज में आपका बहुत मान-सम्मान है। जो लोग आपको जानते हैं वे श्रद्धा से आपका नाम लेते हैं। अगर पानीपत का कोई भी आर्यसमाजी बाहर किसी आर्य समाज में जाता है तो वह अपना परिचय शरर साहब के संदर्भ से कराता है। आपके प्रवचन इतने सरल व सारगर्भित व व्यावहारिक होते हैं कि कंठस्थ हो जाते हैं। समस्या आने पर हम आपके प्रवचनों द्वारा हल प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। विवाह से पहले मेरे पिता श्री ज्ञान चन्द आर्य जो आर्य समाज माडल टाऊन के मंत्री हैं, यौवनकाल से ही आपके उपदेश सुनते रहते थे व इतने प्रभावित हो जाते थे कि घर पर भी समय-समय पर आपका नाम लेते हुए हमें उपदेश सुनाते थे। उनकी आपके प्रति श्रद्धा देखते ही बनती है।

पारिवारिक जीवन

संयोगवश मेरा विवाह भी इस परिवार में आपके पुत्र राजेश जी से हुआ है, जिन्हें मैंने अपने पिता के पदचिह्नों पर चलते हुए पाया। इतने पितृभक्त पुत्र आज के समय में शायद गिनती में ही होंगे जो अपने प्रत्येक कार्य को अपने पिता की शान में बुलन्दी करने से जोड़ते हैं। वे आर्य समाज के प्रत्येक कार्य में बढ़-चढ़ कर भाग लेते हैं। ऐसे सुन्दर संस्कार आपने बच्चों में डाले। सभी पुत्र व पुत्रियां पितृभक्त हैं मातृभक्त हैं। आदरणीय सुरेश जी व वीरेन्द्र जी व राकेश जी व कान्ता बहन सभी पिता के बताये मार्गों पर चल रहे हैं व आर्यसमाज के प्रत्येक कार्यक्रम में बढ़-चढ़ कर भाग लेते हैं। पुत्री कान्ता ने भी अपने ससुराल में अपने पिता का नाम रोशन किया है जिस सहनशीलता से, स्वाभिमान से, बुद्धिपूर्वक व धैर्य से उसने हालात का मुकाबला किया वह एक साधारण इन्सान की पुत्री का धैर्य हो ही नहीं सकता। वह वास्तव में आप जैसे ओजस्वी तेजस्वी पिता की ही पुत्री का धैर्य हो सकता है।

संस्कृत हिन्दी व उर्दू के बारे में पूर्ण ज्ञान होने की वजह से बच्चों को आप समय-समय पर पढ़ाकर उनका मार्गदर्शन करते हैं व उनका ज्ञान बढ़ाते हैं। उन्हें भी

अपने दादा पर गर्व महसूस होता है। आपका बच्चों के प्रति स्नेह, बच्चों के प्रति विश्वास बहुत अधिक है। कई कारणों से कुछ बुजुर्ग अपने बच्चों से अपने राज़ छुपाते हैं व दूसरों पर विश्वास करके उन्हें अपने राज़ की सारी बातें बता देते हैं लेकिन यह महानता मैंने आपमें देखी कि आप अपना प्रत्येक राज़ अपने बेटों से बाँटते हैं। आपका मन ममतामय है। यदि बच्चा बाहर गया है और समय पर रात को घर नहीं आया तो रात-रात भर हमने आपको गायत्री मंत्र की माला जपते देखा है, आदि ऐसी अनेक बातें हैं जिससे आपके प्रति श्रद्धा और भी बढ़ जाती है।

आप के गुणों को लिखना मेरी क्षमता से बाहर की बात है। आप निश्छल, स्वाभिमानी, कोमल हृदय, संवेदनशील, कवि हृदय, गंभीर प्रवृत्ति, साहित्यिक विचारधारा व सात्विक विचारधारा वाले सहृदय व्यक्ति हैं।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के तत्वावधान में आपका अभिनन्दन करते हुए हमें अत्यधिक प्रसन्नता अनुभव हो रही है व हम स्वयं को गौरवान्वित महसूस कर रहे हैं। आपने अपने बच्चों को अपनी नाम रूपी धरोहर देकर हमें कृतार्थ किया है। हम गर्व से कह सकते हैं कि उत्तम चन्द शरर जी हमारे बुजुर्ग हैं। जैसे वृक्ष कोई लगाता है व फल कोई खाता है इसी प्रकार आपने तप त्याग व संयम से वृक्ष खड़ा कर दिया व फल हमारे खाने के लिए छोड़ दिए।

आपसे हमें मार्गदर्शन मिलता है व प्रेरणा भी मिलती है कि हम भी ऐसे कार्य करें जिससे हमारे बच्चे भी हमारे ऊपर गर्व महसूस करें। आज पहली बार मैं अपने मन की बात बता रही हूं कि मैंने आपके पोते का नाम उत्कर्ष आपसे प्रेरित होकर ही रखा ताकि वह भी अपने उत्तम दादा की तरह उत्कर्ष को छुए व आपका नाम रोशन करे।

अन्त में मैं इस घर की सभी बहुओं पुष्पा आर्या, सुनीता आर्या, शान्ति आर्या, नीलम आर्या व रेणु आर्या की तरफ़ से आपको शुभकामनाएँ देती हूँ व भगवान से प्रार्थना करती हूँ कि आप दीर्घायु हों व स्वस्थ रहें।

"तुम जियो हज़ारों साल
साल में दिन हो पचास हज़ार।"

—रेणु आर्या पत्नी श्री राजेश आर्य

आर्य समाज के सजग प्रहरी : प्रो. उत्तम चन्द 'शरर'

—वेद प्रकाश आर्य

आज समस्त आर्य जगत् में इस समाचार को जानकर काफी प्रसन्नता हुई कि माननीय प्रो. उत्तम चन्द शरर वेदों के उद्भट विद्वान, व्याकरण, दर्शन शास्त्रों के मर्मज्ञ, आर्य समाज और आर्य वीर दल के गौरव, मितभाषी तथा युवकों के हृदय सम्राट, महान कवि का सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के नेतृत्व में अभिनन्दन हो रहा है। मैं काफी छोटी आयु से उनसे परिचित हुआ और उन्हीं के कुशल नेतृत्व में आर्य वीर दल हरियाणा के मन्त्री पद तक पहुंच पाया। माननीय शरर जी आर्य समाज और आर्य वीर दल के केवल स्तंभ ही नहीं, बल्कि वैदिक धर्म के मर्मज्ञ विद्वान् एवं ऋषि दयानन्द के निष्ठावान सिपाही तथा प्रेरक कवि हैं।

कुशल नेतृत्व

हिन्दी सत्याग्रह में जत्थों का नेतृत्व किया और राष्ट्र भाषा हिन्दी के लिए जेल की यातनाएं भी सहन कीं। हैदराबाद सत्याग्रह में भी बढ़ चढ़ कर भाग लिया जिसके लिए उन्हें भारत सरकार ने सम्मानित करते हुए स्वतन्त्रता सेनानी का सम्मान दिया।

शास्त्रार्थ की चुनौती

लगभग १९५२ की बात है जब उन्होंने रोहतक में सबसे पहले स्वामी माधवाचार्य को जो दुर्गा भवन मन्दिर रोहतक में आर्य समाज के विरुद्ध जहर उगल रहा था, शास्त्रार्थ के लिए ललकारा और माधवाचार्य और उनके शिष्यों ने डर के मारे शरर जी को मारना चाहा तो उस समय रोहतक में प्रथम आर्य महासम्मेलन आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के तत्वावधान में आयोजित किया गया और उस समय पूरे संयुक्त पंजाब में आर्य समाज का जय-जयकार कराने का श्रेय माननीय शरर जी को ही जाता है।

सुयोग्य शिक्षक, बहुमुखी प्रतिभा

वैसे तो उनके जीवन के अनेक आयाम रहे हैं। वह शिक्षा क्षेत्र में रहते हुए लुधियाना व करनाल में युवा वर्ग को शिक्षित करने तथा वैदिक धर्म के प्रचार में सदैव संलग्न रहे। माननीय शरर जी आर्य समाज के कर्मठ दूरदर्शी तथा विलक्षण नेता भी हैं। वह इस बात को मानते हैं कि आर्य समाज के आन्दोलन को आगे बढ़ाने के लिए

'आर्य वीर दल' की अति आवश्यकता है। सन् १९२७ में आर्य समाज के युवा संगठन आर्य वीर दल की स्थापना की गई। इस दल के गठन का उद्देश्य आर्य समाज, आर्य संस्कृति एवं आर्य संगठनों की रक्षा, सेवा करना है। आर्य वीर दल के प्रमुख नायकों ने स्व. ओम प्रकाश त्यागी, पं. नरेन्द्र जी थे। स्व. पं. बाल दिवाकर हंस तथा वर्तमान में डॉ. देवव्रत आचार्य मुख्य हैं।

सुयोग्य संचालक

संयुक्त पंजाब के समय से ही आर्य वीर दल का संचालन माननीय प्रो. 'शरर' जी को दिया गया और उनके सहयोगी रहे स्व. डा. गणेश दास, स्व. प्रिं. मेला राम बर्क, प्रिं. वीरू राम जी, रामचन्द्र आर्य, प्रह्लाद राय जी, सत्यपाल आर्य, मलिक कोप राज जी, महाशय गुरुदत्त जी, यशपाल जी, जगदीश मित्र जी, गणेश दास सचदेव, पं. सुखदेव राज शास्त्री (करतारपुर), राणा रामसिंह, स्वामी सुरेन्द्रानन्द, जगदीश मधोक, शिवदत्त आर्य, बलदेव राज शास्त्री, स्व. आत्म प्रकाश जी, इन्द्रलाल जी, मतवाल चन्द्र, जगदीश वसु, प्रेम पकाश जी, मा. सुन्दर सिंह जी, ला. लक्ष्मण दास जी आर्य इत्यादि। संयुक्त पंजाब में प्रो. उत्तम चन्द शरर (संचालक) तथा श्री वीरू राम आर्य मन्त्री के नेतृत्व में ४ सम्मेलन, करनाल, गुड़गांव, अमृतसर तथा लुधियाना में किए गए थे। परन्तु हरियाणा बनने के बाद दल कार्यों में कुछ शिथिलता आ गई और लगभग सन् १९७० के आसपास वेश पार्टी के नेताओं स्वामी इन्द्रवेश, स्वामी अग्निवेश, शक्तिवेश तथा आदित्यवेश आदि पर लोगों को बहुत आशाएं दिखाई दीं। इन्होंने आर्य वीर दल के स्थान पर आर्य युवक परिषद पर अधिक बल दिया। आरम्भ में तो कुछ कार्य हुआ, परन्तु फिर वही ढाक के तीन पात।

संघर्षशील संगठनकर्त्ता

सन् १९८० में लाला लक्ष्मण दास जी आर्य (५ भाई सावुन वालों) ने प्रो. उत्तमचन्द शरर जी के साथ पुनः सक्रिय कार्य करने के लिए एक बैठक रोहतक में रखी जिसमें आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्यों (क्रियाकलापों) को देखते हुए आर्य वीर दल को पुनः खड़ा करने पर बल दिया। बैठक में श्री स्व. सतपाल आर्य पलवल, स्व. वीरभान महता (पलवल), अजीत कुमार आर्य पलवल, जगदीश मित्र (रोहतक) तथा मैं उपस्थित थे। माननीय शरर जी ने आर्य समाज के कार्यों को आगे बढ़ाने के लिए पुनः आर्य वीर दल के संचालक बनना स्वीकार किया और अजीत कुमार जी को मन्त्री तथा स्व. वीर भान महता जी को कोषाध्यक्ष नियुक्त कर दिया। उस समय कोष शून्य था। परन्तु ला.

लक्ष्मणदास आर्य भामाशाह बनकर दल केसाथ जुड़ गए उनका योगदान अविस्मरणीय है। शीघ्र ही पूरे हरियाणा में बैठकें आयोजित कर दल का गठन किया गया और ६ अन्य प्रान्तीय सम्मेलन रोहतक, फ़रीदाबाद, गुड़गाँव, कैथल, जींद, नरवाना इत्यादि में किए गयें जो आज तक याद किये जाते हैं। पूरे देश में आर्य वीर दल के कार्यों को आगे बढ़ाने का श्रेय माननीय प्रो. शरर जी को ही जाता है। रोहतक सम्मेलन पर जब उन्हें सिक्कों से तोला गया तो सभी पैसे दल को सौंप दिए। मेंने स्वयं उनके साथ मन्त्री के पद पर रहते हुए कार्य किया है।

पद लोलुप नहीं

उन्हें पद की कभी भी लालसा नहीं रही। जब दल का कार्य शिविरों और सम्मेलनों के द्वारा अपने पूरे यौवन पर था स्वयं अपने स्थान पर श्री उमेद सिंह शर्मा को संचालक नियुक्त करवा दिया और आज भी माननीय शरर जी आर्य वीर दल के संरक्षक पद पर रह कर मार्ग दर्शन कर रहे हैं।

उनके अभिनन्दन के अवसर पर मैं आर्य वीर दल हरियाणा की ओर से बधाई देता हूँ। प्रभु उन्हें दीर्घ आयु प्रदान करे और वे स्वस्थ रहें तथा आर्य वीर दल का सदैव मार्ग दर्शन करते रहें।

महामन्त्री, आर्य वीर दल हरियाणा

उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवान् यज्ञेन बोधय।
आयुः प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिं यजमानञ्च वर्धय॥

(यजु. ३४.५६)

महर्षि के दीवाने शिष्य : श्री शरर जी

—आचार्य भगवान देव 'चैतन्य'
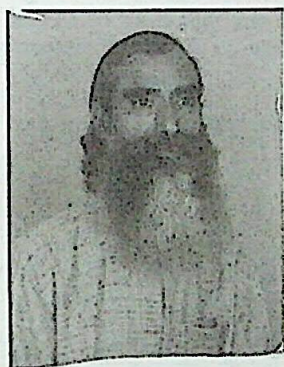
प्रो. उत्तम चन्द शरर जी के सुपुत्र हिमाचल प्रदेश में कार्य करते थे। उन्हीं दिनों श्री शरर जी से मेरी संक्षिप्त सी प्रथम भेंट हुई थी। फिर तो धीरे-धीरे उनके साथ व्यक्तिगत सम्बन्ध ही स्थापित हो गया। उन्हें सुनने का सुअवसर भी काफी बार मिला। आर्य प्रतिनिधि सभा हिमाचल प्रदेश की ओर से शिमला में आर्य समाज शताब्दी समारोह मनाया गया तो हमने श्री शरर जी को विशेष रूप से आमंत्रित किया था। वहां श्रोताओं ने उनके प्रवचनों के साथ-साथ कवि सम्मेलन में उनके काव्य का भी आनन्द लिया। उनके प्रवचन इतने प्रभावशाली होते थे कि शिमला में ही उनके प्रवचन को सुनने के बाद कुछ विद्वान श्रोता पाण्डाल से यह कहते हुए उठ गए कि शरर जी के बाद अब किसी और को नहीं सुनना है। ताकि उनके प्रवचन का प्रभाव बहुत देर तक स्थिर रह सके। दिल्ली में आर्य महासम्मेलन के अवसर पर आयोजित कवि सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए उन्होंने महर्षि दयानन्द जी पर जो पंक्तियां कही थीं वे आज तक भी मेरे मानस पटल पर अंकित हैं। वे वाणी और लेखनी के धनी हैं। उनके प्रवचनों जैसी सिद्धान्तवादिता, सरलता, प्रवाह तथा रोचकता बहुत कम वक्ताओं में देखने को मिलती है। उनके काव्य में भी यही गुण दिखाई देते हैं। उनकी विशेष विशेषता यह है कि वे महर्षि दयानन्द जी के अनन्य भक्त तथा दीवाने हैं। एक स्थान पर (सम्भवतः चण्डीगढ़) उन्हें दयानन्द पर बोलना था। उन्होंने प्रारम्भ में ही श्रोताओं तथा अधिकारियों को सूचित कर दिया मैं समय का विशेष ध्यान रखता हूँ मगर जब दयानन्द जी पर बोलना होता है तो मैं निश्चित रूप से समय का अतिक्रमण कर जाता हूं क्योंकि दयानन्द पर बोलते-बोलते मेरा मन ही नहीं भरता है। और फिर वे दयानन्द पर धारा प्रवाह बोलते गए तथा श्रोतागण मंत्रमुग्ध से होकर सुनते रहे। मन कर रहा था कि ये और

अधिक समय का अतिक्रमण कर लें तो अच्छा रहेगा। इतने बड़े विद्वान, लेखक एवं कवि होने के बावजूद भी ये कितने सहज और सरल हैं, इसका अनुभव इनसे मिलने वालों ने निश्चित रूप से किया होगा। अपनी चमकीली आंखों एवं होंठों पर विस्तृत होती हुई मुस्कान तथा मीठी वाणी द्वारा ये सहजता से ही किसी आगन्तुक को अपना बना लेते हैं। पानीपत की जनता तथा समस्त आर्यजगत् को ऐसे मनीषी का अभिनंदन करके गौरवान्वित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

८१/एस-४, सुन्दरनगर, जिला-मण्डी, हि.प्र.-१७४४०२

अकामो धीरो अमृतः स्वयंम्भू रसेन तृप्तो न कुतश्चनोनः।
तमेव विद्वान् न विभाय मृत्योरात्मानं धीरमजरं युवानम्॥

ऋ. १०.८.४४

अर्थात् वह प्रभु निष्काम, धैर्यवान् तथा ज्ञानी, अमर, स्वयंसत्ता वाला, आनंद से परिपूर्ण, हर प्रकार की न्यूनता से रहित, विकार से रहित है। उसी जरा रहित, सदैव युवा परमात्मा को जानने वाला मृत्यु-दुःख से भयभीत नहीं होता। मृत्यु दुःख से छूट कर अमर हो जाता है।

प्रोफ़ेसर उत्तम चन्द जी शरर एक आकर्षक व्यक्तित्व

—ज्ञानचन्द आर्य

हमारे देश से धर्म प्रचारकों का साया उठता जा रहा है और आज अंगुलियों पर गिनें तो उनकी संख्या लगभग नगण्य लगे। धर्म प्रचारक के रूप में शरर जी का योगदान हर दृष्टि से गौरवमय रहा है। वे धर्म को अपनी धमनियों में जीते रहे हैं और दूसरों को भी इस बात केलिए प्रेरित करते रहे हैं कि वैदिक धर्म को अपने जीवन का हिस्सा बनाने के प्रयत्न में लगे रहें। उन्होंने अपने जीवन में भारतवर्ष में तो वैदिक धर्म का प्रचार किया ही, परन्तु विदेशों में भी वैदिक धर्म का प्रचार करके धूम मचाई। उन्होंने स्वतन्त्रता संग्राम में भी बढ़ चढ़ कर भाग लिया। हिन्दी आन्दोलन में भी उनका योगदान प्रशंसनीय है। हैदराबाद आंदोलन में भी उनका योगदान अद्वितीय रहा है। सारांश यह है कि उनका सारा जीवन वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार हेतु अर्पित है। उनका भारतवर्ष तथा विदेशों में भी उल्लासपूर्वक सम्मान किया गया है। वे आर्य जगत् में चलती-फिरती आर्य समाज हैं। वेद की ज्योति को जगाए रखने के संदर्भ में उनकी जितनी प्रशंसा की जाए थोड़ी है। भगवान इनकी आयु लम्वी करे और सौ वर्ष से भी ऊपर जीएं ताकि संसार में वैदिक धर्म के प्रचार से अन्धकार दूर हो। इनके सुपुत्र श्री सुरेश जी, श्री राजेश जी, श्री राकेश जी, आर्य समाज के सक्रिय कार्यकर्ताओं में से हैं। कवि के शब्दों में इस प्रकार मैं कहना चाहता हूँ—

मुबारिक इन्हीं का है जीना जहाँ में
खिले फूल बन कर जो इस गुलसितां में
महक अपनी सबको दिए जा रहे हैं
हकीकत में यह ही जिए जा रहे हैं।

मन्त्री, आर्यसमाज माडल टाऊन, पानीपत

सरलता-ओजस्विता के प्रतिरूप : प्रो. उत्तमचंद 'शरर'

—इंदिरा खुराना

चेहरे पर दृढ़ संकल्प की छाप, आंखों में विश्वास, निश्चिन्त, संतुष्ट चेहरा, वाणी में स्पष्टवादिता, गेहुँआ रंग, तीखी नाक, मध्यम कद काठी, शरीर में कार्य करने का उत्साह, लगन, ये विशेषताएँ जिस व्यक्ति केव्यक्तित्व में शीशे की तरह चमकती हैं, वे हैं आर्य समाज के सिद्धांतों, आदर्शों एवं स्वामी दयानंद के 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' के उद्घोष के अथक प्रचारक प्रो. उत्तमचंद 'शरर'। वाणी में विनम्रता और सरल व्यवहार, उनसे बात करने वाले के मन पर अपनत्व का प्रभाव छोड़ता है। किसी भूल के संशोधन व मतभेद प्रकट करने में भी वाणी की विनम्रता ही उनका आधार होती है। उनसे परिचय प्राप्त कर, उनकेव्यक्तित्व को जानकर व्यक्ति बरबस यह अनुभव करता है कि बाहर से व्यक्तित्व जितना सरल सहज हो किन्तु भीतर से विद्वत्ता, अध्ययन की गहराई है। किसी के व्यक्तित्व में छिपे मोती को उनकेजीवन में गहरे उतरने पर ही पा सकते हैं। प्रो. उत्तम चन्द 'शरर' जी के जीवन में भी उनके व्यक्तित्व में छिपे मोती उनके जीवन की घटनाओं को जानकर प्राप्त हुए हैं।

१५ नवम्बर १९१६ में जि. मुज़फ़्फ़रगढ़ के सीतपुर गाँव में जन्मे बालक का पालन फूलों की सेज पर नहीं हुआ। बल्कि आम बच्चों की तरह जीवन से, परिवेश से सीखते हुए इनका जीवन परिपक्व हुआ। इनके पिताश्री मंगूराम बजाज कट्टर सनातनी विचारधारा के थे। देवी-देवताओं पर अगाध श्रद्धा व कर्मकाण्ड में पूरी निष्ठा। ऐसे परिवार में पले बालक उत्तमचंद ने सनातन धर्म के कर्मकाण्ड में व्याप्त रूढ़िवादिता और फैले अंधविश्वास का विरोध करते हुए आर्यसमाज के प्रति आकर्षित होने, प्रभावित होने, लीक से विद्रोह करने का पहला प्रयत्न किया था। धीरे-धीरे आर्यसमाज की जीवन पद्धति, विचारधारा, सिद्धांतों जिसमें कहीं भ्रम-भुलावे का कोई प्रश्न ही नहीं था, वैदिक जीवन संस्कृति जो कि ऋषि-मुनियों के श्रेष्ठ चिंतन का प्रतिरूप थी, से आकृष्ट होकर बालक बुद्धि ने यह निर्णय कर लिया कि आर्यसमाज ही श्रेष्ठ जीवन पद्धति है जहाँ दिमाग़ पूरा खुला रहता है, रूढ़िवाद, अंधविश्वास का झंखाड़ जहाँ जला

दिया गया है। किशोर वय में ही क्रांतिकारी बन गए। सबसे पहले अपने परिवार की मान्यताओं को जोड़ना कतई आसान नहीं होता फिर समाज की लीक से हटकर नई विचारधारा का प्रचार करना। प्रो. उत्तमचन्द जी के जीवन को मोड़ने में इनके चचेरे भाई देवदत्त जी का पूरा सहयोग रहा। देवदत्त घुमक्कड़ प्रकृति के युवा थे। उत्तमचंद और देवदत्त जी के स्वभाव और आन्तरिक प्रवृत्तियों में कहीं गहरी समानता थी कि उत्तचंद जी ने आजीवन घुमक्कड़ प्रवासी जीवन व्यतीत करते हुए आर्यसमाज के प्रचारक के काम को बखूबी निभाया।

आर्यसमाज को अपनाना और आर्यसमाज के सिद्धान्तों का अनथक प्रचारक बनना दोनों में बहुत अंतर है। प्रचारक बनने के लिए जीवन की महत्वाकांक्षाओं को त्यागना पड़ता है, परिवार संतान के मोह से ऊपर उठना पड़ता है, राजसी जीवन की इच्छा से मुंह मोड़ना पड़ता है, शरीर सुख का त्याग करना पड़ता है। ये सभी गुण उत्तमचंद जी के व्यक्तित्व में लक्षित होते हैं। इसके साथ नैतिक बल और साहस की भी आवश्यकता होती है। जब उत्तमचंद जी की आयु मात्र २३ वर्ष की थी, इन्होंने हैदराबाद आंदोलन में भाग लिया और छः महीने सश्रम कारावास भोगा। उस समय हैदराबाद राज्य पर निज़ाम हैदराबाद का शासन था। उसके राज्य में उसका आदेश उसका कानून होता था। ऐसे तानाशाह शासक के राज्य में आर्य समाज के झंडे गाड़ना आसान काम नहीं था। आर्य समाजके १२००० कार्यकर्त्ताओं की गिरफ्तारी हुई। सश्रम कारावास को हँसते-हँसते झेला। हैदराबाद कारावास ने आपके जीवन को और अधिक कष्ट सहिष्णु बना दिया। प्रो. उत्तम चन्द जी ने अपने अनुभव बताते हुए कहा कि जब वे कारावास से रिहा होकर वापिस घर जिला मुज़फ्फ़रगढ़ के गाँव सीतपुर रवाना हो रहे थे तो आगरे के पंडित विद्या वाचस्पति अत्यंत रुग्ण थे और घर जाने में अयोग्य थे। उन्हें स्वास्थ्य प्राप्त करने के लिए अभी जेल में रहना था। जब उत्तम चंद जी ने पूछा, आप अकेले कैसे रहेंगे? क्या मैं आपके लिए रुक जाऊं? इस पर विद्या वाचस्पति जी ने गीता का श्लोक उद्धरित करते हुए कहा,—**"नहि कल्याणकृत कश्चित दुर्गतिं तात गच्छति।"**

उत्तमचंद को इस श्लोक ने असीम मानसिक बल दिया, उसका उदाहरण थे अत्यंत रुग्ण विद्यावाचस्पति जी।

इनके जीवन में सीमित साधन थे। द्वितीय विश्वयुद्ध का दौर था। आर्थिक कठिनाइयाँ और मंदी का समय था। लेकिन इनके व्यक्तित्व में ईश्वर प्रदत्त एक मात्र पूँजी थी आत्मविश्वास और आत्मसम्मान।

इनकी रचित इन पंक्तियों में इनकी खुद्दारी स्पष्ट झलकती है—

मैं खुदी को बेच खुदा का भी तलबगार नहीं,
ज़र पे थूकूँ भी नहीं, जौके नज़र को खोकर'

–इन्द्रधनुष

उत्तमचन्द जी जब किशोर से युवा बने, उस समय देश में आज़ादी की लड़ाई भी पूरे यौवन पर थी। क्रांतिकारियों, सत्याग्रहियों ने, अंग्रेजी शासन से सिर, जान की बाजी लगा कर टक्कर ले रखी थी। उत्तमचंद जी के कवि मन, ने सब कवियों को आह्वान किया—

अब न मदमाते लजीले गीत गाओ,
आज तो हुंकार का युग आ गया है।
लेखनी से काम, कवि कब तक करोगे,
आज तो तलवार का युग आ गया है।

उन्होंने आर्यवीरों को प्रेरणा देते हुए लिखा है—

अब भी बात बना सकते हो
तुम चाहो तो उजड़े उपवन में वसंत फिर ला सकते हो।

उत्तमचन्द जी के व्यक्तित्व में एक और विशिष्टता मैंने देखी। वह है एक विश्वास, एक लक्ष्य की ओर बढ़ने की प्रबल ऊर्जा, उत्साह। तत्कालीन समाज में फैले विभिन्न मत-मतान्तरों में न उलझते हुए केवल स्वामी दयानन्द जी को अपना लाईट हाऊस मानकर, उनके बताए मार्ग पर आगे बढ़ना और भटकी बुद्धि वालों को राह दिखाना, उनके जीवन का उद्देश्य बन गया।

प्रो. उत्तम चन्द 'शरर' जी की उच्च शिक्षा भी संघर्ष की एक कहानी हैं। सीतपुर में संस्कृत प्राज्ञ शिक्षा प्राप्त शरर जी ने किसी तरह श्री प्रकाश किशोर की प्रेरणा से सन् १९५० में बी.ए. किया, फिर अल्प सुविधाओं के रहते हुए, हिन्दी एवं संस्कृत में एम.ए. की डिग्री हासिल की। हिन्दी-संस्कृत में एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त कर आर्य कॉलेज पानीपत के हिन्दी के प्राध्यापक पद पर पहुँचे।

आपने सन् १९५८ से सन् १९६८ तक आर्य कालिज पानीपत में प्राध्यापक के पद को सुशोभित किया। केवल अच्छे शिक्षक ही नहीं, अच्छे वक्ता भी हैं। वाणी में ओज है, हृदय को छूनेवाले भाव हैं। १९७८ में डी.ए.वी. कालेज फ़ार विमेन करनाल से सेवानिवृत्त होकर भी सेवा से निवृत्त नहीं हुए और आर्य समाज के अनथक प्रचारक

बने रहे। चाहे शरीर जर्जर होता गया लेकिन उत्साह में कमी नहीं आई। प्रो. उत्तम चंद जी के जीवन में सदा सादापन रहा। अपने सादेपन में वे संतुष्ट देव की तरह लगते हैं। कीमती वस्त्रों के आकर्षण से कोसों दूर। उनके जीवन की आवश्यकताएँ न्यूनतम रहीं। जब मैं उनके निवास ३०/८, कलन्दर चौक, पानीपत उनसे मिलने गई तो मुझे घर का वातावरण फर्नीचरों, परदों के दिखावे से दूर, केवल ईश्वर के बेइन्तहा खजाने हवा, रोशनी और शांति से भरपूर लगा और सादगी भरी इनकी जीवन शैली का परिचायक लगा।

प्रो. उत्तमचंद शरर के जीवन में उनकी धर्मपत्नी लाजवन्ती जी का अटूट साथ रहा। उन्होंने आर्थिक कष्ट झेलते हुए भी उनको मानसिक बल और सहारा प्रदान किया। इनका सारा जीवन प्रवासी रहा, लेकिन धर्मपत्नी लाजवन्ती जी ने किस तरह संतानों को पालते हुए परिवार की आर्थिक गाड़ी को खींचा, यह सच्ची भारतीय नारी का जींवत उदाहरण है। प्रो. उत्तम चन्द के व्यक्तित्व की धुरी कहीं न कहीं अर्धांगिनी के त्याग तपस्या पर ही टिकी हुई है। प्रो. उत्तमचंद जी के व्यक्तित्व के साथ उनकी पत्नी का व्यक्तित्व भी सदा अनुकरणीय रहेगा। जब प्रो. उत्तमचन्द जी हिन्दी आंदोलन में कूदे उस समय बच्चे छोटे थे। जब इन्हें गिरफ्तार किया गया छोटा बच्चा निमोनिया से ग्रस्त था। धर्मपत्नी ने मूकभाव से विदा किया और निश्चिंत रहने का मौन आश्वासन दिया। यह बात कहने, लिखने में बहुत सरल होती है, परन्तु सहने झेलने में बड़ी कठिन साबित होती है।

मैंने १६ वर्ष तक झरोखा का सम्पादन किया। मेरी पत्रिका 'झरोखा' में इनकी ओजस्वी कविताएँ छपती थीं। मैं इन्हें कवि, आर्यसमाज के प्रचारक के रूप में ही जानती थी। जब मैंने इनके जीवन से संबंधित घटनाओं, अनुभवों का इंटरव्यू लिया तो इनके व्यक्तित्व के अनदेखे मंज़र मेरी आंखों केसामने उभरने लगे। आज उनकी आयु ८५ वर्ष पार कर चुकी है लेकिन उनको देखकर आयु का अनुमान लगाना कठिन है। आज भी शरीर से स्वस्थ और मन से युवा हैं। बात करते समय आयु का व्यवधान विलीन हो जाता है और उनसे मिलने वाला समवयस्कता का अनुभव करने लगता है। शरर जी मिलने वाले शुभचिंतकों से कभी अपनी अस्वस्थता का ज़िक्र नहीं करते,—

देह मिली है दुःख भी मिलेगा,
सबने सहा है, तू भी सहेगा।

प्रत्येक संघर्षशील व्यक्ति का जीवन एक वृहद् उपन्यास के समान होता है। अध्ययन, अध्यापन, प्रचारक क्रांतिकारी आंदोलनकारी हर क्षेत्र में जुझारुपन। इन्होंने अपने जीवन का सदुपयोग किया। जीवन के एकान्त पलों, रात्रि की निस्तब्धता में इनका कवि मन लेखनी की पतवार लेकर भावों के सागर में निकल पड़ता होगा। जहाँ बुद्धि आत्मा के विस्तार का कोई अन्त नहीं। इनके भावों के फूल 'इन्द्रधनुष' फूल और कांटे' शिकवा-जवबा शिकवा, सामगान आदि में संकलित हैं। इनके असंख्य लेख जो अनेकों पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं, इनके बौद्धिक चिंतन का पर्याय हैं। 'इन्द्र-धनुष' इनका अंगीरस ओज है, जिसमें देश के युवाओं, आर्यवीरों को उद्बोधन है।

प्रो. उत्तमचंद 'शरर' जी के अभिनन्दन ग्रंथ में अपने मन के भावों को प्रकट करते हुए अपार संतोष का अनुभव हो रहा है।

वर्षों पानीपत रहते हुए भी 'शरर' जी के जीवन के अनछुए पहलुओं से अनभिज्ञ रही। मीडिया के प्रचार से दूर जिनका सारा जीवन कर्मशील रहा, संघर्षशील रहा। 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' का लक्ष्य लिए सतत उत्साही प्रवासी पथिक के रूप में उन्होंने वेद प्रचारक की भूमिका निभाई। आज आर्य समाज को आप जैसे निष्ठावान प्रचारक की आवश्यकता है। इस भौतिक चकाचौंध के युग में आर्यसमाजी युवक-युवतियाँ भटक गए हैं। उन्हें वैदिक संस्कृति की ओर मोड़ना आप जैसे सशक्त व्यक्तित्व के बूते की बात है। ऐसे कर्मयोगी के जीवन के बारे में लिखना सागर तट पर बैठकर सागर की विशालता का अनुमान लगाने जैसा है। लेकिन यही सुखद अनुभव है कि मैं सागर तट तक तो पहुँच पाई।

संपादिका-झरोखा, पूर्व अध्यक्षा हिन्दी विभाग
गाँधी आदर्श कॉलिज, समालखा (पानीपत)

मन की बात

—महेन्द्र धींगड़ा

नाम भी उतम काम भी उत्तम, शुद्ध और उत्तम विचार।
वह है उत्तमचन्द जी शरर, सादा व उत्तम परिवार॥

मानवतावादी, ऋषि दयानन्द के सिपाही, वेदों के विद्वान, वैदिक धर्म के प्रचारक, देशभक्त, गोभक्त, राष्ट्र भाषा हिन्दी के पुजारी, कवि, लेखक, सादगी परस्त, उत्तम वक्ता यह सब गुण यदि एक ही व्यक्ति में देखने हों तो मेरी जुबां पर एक ही नाम आएगा प्रो. उत्तम चन्द जी शरर।

सन् १९६९-७० में मैं लगभग १५ साल का था तब अपने चाचा श्री हरबंस लाल जी धींगड़ा (उस समय आर्य समाज खैल बाज़ार के प्रचार मंत्री) के साथ लगभग हर रविवार को साप्ताहिक सत्संग में आर्य समाज में जाता था। तब से लकर अब तक ३२ साल हो गए अभी तक भी मैं प्रो. उत्तमचन्द जी के प्रवचनों को सुन कर ऊबता नहीं। मन कहता है अगले रविवार भी सत्संग में उन्हीं का प्रवचन होना चाहिए। उनके हर प्रवचन में एक नवीनता सी होती है। एक अजीब सा आकर्षण है उनकी वाणी में, जो श्रोता को बाँध कर रखता है। वह बातों ही बातों में श्रोता को ऐसे आकर्षित कर लेते हैं जैसे लोहे को चुम्बक आकर्षित करता है। मुझ जैसे एक साधारण से व्यक्ति में वैदिक सिद्धान्तों में रुचि पैदा करने का काम वह बखूबी कर लेते हैं।

एक ऐसा व्यक्ति जो विदेशों में भी आर्य सिद्धान्तों का प्रचार कर के आया है फिर भी उसको अगर पानीपत के किसी छोटे से मोहल्ले या बाज़ार में प्रचार करने का मौका मिला तो उन्होंने उस मौके को भी कभी हाथ से नहीं जाने दिया और जम कर प्रचार किया। उनकी हमेशा यही कोशिश रही कि पानीपत के मोहल्ले-मोहल्ले में आर्य समाज का प्रचार होना चाहिए। मेरा सौभाग्य है कि मैं उस आर्य समाज का सदस्य हूँ जिसके वह संस्थापक सदस्य हैं। वह आर्य समाज खैल बाज़ार के जनक हैं और हम सब्र सदस्य उस समाज के पुत्र हैं। इस रिश्ते से भी हमें उनके नजदीक ज्यादा समय तक रहने का मौका मिलता है और कुछ सीखने का भी। वह हमारे प्रेरणास्रोत हैं।

मुझ जैसा साधारण व्यक्ति ऐसे महान् व्यक्ति के बारे में कुछ लिखे यह आसान नहीं है। वह सूर्य हैं तो मैं छोटा सा दीपक हूँ।

मेरा यह भी सौभाग्य है कि मैं प्रो. उत्तम चन्द शरर अभिनन्दन समारोह की स्वागत समिति का सदस्य हूँ। मैंने महसूस किया कि अपने मन की बात कहने का यह सुअवसर है जो प्रशंसा प्रो. जी कभी भी अपने मुख पर सुनना पसंद न करें वह वास्तविकता उनकी पीठ के पीछे लिख कर सुनाने का अवसर आ गया है। मगर समस्या यह है कि मैं एक लेखक तो हूं नहीं जो एक बड़ा सा लेख लिख दूँ। मैंने तो सिर्फ अपने मन में छिपी उनके प्रति अपनी भावनाओं को ही प्रकट किया है। परमपिता परमात्मा से प्रार्थना है कि वह दीर्घायु हों और स्वस्थ रहें ताकि वह इसी तरह आर्य समाज की सेवा व हमारा मार्गदर्शन करते रहें।

सदस्य आर्य समाज
खैल वाज़ार, पानीपत

"वेद के वचन उनके सत्य अर्थों में केवल उसी के द्वारा जाने जा सकते हैं जो स्वयं ऋषि या रहस्यवेत्ता योगी हो। अन्यों के प्रति मन्त्र अपने गुह्य ज्ञान को नहीं खोलते।"

—योगी अरविन्द घोष

सनातन धर्म महाविद्यालय, पानीपत की पत्रिका 'कलश' में प्रकाशित साक्षात्कार

कविकीर्ति

कवि शरर से भेंटवार्ता

संमान्यवर प्रोफ़ेसर उत्तम चन्द 'शरर' जी आर्य कालेज में हिन्दी-विभाग में प्राध्यापक रह चुके हैं और उन्होंने इस कालेज पर एक छाप छोड़ी है। उनके व्यक्तित्व, कृतित्त्व पर पूरे पानीपत को गर्व है। सच बात तो यह है कि यदि हरियाणा के जगमगाते हीरों की माला पिरोई जाए तो उसमें, उनके व्यक्तित्व को छोड़ा नहीं जा सकता। इसलिए प्रस्तुत है उनके साथ हुई भेंटवार्ता—

प्रश्न– मान्यवर! आपका जन्म कहाँ हुआ? आपके माता-पिता कौन थे?

प्रो. शरर जी : मेरा जन्म ग्राम सीतपुर ज़िला मुज़फ्फ़रगढ़ पाकिस्तान में एक ज़मींदार, हिन्दू-परिवार में हुआ। मेरे माता-पिता पुराने विचारों के सनातन-धर्मी हिन्दू थे और नये विचारों तथा सुधार प्रवृत्ति के विरोधी।

प्रश्न–आप हिन्दुस्तान कब आए? यहां पानीपत व हरियाणा के वे संस्मरण बताइए, जो आपको याद हों?

प्रो. शरर जी : मैं भारत में देश विभाजन के अवसर पर १९४७ (सितम्बर) में आया। भारत में आने पर पहले दस वर्ष रोहतक में बिताये। रोहतक को अपनी कर्मभूमि कहूँ तो अनुपयुक्त नहीं, यहीं पर मैंने अध्ययन, अध्यापन कार्य शुरू किया जिसके परिणामस्वरूप मैं एम.ए. (हिन्दी) कर पाया। पानीपत में आर्य कालेज में १९५८ में आना हुआ। एम.ए. करने के पश्चात भी मुझे शायद स्कूल में ही अध्यापन कार्य करना पड़ता यदि १९५७ में 'हिन्दी आन्दोलन' में मुझे जेल यात्रा का सौभाग्य न मिलता। जेल में आर्य कालेज, पानीपत की प्रबन्ध समिति के सदस्यों से हुई मुलाकात और आत्मीयता मुझे आर्य कालेज, पानीपत में ले आई।

प्रश्न–आर्य कालेज में रहते हुए आपने जो अनुभव किए, कृपया उन पर कुछ रोशनी डालें।

प्रो. शरर जी : आर्य कालेज, पानीपत में मुझे सौभाग्य से प्रो. योगेश्वर देव जी, प्रो. सुखदेव जी जैसे साथियों से मिलने का अवसर मिला। प्रो. योगेश्वर जी के साहित्यिक रुझान ने मुझे बरबस खींच लिया। इस बीच प्रो. दयानन्द भार्गव से आत्मीयता का सौभाग्य मिला, जिनकी कृपा तथा प्रेरणा से मैंने संस्कृत में एम.ए. की परीक्षा पास कर ली।

मेरी इस बौद्धिक उन्नति में जहां मेरे बन्धुओं का प्रेम कारण बना, वहाँ परमेश्वर की कृपा तथा मेरी उर्दू शायरी ने मुझे पूरी सहायता दी। रोहतक में उर्दू की एक कविता के छपने पर मुझे मकान एलॉट हो सका तथा डी.सी. के नाम एक दूसरी कविता डाक द्वारा भेजने पर मकान का अधिकार मिल पाया। उर्दू काव्य की रुचि मुझे प्रकाश भाई द्वारा बी.ए. तक पढ़ने में सहायता दे गई, क्योंकि प्रकाश जी उर्दू काव्य में गहरी रुचि रखते थे, सच तो यह है कियह सब ईश कृपा से नाटकीय ढंग से होता गया और मुझ जैसा नगण्य व्यक्ति जो दरिद्रता के बोझ तले पिस चुका था, समय पर कालेज का प्रोफ़ेसर बन गया। खुदा की देन है जिसको नसीब हो जाये।

प्रश्न–आपने कौन–कौन सी रचना हिन्दी व उर्दू में लिखी?

प्रो. शरर जी : मैंने उर्दू काव्य में 'फूल और काँटे' तथा हिन्दी में सामवेद के मन्त्रों का पद्यानुवाद 'सामगान' लिखा। इस केअतिरिक्त गद्य में भी 'चन्द गलत फ़हमियों का अज़ाला' नाम से एकपुस्तक आर्य समाज के सिद्धान्त पक्ष पर लिखी तथा 'वैदिक स्वर्ग' और 'जवाहिरे-जावेद' (पं. चमूपति जी) का हिन्दी अनुवाद लिखा जो प्रकाशित हो चुका है।

प्रश्न–आपकी सर्वश्रेष्ठ रचना कौन सी है?

प्रो. शरर जी : 'आर्य का शिकवा और जवाबे शिकवा' मेरी उर्दू नज़्म अत्यन्त लोकप्रिय हुई। डा. इकबाल ने 'मुसलिम का शिकवा' लिखा, उसी के अनुकरण पर कमर जलालाबादी ने 'हिन्दू का शिकवा' लिखा और मैंने 'आर्य का शिकवा' (उपालम्भ) लिखा। हिन्दी में फुटकर कविताएं लिखता रहा हूं जो सामयिक पत्रों में प्रकाशित होती रहती हैं। शिकवा का एक भाग देखिये, ईश्वर से उपालम्भ में कहा है—

> **"तू ही बतला कि तेरी धूम मचाई किसने?**
> **कल्बे मुलहिद में तेरी आग लगाई किसने?**
> **बुतकदों में शमे–तौहीद जलाई किसने?**
> **चढ़ के मिंबर पे ऋचा वेद की गाई किसने?**
> **हम ही दिवाने थे, अलमस्त थे, सैदाई थे**
> **और तो पेट के बन्दे या तमाशाई थे।"**

प्रश्न–'वैदिक साहित्य' की आज के जीवन में क्या प्रासंगिकता है? आप 'कलश' के पाठकों को क्या सन्देश देंगे?

प्रो. शरर जी : 'वैदिक साहित्य' प्रत्येक युग में जीवन का उच्चतम आदर्श प्रस्तुत करता है। मानव जीवन की उपयोगिता तथा सफलता वेदानुसार जीवन यापन में ही सम्भव है। वेद का वचन 'मनुर्भव' प्रत्येक युग में मानवता का सन्देशवाहक है। वर्तमान युग की समस्याओं का समाधान भी वेदों के अनुसार आचरण से सम्भव है। आर्थिक समस्या में "मा गृधः कस्यस्विद्धनम्' यह वेद वचन धन लिप्सा और इसकेलिए किए जाने वाले षड्यन्त्रों पर रोक लगाता है। जनसंख्या की वृद्धि का **"ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत"** ब्रह्मचय्र का सन्देश, पथ प्रदर्शक है। साम्प्रदायिकता की रोकथाम के लिए **"मित्रस्य चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्"** संसार के कलह शान्ति के लिए रामबाण सदृश है। यह सर्वथा सत्य है कि आज मानव के जीवन में अथवा राष्ट्रों के जीवन में बाधाएं वेद के विपरीत आचरण में ही पनपी हैं। और 'वैदिक साहित्य' का अध्ययन, मनन तथा आचरण ही इन समस्याओं का समाधान है, तभी ऋषि दयानन्द ने लिखा, "वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है, वेद का पढ़ना-पढ़ाना, सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।"

'कलश के पाठकों के लिए सन्देश **"चरैवेति-चरैवेति"** बढ़ते चलो बढ़ते चलो तथा अध्ययन द्वारा निज चरित्र को निखार कर भारत माता के सपूत कहलाने का गौरव प्राप्त करो। मत भूलो, आज का छात्र कल के राष्ट्र का कर्णधार एवं नेता है।

"देवस्य पश्य काव्यं न ममार न जीर्यति।" *(अथर्व. १०.८.३२)*

अर्थात् उस प्रभु के अमर काव्य वेद को देखो, यह न कभी नष्ट होता है और न कभी पुराना पड़ता है।

पारस मणि श्री शरर जी

—गुरुदत्त आर्य
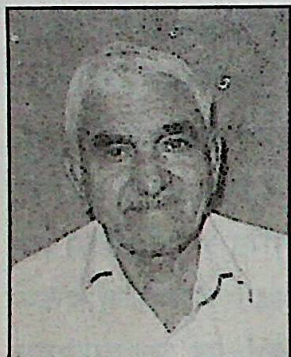
मेरा भाग्योदय हो रहा था कि मैं श्रद्धेय श्री उत्तम चंद शरर के सम्पर्क में आया और इनकी कृपा से आर्य समाज के सम्पर्क में आया। मैं मूलतः गुरुनानकपंथी परिवार से था और धर्मसाल (गुरुद्वारा) के ग्रंथी मेरे चाचा जी ने मेरा पालन पोषण किया था। मैं प्रतिदिन जन्म साखी का पाठ किया करता था। रोहतक में स्कूल की पढ़ाई के दिनों में एक दिन शाम सात-आठ बजे जब मैं जन्म साखी पढ़ रहा था तो अचानक शरर जी का आना हुआ। आर्य समाज बाबरा मोहल्ला रोहतक में नीचे के कमरो में हम थे और ऊपर के कमरे में शरर जी ठहरे थे। शरर जी नीचे आए और मेरे साथ चारपाई पर बैठ गए। मैं साखी का पाठ कर चुका। मैंने अंत में गाया—'मरदानिया! मीट अखां ते चल फुलां जगह।' शरर जी ने मुझे सचेत करते हुए कहा—आंखें बंद करने से कोई अपने गंतव्य पर नहीं पहुंच जाता। पीर उड़ते नहीं मुरीद उन्हें उड़ाया करते हैं। मुरीद पीरों के साथ झूठी सिद्धियां जोड़कर उनको सिद्ध बना देते हैं। वास्तव में ये बातें प्रकृति नियम के विरुद्ध हैं। आप वहक रहे हैं और यह उनके लूटने खाने का धंधा है। यह मनोवैज्ञानिक बात है कि आप कोई भी मन्नत मान लो वह ५०-६० प्रतिशत पूरी हो ही जाती है। हम सोचते हैं पीरों-महंतों के कारण हुई है। शरर जी की बातें मुझे अच्छी और सच्ची लगीं। अगले दिन उन्होंने मुझे भजनों की एक किताब भी दी और कहा कि भजन याद करके आर्य समाज के सत्संगों में सुनाया करो। बस मैं आर्य सत्संगों में आने-जाने लगा। इस तरह शरर जी मेरे लिए पारसमणि सिद्ध हुए। मेरे जीवन में एक नया मोड़ आया। मेरा भाग्योदय हुआ। मैंने आर्यवीर दल के शिविरों में प्रशिक्षण लेकर शिक्षक का कार्य १५ वर्ष तक किया। १९५७ में हिन्दी आंदोलन के सिलसिले में साढ़े पांच मास तक जेल में रहा। गोहाना रोड योग आश्रम के गुरु रामलाल भगवान होने का दंभ करते थे। शरर

जी ने जब उनको शास्त्रार्थ के लिए चुनौती दी तो पेट दर्द का बहाना कर शास्त्रार्थ के लिए नहीं आए। भगवान की कलई उन्हीं के एक भक्त, जो दर्जी का काम करता था, ने खोल दी और वह आर्य समाज के सत्संगों में आने लगा।

सनातन धर्म मन्दिर रोहतक में माधवाचार्य आर्य समाज पर अनर्गल टीका टिप्पणी किया करता था। शरर जी शास्त्रार्थ के लिए पहुंचे। शास्त्रार्थ तो क्या होना था स्वामी माधवाचार्य केइशारे पर उनके भक्तों ने शरर जी को उठाकर हवन कुंड में फैंक कर राह का कांटा निकालने की कुचेष्टा की। शरर जी के साथ आये उनके बलिष्ठ नौजवानों ने साहस करके उनको बचा लिया। यदि ये नौजवान साथ न होते तो अनर्थ ही हो जाना था। शरर जी के वस्त्र फट गए, शरीर में चोटें आईं। वे लहूलुहान हो गए। थाने में रिपोर्ट लिखाने गए तो वे उलटा हमें अपराधी ठहराने लगे कि हम उनके सम्मेलन में गड़बड़ करने गये थे। अगले दिन दयानंद मठ में आर्यों की सभा हुई। जवाव में आर्य महासम्मेलन झज्जर रोड पर करने का निश्चय किया गया। हरियाणा पंजाब में आक्रोश भड़क उठा। निश्चित तिथि पर रोहतक में बड़ा भारी जुलूस निकाला गया। आर्यजन का जैसे समुद्र उमड़ पड़ा। महा सम्मेलन हुआ। बड़े बड़े विद्वान पधारे। माधवाचार्य को शास्त्रार्थ के लिए चुनौती दी गई। कोई शास्त्रार्थ करने नहीं आया। सम्मेलन आर्य समाज केजय-जयकार के साथ सम्पन्न हो गया। यही जोश अगले वर्ष हिन्दी आंदोलन के समय काम आया। आर्य वीरों ने इस आंदोलन में बढ़ चढ़ कर भाग लिया। गिरफ्तारियां दीं, जेल में रहे।

भाव यह कि रोहतक वासियों के लिए शरर जी एक प्रबल प्रेरणा के स्रोत रहे और मेरे लिए तो पारसमणि तुल्य हैं कि अपने संसर्ग से उन्होंने मेरी निष्ठा का कायाकल्प कर दिया है। परमात्मा ऐसी विभूति को दीर्घायु और सुंदर स्वास्थ्य प्रदान करे, उन का यश-सौरभ दूर-दूर तक फैले।

प्रधाना मोहल्ला, रोहतक

प्रतिभा सम्पन्न सुकवि श्री शरर जी

—डॉ. सत्यपाल बेदार 'सरस'

कविता रसात्मक वाक्य विन्यास की चित्ताकर्षक रंगभूमि है। यह ऐसी विलक्षण विद्या है जिसका सीधा सम्बन्ध अन्तरात्मा से है। कल्पना और भावना द्वारा यह न केवल जीवन की व्याख्या प्रस्तुत करती है प्रत्युत जीवन की आलोचना भी करती है। श्रेष्ठ शब्दों को श्रेष्ठ क्रम में निबद्ध करना इसकी नैसर्गिक प्रवृत्ति है। उदात्त तत्त्वों से परिपूर्ण विचार-बिन्दुओं को संगीतात्मक स्वर प्रदान करना इसका कर्मक्षेत्र है। सत्यं-शिवं-सुन्दरम् के माध्यम से यह आत्मानुभूति और आत्माभिव्यक्ति की भावना स्थितियों को परितृप्त करती है। इसके रसास्वाद के समक्ष सभी लौकिक आनन्द फीके हैं। यही कारण है कि काव्यानन्द को लौकिक आनन्द न कहकर लोकोत्तर आनन्द की संज्ञा दी गई है। प्राचीन भारतीय मनीषा ने तो इसे "ब्रह्मानन्द-सहोदर" जैसी उच्चस्तरीय पदवी देकर अलौकिक आनन्द के समकक्ष तक घोषित कर दिया था।

आधुनिक युग में काव्य को ललित-कलाओं के अन्तर्गत पगिणित किया जाता है किन्तु भारतीय चिन्तनधारा इसे 'कला' न कहकर 'विद्या' का गौरव प्रदान करती है। इस चिन्तनधारा की दृष्टि में कला की गणना उपविद्या में होती है। अतः विद्या का स्थान कला से उच्चतर है। कविता वस्तुतः अन्तरात्मा की ऐसी सूक्ष्म और अनुभूति प्रधान विद्या है जिसे किसी विद्यालय, महाविद्यालय या विश्वविद्यालय में सिखाया नहीं जा सकता। संगीत, नृत्य, चित्रकला आदि सभी प्रकार की कलाओं के प्रशिक्षण-केन्द्र संसार में सर्वत्र विद्यमान हैं किन्तु काव्य-रचना के शिक्षणालयों का सदा अभाव ही रहा है। इसका मुख्य कारण यह है कि कवि पैदा होते हैं, बनाए नहीं जाते। आजीवन काव्य शास्त्र, छन्द शास्त्र और अलंकार शास्त्र पढ़ाने वाले विद्वज्जन भी जन्मजात प्रतिभा के अभाव में सुकवि होने का गौरव नहीं प्राप्त कर सकते। तभी तो कहा गया है—

नरत्वं दुर्लभं लोके, विद्यां तत्र सुदुर्लभा।
कवित्वं दुर्लभं तत्र, शक्तिस्तत्र सुदुर्लभा॥

सशक्त काव्य-लेखक में समर्थ होना निस्सन्देह अतीव दुर्लभ स्थिति है। ऐसी स्थिति किसी भी मनुष्य केलिए उसके जीवन की धन्यता है। प्रत्येक मनुष्य इस प्रकार की धन्यता प्राप्त नहीं कर सकता। ऐसी उच्चस्थिति बुनियादी तौर पर ईश्वर प्रदत्त प्रतिभा का

प्रतिफल होने के बावजूद बहुत कुछ सीमा तकसाधना-साध्य भी होती है। किसी सत्कवि का यह कथन अक्षरशः यथार्थ पर आधारित है—

खुश्क सेरों तने-शाइर का लहू होता है,
तब कहीं बनती है, इक मिस्रा-ए-तर की सूरत।

स्वतन्त्रता-संग्राम-सेनानी प्रोफ़ेसर उत्तमचन्द 'शरर' जन्मजात प्रतिभा सम्पन्न और साधनाशील सुकवि हैं। उनका काव्य संकलन—'इन्द्रधनुष' उनकेहिन्दी-उर्दू रचना-संसार की प्रतिनिधि कविताओं का प्रेरणादायक संग्रह है। प्रोफ़ेसर साहिब केवल लेखनी के ही नहीं, वाणी के भी धनी हैं। उन्होंने आदि मानव धर्म अर्थात् सत्य सनातन वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार पर अपनी लेखनी और वाणी—दोनों को न्यौछावर कर दिया है। महान अध्यात्मवादी और क्रान्तिकारी संस्था—'आर्यसमाज' के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द के प्रति वे विशेष रूप से श्रद्धावान हैं। उनकी लेखनी का कैसा ही वर्ण्य विषय क्यों न हो उसमें वे बड़ी सूझबूझ के साथ अपनी ऋषि-भक्ति और वैदिक-आस्था का कोई न कोई जीवन्त पहलू अवश्य पैदा कर लेते हैं। स्वयं उन्हीं के मुखारविन्द से श्रोताओं ने अनेक बार इस द्विपदी को सुना है—

उनवान बदल डालेंगे हम आप की ख़ातिर
हम जब भी कहेंगे, यही अफ़साना कहेंगे।

ऋषि-भक्ति से सम्बद्ध उनका निम्नलिखित मुक्तक भी अत्यन्त मार्मिक और कवित्त्वगुण सम्पन्न है—

फ़ल्सफ़ी समझें तेरे फ़ल्सफ़े की अ़ज़्मत को
नुक्ता-दाँ जाएँ तेरे नुक्तों की बारीकी में।
मैं तो इक शाइरे-नादाँ हूँ, यही समझा हूँ,
नूर बरसा गया तू रात की तारीकी में॥

वैदिक धर्म और आर्य समाज के प्रति समर्पित जीवन व्यतीत करने के कारण 'शरर' जी के व्यक्तित्व और कृतित्व में प्रभु-भक्ति, देश-भक्ति, समाज-सुधार, कुरीति-निवारण, राष्ट्रीयता और जन-जागरण की प्रवृत्तियाँ प्रभूत मात्रा में देखी जा सकती हैं। उन्होंने आर्य समाज के सभी प्रमुख आन्दोलनों में सक्रिय भाग लिया है। मात्र २३ वर्ष की अवस्था में वे हैदराबाद-सत्याग्रह में कूद पड़े थे। उनकी सर्वोत्कृष्ट काव्य-रचना—"आर्यों का शिकवा और जवाबे-शिकवा" उसी सत्याग्रह के दौरान लिखी गई अत्यन्त विचारोत्तेजक, प्रेरणाप्रद और मार्मिक कृति है। कवित्त्व-गुण-सम्पन्न इस कृति को निश्चय ही काव्यकार

का कीर्त्तिमान कहा जा सकता है जिसने यह कृति नहीं पढ़ी, वस्तुतः उसने 'शरर' जी को ही नहीं पढ़ा।

पंजाब के हिन्दी आन्दोलन में भी मान्य 'शरर' जी ने जेल-यात्रा की औ. अन्यायकारी शासकों को ललकार कर कहा—

तेरी जुर्रतों का ज़ालिम, कभी हम करें नज़ारा,
तू छिपा न अपना ख़ंजर, यह सँभाल भी खुदारा
तेरी बन्दिशों के अन्दर, जो जिया तो क्या जिया मैं,
मुझे ऐसी ज़िन्दगी से, कहीं मौत है गवारा
तू कहाँ समझ सकेगा, मेरे दिल की हसरतों को,
तुझे जामे-मै की ख़्वाहिश, मेरा ख़ूने-दिल सहारा
तेरी इशरतों की दुनिया, मुझे इज़्तराव पैहम,
मेरी ज़िन्दगी तलातुम, तेरी ज़िन्दगी किनारा

खड़ी बोली उर्दू की इन सशक्त पंक्तियों से सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि कविवर 'शरर' जी के धड़कते दिल में, क्रान्तिकारी भावनाओं का कितना प्रखर आवेग है। इस आवेग का परिचय उनकी खड़ी बोली हिन्दी की रचनाओं में भी सर्वत्र विद्यमान है। एक स्थल पर कवि को सम्बोधित करते हुए वे कहते हैं—

लेखनी से काम कवि! कब तक करोगे
आज तो तलवार का युग आ गया है।
जागरण का शंख बढ़कर फूँक दो तुम
जिसको सुन, पलकों से तन्द्रा भाग जाए
जिसकी ध्वनि भूकम्प को साकार कर दे
करवटें ले ले के कण-कण जाग जाए
जिस का स्वर रोमांच से भर दे धरा को
और हो विस्तीर्ण नभ जिससे निनादित
अब न मदमाते लजीले गीत गाओ
आज तो हुंकार का युग आ गया हे
लेखनी से काम कवि! कब तक करोगे
आज तो तलवार का युग आ गया है

आत्मगौरव और स्वाभिमान-रक्षा के प्रति काव्यकार कितना आकुल-व्याकुल है

उसका दिग्दर्शन उसकी इन पंक्तियों से हो जाता है—

मेरे मानस की अमर ज्योति, मेरे जीवन के अमर प्राण
तेरे बल-वैभव का न पार, तेरी विभूति का क्या बखान
तेरी भृकुटि को तना देख, रिपु दल थर-थर कम्पायमान
उठ जाग जाग रे स्वाभिमान
तू जागे तो जीवन जागे, तू सोए तो नर मृत समान
तू प्राणी का औदात्य रूप, तुझ बिन प्राणी केवल मसान
उठ जाग जाग रे स्वाभिमान

शोषण और अन्याय के विरोध में भी लेखक का स्वर यथेष्ट प्रखर है। इस सन्दर्भ में उदाहरण स्वरूप एक उर्दू मुक्तक देखिये—

कौन सी चीज़ है मजबूरे-नमू शीशे में
तुझ को मालूम है क्या पीता है तू शीशे में?
किसी ज़रदार का गर होता तो यह होता सफ़ेद
साफ मज़दूर का है सुर्ख लहू शीशे में

राष्ट्र के तथाकथित नेताओं की स्वार्थपरता, पदलोलुपता, निष्क्रियता और देशद्रोह के सजीव शब्द-चित्र भी इस संकलन में संगृहीत हैं। उनकी कतिपय रचनाएँ हास्य-व्यंग्य की चुटकियों से भरपूर भी हैं। उनमें 'लीडरनामा, सियासत और आर्यसमाजी, मेरी दुर्बलता और मिशिर जी' शीर्षक की कविताओं की गणना की जा सकती है।

डॉ. इकबाल का "फ़ल्सफ़ा-ए-खुदी" अर्थात् "स्वाभिमान का जीवन-दर्शन" 'शरर' जी को अत्यन्त प्रिय है। इस जीवन-दर्शन की अभिव्यक्ति उनके काव्य में विशेष रूप से हुई है। इस सन्दर्भ में कुछेक उदाहरण देखिये—

१. **इक़बाल सनाख़ाँ रहा जिस ज़ौक़े-खुदी का**
वह आज के शाइर को तो दरकार नहीं है
इस दौरे-तरक्की में खुशामद है बड़ा फन
जो इस से शनासा नहीं फ़नकार नहीं है

× × ×

२. **मेरे हमदम तू मेरे हाल पे अफ़सोस न कर**
जानता हूँ कि मैं तुझ सा कोई ज़रदार नहीं
उम्र फ़ाकों में गुज़र पाई है इनकार नहीं
पर मेरी वुसअ़ते-दिल से तू ख़बरदार नहीं
मैं खुदी बेच खुदा का भी तलबगार नहीं—मेरे हमदम....

२. मैं शबे-तार नहीं लूँगा सहर को खोकर
ज़र पे थूकूं भी नहीं जौ़के नज़र को खोकर
कैसे शबनम को खरीदूं मैं 'शरर' को खोकर
ख़ाक का तोदा बनूं सोज़े-जिगर को खोकर?

आन्दोलनों और संघर्षों की घन गरज के साथ-साथ लेखक कहीं कहीं कोमल-कान्त शब्दावली में अपनी सौंदर्यानुभूति को भी उजागर करता हुआ देखा गया है। इस दृष्टि से उनकी ग़ज़लें विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण हैं। इस प्रकार की कुछ द्विपदियाँ उदाहरण स्वरूप द्रष्टव्य हैं—

तजरुबा कहता है बेकार है उम्मीदे-वफ़ा
दिल की धड़कन का तकाज़ा है यक़ीं कर लीजे
हुज़ूर सैरे-चमन को न जाइए तनहा
नहीं है साथ कोई और तो शरर ही सही

×××

मेरे एहसास की दुनिया में उतर कर देखो
फिर न कहना कि कोई दर्द का मारा ही न था
माँग लाते कभी साकी से खुमारी हम भी
जौ़के खुद्दार को लेकिन यह गवारा ही न था
तेरी दुज़्दीदा-निगाही का हुआ जब से शिकार
दिल भी हाथों से गया जैसे हमारा ही न था
मुड़के देखा भी न इकबा़र कहाँ का रुकना
जैसे ज़ालिम को शरर हम ने पुकारा ही न था

×××

उनसे बात करने पर असलियत अयां होगी
यों तो शैख़ साहिब भी आदमी से लगते हैं।
क्या 'शरर' बयाँ कीजे उन की बात की लज़्ज़त
जिनके होंठ पर फ़िकरे शाइरी से लगते हैं

×××

इन ख़ाक के जर्रों को भी कदमों से नवाज़ो
लिल्लाह कभी भूल से निकलो तो इधर से
दिल तोड़ने वाली ये अदाएं नहीं अच्छी
खुल कर ज़रा कहिये जो शिकायत हो शरर से

सौंदर्यानुभूति के अतिरिक्त सामाजिक परिवेश की अन्य अनेक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति भी लेखक की ग़ज़लों में हुई है। उदाहरणार्थ—

हम खूब हैं वाकिफ़ तेरे ईमान से वाइज़
हम भी तो कभी वाकिफ़े-ईमान रहे हैं

ग़ज़लों की इतनी सशक्त और मार्भिक द्विपदियों के आलोक में यह प्रस्थापना विश्वास के साथ की जा सकती है कि कविरत्न 'शरर' जी मूलतः नज़्म (कविता) के शाइर होने के बावजूद ग़ज़ल के मैदान के भी शहसवार हैं। केवल इतना ही नहीं, उन्होंने गद्य-काव्य और पद्यात्मक अनुवाद-कला के क्षेत्र में भी अपनी प्रतिभा के जौहर दिखाए हैं। इस संकलन में काव्यकार द्वारा हिन्दी और उर्दू के परिनिष्ठित रूप की कविताओं के अतिरिक्त हिन्दुस्तानी शैली की ज़ोरदार कविताओं के रसास्वादन का सुयोग भी प्रदान किया गया है। उनके मुक्तकों की छटा भी कम आकर्षक नहीं है। मुसद्दस शैली (मिलिन्द पाद) का सौंदर्य देखना हो, तो इस दृष्टि से "आर्यों का शिकवा और जवावे-शिकवा" उनकी अद्वितीय रचना है। इसमें दरिया जैसा द्रवत्व और प्रवाह विद्यमान है। इसमें छन्द की कसावट, भाषा का लालित्य, उपमाओं की सटीकता, स्वाभाविक तुकान्त-योजना, समान्त-योजना और अलंकार-योजना देखते ही बनती है। भावपक्ष की दृष्टि से भी यह रचना उच्चस्तरीय है।

वीर रस-प्रधान काव्यकृति होने केकारण 'इन्द्रधनुष' का मूल स्वर "ओज" है, किन्तु ओज गुण के साथ-साथ इसमें माधुर्य और प्रसाद गुण की स्थितियाँ भी दृष्टिगोचर होती हैं। इस काव्य संकलन में कहीं भी अप्रतीति, कष्टार्थ, ग्राम्यत्व, अश्लीलत्व, अनुचितार्थ और निरर्थकता आदि काव्य-दोषों को स्थान नहीं मिला है। रचनाकार की दृष्टि यत्र तत्र सर्वत्र सोद्देश्य काव्य-रचना की रही है। वह काव्यकला को जीवन के लिये उपयोगी मानने में आस्थावान हैं। "कला कला के लिये" की स्थिति उसे स्वीकार्य नहीं है। उसके मतानुसार काव्य वह है जिसमें जीवनोपयोगी सन्देश हो, जो श्रोता अथवा पाठक को रसविभोर करने के साथ-साथ विकासोन्मुख कर सके और उसकी आत्मा को भी तेजोद्दीप्त कर दे।

"इन्द्रधनुष" में जिस प्रकार वर्ण्य विषयों और काव्य-विधाओं की विविधता के दर्शन होते हैं, उस प्रकार इन्द्रधनुष के लेखक के व्यक्तित्व के भी विविध आयाम हैं, जिन्हें विस्तार-भय से वर्णित नहीं किया जा रहा। उनके विषय में वर्षों पूर्व लिखित उर्दू के एक स्वरचित मुक्तक का उल्लेख कर मैं अपनी लेखनी को विराम दे रहा हूँ—

'शरर' साहब अजब मज्मूआ-ए-अज़्दाद हैं, यारो!
ख़यालो-ख़्वाब से करते हैं ये बेदारियाँ पैदा।
है इनमें चाँद की ठण्डक, तो सूरज की तमाज़त भी,
ये कर सकते हैं सर्द आहों से भी चिंगारियाँ पैदा

१७३, शारदा निकेतन, पीतमपुरा, दिल्ली-३४

❀ **"सात्विकता बढ़ाने अथवा खोई हुई सात्विकता लौटा लाने का एकमात्र साधन यज्ञ है।"**

❀ **"जो यज्ञ को छोड़ता है ईश्वर भी उसको दुःख भोगने के लिये छोड़ देता है।"**

एक निराला व्यक्तित्व : पूज्य शरर जी

—जगदीश चन्द्र मधोक
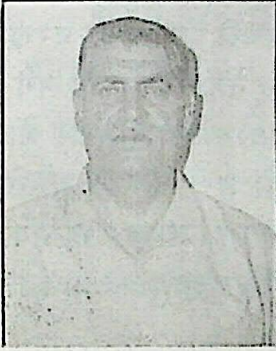
मुझे आर्य संस्कार तो पूज्य पिता जी स्व. श्री विशम्भर नाथ जी मधोक के चरण कमलों में बैठ कर प्राप्त हुए। सायं की संध्या एवं भजन वही कराया करते थे तथा समाज की कथाओं, उत्सवों एवं सत्संगों में जाने के लिए प्रेरित करते रहते थे। पर आर्य समाज की लगन, उसकेप्रति मिशन की भावना तथा उसके प्रचार-प्रसार के लिए अपने आपको अर्पित करने की भावना आर्यवीर दल से ही मिली। जिस का उस समय संचालन पूज्य शरर जी कर रहे थे। उस समय हरियाणा नहीं बना था। सारा पंजाब, हरियाणा एवं हिमाचल उनके कुशल संचालन में था। पहला आर्यवीर दल का सम्मेलन करनाल में हुआ पर वास्तव में इस सम्मेलन की सफलता के सूत्रधार पूज्य शरर जी ही रहे। उसके बाद गुड़गांव, लुधियाना, अमृतसर, रोहतक, यमुना नगर, कैथल आदि में इतने विशाल एवं सफल सम्मेलन उनके संचालन में हुए कि उस स्तर को प्राप्त करना अब एक चुनौती सी बन गई है। परमात्मा करे कि आर्यवीर के अधिकारी उस स्तर को प्राप्त करें पर वर्तमान हालात में यह सम्भव नहीं लग रहा। शरर जी की सी प्रतिभा, विवेक एवं आर्यजनों के मन मस्तिष्क पर पकड़ चाहिए। उन का शायराना अन्दाज़, उर्दू, फ़ारसी, संस्कृत एवं हिन्दी भाषा पर गहरी पकड़ तथा आर्य समाज के साहित्य व इतिहास का गहन अध्ययन तथा अद्‌भुत दीवानापन उनके व्यक्तित्व को निखार कर निराला बना देता था। अब आयु के बढ़ने तथा शक्ति के कुछ क्षीण होने के कारण वह ओज नहीं रहा पर उत्साह, भावना व लगन वैसी ही बनी हुई है। वहीं ऋषि के प्रति अगाध श्रद्धा, वही अन्दाज़ आज भी नज़र आता है।

शरर जी की एक और बात, जिसका मैं सदा कायल रहा हूं जिसे मैं बड़ी नजदीकी व बड़ी बारीकी से देखता रहा हूँ, वह है, उनका आत्मसंयम, आत्मनियंत्रण व समुन्दर सी गम्भीरता थी। विद्वान क्या साधारण कार्यकर्ता भी ज़रा अध्ययन कर लेने पर तथा थोड़ा सा समाज का कार्य कर लेने पर, बात बात पर आपे से बाहर हो जाता है। तू-तू मैं-मैं पर उतर आता है, पर एक नहीं, अनेक बार कार्य शैली पर गहरे मतभेद होने पर

भी मैंने शरर जी को कभी सौम्यता की सीमाएं पार करते नहीं देखा।

एक और निराली बात मैंने उनमें देखी। चाहे उनका भाषण आरम्भ में हो या सम्मेलन के बीच या अन्त में, जबकि बड़े-बड़े महारथी भी कई बार असफल हो जाते हैं, प्रभावहीन रह जाते हैं पर पूज्य उत्तमचन्द जी सदा 'उत्तम' ही रहे। अपनी निराली अदा, अपने शायराना अन्दाज़ एवं अपनी विद्वत्ता पूर्ण शैली से अपनी वात, गागर में सागर भर कर कह ही जाते हैं। किसी विद्वान ने अच्छे साहित्य, अच्छी पुस्तक की परख बताते हुए कहा कि जिसे बार-बार पढ़ने पर भी मन उकता न जाए वह नई ही नई लगे, वह अच्छी पुस्तक है। मैं तो कह सकता हूं कि जिसके भाषण को बार-बार सुनकर भी उत्तरोत्तर आनंद बढ़ता जाए वही, अच्छा वक्ता है। बचपन से हम शरर जी को सुनते आ रहे हैं अब ६० साल के हो रहे हैं पर उनका आकर्षण वैसा ही रहा। आज भी उनके नाम से श्रोता उमड़ पड़ते हैं। हम सब उनके सुन्दर स्वास्थ्य तथा चिर आयु की प्रार्थना करते हैं। हम जीवनपर्यन्त उनके ऋणी ही रहेंगे।

उपसंचालक, आर्य वीर दल हरियाणा
१७८/१३ एक्स. अर्वन एस्टेट, करनाल (हरियाणा)
दूरध्वनि : ०१८४-२२००८७१

"अपने मन में सदैव अच्छे विचारों की वाटिका लगाओ तो अच्छे विचार ही आमोद-प्रमोद के हेतु तुम्हारी हृदयरूपी वाटिका में आते जाते रहेंगे और यदि वहाँ तुम कुविचारों का कूड़ा-करकट जमने दोगे तो वहाँ उन्हीं का ढेर लग जाएगा।"

श्री उत्तमचन्द 'शरर' : एक अग्नीषोम व्यक्तित्व

—डा. वागीश आचार्य

श्रद्धेय श्री उत्तमचन्द जी 'शरर' से मेरा परिचय बाद में हुआ, किन्तु उनकी काव्य प्रतिभा की सुगन्ध उससे बहुत पूर्व मुझ तक पहुँची। न्यौराई इन्टर कॉलेज, एटा के प्रधानाचार्य डा. सुरेशचन्द्र शास्त्री को एक ग़ज़ल गुनगुनाते हुये सुना तो उसके मार्मिक शब्द सुनकर मैंने बड़ी उत्कण्ठा से पूछा कि यह किन की लिखी हुई है? डा. सुरेश चन्द्र जी से पहली बार उनके नाम और उनकी कविता से मेरा परिचय हुआ, तब मैं अलीगढ़ के वार्ष्णेय डिग्री कॉलेज में, संस्कृत एम.ए. का छात्र था। साहित्य में अभिरुचि होने के कारण उपन्यास, काव्य, साहित्य तथा कभी कभी उर्दू शायरी भी मेरे अध्ययन का विषय बन जाती थी। उर्दू के कठिन शब्दों वाली शायरी नापसन्द रही। शरर जी की वह ग़ज़ल बहुत अच्छी लगी पर उन के उपनाम "शरर" के अर्थ के बारे में जिज्ञासा बनी रही। वर्षों बाद आर्यसमाज आलमबाग लखनऊ के वार्षिकोत्सव पर माननीय "शरर" जी के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ, और मैंने डा. सुरेश जी से सुनी हुई उनकी ग़ज़ल की कुछ पंक्तियाँ उन्हें सुनाईं तो आश्चर्यमिश्रित प्रसन्नता से उन्होंने पूछा कि ये ग़ज़ल आपको कैसे मिली? मैंने कहा कि इंग्लिश के प्रसिद्ध कवि यीट्स ने लिखा है कि किसी कवि या कलाकार को बेहद सन्तोष और प्रसन्नता तब होती है जब वह यह पाता है कि उसका परिचय पाने से पहले लोग उस की कला से परिचित हो चुके हैं, उसके कहीं पहुँचने से पहले उसकी प्रतिभा की सुगन्ध वहाँ पहुँच चुकी होती है। तभी उनसे ही मैंने उनके उपनाम 'शरर' का अर्थ जाना। "शरर" का अर्थ होता है चिंगारी, अग्निस्फुलिंग! उनके व्यक्तित्व में, व्यवहार में अत्यन्त सादगी, विनम्रता और सरलता है, किन्तु उनकी वाणी की ओजस्विता अग्नि की तरह हृदय के अन्धकार को ध्वस्त करने में समर्थ हैं। वस्तुतः वे अग्नि और सोम के साक्षात् समन्वय हैं। उनकी कविताएं अग्निस्फुलिंग की भाँति हैं। जैसे एक छोटी सी चिंगारी भी हज़ारों क्विंटल कूड़े, घास, फूस को अकेले जलाने में समर्थ है, अग्नि की छोटी सी एक किरण जैसे घोर अंधकार की समाप्ति का हेतु है वैसे

ही उनके काव्य की एक एक पंक्ति हृदय को उदबुद्ध कर देती है। जैसे उत्कृष्ट वे कवि हैं वैसे ही अद्‌भुत वक्ता हैं। उन्होंने अपनी दोनों प्रतिभाओं से सुदीर्घ समय तक आर्य समाज की सेवा की है। वे हम सब के वन्दनीय हैं, श्रद्धा के पात्र हैं। अन्त में मैं केवल एक बात कहना चाहूंगा, यदि उन्होंने आर्यसमाज के मंच से एक भी भाषण न दिया होता या एक भी काव्यपंक्ति न लिखी होती किन्तु बस सत्यार्थ प्रकाश के सम्बन्ध में जो चार पंक्तियाँ कही हैं सिर्फ वही लिखी होतीं तो केवल उन चार पंक्तियों की गरिमा, सौन्दर्य और महत्त्व इतना अधिक है कि आग की चिंगारी की तरह सत्य को उसके ज्वलन्त रूप में कम शब्दों में सीधे हृदय में उतार देने वाले श्रेष्ठ कवि और वक्ता के रूप में हमारे लिए वरेण्य और वन्दनीय हो जाते हैं! उनकी ये चार पंक्तियाँ इस सन्दर्भ में हैं कि लोग ऋषि दयानन्द की और सत्यार्थप्रकाश की इसलिये आलोचना करते हैं कि उन्होंने दूसरे मत मतान्तरों की आलोचना की है। वे लोग न तो सत्यार्थ प्रकाश में की गयी उस आलोचना का तर्क पूर्ण उत्तर देते हैं और न उन असत्य और अज्ञान पूर्ण बातों का सुधार करते हैं जिन गलत बातों का खण्डन किया है, किन्तु सत्यार्थ प्रकाश, ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज की केवल इसलिये निन्दा करते हैं कि उन्होंने दूसरों की ग़लत बातों का खण्डन किया है तो क्या ग़लत को ग़लत कहना ग़लत है? तो इस सन्दर्भ में शरर जी की चार पंक्तियाँ याद कर लें और जहाँ भी ऐसी बात कही जा रही हो उन्हें सुना दें—

आईना चेहरे के सब दाग़ दिखा देता है,

उस की फ़ितरत का तक़ाज़ा है ये शिकवा कैसा!

आप सत्यार्थ की तनक़ीद से नाराज़ न हों,

अपने चेहरे को ही धो डालिये, गुस्सा कैसा?

प्रधानाचार्य, आर्ष गुरुकुल एटा

आर्य समाज शिवाजी कालोनी (रोहतक) के संस्थापक : प्रो. शरर

—जगदीश मित्र, रोहतक

देश विभाजन के बाद रोहतक में मेरा सम्पर्क १९५० में शरर जी से हुआ। उस समय आपने आर्य स्कूल में अध्यापक के रूप में पढ़ाना शुरू किया था। तत्पश्चात् आपने प्रभाकर पास की और बाद में एम.ए. किया और फिर डब्बल एम.ए. किया।

सन् १९५१ में स्व. श्री गणेश दास जी के साथ व स्व. श्री परमानन्द जी विद्यार्थी के साथ मिलकर आर्य समाज कालेज विभाग की स्थापना की। उसके बाद आर्य समाज में आर्य कुमार सभा की स्थापना करके मेरे सुपुर्द कर दी।

प्रातःकाल आर्य समाज की ओर से प्रभातफेरी करवाते थे। दुर्गामन्दिर रोहतक में पं. माधवाचार्य जी आया करते थे। वह आर्य समाज के काफ़ी खिलाफ़ थे। आर्य समाज को सदैव शास्त्रार्थ करने की चुनौती दिया करते थे। शरर जी प्रतिदिन आर्य समाज में प्रचार किया करते थे। जब माधवाचार्य की चुनौती के बारे में सुना तो उनसे रहा न गया। उन्होंने आर्य कुमार सभा के बच्चों को बुलाकर, उर्दू में लिखकर, आर्य कुमारों को कहा—जाओ यह दुर्गाभवन के दरवाजे पर लगा आओ। जब दुर्गाभवन वालों को पता चला कि इश्तिहार शास्त्रार्थ करने के लिये लग गये हैं। तो माधवाचार्य ने शास्त्रार्थ की चुनौती स्वीकार कर ली। शास्त्रार्थ करने के लिये शरर जी अपने साथ, श्री मामचन्द जी, श्री दीनानाथ जी, श्री धर्मपाल जी, चौ. भरत सिंह जी, मुझे व कई अन्य साथियों को लेकर दुर्गामन्दिर में पहुँचे तो वहां शास्त्रार्थ तो क्या होना था, श्री शरर जी को मारने की पूरी तैयारी कर रखी थी। एक बड़ा सा हवन कुण्ड बनवा रखा था। उसमें अग्नि जल रही थी। श्री शरर जी को पकड़ कर हवन कुंड में डाल देने का प्रयास किया गया। शरर जी के साथियों ने, जो पहलवान थे, शरर जी को बचा लिया। यह सारी बात पूरे हरियाणा में आग की तरह फैल गई। जब आर्य प्रतिनिधि सभा को पता चला तो उन्होंने बहुत बड़ा सम्मेलन रोहतक में किया। उसमें लगभग २५००० आर्य समाजी आये। एक विशाल जुलूस पूरे शहर में निकाला गया और

पौराणिकों को पुनः शास्त्रार्थ करने की चुनौती दी गई। पौराणिक घबरा कर कहने लगे, यह शरर नहीं अग्नि है। यह बात सन् १९५६ की है। उसके बाद आर्य समाज की ओर से हिन्दी आन्दोलन चला। उसमें श्री शरर जी ने बढ़-चढ़ कर भाग लिया। और सत्याग्रह में गये। शरर जी प्रचार करने के धुनी थे। आर्य प्रतिनिधि सभा प्रचार करने में ढीली पड़ गई थी। तब शरर जी ने मुझसे तथा सेठ लक्ष्मण दास (५ भाई साबुन वाले) के साथ विचार करके सन् १९८० में हरियाणा में पुनः 'आर्य वीर दल' की स्थापना की। उस समय रोहतक 'आर्य वीर दल' बड़े जोरों से कार्य करने लगा। सेठ लक्ष्मणदास ने कहा कि आर्य वीर दल के नाम से सम्मेलन करो, धन का सहयोग मैं दूंगा। शरर जी को हरियाणा आर्य वीर दल का संचालक नियुक्त किया गया। पहला सम्मेलन रोहतक में किया गया। शरर जी को सिक्कों से तोला गया। शरर जी कई साल तक आर्यवीर दल के संचालक रहे। आर्य वीर दल की सूचनायें देश के कोने-कोने में पहुँचाने के लिये आर्य वीर विजय नामक पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ किया। पं. लेखराम स्मृति में "आर्य वीर विजय" बड़े जोरों से चल रही है। आपने शिवाजी कालोनी आर्य समाज की स्थापना की। प्रचार के लिये शिवाजी कालोनी तीन किलोमीटर चल कर जाते थे। आर्य समाज रोहतक में हर माह प्रचार के लिये बाहर से विद्वान बुलाते थे। जिसमें पं. शान्तिप्रकाश जी, पं. रामचन्द्र देहलवी, पं. अमर सिंह जी, पं. ओमप्रकाश खतोली वाले, प्रकाशवीर शास्त्री, कंवर सुखलाल आर्य मुसाफिर, स्वामी विद्यानन्द विजय जी को बुलाकर प्रचार करवाते थे।

शरर जी जब पाकिस्तान में थे तो आप हैदराबाद में सत्याग्रह में गये थे। जब आप हैदराबाद के निज़ाम के जुल्म की कथा सुनाते थे तो रोंगटे खड़े हो जाते थे। हैदराबाद सत्याग्रह में भाग लेने के कारण आपको स्वतन्त्रता सैनानी के रूप में सम्मानित किया गया। अब भी आपमें आर्यसमाज प्रचार की धुन बरकरार है।

रोहतक से आप आर्य कालेज पानीपत गये। पानीपत से आर्य कालेज लुधियाना गये। वहां २ साल व्यतीत करने के पश्चात् आप डी.ए.वी. कालेज करनाल आ गये। सन् १९७५ में आप डी.ए.वी. कालेज फ़ार विमेन करनाल से सेवानिवृत्त हुये। शरर जी ने बंद पड़े आर्य समाजों के द्वार खोल प्रचार किया। पानीपत वाले 'रोहतक के मुकुट' शरर जी को छीन कर ले गये। शरर जी रोहतक वालों को अनाथ कर पानीपत चले गये। हम सारी रात रोते रहे व पौराणिकों ने घी के दिये जलाये कि शरर जी जैसा कार्यकर्ता यहां से पानीपत चला गया। दुर्गभवन के महंत स्वामी गुरुचरण मंच पर संभल कर बोलते थे, डरते थे फिर से आग बरसाने लगे।

हम ईश्वर से शरर जी की लम्बी आयु की करबद्ध प्रार्थना करते हैं।

A humble tribute to Sh. `Sharar' Ji

N.N. Arya
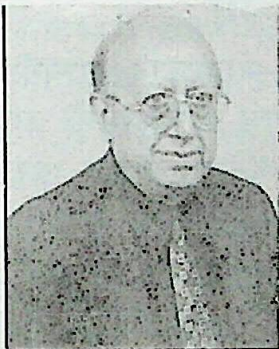
Sometimes back, it came to my notice that our respected Prof. Uttam Chand Sharar Ji is going to be felicitated and a samiti had been formed to put into print the achievements of the above greatman, who with God's grace is still amongst us and spreading his fragrance and that of the teachings of Maharishi Dayanand Saraswati every where.

My late father, Dr. Narayan Datt Vidyalankar was a member of the Managing Committee of Arya College Panipat, for few years, and who in his own right was himself a Scholar in Sanskrit and a pandit on Arya Samaj's feelings after having been baptised on the feet of Swami Shradhanand Ji for 14 yrs. in Gurukul Kangri was a great fan of Prof. Shararji. He was so impressed with the Oratory and masterly writings of Shararji that he would never miss an opportunity to listen to Prof. Sharar whenever there is an occasion for Sh. Sharar Ji to speak.

His books were read by my father with great interest. We were also induced to listen to Prof. Sharar and we loved to hear him speak.

Every one knows how Prof. Sharar was initiated to participate in the freedom struggle and also how he contributed to the spread of Hindi, through his exchortions to students and to the general public. Prof. Sharar has left his lasting imprints in the Arya College, Panipat where he taught and in the history of Arya Samaj in general. I feel greatful to God that this great man is still with us. He deserves all the reverence as a dedicated soldier of Arya Samaj and as a patriotic citizen of this country. I wish him long life and pray for the success of the efforts of commemoration samiti.

Sd/-

(Narender Nath Arya

Chief Executive Engr, NIGERIA

at present 816, M/T Panipat

धुन के धनी श्री उत्तमचंद शरर जी

—जीवनानंद सरस्वती

भारत विभाजन से पूर्व पंजाब नामक प्रान्त में आर्यसमाज (वैदिक धर्म) का सर्वाधिक प्रचार था। उस प्रान्त के भी दो महामण्डलों (कमिश्नरियों) लाहौर और मुलतान में देववाणी (संस्कृत) के अनेक विद्वान् अपनी योग्यता के कारण भारत माता को गौरवान्वित करते थे। उस मुसलिम बहुल प्रदेश में आर्यों (हिन्दुओं) की पूरी धाक थी। वैदिक विद्वान्, आध्यात्मिक स्तर में उच्चतम महात्मा, धुन के धनी वीर पुरुष, शास्त्रार्थ महारथी अद्वितीय वक्ता एवं क्रान्तिकारी कवि तथा गीत-संगीत के कलाकार उस प्रदेश की शोभा को बढ़ा रहे थे। ऐसे बहुगुण सम्पन्न व्यक्तियों में "श्री उत्तमचन्द शरर" का नाम अग्रणी ही है।

जीवन के प्रारंभिक काल (यौवन) में पाकिस्तान बनने से पूर्व आपने सर्वप्रथम हैदराबाद के धर्मयुद्ध (सत्याग्रह) में सम्मिलित होकर अपनी वीरता का परिचय दिया। केवल मिडल पास होते हुए आपने (पाकिस्तान छोड़ने के बाद) उच्च शिक्षा के क्षेत्र में बी.ए., प्रभाकर और हिन्दी और संस्कृत विषयों में स्नातकोत्तर (एम.ए.) की उपाधियां प्राप्त कीं। यह आपकी शिक्षा के प्रति रुचि और अध्यवसाय का प्रमाण है।

केवल इतना ही नहीं, शिक्षा के प्रचार-प्रसार की लगन से आपने पहले विद्यालय के अध्यापक और बाद में महाविद्यालय के प्राध्यापक पद को सुशोभित किया। इसी बीच आपने परमात्मा की प्रदत्त प्रतिभा से कवि और अच्छे उपदेशक (वक्ता) का रूप ले लिया। जनसाधारण को अपनी ओजस्वी वाणी से तथा निराश और हताश लोगों को क्रान्तिकारी कवित्व से उत्साह एवं साहस प्रदान किया। साथ ही धर्म-विमुख लोगों को धार्मिक उपदेशों से वास्तविक मार्ग दर्शाया।

हिन्दी और उर्दू भाषाओं के सुलझे हुए कवि होने के कारण अनेक कवि सम्मेलनों में कविता वाचन से श्रोताजनों को मुग्ध करते रहे और कई कवि सम्मेलनों में अध्यक्ष पद को भी सुशोभित करते रहे।

हरियाणा प्रान्तीय आर्य वीर दल के अध्यक्ष पद पर रह कर अनेक वर्षों तक आर्य युवकों का ऐसा निर्माण किया कि आज तक आर्य समाज के सभी बड़े-बड़े उत्सवों एवं महासम्मेलनों में हरियाणा के आर्यवीर सैनिक ही व्यवस्था की बागडोर संभालते हैं।

यहां तक कि हिन्दी रक्षा सत्याग्रह तथा गोहत्या विरोधी अभियान में अनेकों आर्यवीरों के साथ आपने बढ़-चढ़ कर भाग लिया और अपने "शरर" उपनाम के अनुरूप क्रान्तिकारी कविताओं के माध्यम से सभी आन्दोलनों को गति प्रदान की।

"सादा जीवन उच्च विचार" की प्रतिमूर्ति श्री शरर जी बहुगुणी प्रतिभा के धनी होने के कारण आदर्श शिक्षक, उपदेशक, वीर सत्याग्रही, मार्गदर्शक और क्रान्तिकारी कवि के रूप में हमारे सम्मुख हैं। इस बात का हमें गर्व है, बल्कि अपनी जन्म भूमि के एक अमूल्य रत्न-समान हमारे सम्मान के पात्र हैं। सच तो यह है कि आप महामानव-मणिमाला में सम्मिलित होकर भारतमाता की शोभा में चार चाँद लगा रहे हैं। अतः हम आपके दीर्घायुष्य एवं सुस्वास्थ्य के लिए परमात्मा से प्रार्थना करते हैं।

वैदिक भक्ति साधन आश्रम, रोहतक

❀ **"जो प्रचार करते समय दुःख से डरता है वह ऋषि भक्ति से शून्य प्रतीत होता है।"**

❀ **"जिनकी संतानों के आगे उत्तम आदर्श नहीं होता, पूर्वजों की गौरवगाथा का जिनमें मान नहीं होता और जो आदर्शहीन साधारण व्यक्तियों जैसे बन जाते हैं, उनकी जाति व समाज का इतिहास नष्ट हो जाता है साथ ही उनका गौरव, ज्ञान और सत्ता भी।"**

❀ **"जो निश्चय किया है करते चलो, संसार की निंदा-स्तुति की ओर ध्यान न दो।"**

श्रद्धेय उत्तम चन्द 'शरर' जी

—चन्द्रभानु आर्य
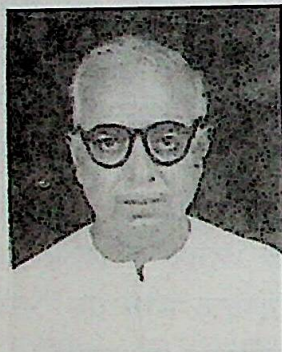
यों मैं जब सातवीं-आठवीं कक्षाओं का विद्यार्थी था, जब मैं सोनीपत में रहता था, तभी स्व. हकीम नन्दलाल जी कमरा (जतोई वाले) के प्रभाव से मेरा आर्य समाज मे पहला-पहला परिचय हुआ था। इसके बाद मैं मई जून, १९६३ में स्नातक होने तक लगभग साप्ताहिक सत्संगों में तथा वार्षिक अधिवेशनों में एक श्रद्धालु, जिज्ञासु तथा ध्यानमग्न श्रोता-दर्शक के नाते जाता ही रहा।

मेरा जन्म १ जनवरी, १९४३ शनिवार को उसी सीतपुर गाँव-कस्बे की धरती पर हुआ, जहाँ श्रद्धेय उत्तमचन्द जी बजाज अवतरित हुए थ। उन्हें भी शैशव तथा बचपन में मुल्तानी/सिरायकी बोली की मिठास महसूस हुई थी, मैं भी अपने पूज्य दादा तथा श्रद्धेया दादी माँ की छत्रछाया पर्यन्त दिल की बात कहने के लिये मुल्तानी/अलीपुरी का शैदा बना रहा। उत्तमचन्द जी बड़े होकर उर्दू, संस्कृत तथा हिन्दी के प्रगल्भ वक्ता, प्रबुद्ध विद्वान् तथा प्रभविष्णु कवि सिद्ध हुए। इन्हीं दिनों में उनके कविरूप ने 'वजाज' को परे कर 'शरर' को अपना लिया। अब वह घर-बाहर, देश-परदेश, हर जगह 'शरर' है। उनमें और मुझमें लगभग एक पूरी पीढ़ी का अन्तराल है। उन्होंने हिन्दी सवसे अन्त में पढ़ी, पहल उर्दू से की, मध्य में संस्कृत केविद्यार्थी हुए। मैंने हिन्दी, पंजावी, अंग्रेजी केबाद संस्कृत अध्ययन की ओर ध्यान दिया। मेरे युग तक उर्दू पुरानी पीढ़ी की भाषा हो गई थी।

दो अक्टूबर, १९६५, पुनः शनिवार, मेरी शादी हुई और मैं अनायास श्री उत्तम चन्द शरर केपरिवार से जुड़ गया। शरर जी के छोटे, चचेरे भाई देवदत्त जी बजाज, मेरी पत्नी कान्ता के इकलौते फूफा, बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी हैं—यायावर वृत्ति के घुमक्कड़, वहुश्रुत, बहुपठित संस्मरण-कथा शैलियों के सिद्ध वक्ता, अद्भुत स्मरण शक्ति के स्वामी। वह बात-वात में अपने ज्येष्ठ भ्राता शरर जी का न केवल नामोल्लेख करते, अपितु मुक्तकण्ठ से विरुदावली गाते रहते थे। मेरे मन में शरर जी का दर्शन करने की उत्कण्ठा उत्तरोत्तर बढ़ती गई।

शरर जी भी आजीवन वरेण्य प्राध्यापक रहे, मैं भी सेवा काल के अथ से इति तक प्राध्यापक रहा। वह हिन्दी-संस्कृत दोनों भाषाओं के प्रकाण्ड पण्डित थे, मैं केवल हिन्दी तक सीमित रहा। उनकी कर्मभूमि आर्य महाविद्यालय पानीपत रही, मैं शासकीय सेवा में होने के कारण नगर-नगर भटकने के लिये अभिशप्त था। १९७६ में मैं राजकीय शिक्षा महाविद्यालय भिवानी से जुड़ गया था। उसी साल मेरा भाग्योदय हुआ, एक प्रवचन सत्र के दौरान आर्य समाज कृष्णा कालोनी, भिवानी में पहली बार मैंने अपने श्रद्धेय को देखा-सुना-समझा-पहचाना और मैं अनायास धन्य-धन्य हो उठा। मैं वैसे ही निहाल हो गया, जैसे स्वा. दयानन्द को गुरु विरजानन्द मिल गए हों, जैसे अशफ़ाक़ उल्ला ख़ाँ को रामप्रसाद बिस्मिल मिल गए हों, जैसे नरेन्द्रदत्त को स्वामी रामकृष्ण परमहंस मिल गए हों।

मैंने आर्यसमाज, राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ तथा राजनीति के मंचों से एक से बढ़कर एक वक्ताओं/उपदेशकों/प्रचारकों को सुना है। मुझे किसी भी विद्वान वक्ता को सुनते हुए, उसे वक्तृत्वकला की कसौटी पर कसना अच्छा लगता है। मेरी उस कसौटी पर बिरले ही व्यक्ति खरे उतरते हैं, मैं केवल उन्हीं के प्रति श्रद्धा भावना से भर जाता हूँ और आजीवन उन्हें सुनते रहने के लिये व्यग्र रहता हूँ, उत्कण्ठित रहता हूँ, प्रयत्नशील रहता हूँ। आर्य समाज के मंच से प्रायः कट्टर प्रवृत्ति के, एकदेशीय अध्येता, कटुता की सीमा तक खण्डनप्रिय, तार्किक, श्रद्धाभक्ति विहीन वक्ता ही गरजते-लरज़ते, दहाड़ते-चिंघाड़ते हुए मिलते हैं। वे प्रायः मण्डन तथा खण्डन करते हुए अतिरंजना शैली के शिकार हो जाते हैं। श्री उत्तमचन्द 'शरर' के प्रवचन इन समस्त उपरिवर्णित सीमाओं का अतिक्रमण करने वाले रहे—उनके प्रवचनों में संयत खण्डन-मण्डन अनिवार्यतः रहता। उनके प्रवचन सुनते हुए श्रद्धा भक्ति तो जागती पर तर्क का दामन भी नहीं छूटता। उनके प्रवचनों में बौद्धिक तत्व भी रहता, साहित्यिक रसों का नवोन्मेष भी रहता, मस्तिष्क रमता रहता, मन झूमता रहता। उनके प्रवचनों में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल सा ललित, भाव-विचारयुक्त गद्य भी सतत प्रवाही होता और बीच बीच में शेरो-शायरी की मिठास, काव्यांशों का कलकलनाद तथा श्लोकों का मधुरम् मधुरम् भाव भी रहता। उनके प्रवचनों पर पूर्व पीढ़ी के बुजुर्ग भी जान छिड़कते, नई पीढ़ी के नौजवान भी फ़िदा होते, पुरुष भी हुंकार भरते और महिलाएँ भी हुलसती रहतीं। वह किसी भी आर्य समाज के

वार्षिक अधिवेशन के अन्तिम सत्र तक की अप्रतिम सफलता के असंदिग्ध ध्वजवाहक होते। उनको सुनना मानो अपने आप को बड़भागी श्रोता मानकर फूला नहीं समाना।

श्री उत्तम चन्द शरर उस पीढ़ी के आर्य हैं, जब कोर्ट कचहरी में गीता पर हाथ रखकर शपथ लेना और "मैं आर्य समाजी हूँ" कहना एक समान था। उस पीढ़ी के लिये माँ की लोरी से संन्यास की दीक्षा तक और 'अ' अर्जुन—'आ' आचार्य की वर्णमाला से डी.लिट् के शोध ग्रंथ पर्यन्त एकमेव उद्देश्य, तथ्य, निष्कर्ष, सिद्धि सब कुछ आर्य समाज था। यही कारण है कि हैदराबाद आन्दोलन से हिन्दी और गऊ रक्षा आन्दोलन तक, आर्य कुमार सभा से आर्य वीर दल पर्यन्त और अजमेर से टंकारा तक करतारपुर से मुम्बई तक श्री उत्तम चन्द शरर सदा और सर्वत्र अपनी उपस्थिति दर्ज कराते रहे। अभिन्न और अविभाज्य अंग बने रहे।

मेरी यह मान्यता है किउनका अभिनन्दन करने में आर्यसमाज ने अक्षम्य विलम्ब कर दिया है। हमारी सामाजिक मान्यताओं के अन्तर्गत प्रायः अपने वरेण्य व्यक्तियों का अभिनन्दन साठ (षष्ठिपूर्ति) या पचहत्तर (अमृत महोत्सव) या पचासी (पञ्चाशीति चन्द्रोदय) या सौ वर्ष (जन्मशती) की अवस्था/के अवसरों पर किया जाता है। सौ वर्षों की आयु प्राप्त होने के बाद तो प्रत्येक जन्मदिन स्वयं में सामाजिक महोत्सव हो जाता है। इस दृष्टि से हमारी आर्य संस्थाएं प्रथम तीन (रेखांकित) अवसर तो हाथ से निकालने का अपराध (?) कर चुकी हैं। यह भी सचमुच प्रसन्नता एवं सौभाग्य का प्रसंग है कि विलम्ब से ही सही, हम आर्यों तथा हमारी आर्य संस्थाओं को अपने प्रथम और पुनीत कर्त्तव्य का स्मरण तो हुआ। हम जागे तो सही। मेरा अखण्ड विश्वास है कि उनके अभिनन्दन ग्रंथ में रची बसी उनकी जीवन गाथा को पढ़-सुन कर नई पीढ़ी का वैसे ही कायाकल्प/मनस्कल्प होगा जैसे सत्यार्थ प्रकाश को पढ़कर पण्डित लेखराम आर्य मुसाफ़िर का रूपान्तरण हो गया था।

पूर्व प्राध्यापक तथा (वर्तमान) सम्पादक-न्यामती पत्रिका

३३८, सेक्टर ७सी, फ़रीदाबाद-१२१००६ (हरियाणा)

दूरध्वनि : ०१२९-२२४४३४४, २३०५८६५

एक प्रेरक जीवन

विमल वधावन

प्रो. उत्तम चन्द शरर जी का व्यक्तित्व समूचे आर्य जगत् में एक सुपरिचित व्यक्तित्व है। १९१६ में जन्में शरर जी का नाम एक सुप्रसिद्ध वैदिक विद्वान के रूप में जाना जाता है।

श्री शरर जी ने अपने जीवन के विगत् ८६ वर्षों में भरपूर सेवा की हे। आर्यसमाज के प्रत्येक आन्दोलन में शरर जी का सहयोग रहा।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के आह्वान पर जब कभी भी कोई कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ उसमें शरर जी का सहयोग दिखाई देता है। शरर जी की सेवाओं के लिए उन्हें समय-समय पर आर्यसमाज की विभिन्न संस्थाओं द्वारा कई सम्मान प्रदान किए जा चुके हैं। इसी प्रकार राज्य सरकार तथा केन्द्र सरकार के द्वारा भी शरर जी ने कई बार सम्मान प्राप्त किया है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा आर्यसमाज की स्थापना स्वयं अपने आपमें एक आन्दोलन था। शरर जी अपने जीवन के बाल्यकाल से लेकर अब तक इस आन्दोलन से सदा घनिष्ठता पूर्वक जुड़े रहे हैं। केवल मात्र इसी तथ्य से उनकी आत्मा के संस्कार दिखाई देते हैं। आर्यसमाज से जुड़े रहकर उन्होंने न कवेल अपना जीवन ही वैदिक धर्मी बनाए रखा अपितु अपने प्रवचनों के माध्यम से हज़ारों की संख्या में आर्यों को प्रेरित करते रहे और मार्गदर्शन देते रहे।

आर्यसमाज की परम्परा बलिदान की परम्परा है। आर्यसमाज का इतिहास बलिदानियों के नामों से भरा पड़ा है। प्रो. उत्तम चन्द शरर जी सच्चे मायने में आर्यसमाज के इतिहास के साथ जुड़े रहे हैं। उनका सम्पूर्ण जीवन और उनके संकल्प आर्यसमाज की भावी पीढ़ी के लिए एक सच्चा आदर्श बन सकते हैं।

प्रो. उत्तम चन्द शरर जी का निःस्वार्थ जीवन हम सब आर्यों की महान प्रेरणा बने। परमपिता परमात्मा से प्रार्थना है कि शरर जी स्वस्थ और निरोग रहते हुए दीर्घायु प्राप्त करें।

वरिष्ठ उपप्रधान, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

प्रो. शरर—एक निराला व्यक्तित्व

—डॉ. रामप्रकाश

प्रो. उत्तमचन्द शरर आर्यसमाज के गौरव हैं, लब्ध प्रतिष्ठित कवि एवं लेखक हैं, मनमोहक वक्ता हैं, सीधे सरल स्पष्ट व्यक्ति हैं। मेरे लिए बड़े भाई हैं। मेरे बड़े भाई श्री बीरूराम आर्य तथा मैंने उनके साथ मिलकर लम्बे समय तक आर्यसमाज और विशेषकर आर्यवीर दल का कार्य किया है। उन दिनों की मधुर स्मृतियाँ जीवन की अमूल्य निधि हैं।

शरर जी की ऋषि भक्ति, सिद्धान्त प्रियता, आर्यसमाज के प्रति समर्पण अनुकरणीय है। चाहे कुछ भी परिस्थितियाँ रहीं, मैंने कभी उनका सिद्धान्तों में विश्वास डोलता हुआ नहीं पाया। आर्य समाज से कभी अपने लिए न कुछ चाहा, न उम्मीदें सँजोईं। इसीलिए उनके मन में कभी निराशा का भाव पैदा नहीं हुआ।

शरर जी का उर्दू, हिन्दी, संस्कृत पर समान अधिकार है। उनकी कलम में जादू है। जो लिखते हैं, वह मुहावरा बन जाता है। शब्द चयन अद्भुत है। बहुत अच्छे कवि हैं। आज उनके मुकाबले का आर्यसमाज में कोई कवि दिखाई नहीं पड़ता। एक-एक शब्द में सिद्धान्तों की गहराई व्याप्त है। दिल की गहराई से बोलते हैं और प्रत्येक शब्द श्रोता के दिल में घर बना लेता है। उन्हें सुनते हुए कभी जी नहीं भरता। उन्होंने जो भी लिखा, अनुवाद किया—उसकी तुलना नहीं। योग्यता में वे दूसरे चमूपति हैं।

शरर जी में कई ऐसे गुण हैं जो आजकल के नेताओं में प्रायः देखने को नहीं मिलते। उन्हें साथियों से प्यार है, सुख-दुःख के साथी हैं। सबसे बड़ी बात यह है कि वे अन्दर-बाहर से एक हैं। कोई दिखावा नहीं है। बन-ठन कर कृत्रिमता के साथ मंचासीन होना उनके स्वभाव का हिस्सा नहीं है। वे नेता हैं, अभिनेता नहीं। कभी अपनी बात साथियों पर थोपते नहीं हैं।

एकविद्वान् वक्ता के रूप में उनकी ख्याति समस्त भारत में है परन्तु पंजाब-हरियाणा में आर्य वीर दल के माध्यम से उन द्वारा किया गया कार्य भुलाया नहीं जा सकता। उनके नेतृत्व में करनाल, गुड़गाँवां, लुधियाना और अमृतसर आदि में आयोजित आर्य वीर दल के सम्मेलन बेजोड़ थे। आर्य समाज के सभी नेता एवं विद्वान् अपने सभी मतभेद भुला कर इन सम्मेलनों में एक झण्डे के नीचे खड़े दिखाई देते थे। ये सम्मेलन समूचे आर्य

समाज को दिशा देते थे। आर्यवीर दल के माध्यम से जो नवयुवक तब तैयार हुए, वे आज तक आर्यसमाज की सेवा में रत हैं—इससे बढ़ कर शरर जी के लिए सन्तोष का विषय क्या हो सकता है?

शरर जी एक निष्कपट व्यक्ति हैं। उन्हें साथियों की निन्दा-चुगली करने में कभी रस नहीं आया। मित्र के लिए कभी घटिया सोचा नहीं। यदि किसी के कहने से कभी किसी के बारे में कोई अन्यथा धारणा बना ली तो स्थिति स्पष्ट हो जाने पर स्वयं कह देते थे—'भई! मैंने क्यों आपके बारे में ऐसा सोच लिया था। आप तो ऐसे नहीं हो। मैं ही भूल कर रहा था।' कहाँ मिलेंगे ऐसे लोग?

शरर जी की वाणी बोलती है, कलम बोलती है पर इससे अधिक उनका जीवन बोलता है। वे एक ऐसे पुष्प हैं जो समूचे उपवन की शोभा हैं। हम जैसे सामान्य व्यक्ति उनके साथी रहने पर स्वयं को गौरवान्वित महसूस करते हैं। आर्य समाज भी शरर जैसे रत्न को पाकर धन्य है। परमात्मा मौन तपस्वी को लम्बी आयु दे, सुखी जीवन दे—इस पुनीत अवसर पर यही कामना है।

पूर्व मंत्री, हरियाणा तथा
पूर्व उपकुलपति कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र

"स्वस्थ रहने का राजमार्ग यही है कि यौवन में खूब खाओ, दौड़ो, भागो, व्यायाम और परिश्रम करो। वृद्धावस्था में कम खाओ, कम सोओ, धीरे चलो और चिंतन करो।"

आर्य समाज के कुशल वक्ता श्री 'शरर' जी

—धर्मवीर भाटिया

हम बड़े भाग्यशाली हैं कि हमारे देश में स्वामी दयानन्द जी ने जन्म लिया। हम वैदिक धर्मी थे मगर हम इस धर्म को भूल चुके थे। अनेक अन्धविश्वासों में फंसे हुए थे—इन्हेंाने हमें फिर से वैदिक मार्ग दिखाया। इन्होंने एक पीढ़ी को तैयार किया—इस पीढ़ी में स्वामी श्रद्धानन्द जी, पं. लेखराम जी, श्री गुरुदत्त विद्यार्थी आदि थे। सूची बड़ी लम्बी है—इन महानुभावों में से हमनें किसी के भी दर्शन नहीं किये। पुस्तकों द्वारा इनके बारे में जाना।

हमारा सौभाग्य है कि हमारे नगर पानीपत में महर्षि दयानन्द सरस्वती के अनन्य सैनिक श्री उत्तमचन्द शरर का स्थायी निवास है। जब जब भी मुझे 'शरर' जी को सुनने का अवसर मिलता है मुझे ऐसा लगता है कि ये ऊपर बताई गई पीढ़ी में से ही हैं। ये वैदिक ज्ञान के भंडार हैं। इनकी भाषण देने की शैली बड़ी सरल है। हमेशा प्रभाव छोड़ती है। श्रोता इनके भाषणों को सुनकर तृप्त नहीं होते—वे और अधिक सुनना चाहते हैं और अधिक। विषयों की इनके पास कमी नहीं—भाषण देने के लिये ये हमेशा तैयार रहते हैं। किसी भी विषय पर कुशलता पूर्वक वक्तव्य दे सकते हैं।

मेरी प्रभु से प्रार्थना है किवह इन्हें लम्बी और स्वस्थ आयु दें। ये इधर-उधर आ-जा कर आर्य समाज का प्रचार इसी तरह करते रहें। इनकी जीवन भर की साधना और तपस्या को उजागर करने के लिए जो यह अभिनंदन-अनुष्ठान किया जा रहा है, मैं उसकी सफलता की कामना करता हूँ।

भाटिया भवन, २३३/९, पानीपत

बेलाग हैं 'शरर'

—डा. दर्शन लाल 'आज़ाद'

सच्चे, सादे, नम्र, निडर, बेदाग हैं शरर।
विद्वान् लेखक, कवि, वक्ता बेलाग हैं शरर।

हर दिल की धड़कन हर लब की मुस्कान हैं यह
बेशुमार खूबियों वाले नेक इन्सान हैं यह
देश का गौरव हैं मोह लेता है व्यवहार इनका
आर्य समाज के प्रति निराला है खुमार इनका॥

हर वक्त ही जारी इनका सफ़र रहता है।
कन्धे पे ही सदा इनका बिस्तर रहता है॥
ऋषि मिशन में मगन शाम व सहर रहते हैं।
कभी इस गाँव तो कभी उस शहर रहते हैं॥

आर्य समाज की नींव का पत्थर हैं शरर।
बैठें हम जिसकी छांव में वो शजर हैं शरर।
दिल पे असर होता है इनकी मधुर वाणी का
अपना ही अन्दाज़ है शरर की जादूब्यानी का॥

इनके भाषण सर्द लहू को गर्मा देते हैं।
रहस्य वेदों का सरल में समझा देते हैं।
गुणों की खान यह भारत का लाल है।
इरादे चट्टान-से, हौसला भी कमाल है॥

आर्य समाज का सेवक समाज की ढाल है।
राहे-दयानन्द में की कुर्बानी बेमिसाल है।
सत्यार्थ पे जब पाबंदी लगाई थी निज़ाम ने।
कूद पड़े थे तब आप इस धर्म संग्राम में॥

जेल की सख्तियाँ भी आपको दबा न सकीं
ज़माने की मुश्किलें लक्ष्य से हटा न सकीं
कुन्दन बन के चमके शरर इस आग से
हर सू रोशनी फैलाई दयानन्दी चिराग़ से॥

काम करने की शक्ति इनमें बेहिसाब देखी है।
साहित्य सृजन में एक से एक किताब देखी है॥
'फूल और काँटे' सा काव्य महान दिया है।
इनकी कलम ने 'शिकवा' और 'सामगान' दिया है॥

नैरोबी में जा इस शेर ने वेद गान किया है।
राष्ट्र की ओर से राष्ट्रपति ने सम्मान किया है॥
मानवता से प्रेम प्यार ही है सन्देश इनका।
'आजाद' नई निगाह देता है उपदेश इनका॥

२२, पटेलनगर, पानीपत
ध्वनि तरंग - ०१८०-२६३९९२६

एक पीढ़ी का प्रतिनिधि : प्रो. उत्तमचन्द 'शरर'

—डॉ. आर.के. चौहान

प्रो. उत्तम चन्द 'शरर' उस पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करते हैं जिसने अपनी ज़िन्दगी को असूलों के लिए जिया और सुविधा के लिए सिद्धान्तों से कभी समझौता नहीं किया। वैदिक धर्म और दयानन्द के सिद्धान्तों को जानना, मानना और प्रतिपादित करना अपने जीवन का लक्ष्य बना कर उसे मां आर्य समाज की बलिवेदी पर समर्पित करना इस अनोखे व्यक्तित्व का गौरव रहा है। साहित्यिक संवेदनाओं और वैदिक मानवीय मान्यताओं का अद्‌भुत संगम, स्वनाम धन्य, एक ज्वाला की चिन्गारी 'शरर' साहब कई दशाब्दियों से युवा हृदयों को झंकृत करते रहे हैं। मैंने स्वयं अपने यौवन काल में इन स्वरों का रसास्वादन कर आनन्द लिया है। वे क्षण कितने अविस्मरणीय होकर इस रूह में घुल गए।

आर्य वीर दल के शिविरों-सम्मेलनों में माननीय प्रो. उत्तम चन्द शरर, भाई बीरू राम एवं डा. रामप्रकाश के संसर्ग ने मेरे जैसे अनेक अल्हड़ युवकों को बीसवीं सदी के साठ और सत्तर के दशकों में भीतर तक झकझोरा और कायाकल्प कर दिया। आर्यवीर दल की अध्यक्षता का आप का यह युग स्वर्णिम युग कहा जा सकता है जिसने उत्तर भारत में भी आर्य समाज की झोली में अनेक निष्ठावान युवकों को डाला। इस बात का श्रेय आप के दूरदर्शी एवं सौम्य स्वभाव तथा आपके दाएँ हाथ आर्य वीर दल के मन्त्री भाई बीरूराम की कुशल शैली और पारखी नज़र को जाता है।

आर्य समाजों के वार्षिकोत्सवों, आर्य वीर दल के शिविरों एवं सम्मेलनों में प्रो. उत्तम चन्द शरर एवं डा. राम प्रकाश को वक्ता रूप में पा लेना श्रेयस्कर माना जाता था। आप दोनों की वक्तृत्व कला और वाणी का जादू सुनने वालों को आप का और आर्य समाज का दीवाना बना देता था। यह वह युग था जब वक्ता आर्य समाज की परिधि को छोड़ कर राजनीति के गलियारों की सैर नहीं करता था। इसलिए वैदिक धर्म सिद्धान्त प्रचार अथवा आर्य सामाजिक संगठन सम्वर्धन ही आपने अपने वक्तृत्व के विषय रखे। ऋषि दयानन्द केजीवन पर बोलते हुए जहाँ आप स्वयं भावुक हो जाते थे वहीं श्रोताओं

को भावविभोर कर मोह लेते थे। सभा अथवा पंडाल में सन्नाटा छा जाता और सुनने वालों का दिल ऋषि के प्रति श्रद्धा भावों से उद्वेलित हो जाता। एक रोचक और रोमांचक मंज़र बन जाता था। आज भी वह अद्वितीय दृश्य आँखों के सामने छा जाता है और मैं श्रद्धानत हो जाता हूँ प्रो. शरर जी के प्रति।

आर्य समाज के मंच पर कवि सम्मेलनों अथवा मुशायरों की शुरुआत एवं सफल मंचन का श्रेय आप को ही जाता है। उर्दू, हिन्दी दोनों भाषाओं में आप की प्रस्तुति अत्यन्त प्रभावशाली और सदा ही कमाल की रही है जिसने श्रोताओं पर स्थायी प्रभाव छोड़ा। उर्दू तो मैं नहीं पढ़ा किन्तु उर्दू-फारसी की चाशनी से सराबोर देवनागरी में आपके लेख यदा-कदा पढ़ कर आनन्द उठाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। भाषा, भाव, शैली और इन सबके साथ सिद्धान्त सभी की सशक्त अभिव्यक्ति रही है आप केलेखन में। तकरीर और तहरीर के धनी जनाब शरर साहब ने जहाँ अमर शहीद पण्डित लेखराम की अन्तिम इच्छा को अपने जीवन में चरितार्थ किया वहीं अपने लिए एक सफल वक्ता और लेखक की पहचान बनाई। आप के चाहने वाले आप को बहुत देर तक इन रूपों में याद करते रहेंगे।

उर्दू के मशहूर शायर मिर्ज़ा ग़ालिब के बारे में मशहूर था 'कहते हैं कि ग़ालिब का है अंदाज़े-बयाँ और'। जनाब शरर साहब का भी बात कहने का ढंग और शब्दों को वाक्यों में पिरो कर एक खास लहजे में प्रस्तुत करने का अंदाज़ लाजवाब है। उनके इस बोलने के अंदाज़ में एक अजीबोग़रीब कशिश है जो सुनने वाले के दिलोदिमाग़ पर ऐसा असर छोड़ती है कि वह उनकी कही बात पर सोचने पर मजबूर हो जाता है।

सरल स्वभाव, सादा खान-पान, पहनावा, मित्रवत व्यवहार आदि गुण आप के आकर्षक व्यक्तित्व के आभूषण हैं। संयम एवं अनुशासन का स्वयं पालन कर दूसरों के लिए आप सदैव आदर्श रहे हैं। मैं आपके व्यक्तिगत जीवन के सम्बन्ध में अधिक नहीं जानता। कब, कैसे और कहां आप के व्यक्तित्व का निर्माण हुआ। लेकिन जब, जैसे और जहाँ भी यह पुनीत कार्य हुआ हो, हुआ कमाल का। आप को स्मरण कर नमन करते हुए अच्छा लग रहा है।

क्षेत्रीय निदेशक,
डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल्ज़ अम्बाला जोन (हरियाणा)

सौ फ़रिश्तों से बढ़ के इन्सां है

—डॉ. कुमार पानीपती

वह 'शरर' जिसका ज़िक्र लब पर है
मेरा हमअस्र है, हबीब भी है
नेक सीरत है, पाक दामन है
एक शायर भी है अदीब भी है

मैंने परखा है उसको हर पहलू
हर किसी को दुआएँ देता है
ज़र्रे ज़र्रे पे जां छिड़कता है
हर किसी की बलाएँ लेता है

वो फ़रिश्ता नहीं मगर फिर भी,
सौ फ़रिश्तों से बढ़ के इन्सां है
हक परस्ती मिज़ाज है उसका
ख़िदमते-ख़ल्क उसका ईमां है

अहले-हस्ती के ग़म का हर क़तरा
हँसते हँसते ख़ुशी से पी लेना
इसको आता है सख्त जां बन कर
नोके-शमशीर पर भी जी लेना

नाम उत्तम, पयाम उत्तम है
रूह उत्तम, कलाम उत्तम है
फूलों कांटों के दरमियां गुज़रा
इसका जीवन तमाम उत्तम है

वो फ़रिश्ता नहीं मगर फिर भी
सौ फ़रिश्तों से बढ़ के इन्सां है

१३७५, न्यू हाऊसिंग बोर्ड कालोनी, पानीपत-१३२१०३

आर्यवीर उत्तमचन्द 'शरर'

डॉ. राजेन्द्र विद्यालंकार

बड़ा व्यक्ति युग को पहचान देता है। समाज का एक बड़ा भाग युगधर्मों की प्रतिछाया ही हुआ करता है और प्रतिछायाएं कभी युगान्तकारी नहीं हुआ करतीं। युगधर्मों की आड़ लेकर जीने वाले व्यक्ति कभी भी जीवनदायिनी प्रेरणाओं और उससे भी आगे उन्नत व्यवस्थाओं को जन्म नहीं दिया करते। कदाचित् यह कहना अतिशयोक्ति पूर्ण लगे कि प्राध्यापक उत्तमचन्द शरर ने उन्नत व्यवस्थाओं को स्थापित कर दिया है लेकिन इससे तो किसी की भी असहमति न होगी कि उन्होंने इसके लिए अपनी शक्ति और क्षमता से अधिक ईमानदार प्रयास किए हैं। वैयक्तिक तौर पर आचार्य उत्तमचन्द 'शरर' ने जिन मानदण्डों को आज तक मज़बूती से पकड़े रखा है वह अपने आप में अभिनन्दनीय है—आचरणीय हैं। हज़ारों लोगों ने आर्यसमाज का कार्य किया है और कर भी रहे हैं। उनकी भावना और उनका परिश्रम अमूल्य है, उनकी शैली बेजोड़ है, लेकिन आचार्य उत्तमचन्द 'शरर' की शैली मुझ जैसे अकिंचन व्यक्ति को अधिक तार्किक और प्रभावी लगी है।

आर्य समाज के वर्तमान चरित्र में कुछ नई प्रवृत्तियाँ तेज़ी से प्रकट हुई हैं। कोई पक्ष इससे अछूता नहीं है। शैली सिद्धान्त, परिदृश्य, पद्धति, व्यवस्था, उद्देश्य, उपदेशक और रहनुमा—सभी पक्षों को इसने प्रभावित किया है। पौराणिक समाज के उपदेशक की 'ग्लैमरस छवि' आर्य समाज के प्रचारक को आकर्षित कर रही है। तख्त की जगह पीठ पर बैठ कर उपदेश देने की ललक तीव्रतर होती जा रही है। कदाचित् 'पीठ' का तामझाम ही प्रचारक को 'स्टार-प्रचारक' सिद्ध करता है। खैर! हमारा उपदेशक केवल 'उपदेशक' हो गया है। उपदेश को अर्थवान बनाने के लिए जिस सघन कार्य की आवश्यकता है उपदेशक वैसा कार्य करने वाला कार्यकर्त्ता न बन सका। जो कार्यकर्त्ता बने उन्होंने पूरा-पूरा कार्यकर्त्ता बनने की बजाए 'कर्ता-धर्ता' बनने की सनक पाल ली। इन दोनों बातों का परिणाम यह निकला कि कर्ता-धर्ताओं की भीड़ से तो मंच टूटने लगे और दरियों पर बैठने वाले नदारद हो गए, वो खाली हो गईं। ऐसे संकट के समय मुझे

आचार्य शरर जी की कार्यशैली का स्मरण हो आता है जिन्होंने अपने आपको एक 'कार्यकर्त्ता विद्वान उपदेशक" के रूप में प्रतिष्ठापित किया है। वो विद्वान् से ज्यादा 'आर्यवीर' हैं। उनके बहुमुखी व्यक्तित्व में उनका आर्यवीर होना कोहिनूर के समान है। उनके कई रूप हैं, पर युवाओं को उनका जो रूप सर्वाधिक आकर्षित करता है वह 'आर्यवीर उत्तमचन्द शरर' का रूप है। उम्र के इस मुकाम पर भी वे अग्रिम पंक्ति के आर्यवीर हैं। वह जोश, वह उमंग, वह उफान, वही तराने उनमें आज भी वैसे ही हैं। वह वैदुष्य पर उतर आएं तो उनकी काव्यीय उद्‌भावनाएं मस्त कर दें, वह तर्कों पर उतर आएं तो लगे कि किसी प्रखर नैय्यायिक को सुन रहे हैं, वह अनियन्त्रित जन समूह के मध्य खड़े होकर माईक पकड़ लें तो भीड़ तो भीड़, वक्त भी ठहर कर सुने कि "शरर बोल रहे हैं ज़रा सुनता चलूं", और भाषण के बाद जब यही शरर आपको लंगर में आर्य वीर दल के गणवेश में झाड़ू लगाते, दरियां बिछाते अथवा दाल या सब्जी की बाल्टी लिए भोजन खिलाते मिलें तो चौंकिएगा मत क्योंकि यही वह स्थान है जो 'उत्तमचन्द' के 'उत्तम' होने का कारण है। शायद यहाँ वह हमें समझा रहे होते हैं कि केवल क्रीज़ लगे कुर्त्तों के प्रभाव मात्र से "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" के ध्येय को प्राप्त नहीं किया जा सकता। यही वह बिन्दु है जो श्री शरर जी को वैशिष्ट्य पूर्ण बनाता है।

मैं १९९२ में पहली बार आर्यसमाज बड़ा बाज़ार पानीपत में गया। व्याख्यान हो चुकने पर खिली हुई आँखों वाले एक सज्जन ने मेरे पास आकर मेरे दोनों कन्धों को लगभग तौलते हुए मुझसे पूछा कि क्या आर्य वीर दल में दीक्षित हो? मैंने कहा—जी हाँ! मैंने आर्यवीर दल का प्रशिक्षण लिया है। तभी मुझे साथ खड़े एक सज्जन इन श्रीमान का परिचय देते हुए कहने लगे कि ये प्रो. उत्तम चन्द शरर जी हैं। तब तक प्रो. शरर जी की ख्याति से तो मेरा परिचय था पर प्रो. शरर से नहीं। उनका परिचय जानकर आगे के वार्तालाप के लिए मैं संभल गया था। प्रो. शरर के साथ हुई यह पहली बातचीत आज मेरे लिए वैचारिक-पूंजी है। मैं दो घण्टे से ज़्यादा की इस बातचीत में प्रो. शरर द्वारा व्यक्त विचारों को उनके व्यक्तित्व का सारांश मानता हूँ। प्रो. शरर ने मुझे कहा कि युवाओं पर ध्यान केन्द्रित किए बिना आर्य समाज के सुनहरे भविष्य की कल्पना बेमानी है। वृद्ध में दीख रहा परिवर्तन उसकी मजबूरी हो सकती है पर युवा में आया बदलाव व्यक्तित्व का बदलाव है। व्यक्तित्व का रूपान्तरण ही व्यवस्थाओं में परिवर्तन करता है। आर्यसमाज को फलता-फूलता देखना है तो आर्य वीर दल को मज़बूत करो। प्रो. शरर ने जो मुझसे कहा ताउम्र उसको निभाया।

आर्यसमाज की वर्तमान प्रवृत्तियों को देखकर प्रो. शरर ने जो महसूस किया उसे शिष्ट शब्दों में शालीनता के साथ व्यक्त कर दिया। आर्यसमाज के कार्यक्रमों को कथित तौर पर 'सजीव', 'रोचक' एवं 'आकर्षक' बनाने हेतु हो रहे नित नए प्रयोगों का आंख बन्द करके प्रो. शरर ने कभी समर्थन नहीं किया। नए प्रयोगों के समाज पर पड़ने वाले प्रभाव और उससे बनने वाली आर्य समाज की छवि का आकलन करके ही उन्होंने अपनी सम्मति या विमति प्रकट की है। आर्यसमाज की दृष्टि से अपठित या अल्पपठित लोगों की अगुवाई में हो रहे नए प्रयोगों से भरे इन आयोजनों ने आर्यसमाज की तार्किक धारा को इतना विद्रूप बना दिया है कि बहुधा आर्यसमाज के सत्संगों और सनातन धर्म के कीर्तनों में फ़र्क करना मुश्किल हो गया है। यज्ञ-क्रान्ति के नारे का सहारा लेकर 'यज्ञ-उद्योग' पिछले कुछ वर्षों में तेजी से फला-फूला है। यकायक पैदा हो गया 'यज्ञ-माफ़िया' ऋषि दयानन्द की न केवल समस्त यज्ञ-प्रक्रियाओं को बल्कि उसकी पवित्र भावना को भी बदल देने पर आमादा है। सम्मान और वैभव की जिन्दगी चाहने वाले स्वयंभू भट्टाचार्यों को 'यज्ञ-उद्योग' में अनेक सम्भावनाएं दिखाई पड़ रही हैं। यज्ञ के धीरे-धीरे व्यवसाय बनते जाने और इससे सांस्कृतिक धारा को पैदा हो रहे खतरों पर उन्होंने अपने व्याख्यानों में बेबाक टिप्पणियाँ की हैं। पर सुनता कौन है—**"गंजों के शहर में कंघे बेचता हूँ मैं।"**

समाज वैचारिक संकट के दौर से गुज़र रहा है। आर्य समाज का नेतृत्व भी इसका अपवाद नहीं है। 'हिन्दुत्व' अपने पूरे कुनबे—मूर्तिपूजा, अवतारवाद, ज्योतिष, शिला-पूजन और देवी देवताओं की पूरी बटालियन के साथ 'आर्यत्व' का पर्याय बन चला है। शास्त्रों की गणना में अब पुराण भी शामिल हो रहीं हैं, खण्डन अपराध घोषित कर दिया गया है अतः पौराणिक प्रतीकों की व्याख्याएं गढ़ी जा रही हैं। ऐसे माहौल में भी शरर जी ने जब भी बोला इन तमाम दबावों से मुक्त होकर बोला—शुद्ध रूप से ऋषि दयानन्द को बोला। अधिकारियों के निर्देशों में बंध कर उन्होंने कभी प्रवचन नहीं किए। भाट और उपदेशक के फ़र्क को वे सारी ज़िन्दगी समझते रहे हैं। आर्यसमाज को कथित हिन्दुत्व के प्रचार की 'विज्ञापन-एजेन्सी' बना डालने के समर्थक वो कभी नहीं रहे।

दुनिया के बाज़ार में अपनी निजता-अपने स्वत्व को उन्होंने कभी खोने नहीं दिया है। जीवन को प्रतिक्रियाओं का पुलिन्दा कभी नहीं बनाया। मन में कोई दुराग्रह न रखा। अहंकार को कभी इतना प्रबल न होने दिया कि वह विनम्रता को लील जाए। आपसे आंख मिली चाहिए कि बिना इन्तज़ार किए उन्होंने स्वयं ही दोनों हाथ जोड़ दिए। उनके

प्राकृतिक जीवन का ही यह प्रतिफल है किबचपन की सहज मुस्कान चेहरे पर आज तक वनी हुई है। वह इस बात को बखूबी समझते हैं कि दूसरे को नीचा दिखाने और अपमानित करने की प्रवृत्ति आदमी को छोटा बना देती है। इसलिए कभी ऐसी लिप्सा मन में पैदा न होने दी कि उसे पूरा करने के लिए कभी किसी को नीचा दिखाने, अपमानित करने या षड्यन्त्र करने की ज़रूरत पड़ी हो। शह और मात के खेल से एक नियत दूरी बनाए रखी। प्रशंसा को चापलूसी और सहयोग को चमचागिरी कभी न बनने दिया। काश! आर्यसमाज के कर्त्ता-धर्त्ताओं में ऐसा व्यक्तित्व विकसित हो पाता।

आर्यसमाज के हर छोटे बड़े आन्दोलन में शिरकत कर चुके इस कद्दावर व्यक्ति का आर्यसमाज के इतिहास से गहरा सरोकार है। आर्यसमाज के अनेक धर्मव्रती कर्मयोगियों की जीवन्त गाथा उनकी स्मृति का बहुमूल्य भाग है लेकिन इस थाती के संकलन हेतु आर्यसमाज कभी भी गम्भीर नहीं रहा है। जीवन के इस उत्तरार्द्ध में उनके अनुभव पूर्वार्द्ध के अनुभवों से मेल खाते तो नहीं होंगे लेकिन समाज के इतने विकृत हो जाने के बाद भी वे हताश और निराश नहीं हैं। उनके अन्दर का साहित्यकार एक समय के बाद हर अन्धेरे के छंट जाने का आश्वासन उन्हें और उनके माध्यम से हमें देता रहा है। ईश्वर करे—ऐसा हो। मैं इस अवसर पर श्री शरर जी को "शतवर्षीय स्वस्थ आर्यवीर उत्तमचन्द शरर" के रूप में देखने की कामना करता हूँ।

१४२५/१३, अर्वन एस्टेट, कुरुक्षेत्र, हरियाणा

★ शतहस्त समाहर सहस्रहस्त संकिर।

अथर्व. ३.२४.५

★ दानं भोगो नाशस्तिस्रो गतयो भवन्ति वित्तस्य
यो न ददाति न भुङ्क्ते तस्य तृतीया गतिर्भवति॥

आर्यरत्न : प्रो. उत्तमचन्द शरर

—'अख़ग़र' पानीपती

पूर्वजन्म के संस्कार अति प्रबल होते हैं और वे जीव पर अपना प्रभाव छोड़ने में कितने सक्षम होते हैं इसका प्रमाण कस्बा सीतपुर ज़िला मुज़फ्फ़रगढ़ (वर्तमान-पाकिस्तान) में सन् १९१६ में जन्मे एक बालक के जीवन की इस घटना से भली भाँति मिल जाता है।

बालपन में जबकि इसकी आयु केवल ३-४ वर्ष की थी, एक दिन जब वह अपने घर के आंगन में अन्य बालकों के संग हाथों में चूड़ियाँ पहने मिट्टी में खेल रहा था कि अचानक उसके रिश्ते के एक चचा घर में दाखिल हुए उस बालक को देखकर उन्होंने सहज ही जब यह कहा 'तुम मिट्टी से खेल रहे हो तुम्हारे हाथ भी मिट्टी से भरे हैं हम तुझे आर्य समाजी नहीं बनाएंगे।' तो उस बालक ने तुरंत न सिर्फ मिट्टी भरे हाथ साफ किए बल्कि हाथ में पहनी चूड़ियों को भी तोड़ डाला।

यह होनहार बालक समय के साथ-साथ परवान चढ़ता रहा। युवावस्था में ही इसके दिल में जन-कल्याण और देशप्रेम का जज़्बा कूट-कूट कर भरा हुआ था। इसका प्रमाण इससे मिलता है कि १९३९ में आर्यसमाज के हैदराबाद सत्याग्रह आन्दोलन में कूदकर इस देशभक्त बालक ने हैदराबाद की गुलबर्गा जेल में छः मास का कठिन कारावास भोगकर स्वतन्त्रता सेनानी होने का गौरव प्राप्त किया।

सन् १९४७ में जब देश का विभाजन हुआ तो इसे भी अन्य लोगों की तरह अपने कुनबे के साथ अपना घर बार छोड़कर हिन्दुस्तान आना पड़ा और इस तरह यह परिवार रोहतक में आकर बस गया। यहीं पर उसने हाईस्कूल और फिर कालेज की आला तालीम हासिल की। वक्त बीतने के साथ-साथ इस नौजवान के विचारों में भी विशालता और परिपक्वता आती गई। धर्मपरायण समाज में लोगों की रूढ़िवादी धारणाओं, संशययुक्त आस्थाओं और अंधविश्वास को देखकर इसे जहाँ आश्चर्य हुआ वहाँ बड़ा दुःख भी महसूस हुआ। लिहाज़ा उसने अपने मन में संकल्प किया कि वह इस भूले-भटके समाज को अंधी आस्थाओं के कुएँ से निकालने और इसे सत्य के पथ पर

अग्रसर करने हेतु सदा प्रयत्नशील रहेगा। बस इसी दृढ़ संकल्प के सहारे उसने अपना समस्त जीवन समाज कल्याण के लिए एक निष्ठावान सेवक की भांति आर्यसमाज को अर्पण कर दिया। क्योंकि वह शुरू से ही आर्य समाज के प्रवर्तक महान समाज सुधारक सत्यता के भास्कर, हकगो, हक परस्त महर्षि दयानन्द के जीवन से अति प्रभावित था और इसका प्रमाण इस घटना से भी मिलता हैं कि सन् १९५७ में जब हरियाणा प्रदेश में अपनी राष्ट्रभाषा हिन्दी को लागू करवाने के लिए आन्दोलन छिड़ा तो इस हिन्दी प्रेमी ने हिन्दी आन्दोलन के इस अभियान में शामिल होकर नाभा और पटियाला की जेलों में ६ मास के कारावास का कष्ट सहन किया।

यही आला कद्रों का इन्सान, प्रगतिशील विचारक, समाजसुधारक, एक कुशल और विद्वान् प्राध्यापक, योग्य प्रचारक, उच्च श्रेणी का शायर ज़माने में प्रोफ़ेसर उत्तम चन्द शरर के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

एक प्राध्यापक के नाते आपने बच्चों को जहाँ विद्याधन प्रदान किया वहाँ भारत के महान पुरुषों की जीवन गाथाएँ सुना-सुनाकर उनका चरित्र निर्माण भी किया।

आर्य-समाज के किसी भी कार्य या उत्सव पर जैसी भी सेवा आपके जिम्मे लगती आप उसे बड़े उत्साह और लगन से पूरा करते। समाज की सेवा का जुनून आपको किस हद तक था इसका सबूत यह घटना है।

एक बार ऐसे ही एक आयोजन में जलसा के स्थान पर जब रोशनी की आवश्यकता पड़ी तो समय की तंगी को देखते हुए आपने जल्दबाज़ी में बिजली की चालू लाइन की तारों को हाथ से पकड़ लिया। फलस्वरूप बिजली का तेज़ करंट खाकर आप गिर पड़े और मूर्च्छित हो गए। हाथों की अंगुलियाँ तक झुलस गईं। आप मौत के मुँह से बाल-बाल बचे।

आलमे-जवानी में जब एक प्रचारक या मंचसंचालक के रूप में आप स्टेज पर आते तो लोग आपको सुनने के लिए बड़े शौक से एकत्रित होते। अपने प्रवचनों में आप शब्दों का प्रयोग कुछ इस ढंग और सलीके से करते कि आपके मुख से निकला हुआ एक-एक शब्द सुनने वालों के दिलों में उतरता चला जाता। आपके प्रचार की शैली और व्यक्तित्व के आकर्षण से लोग मन्त्रमुग्ध हो जाते। कुदरत की यह अनमोल देन बहुत कम लोगों को नसीब होती है।

आपकी इन योग्यताओं और विशेषताओं से प्रभावित होकर भारत भर की आर्य संस्थाओं ने आपको प्रचार के लिए आमंत्रित कर आपकी सेवाओं का पूरा-पूरा लाभ

उठाया। आपको विदेशों में नैरोबी (केन्या) जाने का अवसर प्राप्त हुआ। आपने वहाँ भी भौतिकतावादी लोगों को महर्षि दयानंद के यथार्थ और ज्ञानवर्धक उपदेशों से कृतार्थ कर उनकी सोई चेतना को जागृत किया।

आप निरंतर १५ वर्ष तक आर्य वीर दल के संचालक के पद पर आसीन रह कर समाज की सेवा करते रहे। एक विख्यात शायर के रूप में आपने यूँ तो बहुत कुछ लिखा है मगर आर्य समाज के आदर्शों और असूलों पर आधारित ३ काव्य संग्रह 'आर्यों का शिकवा-जवाबे शिकवा', 'फूल और काँटे' और 'इन्द्रधनुप' के नामों से प्रकाशित करवाकर आपने दयानंद के उपदेशों को काव्य-प्रेमियों तक पहुंचाया।

शायरी के मैदान में भी शरर साहब ने अपनी अलग पहचान को बरकरार रखा इनकी शायरी में नाउम्मीदी नहीं बल्कि ज़िन्दगी की रमक मिलती है। इरादों की परिपक्वता मिलती है। भावनाओं को एक प्रबोधन मिलता है।

इनका व्यक्तित्व अगर्चे झील के ठहरे पानी की तरह खामोश नज़र आता है। मगर जब वो अपनी ओजस्वी शैली में शेर पढ़ते हैं तो मानो एक ज्वार का सा समाँ होता है। जो अपने सामने की हर चीज को बहाकर ले जाता है। इनकी इंकलाबी कविताएँ अंगारों की तरह बरसती हैं। इनकी वाणी लावा उगलती है और जज़्बात में एक हलचल सी पैदा कर देती है। उदाहरणस्वरूप इनके कलाम की कुछ पंक्तियाँ देखिए।

नौजवानाने-वतन आओ कि यल्ग़ार करें।
अब ये पस्तीओ बुलंदी ज़रा हमवार करें
अपने एजाज़ से हर फूल बना डालें सिपर
और हर शाख़े लचकदार को तलवार करें।

...

उनकी एक और कविता के तेवर देखिए।

मेरे हमदम तू मेरे हाल पे अफ़सोस न कर।
जानता हूं कि मैं तेरी तरह ज़रदार नहीं
उम्र फ़ाकों में निकल पाई है इनकार नहीं
पर मेरी वुसअ़ते दिल से तू ख़बरदार नहीं।
मैं खुदी बेच खुदा का भी तलबगार नहीं।

...

क्या खवर तुझको ग़रीवी हमें क्या देती है।
दिल का सोया हुआ अहसास जगा देती है।
जब खुदी रूह में अंगड़ाई ज़रा लेती है।
मौजे-तूफ़ान भी साहिल का मज़ा देती है॥

....

मैं शवेतार नहीं लूंगा सहर के वदले
ज़र पे थूकू भी नहीं ज़ौके नज़र के वदले
कैसे शवनम को खरीदूँ मैं शरर के वदले
खाक का तूदा बनूं सोज़े-जिगर के वदले?
मेरे हमदम तू मेरे हाल पे अफ़सोस न कर

.....

ऐसी शायरी जिससे इरादों की पुख्तगी और हालात की तर्जुमानी झलकती हो वह शायरी हमेशा ज़िन्दा रहती है।

मुख्तसर यह कि आपको एक समाजसेवी के रूप में देखा जाए या देशप्रेमी के रूप में, एक विद्वान् और बुद्धिजीवी अध्यापक के तौर पर परखा जाए या उच्चकोटि के शायर और प्रचारक की शक्ल में, आपके व्यक्तित्व में कोई झोल नज़र नहीं आता। आपके वजूद से एक पूर्ण पुरुष का आभास होता है। समय के उतार-चढ़ाव, बदलते परिवेशों, कठिन परिस्थितियों, ज़माने के सर्द-गर्म और शरीर के दुख में भी आप कभी विचलित नहीं हुए। यह आपके आत्मविश्वास और पुख़्ता इरादों का ज़िन्दा सबूत है।

उठो, जागो और मंज़िले मकसूद पर पहुँचने से पहले दम मत लो ऐसे उच्च विचारों वाले इरादों के धनी शरर साहब का पूरा जीवन संघर्षों से भरा है। इनकी ज़िन्दगी के अनेक गोशे ऐसे हैं जिन पर अगर सिलसिलावार और विस्तार से लिखा जाए तो शायद एक ग्रन्थ भी कम पड़े। लेकिन मैं यहाँ केवल एक ही घटना का उल्लेख करूँगा।

सन् १९५४ में रोहतक नगर की सनातन धर्मसभा के स्थान दुर्गा भवन में एक कार्यक्रम का आयोजन किया गया जिसमें पंडित माधवाचार्य भी बुलाए गए थे। आचार्य जी अपने स्वभाववश अपने प्रवचन में आर्य समाज और सत्यार्थ प्रकाश को निशाना

बनाकर उसकी आलोचना किया करते थे। एक रात कुछ साथियों के आग्रह पर शरर साहब भी जलसा में पहुँचे। मंच की कार्यवाही शुरू होने पर आपने खड़े होकर आचार्य जी से पूछ—शंका समाधान आरंभ में होगा या अंत में? जवाब मिला अंत में। आप बैठ गए। जब आचार्य जी ने अपना भाषण समाप्त किया तो आपने बोलने की अनुमति माँगी। स्वामी गुरुचरण दास जी, जोकि मंच संचालक थे, ने कहा हम आर्यसमाजियों को बोलने की अनुमति नहीं देते। इसके साथ ही वहाँ कुछ लोगों ने लाठी से वारकर आपका सिर फोड़ दिया और धींगामुश्ती कर आपके कपड़े भी फाड़ डाले। आप अपने साथियों के साथ रात को अस्पताल से पट्टी वग़ैरह करवाकर घर पहुँचे। सुबह लोगों की शिकायत पर आपकी थाना में तल्बी हुई। वहां पर सनातन धर्म सभा के प्रधान स्वयं मौजूद थे, उन्होंने आपसे क्षमा याचना की। आपने बड़े गौरव से कहा महर्षि दयानंद ने अपने कातिल को भी माफ़ कर दिया था मैं भी उन्हीं का शिष्य हूं लिहाज़ा मैं भी आपको माफ करता हूँ। यह वाकिआ आपकी महानता और ऋषि के प्रति आस्था को दर्शाता है। आज ८६ वर्ष के इस वृद्ध आर्यवीर को देखकर ऐसा लगता है मानो यह समय के साथ नहीं, समय इसके साथ चल रहा है। इस साहसी पुरुष के आगे उम्रों के पड़ाव अपना कोई महत्त्व नहीं रखते। इनका व्यक्तित्व बहुआयामी योग्यताओं का पुंज प्रतीत होता है। महर्षि दयानंद के बारे में इनका यह शे'र कितना सटीक है।

जब मोहब्बत से सदाकत भी बग़ावत भी मिले।

तब कहीं एक 'दयानंद' बना करता है॥

निस्संदेह प्रो. उत्तम चंद शरर इन्सानदोस्ती और रोशनख्याली का एक ऐसा शरर है, जो एक तरफ जहाँ दिलोदिमाग़ को रोशनी देता है वहाँ दूसरी ओर भावनाओं को हरारत प्रदान करता है। मेरा विश्वास है कि ऐसे योग्य व्यक्ति से हम बहुत से गुण अर्जित कर सकते हैं।

अन्त में मैं अपने एक शेर से आपको ख़िराजे-अकीदत पेश करता हूँ—

"तेरी हस्ती है इक ऐसा फ़साना
जिसे तारीख़ दोहराती रहेगी।"

पानीपत

आर्यसमाज की विलक्षण प्रतिभा महात्मा उत्तमचन्द शरर

—नरेन्द्र कुमार शास्त्री

आर्य जगत में ऐसा कौन है जो श्री महात्मा उत्तम चन्द जी शरर के नाम से परिचित नहीं है। आपका सम्पूर्ण जीवन आर्य समाज व महर्षि दयानन्द जी के प्रति समर्पित है। इस ऋषि के दीवाने ने जब वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार में अपने कदम बढ़ाये तो फिर पीछे मुड़कर नहीं देखा। आज भी यह ऋषि भक्त इस मार्ग पर अग्रसर है।

आपका जन्म १५ नवम्बर सन् १९१६ को सीतपुर ज़ि. मुज़फ्फ़रगढ़ (वर्तमान पाकिस्तान) में हुआ। आपके पिता श्री मंगूराम उस क्षेत्र के एक जाने माने जमींदार थे। पूज्या मां श्रीमती उत्तमी बाई एक धर्मपरायण महिला थीं। इनके चचेरे भाई श्री राम किशन जी आर्य समाज में जाया करते थे तथा वे आर्य समाज की गतिविधियों में व प्रचार में संलिप्त थे। आप अपने भाई से कहा करते थे कि मैं भी आर्य समाजी बनूँगा। तब आपकी उम्र मुश्किल से ३-४ वर्ष होगी। एक दिन ये मिट्टी में खेल रहे थे तभी इनके भाई श्री रामकिशन जी आ गये। उन्होंने इनसे कहा कि अरे तू तो मिट्टी से खेल रहा है तो आर्यसमाजी कैसे बनेगा। इतना सुनते ही आप मिट्टी को छोड़कर खड़े हो गये और कहा कि नहीं, मैं आर्य समाजी बनूँगा।

१८-१९ वर्ष की अवस्था में ही आप आर्य समाज सीतपुर के मन्त्री बने व तन, मन, धन से आर्य समाज के प्रचार-प्रसार में लग गये।

हैदराबाद सत्याग्रह : जब निज़ाम हैदराबाद ने हिन्दुओं पर अपने धार्मिक कार्य करने पर प्रतिबंध लगाया तो आर्य समाज ने एक आन्दोलन छेड़ दिया। हैदराबाद की सभी जेलें आर्य समाज के कार्यकर्ताओं, अधिकारियों व संन्यासियों से भरने लगीं। युवक उत्तमचन्द भी जेल जाने के लिए मचल उठा। अपने एक भाई श्री देवदत्त जी के साथ आप लाहौर पहुँचे और वहाँ के अधिकारियों को अपना मंतव्य बताया। लेकिन वहाँ आर्य समाज के अधिकारियों ने कहा कि अभी आप किशोर हैं जेल की सख्ती देखकर माफ़ी माँग लेंगे। इसलिये आपको जत्थे में शामिल नहीं किया जायेगा। लेकिन दृढ़निश्चयी उत्तमचन्द कहां मानने वाले थे इन्हें पता लगा कि अमृतसर से पं. आशानन्द जी भजनीक जत्था लेकर हैदराबाद जा रहे हैं तो ये अमृतसर पहुँचे और उनके जत्थे में शामिल हो गये। इस तरह आपने इस सत्याग्रह में भाग लेकर यह दिखा दिया कि आर्यसमाज में

युवक भी वह कार्य कर सकते हैं जो बड़ी उम्र वालों से अपेक्षित होता है।

महात्मा उत्तम चन्द जी के जीवन के विषय में लिखा जाये तो एक बृहदाकार पुस्तक लिखी जा सकती है। आर्य समाज के प्रचार-प्रसार में आपने जो कार्य किये हैं चाहे वह हैदराबाद सत्याग्रह हो या हिन्दी आन्दोलन में जेल यात्रा हो या रोहतक में माधवाचार्य को शास्त्रार्थ के लिए चुनौती देना हो सब आपको एक विलक्षण प्रतिभा का धनी व ऋषि का अनन्य भक्त दर्शाते हैं।

आज आपकी आयु ८६ वर्ष के आस-पास है लेकिन आज भी आप आर्य समाज के प्रचार-प्रसार में संलग्न हैं।

कहते हैं कि प्रत्येक पुरुष की सफलता में किसी न किसी नारी का योगदान होता है। आपकी धर्मपत्नी श्रीमती लाजवन्ती जी इस कसौटी पर खरी उतरती हैं। सब प्रकार से इनका सहयोग रहा और उन्होंने विपरीत परिस्थितियों में भी सदैव आपका मनोबल व साहस बढ़ाया। आर्य समाज में आई हुई शिथिलता से भी आप कभी निराश नहीं होते और युवकों जैसे जोश से कह उठते हैं—

तेरे दीवाने बसद शौक हर इक ग़म लेंगे
इस अंधेरे को मगर चीर के ही दम लेंगे
महर्षि हम भी मगर अज़्म जवां पाते हैं
तेरे फ़ौलादी इरादों की कसम खाते हैं
तीरा-ओ-तार गुज़रगाहों पे नूर आयेगा
इन्कलाब आयेगा-२ जरूर आयेगा।

आर्यसमाज माडल टाऊन, पानीपत (हरियाणा)

एक आग्नेय व्यक्तित्व, प्रो. उत्तम चन्द शरर

—वेदरत्न डा. सत्यव्रत राजेश, हरिद्वार

आर्य जगत् में कौन ऐसा मनीषी होगा जो प्रो. उत्तम चन्द जी शरर के नाम से अपरिचित होगा। सादा जीवन, उच्च विचार की प्रतिमूर्ति शरर जी के अन्दर मेरे लिए कुछ विशेष ही आकर्षण है। वे मेरे भक्त हैं तो मैं उनका भक्त। कदाचित् महर्षि दयानन्द के प्रति अटूट आस्था ने हमको अधिक समीप ला दिया हो। सबसे पहले हम दोनों पंजाब की एक आर्यसमाज में मिले थे, जिसका मैं नाम भूल गया। उससे पहले मैं उनके नाम से परिचित था, वे शायद मेरे नाम से परिचित हों या न हों कह नहीं सकता। वहाँ इनका जो अपनत्व भरा व्यवहार देखा उसने मुझे इनका अपना बना लिया। इनका अन्दाज़े-बयान ऐसा है कि सुनने वालों का मन करता है कि सुनते ही जाएं। वहाँ के एक अधिकारी को (शायद हम उन्हीं के घर ठहरे हुए थे) शेरो-शायरी का शौक था। जब फुर्सत के समय में उन्होंने कुछ शायरी छेड़ी तो लगा शरर जी को मुँहमांगी मुराद मिल गई। इन्होंने जो काव्य-प्रवाह प्रवाहित किया तो वह भी दाँतों तले अंगुली दबा गये। विशेषता यह कि कहीं भी मर्यादा का उल्लंघन नहीं। बाप बेटी साथ बैठ कर इनके काव्य का आनन्द ले सकते हैं। इनके काव्य में न आर्यसमाज विस्मृत होता है और न महर्षि दयानन्द भुलाए जाते हैं। ये लिखने के लिए नहीं लिखते अपितु उद्देश्य को सम्मुख रख कर लिखते हैं। फूल और काँटे, आर्यो का शिकवा जवाब शिकवा, इन्द्रधनुष और सामगान जैसी इनकी उत्कृष्ट कृतियों में पाठक इस तथ्य को देख सकते हैं।

इस समय आर्यजगत् में हिन्दी, संस्कृत के विद्वान् तो सुलभ हैं किन्तु उर्दू के विद्वानों का अभाव है। किन्तु मान्य शरर जी को परमात्मा ने यह विशिष्टता दी है कि वे जहां हिन्दी-संस्कृत से एम.ए. हैं, वहाँ उनका उर्दू भाषा पर भी पूर्ण अधिकार है। स्वनामधन्य आचार्य चमूपति जी की जवाहरे-जावेद, एक अमूल्य निधि है। किन्तु जैसा कि नाम से ही जाना जा सकता है, थी वह उर्दू में। उसके अनुवाद की जब आवश्यकता अनुभव हुई तो मान्य शरर जी की ही याद आई, जिनका हिन्दी, संस्कृत की भांति उर्दू पर भी

मौलिक अधिकार था। उसका अनुवाद किया शरर जी ने, जिसे देख कर ऐसा लगता है मानो यह मौलिक रचना हो, अनुवाद नहीं। वैदिक स्वर्ग तथा तीन अनादि तत्त्व इनकी अनूदित रचनाएं हैं।

आर्यसमाज के प्रचार की धुन भी इनकी अपनी विशेषता है। जब ये अध्यापनरत थे तब भी अवकाश का समय आर्यसमाज के प्रचार में लगाते थे। यही कारण है कि जहाँ इन्होंने भारत के विभिन्न प्रान्तों में आर्यसमाज का प्रचार किया वहाँ विदेशों में भी अपना स्थान बनाया। नैरोबी (कीनिया) के लोग अब भी इन्हें याद करते हैं।

ये दूध पीने वाले मजनूं नहीं अपितु रक्त देने वाले सैनिक हैं। जब भी आर्यों का कोई आन्दोलन हुआ उसमें इन्होंने बढ़ चढ़ कर भाग लिया। हैदराबाद का धर्मरक्षा आन्दोलन हो य पंजाब का हिन्दी रक्षा आन्दोलन, शरर जी की उपस्थिति उसमें अवश्य मिलेगी।

शिक्षा-क्षेत्र में भी इनका योगदान अविस्मरणीय रहा। भारत विभाजन के पश्चात् ये १९५८ से १९७८ तक आर्य कालेज पानीपत, डी.ए.वी. कालेज लुधियाना तथा करनाल में हिन्दी के प्राध्यापक के पद पर कार्यरत रहे। इन २० वर्षों में इन्होंने अनेक युवक-युवतियों को वैदिक सिद्धान्तों का पथ दर्शाया। इनके पढ़ाए कितने ही व्यक्ति उन्नति के सोपान पर पग बढ़ा रहे हैं तथा सफल जीवन बिता रहे हैं।

इनका मन्तव्य है कि किसी भी समाज की प्रगति में कुमार तथा युवा नींव के पत्थर हुआ करते हैं। आर्यसमाज के उत्थान में भी इनका योगदान अपेक्षित है। इसलिए ये आर्यवीर दल के भी न केवल संचालक हैं प्रत्युत् उससे सर्वात्म रूप से जुड़े हुए हैं। प्रो. शरर जी ने हरियाणा में आर्यवीर दल को कई वर्षों संचालक पद पर रह कर प्रगति दी। अब भी उसमें रुचि लेते तथा अपने अनुभव का अनुपम लाभ देते हैं। मैं बड़ा बाज़ार पानीपत गया तो प्रतिदिन कार्यक्रम में भाग लेते रहे। अन्तिम दो दिनों के लिए कहने लगे कि मैं दो दिन भाग न ले सकूंगा क्योंकि मुझे एक आर्यवीर दल के शिविर में सम्मिलित होना है।

प्रो. शरर जी मिश्री की भांति जहाँ से देखें मधुर ही मिलते हैं। उनका अभिनन्दन आर्यसमाज के कार्यकर्ता तथा दयानन्द के सपनों को साकार करने वालों का अभिनन्दन है। यह समारोह सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा, दिल्ली के तत्त्वावधान में हो रहा है, यह प्रसन्नता की बात है। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ऐसे सभी आर्य विद्वानों तथा कार्यकर्ताओं का सम्मान करें जो आर्यसमाज तथा महर्षि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ा रहे हैं तथा जिनके जीवन से आर्यसमाज तथा महर्षि दयानन्द की ख्याति में चार चाँद लग रहे हैं तो यह प्रशंसनीय कार्य होगा तथा आर्यसमाज के क्षेत्र में सच्चे आस्थावान् कार्यकर्ताओं की भी वृद्धि होगी। मेरी ओर से मान्य शरर जी को इस अभिनन्दन के लिए हार्दिक बधाई तथा शुभकामना।

दयानन्द नगरी, ज्वालापुर, हरिद्वार

विशेष व्यक्तित्व – उत्तम चन्द 'शरर'

—उम्मेद शर्मा (एम.ए.)

आर्य समाज के स्वर्णमय काल में बहुत सी महान विभूतियाँ हुई हैं उनमें से उत्तम चन्द जी शरर का नाम उल्लेखनीय है। आर्य जगत् के सभी व्यक्ति आपसे परिचित हैं। मुझे पता चला कि सार्वदेशिक आर्य सभा दिल्ली इनके सम्मान में अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट कर रही है, तो मुझे बहुत हर्ष हुआ। शरर जी वास्तव में इसके पात्र भी हैं। क्योंकि पिछले कई वर्षों से आप आर्य समाज की अनथक सेवा में सक्रिय हैं।

शरर जी उच्च कोटि के विद्वान् एवं साहित्यकार हैं। आपने बहुत सी पुस्तकें लिखी हैं जो आर्य जगत् का मार्ग दर्शन करती हैं। देश में ही नहीं, अपितु विदेशों में भी आपने आर्य समाज का प्रचार और प्रसार किया। आप जिन्दगी भर सिद्धांतों पर अडिग रहे हैं। आपने हिन्दी आन्दोलन में छह माह की जेल काटी। हैदराबाद सत्याग्रह आन्दोलन में भी गुलबर्गा जेल में आपने अनेक कष्ट सहे। पानीपत में आर्य वीर दल की एक बैठक में मुझे बताया गया कि पौराणिकों ने शरर जी का विरोध करके उन्हें जलती हुई आग में फेंकने की योजना बनाई थी किन्तु कुछ आर्य वीरों ने आकर इस योजना को विफल कर दिया। इसके बावजूद भी आप प्रचार-पथ पर अडिग रहे।

जब मैंने आर्य वीर दल में प्रवेश किया, उस समय शरर जी आर्य वीर दल के संचालक थे। काफी अरसे तक मुझे उनके साथ कार्य करने का अवसर प्राप्त हुआ। मैंने यह महसूस किया कि कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी इन्होंने धैर्य नहीं छोड़ा। बहुत गंभीरता से इन्होंने समस्या का समाधान किया। आप मुझसे विशेष प्यार करते हैं। आपके ही कार्यकाल में मैं बौद्धिक अध्यक्ष और उपसंचालक के पद पर कार्य करता रहा। आपने ही मुझे बाल दिवाकर हंस जी के सामने अपना उत्तराधिकारी नियुक्त करते हुए कहा कि यह नवयुवक ही मेरे सपनों को साकार करेगा। अब भी मैं समय-समय पर शरर जी से मार्गदर्शन प्राप्त करता हूँ और वे भी मुझे प्रेरणा देते रहते हैं।

आपके जीवन से प्रेरणा लेकर अनेक आर्यवीरों ने समाज में कार्य किया। आप जैसे निष्ठावान एवं महान व्यक्तित्व पर स्वामी स्वतन्त्रानन्द जैसे महान साधु-संन्यासी भी गर्व करते थे। आज भी विशेष कर आर्य वीर आपके मार्गदर्शन पर गर्व करते हैं। मैं भी ऐसे विद्वान्, वक्ता, लेखक और शास्त्रार्थ महारथी पर गर्व करता हुआ सादर अभिनन्दन करता हूँ।

संचालक आर्य वीर दल हरियाणा

आर्य वीर दल : एक सिंहावलोकन

—देशराज आर्य

युग-प्रवर्तक आचार्य दयानन्द सरस्वती ने मुख्य रूप से सत्य सनातन वैदिक धर्म के प्रचार एवं प्रसार के लिए, आर्यावर्त्त (भारत) को राजनैतिक एवं आर्थिक स्वतन्त्रता दिलाने तथा देश में व्याप्त सामाजिक कुरीतियों को समाप्त करने हेतु आर्य समाज रूपी एक महान् क्रान्तिकारी आंदोलन की स्थापना सन् १८७५ ई. में की थी। किन्तु आर्य समाज के उद्‌भवकाल से हीं उस के विद्वानों, उपदेशकों एवं प्रचारकों पर भीतर और बाहर से आक्रमण होने शुरू हो गए थे।

इतिहास इस बात का साक्षी है कि सन् १८५७ के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम का सूत्रपात परोक्ष रूप से स्वामी दयानन्द जी महाराज ने ही किया था। उसी के परिणाम स्वरूप उन्हें विषपान कराया गया। इसमें सन्देह नहीं कि नन्हीजान वेश्या ने स्वामीजी से रुष्ट होकर जगन्नाथ रसोईये के द्वारा उन्हें विष दिलाया था, किन्तु यह भी असंदिग्ध है कि अंग्रेज़ी सरकार राजस्थान में स्वामी जी के बढ़ते हुए प्रभाव से बहुत ही असंतुष्ट थी। सरकारी डाक्टरों द्वारा महर्षि के उपचार के प्रति उपेक्षा केवल नन्हीजान की प्रेरणा से नहीं हुई, बल्कि अंग्रेज़ी सरकार का आशीर्वाद प्राप्त कर धर्मांध यवन डाक्टर ने दवाई के साथ विपुल परिमाण में विष देकर उनकी हत्या की थी। वास्तव में अंग्रेज़ी सरकार प्रारम्भ से ही आर्य समाज तथा इसके अधीनस्थ सभी आर्य संस्थाओं को अपने विरुद्ध समझती थी।

अतः आर्य समाज के प्रवर्तक के बलिदान से ही इस आन्दोलन में बलिदानों की एक शृंखला का श्रीगणेश हुआ। आर्यसमाजी विद्वानों के प्रबल तर्क एवं युक्तियों का समुचित उत्तर न दे पाने की अवस्था में विरोधी इन पर घातक प्रहार करने लगे। पं. लेख राम जी का इस्लाम के सम्बन्ध में ज्ञान एवं अध्ययन अत्यन्त गहन था। वे प्रायः अपने भाषणों में इस्लाम का खण्डन किया करते थे। वे अपने समय के एक मात्र ओजस्वी वक्ता एवं निर्भीक शास्त्रार्थ महारथी थे। जो लोग हिन्दू धर्म (आर्य धर्म) को त्यागकर मुसलमान बन गए थे, अथवा बन रहे थे उन्हें शुद्धि के द्वारा पुनः अपने धर्म में लाने का कार्य भी उन्होंने अपने कंधों पर लिया। पण्डित जी के निर्भीकता पूर्ण प्रचार एवं युक्तियों के समक्ष अपनी असफलताओं ने कट्टर पंथी और जुनूनी मुसलमानों को उनके प्राण लेने के लिए

प्रेरित किया और ६ मार्च १८९७ ई. को एक धर्मांध मुसलमान ने पंडित जी के पेट में छुरा घोंप कर उनकी जीवन लीला समाप्त कर दी।

सन् १९१९ में भारत अशान्त था। यूरोप के प्रथम महायुद्ध में धन-जन की सहायता प्राप्त करते हुए अंग्रेजी सरकार ने भारतीयों को स्वराज्य का आश्वासन दिया था, किन्तु युद्ध समाप्त होते ही अंग्रेज़ी सरकार ने भारतीयों के साथ विश्वासघात करते हुए उन्हें रौलट एक्ट की भेंट दी, जिससे देश की जनता भड़क उठी। महात्मा गांधी ने अहिंसात्मक सत्याग्रह की घोषणा कर दी। स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज भी उस धधकती आग में कूद पड़े और भारत की स्वतन्त्रता के लिए महात्मा गांधी के साथ कांग्रेस में सम्मिलित होकर काम करने लगे। जब अंग्रेजों ने देखा कि हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई सभी भारतवासी एक हो कर महात्मा गांधी और स्वामी श्रद्धानन्द जी के नेतृत्व में स्वाधीनता की लड़ाई लड़ रहे हैं तो उन्होंने (डिवाइड एण्ड रूल) अर्थात् 'फूट डालकर राज्य करो' की नीति अपनाई। उन्होंने मुसलमानों को शासन में उच्च गद्दियां दे दीं और उन्हें हिन्दुओं के विरुद्ध भड़काना आरम्भ कर दिया जिस पर मुहम्मद अली जैसे कांग्रेसी मुसलमान ने कोकानाडा कांग्रेस के अध्यक्ष पद से भाषण देते हुए कहा कि "अछूतों को हिन्दू और मुसलमान आधा-आधा बांट लेवें।" इस पर स्वामी श्रद्धानन्द जी से न रहा गया। उन्होंने घोषणा कर दी कि 'मुसलमान तब तक भारतीय नहीं बन सकते जब तक उनके हृदय में भारतीय संस्कृति एवं प्रेम न हो इसलिए सन् १९२३ ई. में उन्होंने "हिन्दू शुद्धि सभा" की स्थापना करते हुए आह्वान किया कि मुसलमान हुए "जाट और गूजर" जिन्हें "गूजर, मूले और मलकाने" कहा जाता था वे फिर से हिन्दू (आर्य) बन कसते हैं। इस पर मौलवियों और मुल्लाओं ने आम मुसलमान जनता को स्वामी जी के विरुद्ध खूब भड़काया जिसके परिणाम स्वरूप २३ दिसम्बर १९२६ को अब्दुल रशीद नामक एक मुसलमान ने उन्हें पिस्तौल की गोली का निशाना बना दिया।

आर्य वीर दल का प्रादुर्भाव

प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से उद्भव काल से ही आर्य समाज को अपनी क्षात्रशक्ति की आवश्यकता अनुभव होती रही क्योंकि अंग्रेज़ी सरकार की कूटनीति के कारण आर्य समाज के प्रचारकों-उपदेशकों, विद्वानों एवं उत्सवों पर निकाली जाने वाली शोभा यात्राओं पर विधर्मियों द्वारा आक्रमण होने लगे और कई आर्य नेताओं तथा कार्यकर्ताओं को अपने प्राणों की बलि भी देनी पड़ी, परन्तु स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के बलिदान के पश्चात् जब यह आवश्यकता एक जटिल समस्या का रूप धारण करके आर्य जगत्

के नेताओं के समक्ष उपस्थित हुई तो सन् १९२७ ई. में महात्मा हंसराज जी की अध्यक्षता में भारत की राजधानी—दिल्ली में आर्य सम्मेलन में सर्व सम्मति से आर्य समाज की क्षात्रशक्ति के रूप में आर्य वीर दल की स्थापना का ऐतिहासिक निर्णय लिया गया। सन् १९२९ ई. में इस संगठन को क्रियात्मक रूप देने हेतु सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने गहन विचार विमर्श के पश्चात् "आर्य रक्षा समिति" की स्थापना की जिसने 'आर्य वीर दल' के नियम तथा उद्देश्य बनाए और आर्य वीर दल को अखिल भारतीय स्तर पर चलाने का निश्चय किया। कुछ ही समय में आर्य वीर दल ने ऐसा चमत्कार कर दिखाया कि आर्य समाज पर आक्रमण करने वालों को अपना घर बचाना दुश्तर हो गया। परोक्ष रूप से अपने देश की स्वतन्त्रता का व्रत लिये यह संगठन देशभक्तों एवं क्रान्तिकारियों का निर्माण करता रहा क्योंकि भारतीय संस्कृति की सुरक्षा अपने देश की स्वतंत्रता में ही निहित थी।

आर्य वीर दल का संघटन तथा इतिहास

सन् १९४० ई. में विधिवत् रूप से आर्य वीर दल का प्रथम प्रशिक्षण शिविर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के तत्वावधान में गुरुदत्त भवन जालन्धर में लगाया गया तथा सन् १९४२ ई. में सार्वदेशिक स्तर पर बदरपुर (दिल्ली) के स्थान पर आर्य वीर दल का प्रशिक्षण शिविर लगा। उस समय स्वामी श्रद्धानन्द जी के सुपुत्र प्रो. इन्द्र जी विद्यावाचस्पति सार्वदेशिक सभा के मन्त्री थे। और प्रथम सार्वदेशिक आर्य वीर दल के संगठन का शिविर के रूप में आयोजन उन्हीं के द्वारा हुआ। उनके पश्चात् श्री ओम प्रकाश जी त्यागी सार्वदेशिक आर्य वीर दल के प्रधान सेनापति बने जिनकी देख-रेख में आर्य वीर दल की शाखाओं का जाल समूचे भारत में बिछ गया और इस युवा संगठन के माध्यम से लाखों नौजवान ऋषि-मिशन के पुजारी बन गए जिन्होंने देश को स्वतन्त्र कराने में अपने अन्तिम रक्त बिन्दु तक की आहुति दे दी। देश की स्वतन्त्रता के पश्चात्—आर्य समाज के इस युवा संगठन में कुछ शिथिलता आने लगी मानो इसका मुख्य उद्देश्य ही पूर्ण हो गया हो। किन्तु स्वर्गीय पं. नरेन्द्र जी (स्वामी सोमानन्द जी) के नेतृत्व में पुनः इस संगठन में शक्ति आई और देश-विदेश में आर्य वीर दल की व्यायाम शाखाओं तथा प्रशिक्षण शिविरों के द्वारा आर्य समाज की क्षात्र शक्ति को संगठित किया गया। समूचे देश में आर्य वीर दल के विधिवत कार्य का प्रदर्शन दिसम्बर १९७५ में सार्वदेशिक सभा द्वारा आयोजित आर्य समाज स्थापना शताब्दी समारोह के अवसर पर रामलीला ग्राऊंड में जनता के सामने आया जहां सभी प्रान्तों से आर्य वीर दल के नौजवान पृथक-पृथक

शिविरों में ठहरे हुए थे तथा लाखों की संख्या में उपस्थित जनता के लिए भोजन, आवास, जलपान आदि सेवा कार्य की व्यवस्था कर रहे थे।

इसके पश्चात् तो इस युवा संगठन ने पीछे मुड़ कर नहीं देखा। सार्वदेशिक आर्य वीर दल के प्रधान सेनापति के रूप में पं. बाल दिवाकर जी हंस के पश्चात् डा. देवव्रत जी आचार्य के नेतृत्व में इस संगठन ने दिन दूनी और रात चौगुनी उन्नति की। आज सारे भारत में तथा कुछ विदेशों में भी आर्य वीर दल की शाखाओं के द्वारा लाखों आर्य वीर संस्कृति, सेवा तथा शक्ति संचय का प्रशिक्षण ले रहे हैं।

आज हरियाणा प्रान्त को आर्य वीर दल के संगठन की दृष्टि से सारे भारत में अग्रणी स्थान प्राप्त हैं क्योंकि इसी प्रान्त में सर्वप्रथम प्रो. उत्तमचन्द जी शरर ने आर्य वीर दल के प्रान्तीय संचालक के रूप में सन् १९५३ में इसकी नींव रखी। उस समय वे रोहतक नगर में आर्य समाज के एक सशक्त नेता, विद्वान् एवं प्रचारक थे। उन्हीं के शिष्य श्री वेद प्रकाश जी आर्य आज हरियाणा प्रान्तीय आर्य वीर दल के महामन्त्री हैं, श्री जगदीश मित्र जी हरियाणा प्रान्त के उपसंचालक हैं तथा इस लेख के लेखक को भी उन्हीं के मार्गदर्शन में रोहतक में आर्य वीर दल का कार्य पिछले ३५ वर्षों से करने का अवसर प्राप्त हुआ है।

हम सभी सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली के अधिकारियों का हार्दिक धन्यवाद करते हैं जिन्होंने आर्य समाज के एक निडर वक्ता, उद्भट विद्वान्, स्वतन्त्रता सेनानी तथा महर्षि दयानन्द के सच्चे शिष्य के रूप में रोहतक, पानीपत तथा सारे भारत में आर्य समाज तथा आर्य वीर दल के लिए आजीवन करने वाले श्री प्रो. उत्तमचंद शरर जी का अभिनंदन करने और उनके बारे में अभिनंदन ग्रंथ प्रकाशित करने का स्तुत्य उपक्रम किया है।

मण्डलपति

आर्य वीर दल, रोहतक मण्डल

प्रो. उत्तम चन्द जी शरर : आर्य समाज को समर्पित एक जीवन

—रामचन्द कपूर
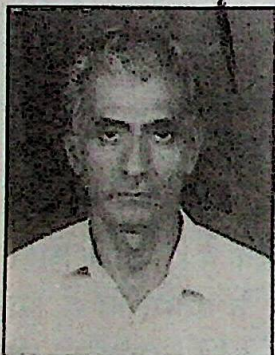
मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि आदरणीय प्रो. उत्तम चन्द जी 'शरर' के सम्मान में एक अभिनन्दन ग्रन्थ निकाला जा रहा है जिसका विमोचन ६ अप्रैल २००३ को सार्वदेशिक सभा के प्रधान कैप्टन देवरत्न आर्य जी के कर कमलों द्वारा होगा।

वास्तव में आदरणीय शरर जी इस सम्मान के पात्र हैं। श्री शरर जी आर्य समाज तथा उसके प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती के दीवाने हैं। उनकी रग-रग में आर्य समाज तथा महर्षि दयानन्द समाये हुए हैं तथा महर्षि दयानन्द के मन्तव्यों के प्रति अगाध श्रद्धा है।

आदरणीय शरर जी वर्षों आर्य स्कूल रोहतक में हिन्दी, संस्कृत तथा वेद पाठ पढ़ाने के अध्यापक रहे हैं। मुझे तथा मेरे जैसे कई विद्यार्थियों को दूसरी कक्षा से १०वीं कक्षा तक उनके चरणों में शिक्षा प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वेद पाठ के 'पीरियड' में उन्होंने महर्षि दयानन्द का अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश पढ़ा कर हमारा अज्ञान दूर किया तथा हमारी कई भ्रान्तियों का निवारण किया, जिसका परिणाम यह हुआ कि मेरे जैसे सैकड़ों नवयुवक हमेशा के लिये आर्य समाज के मिशन के प्रति समर्पित हो गये। उनके द्वारा तैयार किये गये कई नवयुवक वैदिक धर्म के प्रचार तथा प्रसार में तन, मन तथा धन से सेवा कर रहे हैं। इस सब का श्रेय आदरणीय शरर जी को जाता है।

मुझे याद है कि सन् १९५४ अथवा १९५५ में रोहतक में उन्होंने पौराणिकों को शास्त्रार्थ का चैलेंज दिया था। इस पर सनातन धर्म के लोग बौखला गये थे तथा हिंसा पर उतारू हो गये थे। यह खबर सारे आर्य जगत् में फैल गई थी। तव उनके सम्मान में रोहतक में एक विशाल आर्य महासम्मेलन का आयोजन किया गया था। जिसमें आर्य जगत् के उच्च कोटि के विद्वानों तथा नेताओं ने भाग लिया था। उन में कतिपय विद्वान् जिनका नाम मुझे याद है ये थे—पं. प्रकाश वीर शास्त्री, पं. बुद्धदेव वेदालंकार, स्वामी

स्वतन्त्रानन्द, श्री जगदेव सिंह सिद्धान्ती, आचार्य भगवान देव (वर्तमान स्वामी ओमानन्द जी) आदि आदि। इसके अतिरिक्त रोहतक में एकविशाल शोभा यात्रा भी निकाली गई— आर्य समाज की शक्ति का प्रदर्शन करने के लिए।

आदरणीय शरर जी ने १९३९ में हैदराबाद सत्याग्रह, १९५७ में हिन्दी आन्दोलन में बढ़-चढ़ कर भाग लिया। उन्होंने न केवल भारत में अपितु विदेशों में भी (नैरोबी, केन्या) वैदिक धर्म का प्रचार किया। आपने हरियाणा आर्य वीर दल का कई वर्षों तक मार्गदर्शन किया।

मैं प्रणाम करता हूँ ऐस महान पुरुष को। मैंने आर्य समाज कालका जी, नई दिल्ली में प्रधान के नाते सन् २००० में वार्षिकोत्सव में शरर जी को आमन्त्रित किया था तथा आर्य समाज कालका जी, नई दिल्ली ने उनकी सेवाओं को देखते हुए उनका सम्मान किया था। कहने को बहुत कुछ है परन्तु लेख को अधिक विस्तार नहीं देना चाहता।

आदरणीय शरर जी को आर्य समाज कालका जी से विशेष प्रेम रहा है। कई बार आर्य समाज कालका जी के वार्षिकोत्सवों एवं कवि सम्मेलनों में आपने भाग लिया। आर्य समाज कालका जी नई दिल्ली के सभी पदाधिकारियों (श्री राकेश भटनागर, श्री राम प्रसाद बरेजा, श्री रमेश गाडी, श्री सुधीर मदान) तथा अन्य प्रतिष्ठित सदस्यों श्री इन्द्रसेन कोहली, श्री रामधन मुंजाल तथा उनके शिष्यों श्री ओम प्रकाश अबरोल, श्री वीरेन्द्र जी की ओर से आदरणीय प्रो. उत्तमचन्द जी शरर को इस अवसर पर हार्दिक बधाई तथा शुभ कामनाएं। हम ईश्वर से उनकी दीर्घायु की प्रार्थना करते हैं ताकि वे आर्य समाज की इसी प्रकार सेवा करते रहें।

आर्य समाज कालका जी, नई दिल्ली

दो मुक्तक

संघर्षों के बीच गुज़ारा सारा जीवन
जीवन होम दिया है पूज्य शरर साहब ने
रूढ़िवाद पोषक पौराणिक निष्ठाओं का
घोर विरोध किया है पूज्य शरर साहब ने

★★★

धर्माडम्बरकारी मुस्लिम औ' पौराणिक
इनसे अकसर बहस में उलझे ही रहते थे
शास्त्रार्थ होते रहते थे जगह जगह पर
इनकी जीत के डंके बजते ही रहते थे

—राणा प्रताप गन्नौरी

श्रुति – सुधा

सुखदा जीवनदा कल्याणी,
अमृत है वेदों की वाणी
दु:खों का भंजन करती है
मानस का रंजन करती है
भ्रांति न पास फटकने देती
जन मन को न भटकने देती
जीवन मर्यादा विधि इसमें
सद्-विद्याओं की निधि इसमें
सब दुरितों की नाशक है यह
मंगल मार्ग प्रकाशक है यह
सब धर्मों का स्रोत यही है
अक्षर अक्षय ज्योति यही है
जिसने भी श्रुति-सुधा चखी है
उस की काया पलट गयी है

प्यारे ऋषि के प्रति

जो हकीकत थी हकीकत में वह जानी तू ने
झूठ से हार कभी भी नहीं मानी तू ने
लिख के सत्यार्थ प्रकाश ऐ मेरे सच्चे स्वामी!
दूध का दूध किया पानी का पानी तू ने

—राणा प्रताप गन्नौरी

वैदिक चिन्तन

वेदों का महत्त्व

—आचार्य (डॉ.) विशुद्धानन्द मिश्र
वेदान्तकल्पद्रुम-प्रणेता, पूर्व कुलपति, बदायूँ (उ.प्र.)

संन्यसेत् सर्वकर्माणि वेदमेकं न संन्यसेत्।

सच है, **'यस्य निःश्वसिता वेदाः'**—जिस प्रभु के वेद निश्वास हैं तो वे वेद परम प्रभु के प्यारे पुत्र जीवात्मा के भी श्वास और निश्वास बनकर क्यों न रहें! अतएव कहा गया है कि **'संन्यसेत्' सर्वकर्माणि वेदमेकं न संन्यसेत्।"** अर्थात् "अनध्याय या अन्य कर्मों के वर्जन के अवसरों पर भी सब कार्य छोड़े जा सकते हैं, परन्तु वेद के स्वाध्याय के लिए कदापि कोई विराम शास्त्रानुमन्य नहीं है।" और यह पूर्ण सत्य है कि वेद भगवान् की कोई भी आज्ञा आर्यजनों के लिए अकाट्य और अनुसरणीय है। वेद इसके स्वतःप्रमाण और अन्तिम प्रमाण हैं। सिद्धान्ततः यह बात ठीक है, परन्तु महान् दुःख की बात है कि व्यावहारिक रूप में वेद को इंग्लैण्ड के सम्राट् का स्थान भर प्राप्त है। यह सिंहासन पर विराजमान है, पर आज्ञायें उनके अनुचर गीता, भागवत, पुराण आदि ही की चलती हैं। मन्दिरों में, घरों में, प्रवचनों में और देवी-जागरणों में पाठ होता है तो **दुर्गासप्तशती** का, **रामायण** की आरती के समय अपने इष्टदेव की नीराजना (आरती) करने में पढ़े जानेवाले श्लोक आधुनिक मत-पन्थानुगामी मनुष्यों के गाये जायेंगे, पर वेद-मंत्रों का पारायण कथावाचकों से उपेक्षित पड़ा है। आकर्षक प्रवचनों में जिन पर श्रद्धा-सम्पन्न और भक्त जनता न्योछावर है, सर्वात्मना समर्पित है, वहाँ यदि वे सनातन धर्म के कथावाचक सन्त पुरुष मंगलाचरण के रूप में न्यूनतः वेद के किसी सूक्त या मंत्र का पाठ सस्वर कराया करें, तो वेदों के प्रचार-प्रसार की ओर जन-जन की अभिरुचि निश्चित रूप से जाग्रत हो जाये। मैंने एक बार श्रद्धेय सन्त श्री आसाराम जी के प्रवचन में वेद-पाठ कराये जाते हुए देखा और सुना तो मेरे आनन्द की सीमा नहीं रही। दुर्भाग्य है, अनुताप की बात है कि आज करोड़ों हिन्दुओं ने वेदों के नाम तक नहीं सुने हैं। आज अदना-से-अदना मुसलमान को कलमा याद है, परन्तु हिन्दू को 'गायत्री मंत्र' याद नहीं है। मुझे अति आश्चर्य हुआ जब मैं उत्तर प्रदेश के महामहिम राज्यपाल द्वारा मनोनीत होकर **संस्कृत अकादमी संस्थान** की बैठक में सम्मिलित हुआ। श्रद्धेय श्री बलदेव उपाध्याय अध्यक्षता कर रहे थे। मैंने देखा कि काशी के पण्डितों तथा संस्कृत के अन्य विद्वानों की उपस्थिति में संस्कृत में कोई मंगलाचरण तक नहीं किया गया। मैंने आक्षेप किया कि "हमें बैठक प्रारम्भ करने से पूर्व मंगलाचरण तो अवश्य करना चाहिए" तो मेरे प्रस्ताव का विरोध करते हुए लखनऊ विश्वविद्यालय के एक संस्कृत प्रोफ़ेसर ने कहा कि "क्या आपको पता नहीं है कि हमारे संस्थान को ३० लाख रुपये उस सरकार से मिलते हैं, जो सैक्युलर है। इस पर

कुप्रभाव पड़ेगा।" मैंने कहा—"आपको पता नहीं है कि मद्रास हाईकोर्ट ने निर्णय में गायत्री मंत्र को सैक्युलर घोषित कर दिया है और सारे वेदों में संज्ञान-सूक्त, पृथिवीसूक्त आदि क्या सैकुलर नहीं हैं? विचारशील सोचें, संस्कृत विद्वानों तक की यह सोच कितनी परिपीड़क एवं हास्यास्पद है!

यद्यपि यह संतोष की बात है कि महर्षि दयानन्द द्वारा वेद-प्रचारार्थ जो क्रान्तिमय आन्दोलन छेड़ा गया था, उसके भाष्य और प्रबल आलोचनाओं ने विश्व के वेदप्रेमियों को झकझोर दिया। परिणामतः उन सबकी चिन्तन-दिशाओं में सुधार एवं परिवर्तन आया, जिसकी हमें प्रशंसा करनी चाहिये। मुझे स्मरण है कि त्रिवेणी-तट पर बसाये गये 'भारद्वाजपुरम्' में १९९२ में विश्व हिन्दू परिषद् के तत्त्वावधान में आयोजित सम्मेलनों में दस दिनों के लिए जो १० विषय निर्धारित किये गये थे, उन सभी में वेद और दर्शन, वेद और पुराण, वेद और इतिहास आदि विषयों में वेद सबके साथ अवश्य जुड़ा था। 'वेद-दर्शन' सम्मेलन में समायोजक संस्कृत के उद्भट विद्वान् आचार्य श्री रामनाथ जी 'सुमन' ने मुझे अध्यक्षता का दायित्व सौंपा था। गुजरात से आये हुये श्रीमद्भागवत के कथा-वाचक एक सन्त ने सगर्व घोषणायें की कि "वेद के लिए जितना काम स्वामी दयानन्द सरस्वती ने किया उतना कई शताब्दियों में अन्यों ने नहीं किया।"

यहाँ पर मैं पौराणिक विद्वान् श्री रामगोविन्द त्रिवेदी जी के महर्षि दयानन्द के प्रति व्यक्त किये उद्गारों का उल्लेख करने का लोभ-संवरण नहीं कर सकता, अतः वे उद्धृत हैं। यथा, "आर्यसमाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द सरस्वती वेदों के परम भक्त थे। उन्होंने आर्यसमाज की नींव वेदों के आधार पर ही रखी थी। वे भारत में ही नहीं, समस्त विश्व में वेदों का मेघमन्द्र निनाद सुनना चाहते थे। वस्तुतः स्वामी जी वेद-प्रचार के लिए ही जिये और मरे। उन्होंने ऋग्वेद का तीन चौथाई और यजुर्वेद का सम्पूर्ण भाष्य किया था। इसके सिवा उन्होंने कितने ही आलोचना-ग्रन्थ भी लिखे और वैदिक साहित्य के सम्बन्ध में अगणित व्याख्यान दिये तथा लेख लिखे।"

आगे चलकर पं. श्री रामगोविन्द त्रिवेदी जी ने आर्यसमाज संस्था के विषय में भी अपनी निष्पक्ष सम्मति रखते हुए लिखा है—"स्वामी जी के बाद उनके अनुयायियों ने अनेक अमूल्य वेद-ग्रन्थों के प्रकाशन, सम्पादन और अनुवाद किये।" आर्यसमाज की ओर से चारों वेदों की एक-एक संहिता का अनुवाद हो चुका है। कितनी ही वेद-संस्थायें स्थापित हो चुकी हैं। वेद-प्रचार के लिये कुछ पत्र-पत्रिकायें निकलती हैं।" फिर त्रिवेदी जी आगे लिखते हैं—"यह सब होते हुये भी आर्यसमाज के वैदिक ग्रन्थ उपेक्षा की दृष्टि से देखे जाते हैं। सनातनी ही नहीं, विदेशी विद्वान् भी आर्यसमाजी वेदज्ञों को उपेक्षा की दृष्टि से ही देखते हैं, क्योंकि इसके कई कारण हैं। यथा—

१. आर्यसमाजी चार संहिताओं को ही वेद मानते हैं, शेष संहिताओं को इनकी शाखायें मानते हैं।

२. आर्यसमाज देवतावाद को नहीं मानता है।
३. आर्यसमाज याज्ञिक पक्ष को भी नहीं मानता है।
४. आर्यसमाज भाषाविज्ञान की भी चिन्ता नहीं करता है।
५. आर्यसमाज वेदों में इतिहास को नहीं मानता, वेदों के ऐतिहासिक व्यक्तियों, नदियों, पर्वतों, उन सबका केवल यौगिक अर्थ करता है।
६. आर्यसमाज के विचार से वेदों में न तो अवतारवाद है, न श्राद्ध है, न मृतपितृलोक की बात है।
७. मूल वेद को ग्रन्थ समझने वाले किसी निष्पक्ष विद्वान् के लिए इन सारे सिद्धान्तों को मानना असम्भव है। यही कारण है कि वेदों का केवल आध्यात्मिक अर्थ करने वाले सज्जन किसी भी अधिकारी वेद-विज्ञाता विद्वान् को अपने सिद्धान्तों से अब तक सन्तोष नहीं दिला पाये।

सम्मान्य सनातनी विद्वान् श्री त्रिवेदी जी की आर्यसमाजियों पर यह टिप्पणी है और उन्होंने साथ ही ऋषि दयानन्द जी की वेद-सम्बन्धी मान्यताओं को भी अंशतः उजागर किया है। हमें केवल उनके ६वीं संख्या पर व्यक्त किये गये विचारों पर संक्षिप्त रूप में कहना है। विशेष रूप में तो हमने महान् पौराणिक विद्वान् श्री करपात्री जी के नेतृत्व में भारत के प्रसिद्ध १४ पण्डितों द्वारा ऋषि दयानन्द सरस्वती रचित 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' के खण्डन में लिखित 'वेदार्थ-पारिजात' नामक महाग्रन्थ के आक्षेपों के समाधान में 'वेदार्थ-कल्पद्रुम' नामक ग्रन्थ तीन खण्डों में मैंने तथा मेरी विदुषी धर्मपत्नी श्रीमती निर्मला देवी पुराणेतिहास-साहित्याचार्य ने लिखा है। विशेष जिज्ञासु वहाँ देखें। उक्त सभी प्रश्न श्री करपात्री जी ने उठाये हैं। प्रथम प्रश्न के समाधान में यजुर्वेद के मंत्र **"तस्माद् यज्ञात् सर्वहुतः ऋचः सामानि जज्ञिरे। छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद् यजुः तस्मादजायत"** (यजु. ३१-७) में परम प्रमाण है। मीमांसा, मनुस्मृति, महाभाष्यादि के प्रमाण यहाँ उद्धृत नहीं किये जा रहे हैं।

आर्यसमाज देवतावाद को नहीं मानता—यह आक्षेपपरक कथन निःसार है, क्योंकि निरुक्त में प्रतिपादित जड़ सूर्यादि और चेतन विद्वान् पुरुष तथा देवताओं का देव महादेव परमेश्वर आर्यसमाज को मान्य हैं। मातृ, पितृ, आचार्य, अतिथि विग्रहवान् (शरीरधारी) देवता और अमूर्तिमान् परमेश्वर ये तैत्तिरीयोपनिषद्—प्रतिपादित पितृदेव ऋषि द्वारा स्वीकृत किये गये हैं। हाँ, सनातनी पौराणिकों के इन्द्र-इन्द्राणी (पति-पत्नी) आदि सजीव देहधारी देवता इस रूप में कल्पित हैं, अतः यह अमान्य है। (इस विषय को हमारे द्वारा रचित 'वेदार्थ-कल्पद्रुम' के प्रथम खण्ड के पृष्ठ ५५० पर विस्तृत रूप में देखें।)

'आर्यसमाजी याज्ञिक पक्ष को नहीं मानते' यह आक्षेप भी सही नहीं है, क्योंकि सायण-महीधराचार्यों द्वारा प्रतिपादित केवल यज्ञपरक अबुद्धिगत अर्थ-स्थल ही अमान्य हैं, शतपथ-प्रतिपादित मान्य हैं। क्या कोई भी पौराणिक जगत् का मूर्धन्य विद्वान् वाममार्गी महीधर-प्रणीत अश्वमेध के यज्ञ को किसी आधुनिक समझदार राजा और रानी से

अश्लीलता-परक विधान से कराने का साहस जुटा सकता है? वस्तुतः नहीं, अतः यह अमान्य है।

रही भाषाविज्ञान की बात! इस विषय में हम मानते हैं कि समस्त भाषाएँ और उनके विज्ञान, सारे भाषा-वैज्ञानिक वेद तथा भास्कराचार्य के निरुक्त के ही ऋणी हैं। आधुनिक ऊटपटांग भाषाविज्ञान के आधार पर वैदिक शब्दों को नये प्रयुक्त शब्दों का विकार या विकास आर्यसमाज को अवश्य अमान्य हैं।

वेदों में नश्वर इतिहास पौराणिकों द्वारा वेद भगवान् के मत्थे मढ़ दिया गया है। भला इन पौराणिक पण्डित-पुंगवों को भी विचारना चाहिय कि जब सृष्टि के आदि में नियतानुपूर्वक वेद ऋषियों के हृदय में प्रभु ने प्रकाशित किये, जबकिन राम पैदा हुए थे, न कृष्ण और न राधा, तब वह वर्णन वेद में कैसे संगत माना जाये? फिर वेद की नित्यता कैसे रहेगी? अनित्य इतिहास के होने पर गजब तो यह है कि इन भोले पौराणिक भाइयों की भाँति अब मुसलमान भी **'मना रहे (मुहम्मद) चारु देवस्य नाम'** में अपने पैगम्बर के वर्णन का सन्दर्भ भी सिद्ध करने लगे हैं। इस पर इन्हें अनुताप नहीं होता है।

अवतारवाद की सिद्धि में आज तक किसी ने वेद में कोई प्रमाण नहीं दिखलाया। इस मान्यता का दुष्प्रभाव यह हुआ कि आज हिन्दुओं में ही सैकड़ों अवतार लेकर भगवान् बन रहे हैं। इनकी अतर्कमति से ही संन्यासी स्वामी विवेकानन्द ने भी ईश्वर और बुद्ध का अवतार ईसा मसीह को कह डाला। श्राद्ध आदि पर ग्रन्थ भरे हुए हैं। जीवित पितर, ज्ञानी महात्मा, पिता, पितामह, माता, गुरु, आदि की सेवा कर जीवितों का श्राद्ध करना तो आर्यसमाज का सिद्ध पक्ष है, परन्तु मृतकों का करना आज भी साध्य कोटि का पक्ष बना हुआ है।

अन्तिम बात वेदों के केवल आध्यात्मिक अर्थ आर्यसमाज द्वारा करने की बात कही गई है। यह तो आमूलचूल अनाधार है। सर्वप्रथम ऋषि दयानन्द ने ही प्राचीन आप्त ऋषियों के समान वेद को सब सत्य विद्याओं का मूल आधार माना है और **'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका'** में ऋषिवर ने विज्ञानपरक आकर्षणानुकर्षण, प्रकाश्याप्रकाश्य, नौ-विमान, तार-विद्या आदि अनेक विषयों की वेदमूलकता मंत्रोदाहरण देकर सिद्ध की है। महान् आश्चर्य और दुःख तो तब होता है, जबकि अनेक ग्रन्थों के महान् पौराणिक विद्वान् **श्री बलदेव उपाध्याय** अपने **'वैदिक संस्कृति और सभ्यता'** प्रतिपादक ग्रन्थ में सायणाचार्य—भूमिका-सम्पादन-प्रसंग में आर्यसमाजियों पर कटाक्ष करते हुए लिखते हैं—**"अपरंचामी वेदेषु नवीनानामपि आधुनिकैः पाश्चात्य-विज्ञान-वेदिभिः प्रकाश्यं नीतानामाविष्काराणां धूम्रयान-वायुयान-तडिच्छकट-स्वनग्रहादीनां नैव कल्पितां सम्भवनामपि तुवास्तविकीं सन्तं वेदे मन्यते। सर्वेषामाविष्कृतानामाविष्काराणां च विज्ञानतत्त्वानामाकरो वेद एवेति तेषामभिमतं. ... परमेषोऽपि सिद्धान्तो नैव विद्वान्नमनोरमः।'** अर्थात् "वे (स्वामी दयानन्द तथा उनके अनुयायी भी) पाश्चात्य वैज्ञानिकों से आविष्कृत रेलगाड़ी, विद्युद्यान, टेलीफोन आदि की

शरर जी की कहानी चित्रों की ज़बानी
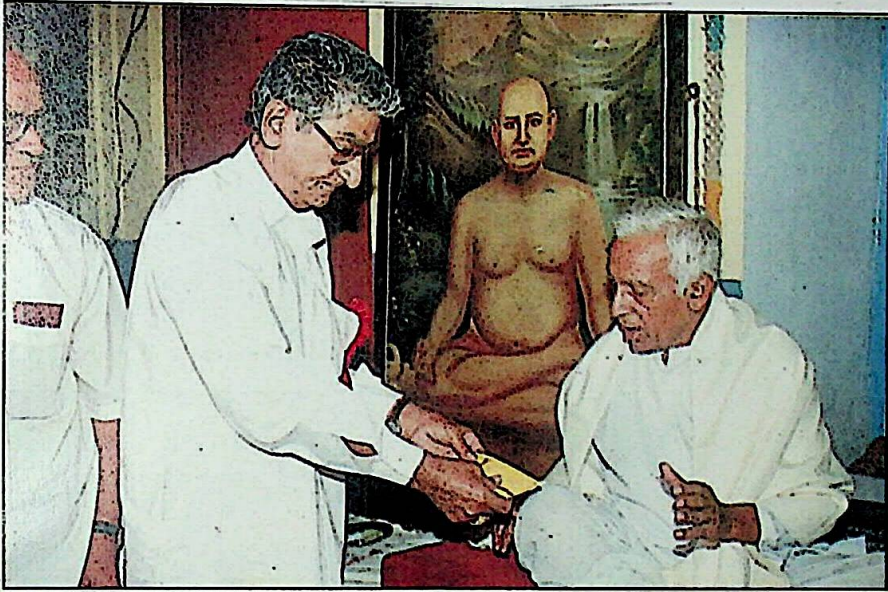
खैल बाज़ार आर्य समाज के प्रधान सेठ रामकृष्ण जी सूतवाले श्री शरर जी का नागरिक अभिनंदन करते हुए

श्री बलराज जी मंत्री आर्य समाज खैल बाज़ार पानीपत, श्री शरर जी को अभिनंदन पत्र भेंट करते हुए
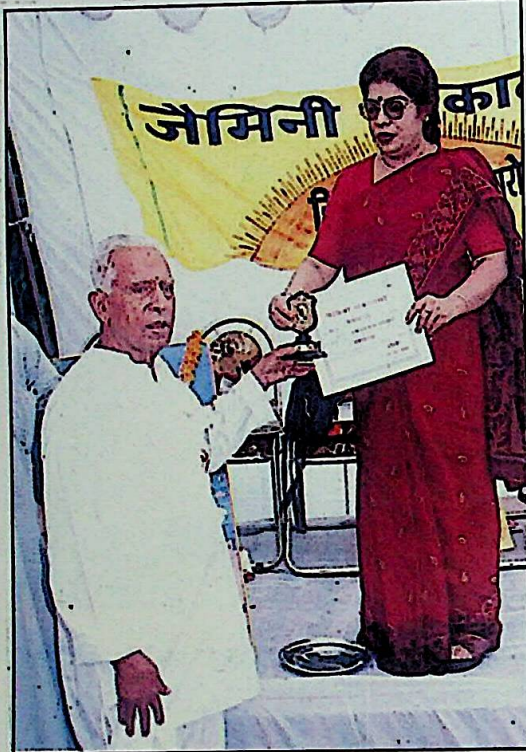
जैमिनि अकादमी पानीपत के हिन्दी दिवस सम्मान समारोह (२००१) में श्री शरर जी को 'समाजरत्न' की उपाधि से सम्मानित करते हुए केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय की निदेशक डॉ. पुष्पलता तनेजा

जैमिनि अकादमी पानीपत के रामवृक्ष बेनीपुरी जन्मशताब्दी समारोह में मंचस्थ श्री शरर जी, साथ हैं श्री जयपाल तरंग, पद्मश्री डॉ. श्यामसिंह शशि, श्री चमन लाल गुप्त अध्यक्ष हि.प्र. ज़िला बोर्ड धर्मशाला, श्री साधुराम रतन (पूर्व डी.एस.पी. नाहन)। कविता पाठ करती हुई सुश्री अंजलि दीवान।

आर्य समाज ताल (म.प्र.) में मंचासीन श्री शरर जी
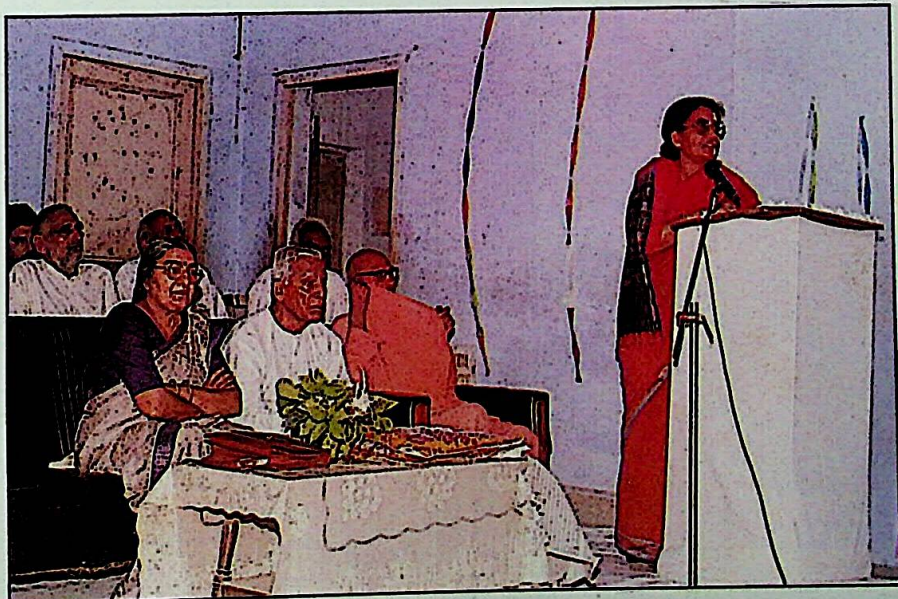
आर्य कन्या विद्यालय वीर भवन पानीपत के उत्सव में मंचस्थ श्री शरर जी
तथा सम्बोधित करते हुए उपायुक्त श्रीमती जयवन्ती श्योकंद
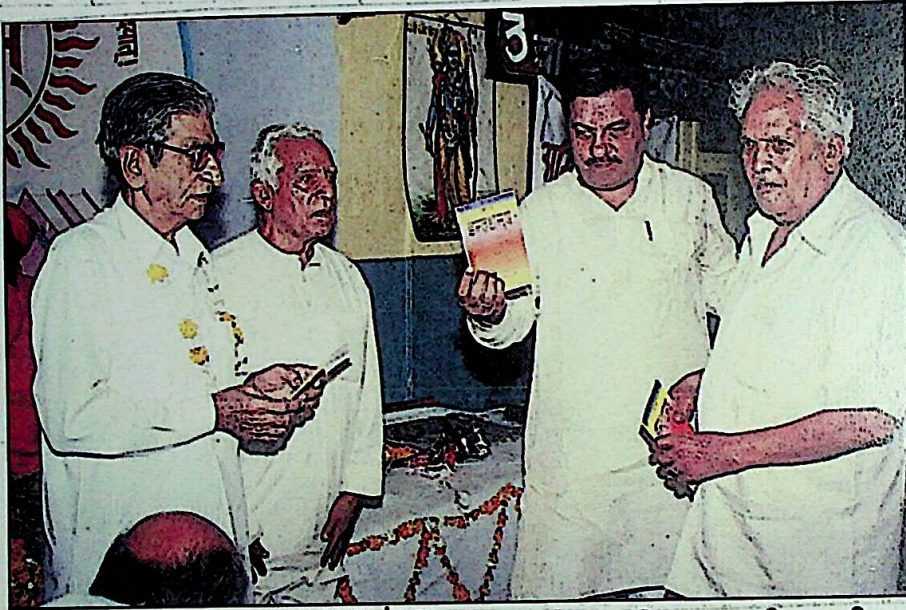
श्री शरर जी की पुस्तक 'इन्द्रधनुष' का लोकार्पण करते हुए विधायक श्री वलबीर पाल शाह जी। साथ खड़े हैं सेठ रामकृष्ण सूतवाले तथा आर्य प्रकाशन दिल्ली के श्री तिलक राज जी ख़ैल बाज़ार आर्य समाज पानीपत में
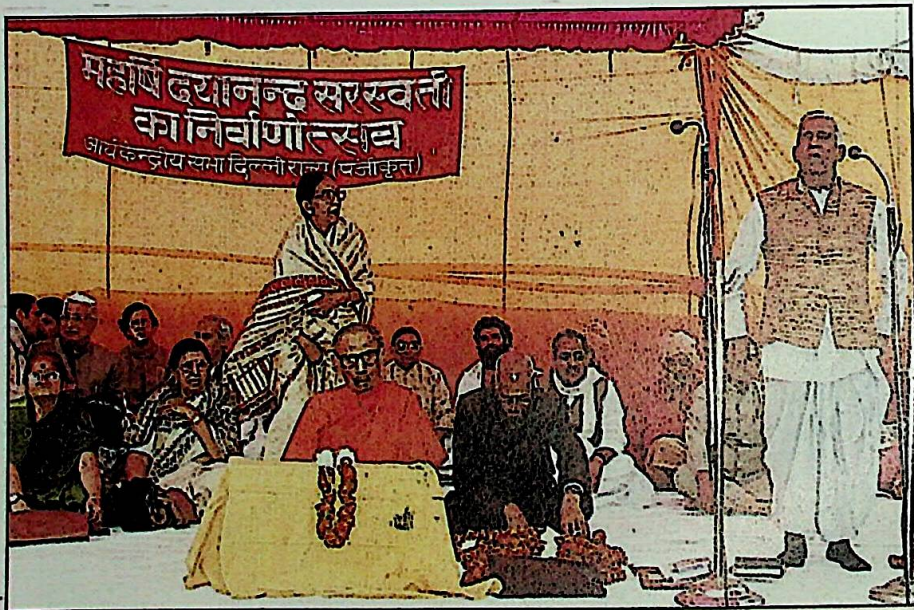
ऋषि निर्वाणोत्सव पर श्री शरर जी ऋषि भक्तों को सम्वोधित करते हुए। आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली के आयोजन में। मंचासीन हैं सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के पूर्व प्रधान स्व. स्वामी आनंदबोध सरस्वती
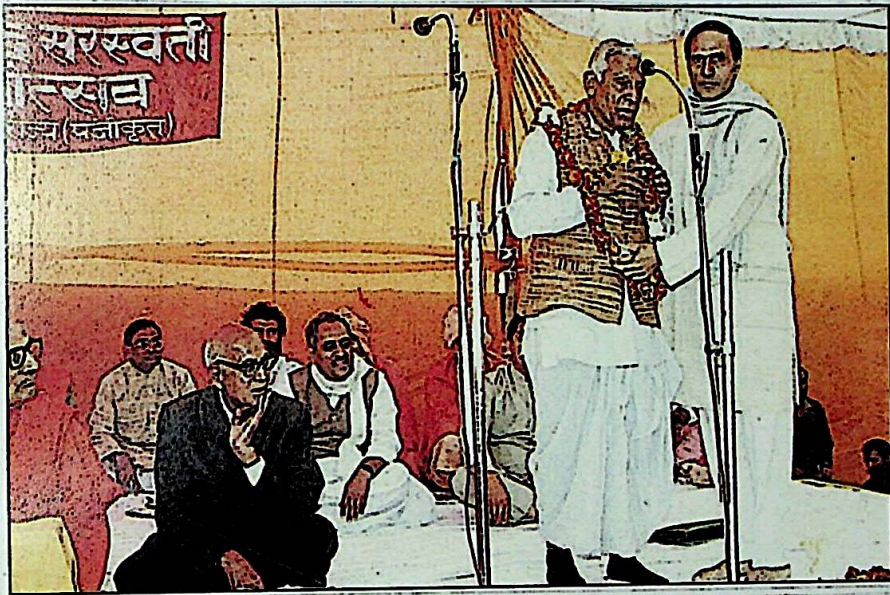
ऋषि निर्वाणोत्सव पर शरर जी का माल्यार्पण से स्वागत करते हुए
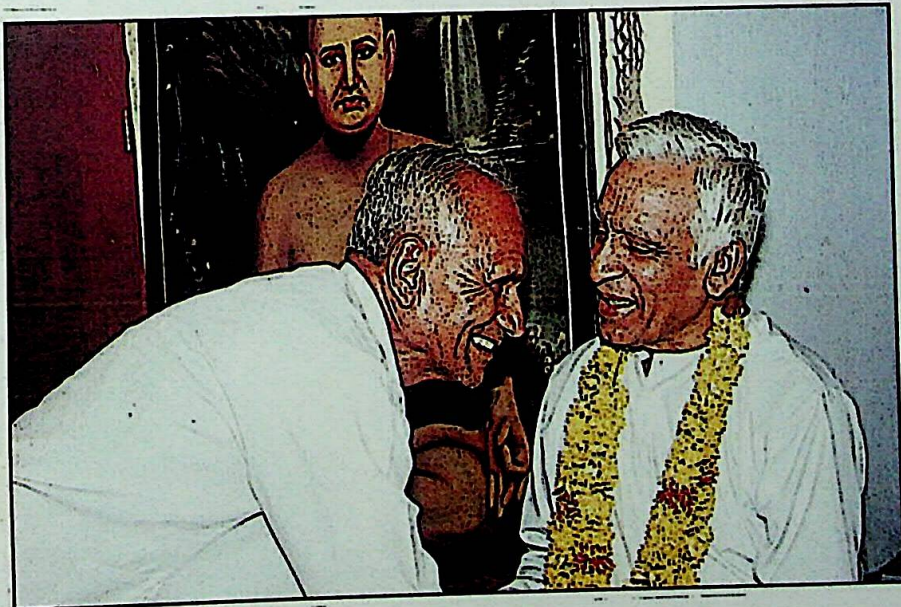
वयोवृद्ध आर्य समाजी श्री कृष्ण लाल चुघ श्री शरर जी का
गदगदभाव से स्वागत करते हुए।

आर्यसमाज माडल टाऊन पानीपत के प्रधान श्री देवराज आर्य श्री शरर जी का हार्दिक स्वागत करते हुए
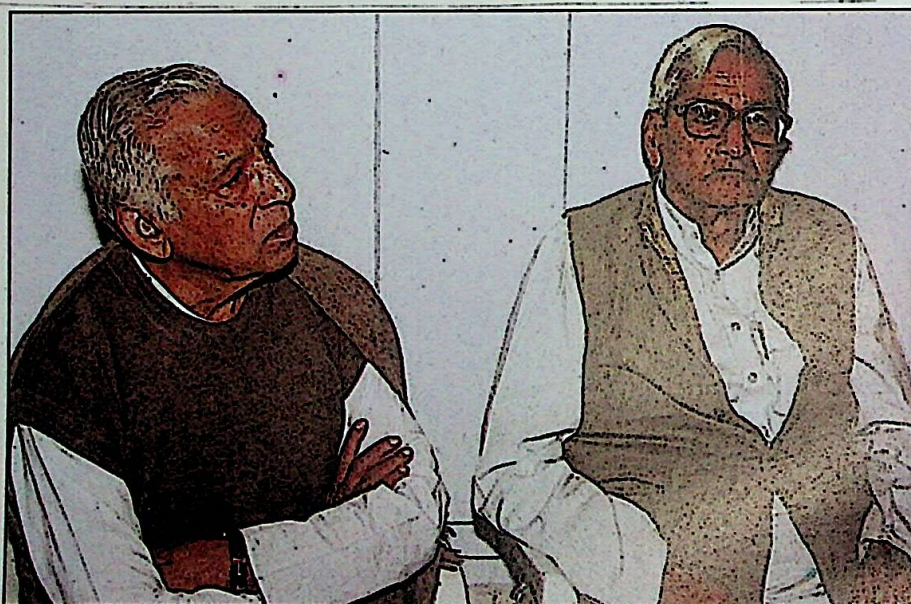
आर्य भजनोपदेशक श्री ओमप्रकाश वर्मा के साथ श्री 'शरर' जी

मुम्बई – फरवरी २००२, आर्य समाज शांताक्रुज पुरस्कार समारोह

कैप्टन देव रत्न जी, 'शरर' जी को वेदोपदेशक पुरस्कार प्रदान करते हुए, साथ हैं श्री 'ओंकारनाथ आर्य तथा अन्य
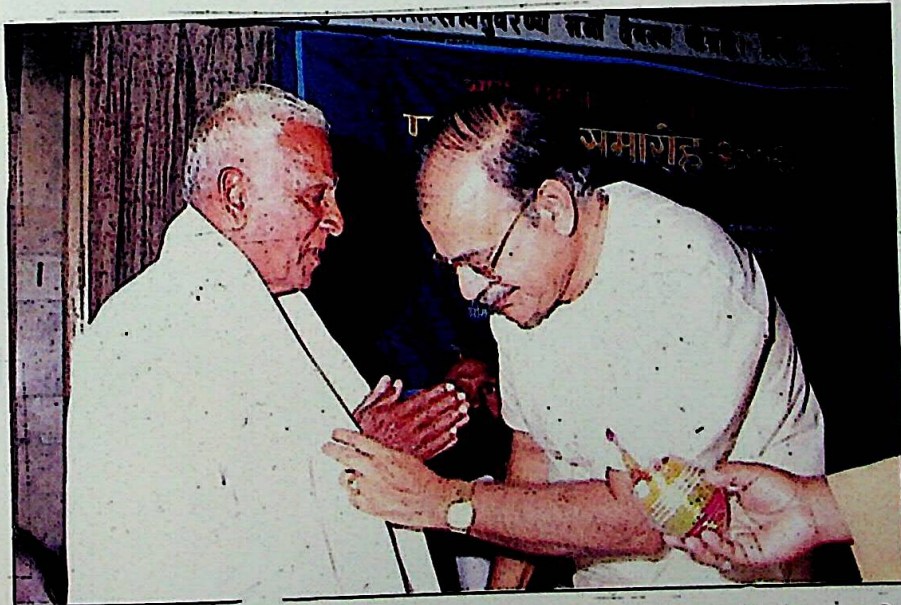
कैप्टन देव रत्न जी 'शरर' जी को शाल पहना कर उनका अभिनंदन करते हुए

पुरस्कार समारोह आर्य समाज शांताक्रुज, मुम्बई २००२

'वेदोपदेशक' पुरस्कार प्राप्ति हेतु पहुंचने पर मुम्वई के आर्य वन्धुओं द्वारा 'शरर' जी पर पुष्प वर्षा से स्वागत
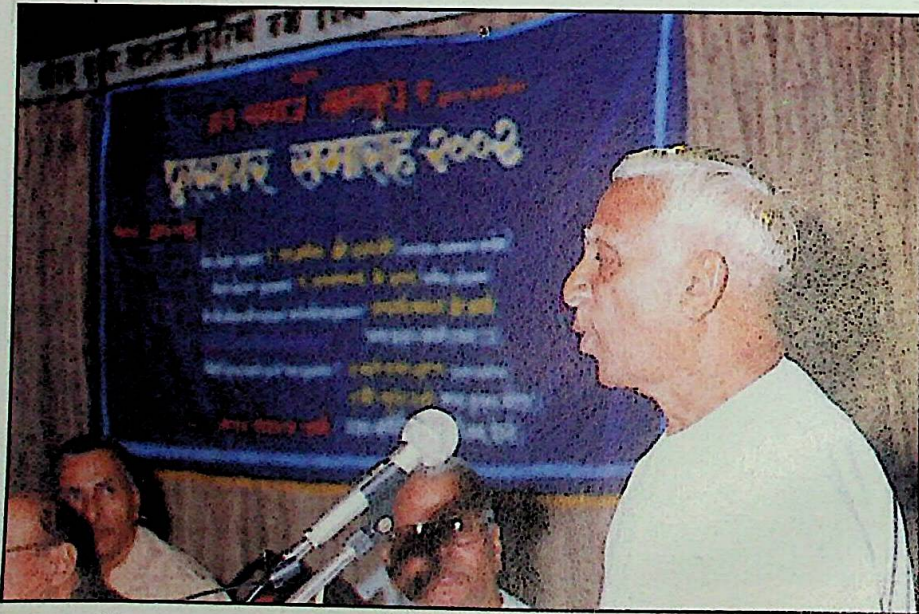
'वेदोपदेशक' पुरस्कार समारोह में 'शरर' जी सम्वोधित करते हुए।

सन् २०००, आर्य समाज कालका जी, नई दिल्ली, वार्षिकोत्सव
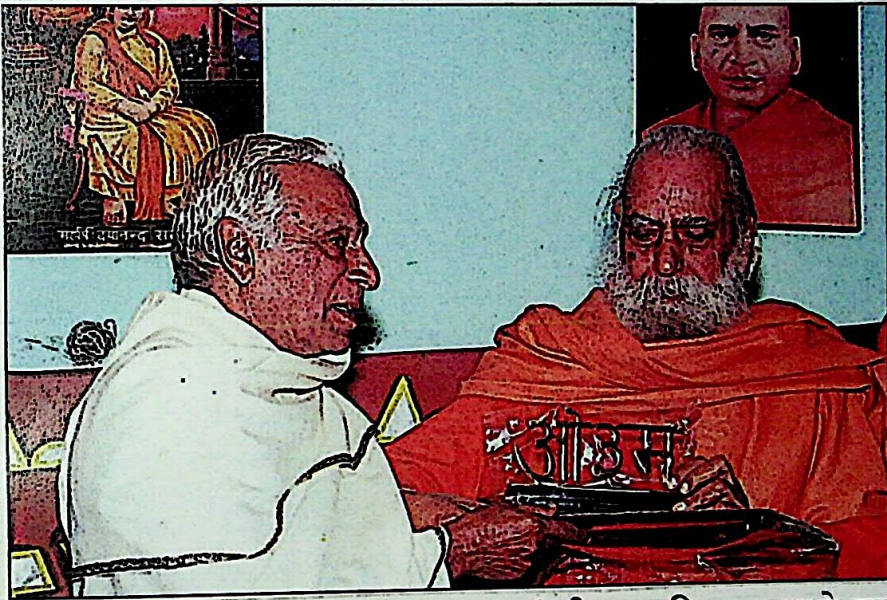
स्वामी दीक्षानन्द जी 'शाल पहना कर शरर' जी का अभिनन्दन करते हुए।
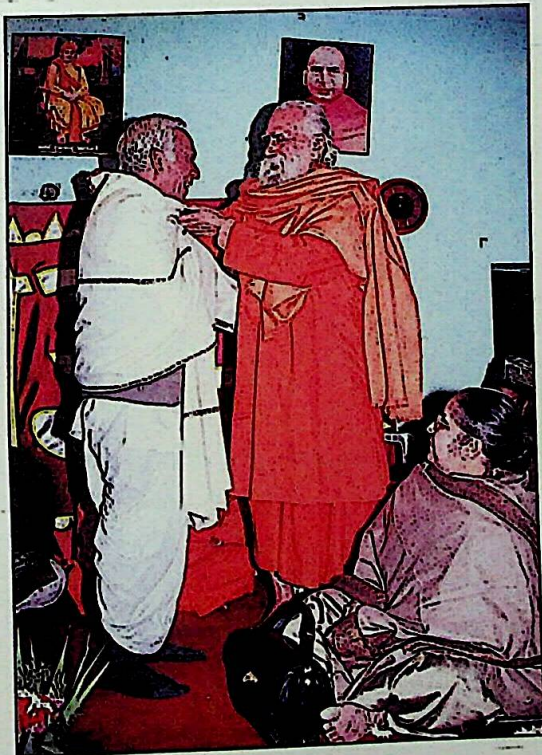
स्वामी दीक्षानंद जी 'शरर' जी को ऋषि दयानंद का चित्र तथा ओ३म्-स्मृति चिह्न प्रदान कर सम्मानित करते हुए
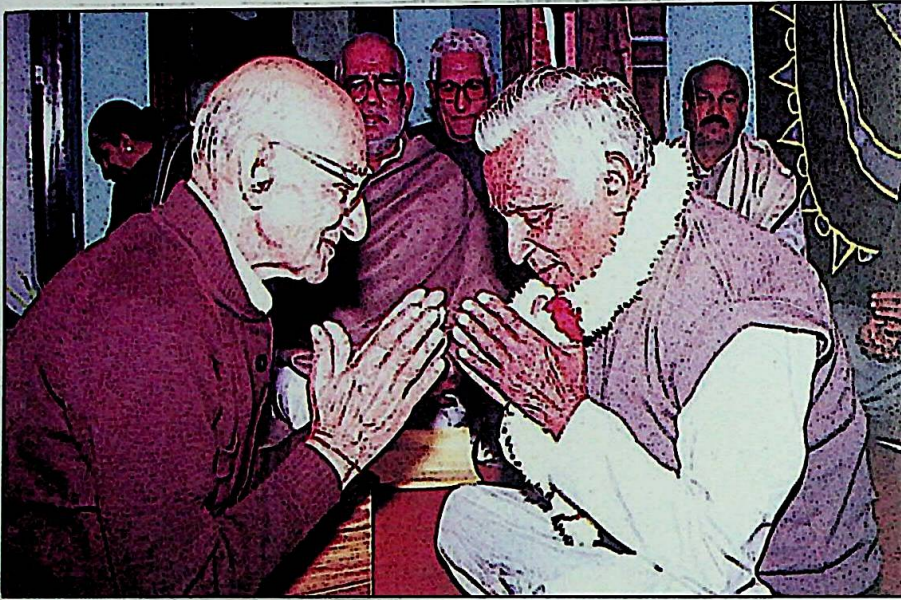
पूर्व प्रधान आर्य समाज कालका जी श्री इन्द्रसेन कोहली हार पहना कर 'शरर' जी का अभिवादन करते हुए।
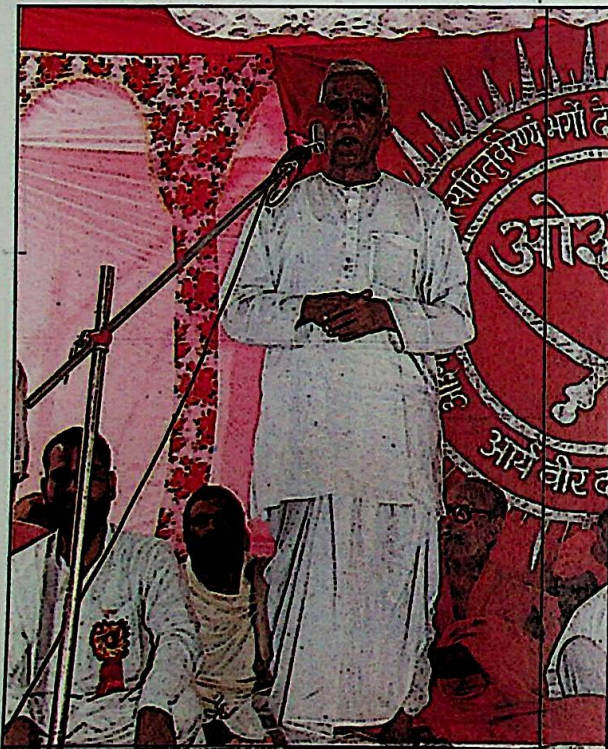
रोहतक आर्य वीर दल महासम्मेलन को सम्बोधित करते हुए प्रो. शरर जी। मंच पर दिखाई दे रहे हैं स्वा. ओमानंद जी, आ. विजयपाल जी (झज्जर), संचालक श्री उमेद शर्मा जी

स्वा. श्रद्धानंद बलिदान दिवस पर श्री मुनीश चंद्र अरोड़ा तथा श्री ज्ञानचंद आर्य श्री शरर जी का माल्यार्पण से स्वागत करते हुए।

आर्य समाज मुम्बई की मुलुण्ड शाखा में द्वितीय स्थापना दिवस (दि. २९/११/२००१) के अवसर पर आर्य समाज के मैनेजिंग ट्रस्टी श्री कृष्णचन्द्र अग्रवाल श्रद्धेय पं. उत्तम चन्द जी शरर का स्वागत करते हुए।

आर्य समाज गोविंद नगर (कानपुर) के वार्षिक समारोह में मंच पर श्री उत्तम चंद जी शरर का स्वागत करते हुए उत्तर प्रदेश के सांसद श्री कैलाशनाथ सिंह यादव
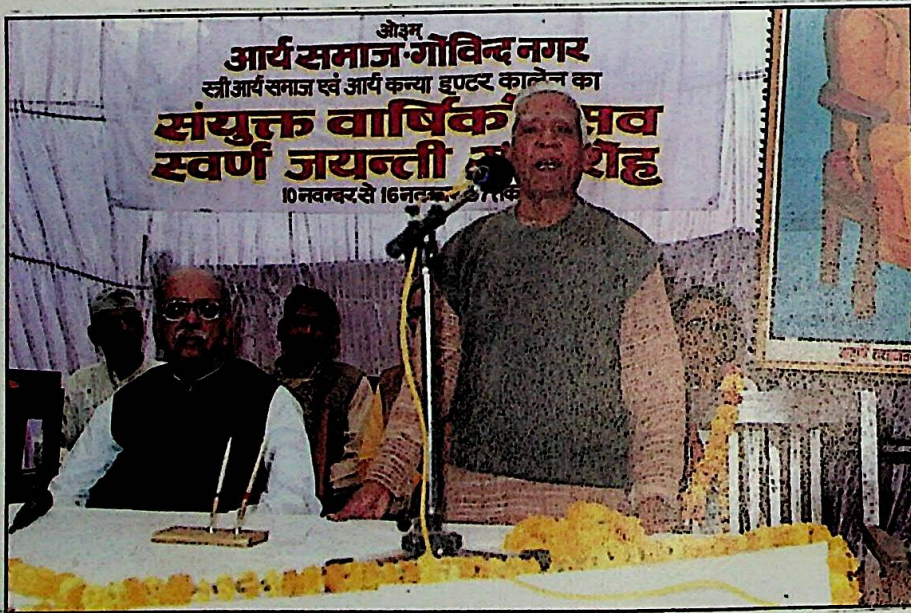
आर्य समाज कानपुर में सम्बोधित करते हुए श्री शरर जी। साथ बैठे हैं प्रख्यात समाजसेवी श्री देवीदास आर्य

डी.ए.वी. कालेज फार विमेन करनाल, सम्पादकीय विभाग सेशन १९७०-७१

कुर्सियों में वाएं से दाएं मिस इन्दु, मिस ग्रेवाल, श्रीमती अग्रवाल, श्रीमती बी. पाटिल, श्री शरर जी
वाएं से दाएं अवतार, लखवीर, सुदेश, सुदेश

डी.ए.वी. कालेज फ़ार विमेन करनाल, हिन्दी साहित्य परिषद् सेशन १९७०–७१

कुर्सियों में वाएं से दाएं ऊषा टिक्को, एस. गुप्ता, श्रीमती वी. पाटिल, श्री शरर जी, सरोज मलिक
वाएं से दाएं खड़े हैं मदालसा, रीता, हेमलता, किरन, गीता, गार्गी, सरोज

रचना-कल्पना को वेदों में वास्तविक मानते हैं और वेदों को सब आविष्कारों के तत्त्वों का भण्डार मानते हैं, परन्तु यह सिद्धान्त विद्वानों के मन को रमानेवाला किंवा मान्य नहीं है।"

अब कहिये, सम्मान्य त्रिवेदी जी, **"स्वनिकेतनदीपेन गृहं दग्धं स्वकीयकम्"**—"इस घर को आग लग गई घर के चिराग से!' क्या ऐसे विद्वान् सनातनियों में ही हैं, जिन्हें वेद सब सत्य विद्याओं का भण्डार स्वीकार नहीं है।

सही बात तो यह है कि यदि भूमण्डल पर जीवित रहना चाहते हो तो ऋषि दयानन्द के उदाहृत यजुर्मन्त्र के अनुसार मानव मात्र को वेद पढ़ने के अधिकार से भूषित करना होगा, क्योंकि वेद ही तो आदिम विश्व संस्कृति के प्रकाश के संवाहक रहे हैं। अपने संकीर्ण हृदय के महाकक्ष के वृहद् द्वार को खोल दो! अब तो यज्ञोपवीत गया, चोटी गयी, संयम और सदाचार की प्रतीक लंगोटी भी गयी। मेरा सम्बोधन विशेष रूप से रूढ़िकूप की लघु परिधि में पड़े ब्राह्मणब्रुवों से है। वैदिक ऋषियों की दृष्टि विशाल और व्यापक थी। उनकी ही प्रथम घोषणा थी—**"माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः"** अर्थात् "भूमि मेरी माँ है और मैं इसका पुत्र हूँ।"। वे अपने में विश्व को देखते थे और विश्व-दर्शन में स्वयं को समाहित समझते थे। उनके मानस विशाल, वचन उदार और कार्य एवं व्यवहार व्यापक थे। जिस **'वसुधैव कुटुम्बकम्'** की बात आज लोग कहने लगे हैं, वे उसकी प्रतिमूर्ति थे। वे समष्टिगत चैतन्य में स्वयं को देखते थे। सर्वप्रथम महर्षि दयानन्द ने पाश्चात्य विद्वदाभास मैक्समूलर के भाष्य का खण्डन किया और वेद एवं उसकी भाषा संस्कृत को ज्ञान और प्राचीनतम लिपि बताने का घोष किया। इसीलिये मैं मानव मात्र से कहूँगा कि **"संन्यसेत् सर्वकर्माणि वेदमेकं न संन्यसेत्'**—"सब कर्मों को चाहे किसी के दबाव में आकर छोड़ना पड़े तो भी, ६०० वर्षों तक यवनों की तलवारों से शिरश्छेद कराके भी जिन वेदों को हमारे पूर्वजों ने कण्ठस्थ करके उनकी रक्षा की, उन्हें नहीं छोड़ें—

ब्रह्मद्रवस्य मधुरा मृदुमञ्जुलेयं धाराऽस्तु मंगलमधुस्रुतशीतलाभ्यः।
आत्मप्रशान्तिसुखदा सरसा सुगन्धा, सुप्राणसम्भृत-सुवेद-गिरि-प्रसूता॥

तात्पर्य यह कि "वेद ब्रह्मद्रव की मृदु, मधुर और मंजुल निर्मल धारा है, जो मंगलमयी मधु स्राव करनेवाली शीतल जल-राशि है। आत्मा को प्रशान्ति, सुख, रस और सुगन्ध, सुप्राण एवं शक्ति से परिपूर्ण वेद के हिमालय से यह प्रसूत हुई है। इसकी रक्षा के लिए सदैव कटिबद्ध रहो।"

कूँचापाती राम, बदायूँ (उ.प्र.)

वैदिक-समाज-व्यवस्था

—सत्यव्रत राजेश
प्राध्यापक गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

संस्कृत साहित्य में समूह वाचक दो शब्द हैं—समज तथा समाज। समज पशुओं के समूह को कहते हैं तथा समाज मानव-समूह को। वेद के अध्ययन से ज्ञात होता है कि समाज का सर्वांगीण चित्र वेदों में समुपस्थित हैं। वैसे तो समाज शब्द अपने अन्दर बहुत गम्भीर तत्त्वों को छिपाए बैठा है जिसमें धर्म, दर्शन, खान, पान, परिधान तथा आर्थिक अवस्था आदि बहुत कुछ आता है किन्तु हमारे लेख का कलेवर उन समस्त विषयों को अपने अन्तर में पचाने में असमर्थ है इसलिए अपने विषय की मुख्य-मुख्य बातों पर विचार करके ही हम अपनी लेखनी को विराम देंगे।

समाज व्यवस्था के दो मुख्य आधार हैं, वे हैं वर्ण तथा आश्रम। वैदिक संस्कृति में मानव जीवन को दो प्रकार से विभक्त किया गया है। एक कार्य की दृष्टि से तथा दूसरे आयु की दृष्टि से। कार्य की दृष्टि से किये गए विभाग को वर्ण तथा आयु की दृष्टि से किये गए विभाग को आश्रम कहते हैं। वर्ण चार हैं—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र। ये वस्तुतः एक प्रकार के व्रत हैं जिन्हें व्यक्ति अपने जीवन में लेता है। समाज के तीन महान् शत्रु हैं—अज्ञान, अन्याय और अभाव तथा गौण शत्रु है— असहयोग। समाज के अज्ञान रूपी महान् शत्रु को नष्ट करने के व्रती को ब्राह्मण कहते हैं। इसके हाथ में शान्ति का शस्त्र होता है तथा यह हृदय को परिवर्तित करता है। निरुक्त के शब्दों में—

य आतृणत्यवितथेन कर्णावदुःखं कुर्वन्नमृतत्वं सम्प्रयच्छन् ॥२.१.४॥

जो कष्ट न देता हुआ तथा अमृतत्व प्रदान करता हुआ सत्य से कानों को भर देता है। यह अपराधी को दण्ड न देकर अपने आत्मिक बल से उसका सुधार करता है। इसका निर्माण बाह्य न हो कर आन्तरिक होता है। यही इसकी विशिष्टता है।

जो व्यक्ति अन्याय के मिटाने का संकल्प लेता है उसे क्षत्रिय कहते हैं। प्रजा के अन्दर सदाचारी सत्पुरुषों को प्रोत्साहन तथा दुष्ट प्रवृत्तियों का दमन क्षत्रियों का मुख्य कर्त्तव्य है। यथोचित दण्ड तथा पुरस्कार—ये क्षत्रिय की दो भुजायें हैं। इसका दण्ड सबके सोने पर भी जागता रहता है। जिससे भयभीत हो कर पापी लोग एकान्त में भी पाप करने से डरते हैं।

अभाव के नाश का व्रत लेने वाले को वैश्य कहते हैं। यह अपने व्रत के पालन के लिये देश-देशान्तर की यात्रा का कष्ट सहन करता है किन्तु राष्ट्र को वैभवशाली बनाने में कोई न्यूनता नहीं आने देता। चौथी श्रेणी उन लोगों की है जो उपर्युक्त तीनों महाव्रतों में से कोई व्रत नहीं लेते अपितु उनके सहयोगी बन कर उनके कार्य को आगे बढ़ाने में सहायता करते हैं, इन्हें शूद्र कहते हैं। इन वर्णों की उपाधि आचार्य प्रदान करते हैं। जन्म के आधार पर ये श्रेणियां प्राप्त नहीं हो सकतीं। हां, माता-पिता का व्यवसाय सम्पर्क के कारण सहायक अवश्य बनता है किन्तु सर्वथा सम्भव नहीं कि पुत्र एवं पिता की प्रवृत्ति एक ही प्रकार की हों।

ऋग्वेद १०, ९०.१२ तथा यजुर्वेद २१, ११ में इस विषय को स्पष्ट करने वाला एक मन्त्र इस प्रकार है—

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः।
उरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत॥

अथर्ववेद में इसमें कुछ तनिक सा परिवर्तन होकर इस प्रकार मन्त्र मिलता है—

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्योऽभवत्।
मध्यं तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत॥

यह मन्त्र तै. आ. ३, १२, ५ में भी समुपलब्ध होता है। मन्त्रार्थ इस प्रकार है—'इस परमेश्वर की सृष्टि में जो मुख के समान है वह ब्राह्मण, भुजाओं से युक्त क्षत्रिय, जंघा तथा मध्यभाग के गुणों वाला वैश्य तथा सेवा एवं निरभिमानिता युक्त की शूद्र संज्ञा है जिसे वेद ने पगों की उपमा से सुभूषित किया है।

अब इन पर सामान्यतः विचार किया जाता है। मुख में तीन बातें विशेष मिलती हैं वे हैं—ज्ञान, त्याग, और तपः। समस्त ज्ञानेन्द्रियों का यह मुख्य केन्द्र है। मुख को यदि रबड़ आदि से ढक दिया जाए तो हम देखने सुनने, सूँघने तथा चखने आदि ज्ञानों से वंचित रह जाते हैं। अतः मानव समाज में जो ज्ञानयुक्त हो उसे ब्राह्मण कहते हैं। मुख में दूसरा गुण त्याग का है। वह समस्त पदार्थों का भक्षण करता हुआ भी अपना काम करके आगे सौंप देता है अपने पास कुछ नहीं रखता। तीसरे वह शीतोष्ण द्वन्द्वों को खुले रूप में सहता है। यही गुण ब्राह्मण में होते हैं।

हाथों का कार्य रक्षण, ताड़न तथा शोधन है। राष्ट्र में इन गुणों वाले को क्षत्रिय कहते हैं। मध्य भाग का कार्य है समस्त प्राप्त पदार्थों का शोधन करके यथोचित विभाजन करना। पेट समस्त अन्न को पचा कर समस्त शरीरावयवों को बांट देता है।

यही प्रवृत्ति वैश्य की है। जोड़कर रखने से उसका राष्ट्र रूपी शरीर मर जायेगा—कृश हो जाएगा।

पैर समस्त शरीर का भार वहन करते तथा उसे यत्र-तत्र उठाए फिरते हैं। इसी प्रकार जो सेवा से राष्ट्र को उठाए फिरे वह शूद्र है। अस्पृश्यता वैदिक धर्म में नहीं है। आश्रम व्यवस्था भी वैदिक समाज का एक प्रमुख अंग है। जैसे गणित में जोड़, घटाना, गुणा तथा भाग होते हैं इसी प्रकार वैदिक समाज में ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा संन्यास ये चार आश्रम मानवों को इसी प्रकार की शिक्षा देते हैं। **'जीवेम शरदः शतम्'** इस श्रुतिवचन तथा **'शतायुर्वै पुरुषः'** इस ब्राह्मण वचन के अनुसार मानव की सामान्य आयु सौ वर्ष मानी गई है। जिसके सामान्यतया चार विभाग किए गए जो क्रमशः २५, ५०, ७५ तथा १०० वर्ष हैं। २५ वर्ष तक सामान्यतया तथा ४८ वर्ष तक विशेषतया ब्रह्मचर्याश्रिम का काल है। इसमें वह विद्याबल, शरीरबल, आत्मबल तथा बौद्धिक आदि बलों का सम्पादन करता है। संसार के विषयों से अलिप्त रह कर गुरु सेवा करता हुआ वह वेद विद्या के कोष का संचय करता है। दूसरे आश्रम में पंचयज्ञों का सेवन करते हुए वह नव-निर्मिति से राष्ट्र को पुष्ट करता है। ५० वर्ष के उपरान्त जब सिर के बाल श्वेत होने लगें, मुख पर झुर्रियां पड़ने लगें तथा पुत्र के घर पुत्र हो जाए तब घर को छोड़ कर वन की ओर मानव का गमन हो जाता है। वहां वह अपनी खोई सम्पत्ति को गुणा करने में प्रयत्नशील होता है। स्वाध्याय उसका प्रिय विषय है। शान्ति उसकी सहचरी है। मनोनिग्रह उसका मुख्य कार्य है। एकाग्रता उसकी आराध्यदेवी है। वह देता है लेता नहीं। दया उसका भूषण है। सब विश्व उसका तथा वह सबका। विराट् की शरण में आने वाला विराट् क्यों न बने।

चतुर्थ आश्रम संन्यास है। संन्यासी विभाग करना—बाँटना सीख गया। साक्षात् अग्निपुत्र काषायाम्बरधारी यह संन्यासी सबको निर्भय दान देकर स्वयं अभय बन जाता है। परिव्राट् बन कर वेद के धर्म को विश्व में फैलाता हुआ यह वीर सब कुछ त्याग कर भिक्षुक बन जाता है।

संस्कार भी वैदिक समाज के प्राण हैं। जन्म की नींव से लेकर जीवन की अन्तिम यात्रा तक शरीर तथा आत्मा की उन्नति के लिए १६ संस्कार करने होते हैं। जिस प्रकार पशुओं-पक्षियों तथा अन्नों की सन्तति को उन्नत किया जाता है वैसे ही आर्य लोग मानव के उत्थान के प्रति जागरूक थे। इसी कारण उन्होंने १६ संस्कारों का—जो वेद विहित हैं प्रचलन किया था।

वैदिक समाज में नारी का भी बहुत महत्त्व था। वह पैर की जूती नहीं थी अपितु शीश का मुकुट थी। ऋग्वेद १०.१५९ में नारी की महत्ता का चित्रण करते हुए लिखा है—

अहं केतुरहं मूर्धाऽहमुग्रा विवाचनी।
ममदनु क्रतुं पतिः सेहानाया उपाचरेत् ॥२॥
उताहमस्मि संजया पत्यौ मे श्लोक उत्तमः ॥३॥

मेरा वह स्थान है, जो राष्ट्र में पताका का तथा शरीर में मूर्धा-शिर का। मैं तेजस्विनी तथा वाक्शक्तिशालिनी हूं। शत्रु को नीचा दिखाने वाली हूं। मेरे व्रत के अनुकूल मेरा पति चलता है। मेरा पुत्र शत्रुओं का नाश करने वाला है, मेरी पुत्री विशेष देदीप्यमान हैं। मैं भी विजय करने वाली हूं। मेरी कीर्ति मेरे पति से भी उत्तम है।

वैदिक समाज में जीविका का मुख्य साधन कृषि था। **'कृषिमित् कृषस्व'** आदि वाक्यों से इसकी महत्ता का बोध होता है। वैसे यजुर्वेद में सैकड़ों व्यवसायों का वर्णन मिलता है।

इस प्रकार वैदिक समाज व्यवस्था अति सुन्दर सुदृढ़ तथा वैज्ञानिक है। इसी पर चल कर मानव कल्याण होगा।

वैदिक धर्मोद्धारक महर्षि दयानन्द सरस्वती के शब्दों में मनुष्य की परिभाषा

मनुष्य उसी को कहना कि मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख दुःख और हानि-लाभ को समझे, अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे, इतना ही नहीं किन्तु अपने सर्व सामर्थ्य से धर्मात्माओं कि चाहे वे महा अनाथ, निर्बल और गुण रहित क्यों न हों—उनकी रक्षा, उन्नति, प्रियाचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती सनाथ महाबलवान् और गुणवान् भी हों तथापि उसका नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करें अर्थात् जहां तक हो सके वहां तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करे। इस काम में चाहे उसको कितना ही दारुण दुःख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी भले ही जावें, परन्तु इस मनुष्यपन रूप धर्म से पृथक् कभी न होवे।

—सत्यार्थप्रकाश स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकरण

जैसे पशु बलवान् होकर निर्बलों को दुःख देते और मार भी डालते हैं, जब मनुष्य शरीर पा के वैसे ही कर्म करते हैं तो मनुष्य स्वभाव युक्त नहीं किन्तु पशुवत् हैं, और जो बलवान् होकर निर्बलों की रक्षा करता है वही मनुष्य कहाता है, और जो स्वार्थवश होकर परहानि मात्र करता रहता है, वह जानो पशुओं का भी बड़ा भाई है।

—सत्यार्थ प्रकाश-भूमिका

गायत्री-सावित्री-रहस्य

—आचार्य वेदप्रकाश 'श्रोत्रिय'

जितना यह वस्तुजात जगत् है सो ईश्वर ने प्रकृति, परमाणु आदि सामर्थ्य के अंशों से तीन स्थानों में विभक्त करके धारण किया है, अर्थात् भार-सहित और प्रकाश-रहित जगत् को पृथिवी में, परमाणु आदि सूक्ष्म द्रव्यों को अंतरिक्ष में तथा प्रकाशमान सूर्य और ज्ञानेन्द्रियों आदि को प्रकाश में। इस रीति से तीन प्रकार के जगत् को ईश्वर ने रचा है। जिससे सब जीव मोक्ष-पद को प्राप्त हो सकते हैं। प्रकाश के परमाणुओं से मन और पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और प्रकाशहीन परमाणुओं से दस प्राण, पाँच कर्मेन्द्रियाँ और सब पृथिवीलोक है। ऊपर तनी चाँदनी के तुल्य द्युलोक और नीचे के सुन्दर बिछौने के समान पृथिवीलोक, इन दोनों के मध्य सब का कारण सूक्ष्म तत्त्वावयव-रूपी द्रव्य पोल के बीच स्थित है। प्रकाशयुक्त अग्नि के परमाणुओं की रचना को 'आग्नेय' तथा अन्धकारयुक्त प्रकाशहीन परमाणुओं की रचना को 'सौम्य' कहते हैं। जितने भी पिंड हैं, उन सबमें यह भाव समाया हुआ है अर्थात् सब जगत् 'अग्नि' और 'सोम', इन दो तत्त्वों से मिलकर बना है। जो 'अग्नि' है, वह 'शुष्क' और जो 'सोम' है, वह 'आर्द्र' कहाता है। "अग्नीषोमात्मकं जगत्" इसी रहस्य का द्योतक है।

द्युस्थित सूर्य (सविता) विश्व के सब देवों की मूल प्रेरक शक्ति है। वह क्रिया-शक्ति का अनन्त भण्डार है। क्रियाशीलता का नाम ही 'प्राण' है। जहाँ प्राण है, वहाँ क्रिया है। प्राण एक 'तैजस्' तत्त्व है। जहाँ तेज है वहाँ गति है। गति-तत्त्व ही देवत्व है। प्रकाश भी गति का दूसरा नाम है। अतः देव प्रकाशमय होते हैं। सूर्यदेव अहर्निश अपनी रश्मियों से शक्ति का वितरण कर रहे हैं। रश्मियों में सहस्रविध वितान में प्रकाश की और गति की अजस्र धारा उत्पन्न हो रही है।

जितनी शक्ति सूर्य-केन्द्र से जितनी अवधि में निकलती है, उतनी अवधि में पृथिवी अपने क्रान्तिवृत्त पर एक बिन्दु से चलकर पुनः उसी बिन्दु पर आ जाती है। इसी शक्ति की घनीभूत संज्ञा 'संवत्सर' है। उसी मानदण्ड की अनुकृति पर पृथिवी के अक्ष-परिभ्रमण-काल की शक्ति कीं संज्ञा 'अहोरात्र' है। मैं तो यह समझा हूँ कि अहोरात्र, पक्ष, मास, अयन, उत्तरायण-दक्षिणायन, संवत्सर, ये सभी सूर्यशक्ति की संज्ञाएँ हैं। उन मात्राओं का जन्म गति-तत्त्व से ही है। 'गति' ही ब्रह्माण्ड का अमृतरूप है। ऐसी

अमृतरूप गति को देने वाला प्रेरक सूर्य ही है। यह सूर्य स्वतंत्र अर्थात् अपनी शक्ति का स्वयं केन्द्र है। इस केन्द्र को ब्राह्मण-गंथ में 'उक्थ' नाम से कहा गया है। उक्थ वह केंद्र कहलाता है, जिसमें से निरन्तर 'बल' उठते रहते हैं। सविता सूर्य कहें या समस्त शक्ति का स्रोत कहें अथवा प्राण व ऊर्जा का केन्द्र यानी उक्थ कहें, एक ही बात है। जहाँ सविता होगा, वहाँ उसका केन्द्र होगा, तो उसकी शक्ति भी उस केन्द्र में होगी। उस केन्द्र-स्थित शक्ति की संज्ञा ही 'सावित्री' होगी, जो केन्द्र से उठकर रश्मियों के रूप में पृथिवी की ओर आती है। अतः 'सावित्री' वह है, जो सूर्य से पृथिवी की ओर आने वाली शक्ति है। फिर 'गायत्री' क्या है? पृथ्वी से सूर्य की ओर जाने वाली पार्थिव शक्ति का नाम ही 'गायत्री' है।

सावित्री पृथिवी तक आती है। गायत्री सूर्य तक जाती है। गायत्री-सावित्री, दोनों का परस्पर का घनिष्ठ संबंध है। एक ही गति-चक्र के दो अंग हैं। वेद-विज्ञान की भाषा में इन्हें 'एति च' और 'प्रेति च' कहते हैं। यह 'ऐति' और 'प्रेति' वह गति-चक्र है, जहाँ विद्युत्-शक्ति अपने धन-केन्द्र से चलकर ऋण-केन्द्र की ओर जाती है और बार-बार उसकी ओर लौटती रहती है। यही एति-प्रेति-रूप शरीर में 'प्राणत्'-'अपानत्' कहलाता है। धन-ऋण, प्राणापान, अग्नि-सोम ही सावित्री-गायत्री का विज्ञान है। 'सावित्री' पृथिवी तक पहुँचते-पहुँचते 'गायत्री' बन जाती है और 'गायत्री' सूर्य तक पहुँचते-पहुँचते 'सावित्री' में बदल जाती है। इसी 'प्राण' और 'अपान' के चक्र के घूमने से शरीर की विद्युत्-शक्ति उत्पन्न हो रही है। इन्हीं दो धाराओं को 'भार्गवी' और 'आङ्गिरसी' धारा कहते हैं। 'पृथिवी' का 'आङ्गिरा प्राण' ऊपर की ओर सूर्य को प्राप्त करते-करते 'आदित्य' बन जाता है और 'आदित्य प्राण' पृथिवी तक आते आते 'आङ्गिरा' बन जाते हैं।

व्यापक दृष्टि से विचार करें तो ब्रह्माण्ड या पिंड में कुछ भी ऐसा नहीं है, जो इस द्वन्द्व से विनिर्मुक्त हो। अग्नि-सोम, प्राण-अपान, भृगु-अङ्गिरा, ऋण-धन, वृद्धि-ह्रास की संज्ञा भारद्वाज-च्यवन ऋषि, दिन-रात, उत्तरायण-दक्षिणायन, शुक्लपक्ष-कृष्णपक्ष, पूर्वाह्न-अपराह्न, प्रातः-सायं, देव-पितृ, ज्ञान-कर्म, ज्योति-तम आदि द्वंद्वों के नाम से विज्ञात हैं। यही कुल मिलाकर विस्तृति में सृष्टि और प्रलय की दृष्टि से ब्राह्म दिन और ब्राह्म रात्रि हैं।

दिन प्राण-प्रधान और रात्रि अपान-प्रधान है। उत्तरायण प्राण-प्रधान और दक्षिणायन अपान-प्रधान है। वृद्धि प्राण-प्रधान और ह्रास अपान-प्रधान है। ज्योतिर्मय काल में प्राणों का उत्सर्ग ऊर्ध्वगमन है, तमसावृत काल में प्राण-त्याग अधस्तात् गति अपान-प्रधान
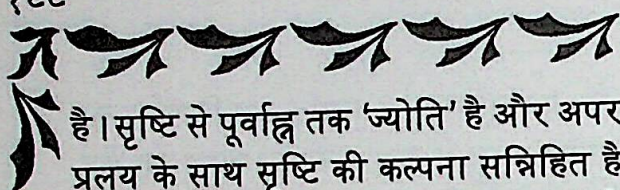
है। सृष्टि से पूर्वाह्न तक 'ज्योति' है और अपराह्न तक 'तम' है। सृष्टि के साथ प्रलय और प्रलय के साथ सृष्टि की कल्पना सन्निहित है। प्रलयविहीन सृष्टि असंभव है। सृष्टि के प्रत्येक क्षण में प्रलय-प्रक्रिया वर्तमान रहती है। यद्यपि सृष्टि में प्रलय और प्रलय में सृष्टि के अंकुरण मूल बनते रहते हैं। फिर भी अपने-अपने समय में जो विधान प्रबल रहता है उसी के धर्मों के अनुसार सृष्टि और प्रलच या प्राण और अपान के फल दृष्टिगोचर होते हैं। यही सूर्य-सविता का अग्निहोत्र है। **सूर्या-ह वाऽअग्निहोत्रम् (शतपथ)**। इस अग्निहोत्र को जरा-पर्यन्त या मृत्युपर्यन्त चलने से जरामर्य सत्र कहते हैं। इस सतत अग्निहोत्र से तादात्म्य प्राप्त करने केलिए एवं उसके रहस्य को आत्मसात् करने केलिए ही सायं एवं प्रातःकाल होनेवाले अग्निहोत्र की अनिवार्यता की गई है, जिससे कि सांसारिक ध्वनियों में अभिभूत न होकर हम अविनाशी तत्व के संगीत में डूब सकें और अपनी शक्ति को अपव्ययता से बचा सकें।

सावित्री और गायत्री का यह चक्र नित्यप्रति प्रवृत्त है। सूर्य में सोम आहूत हो रहा है। समस्त ब्रह्माण्ड से सूर्य को सोम की आहुति मिल रही है। इसी सोम का कुछ अंश पृथिवी को वापस मिलना चाहिए, अन्यथा प्रचण्ड ज्वालाएँ पृथिवी को भस्म कर डालेंगी। इसलिए यह गायत्री सूर्य से सोम या शक्ति-आर्द्र तत्त्व प्राप्त करती है तभी पृथिवी भस्म होने से बची रहती है। सावित्री पृथिवी तक आते-आते पार्थिव प्राण में परिणत हो जाती हे। तात्पर्य यह है कि यह भूपिण्ड सावित्राग्नि को अपने लिए उपयोगी बनाकर अपने रंग में रंग लेता है। तभी सूर्य जीवन का पोषण करता है। सूर्य को मिलने वाली 'सावित्राग्नि' को पार्थिव अग्नि अन्तर्याम-सम्बन्ध से अपना बना लेती है। जब तक सौर अग्नि पार्थिव न बने, वह एक तृण का भी पोषण नहीं कर सकती, अपितु उसे अपनी उष्णता से जलाकर राख ही कर सकती है।

गायत्री-विद्या प्राण-विद्या है। भूत को प्राणमय बनाना ही 'गायत्री' है। भूत द्वारा प्राण को अन्तर्याम-संबंध से आत्मसात् करना ही गायत्री की उपासना है। प्राण और भूत का प्रतिफल संघर्ष शक्ति-तत्त्व और जड़-तत्त्व का संघर्ष है। भूत और शक्ति ही 'आसुरी' प्राण और दैवी' प्राण है। इन दोनों का संघर्ष हो रहा है। वैदिक विज्ञान में प्राण को 'छन्द' कहते हैं। क्योंकि 'गय' स्वयं प्राण है सो गायत्री छन्द से उस गय-प्राण तत्त्व को हम अपने भूतों के लिए प्राप्त करते हैं। प्राण सर्वत्र व्याप्त है। उसे पार्थिव शरीर में अंतर्याम बना सकें, बस यही जीवन है। यही गायत्री का **'गायन्तं त्रायते'** स्वरूप है। पार्थिव प्राण का सौर प्राण से नित्य मिलन और मंचमण्डलों में से परमेष्ठी मण्डल के पारमेष्ठ्य सोम

तत्त्व के साथ पुनः पृथिवी की ओर आगमन—यही गच्छती गायत्री है। प्रजापति ने गायत्री छन्द पर पृथिवी समाप्त की है। पृथिवी ही गायत्री है, यही प्रजापति की दृष्टि से 'यदगायत तद् गायत्री' का रूप है। सौर प्राण तक सृष्टि-क्रम का पर्यवसान नहीं है अपितु आसुर प्राण गायत्री-पृथिवी पिण्ड पर सृष्टि समाप्त हुई, इसलिए यह कहा जाता है कि सोम तत्त्व या जल से पृथिवी बनी है। उसे देव प्राण या सूर्य का सौर प्राण अपने प्रभाव में लेता है। स्थूलभूत वारुण प्राण मूर्च्छित प्राण है। उसमें देव प्राण का प्रवेश आवश्यक है। पृथिवी के गायत्री प्राण या सावित्री का प्रवेश हो रहा है। यह भूपिण्ड देव और आसुर प्राणों के, ज्योति और अंधकार के, अदिति और दिति के बीच में है। कदाचित् सौरमण्डल से पृथिवी का संबंध छूट जाए तो पृथिवी का गोला मूर्च्छित हो जाए, भूत-रूप में जीवन-विरहित बन जाए। प्राण-अग्नि की सहायता से भूत प्राण में परिवर्तित होते हैं, स्थूल हवि की प्राण-रूप में परिणति होती है। स्थूल अन्न शरीर की अग्नि से ही प्राण-रूप में बदलता है, पुनः सूर्य प्राण से मिलता है। 'हवि' के लिए सबसे उत्तम अग्नि ही है, जो देवों के द्वारा बनाया गया दूत है। पृथिवी के जितने तत्त्व सूर्य की ओर जाते रहते हैं, वे सभी 'हवि' हैं।

सविता-सावित्री मूल में एक हैं। गोपथब्राह्मण में मौद्गल्य और मैत्रे के संवाद-रूप में सविता-सावित्री का विशद् निरूपण है। सविता देव है और सावित्री उसकी देवी है। मौद्गल्य के द्वादश जोड़ों वाली सावित्री का निर्वचन किया है, जो इस प्रकार है—

	धन	ऋण
१.	मन	वाक्
२.	अग्नि	पृथिवी
३.	वायु	अन्तरिक्ष
४.	आदित्य	द्यौः
५.	चन्द्रमा	नक्षत्र
६.	अहः	रात्रि
७.	उष्ण	शीत
८.	विवुत्	स्तनयितनु
९.	प्राण	अन्न
१०.	वेद	छन्द
११.	यज्ञ	दक्षिणा

मन एव सविता वाक् सावित्री। यत्र ह्येव मनस्तद्वाक् यत्र वै वाक् तन्मनः। इत्येते द्वे योनी, एवं मिथुनम्।

अर्थात् "मन सविता है, वाक् सावित्री है। जहाँ मन है, वहाँ वाक् है। जहाँ वाक् है, वहीं मन है। योनियाँ दो हैं, परन्तु मिथनु एक है, जैसे स्त्री-पुरुष में पृथक् योनियाँ दो हैं पर मिथुन एक है, जैसे स्त्री-पुरुष में पृथक् दो योनियों के होते हुए भी सृष्टि केलिए एक ही मिथुन है, वैसे ही सविता-सावित्री मिथुन हैं।" सविता प्राण है सावित्री अपान है, सविता अमूर्त्त है और सावित्री मूर्त है। ज्ञान और कर्म को एक साथ प्रेरित करने की प्रार्थना सावित्री या गायत्री मन्त्र है। अमूर्त्त ज्ञान के लिए मूर्त्त कर्म की नितान्त आवश्यकता है। अमूर्त्त ज्ञान का अवतार मूर्त्त कर्म में होता है। सविता का वरेण्य भर्ग बिना सावित्री के कृतकार्य नहीं हो सकता। प्रातःकालीन सूर्य की सावित्री प्राणात्मिका है। इसलिए प्रातःकालीन दैनिक आहुतियों में **सजुर्देवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा।** अर्थात् "सूर्य के लिए स्वाहा हो, जो सूर्य सविता देव और सावित्री प्राणत्मिका उषा से जुष्ट रहता है।"

इसी प्रकार सायंकालीन अग्निहोत्र में अग्निसंज्ञक प्राण के 'ज्योति' और 'वर्च' रूपों का स्मरण है। सायंकाल का सविता अग्नि और इन्द्रवती सावित्री उषा है। सूर्य और उषा 'अग्नि और रात्रि'—ये प्राणापान या अग्निषोमाख्य द्वन्द्व के ही कल्पना-भेद हैं।

सविता प्राण है, जो उसे अन्न चाहिए। गोपथब्राह्मण के अनुसार 'भर्ग' अन्न है, 'छन्द' वरेण्य है, कर्म 'धी' है। सविता का वरेण्य भर्ग हमें कर्म द्वारा प्राप्त हो सकता है। छन्द एक पात्र है, जिसमें वस्तु का संग्रह किया जाता है वह तो जीवन की एक लययुक्त गति तथा एक आवपन है। यदि जीवन में छन्द नहीं बनता तो अन्न का संचय नहीं होता। क्योंकि छन्द में ही अन्न का संचय होता है। छन्द से छादित होकर अन्न हमारे लिए उपयोगी होता है। अन्न सप्तविध है अर्थात् सात प्रकार का है। ज्ञान, कर्म और भूत मिलकर ये सात अन्न होते हैं।

भूत के अन्तर्गत पंचमहाभूत आते हैं। मन, प्राण और वाक् की समष्टि का नाम 'आत्मा' है। तीनों को तीन प्रकार का अन्न चाहिए। मन को ज्ञान, प्राण को कर्म और वाक् या भौतिक शरीर को पंचभूत या भौतिक पदार्थ-जैसा अन्न चाहिए। 'भूत-मात्रा' को 'वाक्' कहते हैं। पंच महाभूतों के अन्तर्गत 'आकाश' सब से सूक्ष्म है। आकाश का गुण 'शब्द' या 'वाक्' हैं। सविता के साथ जीवन का छन्द एवं उस छन्द से छन्दित होने वाले रस का अटूट संबंध है। इसका उपाय है—धी की प्राप्ति और कर्म की संज्ञा ही धी है।

यह तभी संभव हैं जब अपने लिए छन्दस् बना सकें और उसमें भर्ग या अन्न भरने का संकल्प करें। तभी कर्म-शक्ति पर हमारा अधिकार होगा। इस कर्म को वह सविता या उक्थ-केन्द्र चाहिए, जो साधना से हमारा अपना केन्द्र होगा। बाहर से उधार ली गई शक्ति की मात्रा कभी काम नहीं आती, वह कुछ देर ही रहती है, फिर समाप्त हो जाती है। परन्तु जब वह शक्ति हमारा उक्थ बनकर हमारे केन्द्र से उठती है, तभी हमारे प्राण और मन को संचालित करने लगती है। जो स्वयं प्रकाश-केन्द्र है, वही सविता है। सविता का जो परिपक्व तेज या भर्ग होता है, वह कभी बुझता नहीं है। सविता की ज्योति निज केन्द्र में बनी रहती है। उदय होने पूर्व ब्राह्ममुहूर्त का सूर्य सविता है, क्योंकि उसमें प्रेरणात्मक प्राण की मात्रा सबसे अधिक रहती है। गायत्री और सन्ध्योपासना द्वारा उसी सविता या प्राण का आवाहन किया जाता है। यही गायत्री-सावित्री-विज्ञान है।

"यदि हम पेट के बल रेंग रेंग कर चलें, हमारा रोम-रोम नोच लिया जावे और हमारे शरीर की खाल भी उतार ली जाये तो भी हम महर्षि के ऋण से उऋण नहीं हो सकते।"

—स्वामी स्वतंत्रानन्द जी

वेदों में इन्द्र-वृत्र युद्ध और यास्क

डॉ. महावीर मीमांसक

आचार्य यास्क का निरुक्त वैदिक युग की एक क्रान्तिकारी रचना है। यह ग्रन्थ उस समय का प्रतिबिम्बन है जब वेद केसम्बन्ध में अनेक भ्रान्त धारणायें प्रचलित हो चुकी थीं, विशेषतः वैदिक मन्त्रों के अर्थों के सम्बन्ध में। वैदिक मन्त्रों के अर्थ भिन्न-भिन्न प्रकार से करने के ११ सम्प्रदायों का उल्लेख यास्क के निरुक्त में मिलता है जो उस समय तक प्रचलित हो चुके थे जिन में ऐतिहासिक सम्प्रदाय भी एक था। इन सम्प्रदायों का उल्लेख यास्क ने इति याज्ञिकाः, इति पौराणिकाः, इति वैयाकरणाः, इति ऐतिहासिकाः, इत्यन्ये, इत्यपरे इत्यादि शब्दों में किया है और इन सब के विपरीत/अतिरिक्त अपनी पद्धति को रखा है जिसे वे इति नैरुक्ता कह कर अभिव्यक्त करते हैं। अपनी वेद-भाष्य-पद्धति को प्रतिष्ठापित् और प्रतिपादित करने के लिये यास्क को अपने पूर्व पक्षियों की मान्यताओं का विस्तार से उल्लेख करके उनका तर्क और प्रमाण पूर्वक खण्डन करना पड़ा। वेद के अर्थ को स्पष्ट और निर्भ्रान्त समझने का मार्ग प्रशस्त करने के लिये उन्हें निरुक्त में स्थान-स्थान पर वेद से सम्बन्धित अनेक सिद्धान्तों की परिभाषा और व्यवस्था करनी पड़ी। वेद-भाष्य-पद्धति में उनका भाषा विज्ञान के क्षेत्र में अर्थ विज्ञान का अद्भुत सिद्धान्त धातुज सिद्धान्त था जो शब्दों का निर्वचन वैदिक धातुओं से व्युत्पन्न करकेउनका अर्थ निर्धारण थोड़ा रूढ़ि के आधार पर ढूंढता था जिसके लिये उन्हें कहना पड़ा, **"अर्थ नित्यः परीक्षेत, न व्याकरणमाद्रियेत, विशयवत्यो हि वृत्तयो भवन्ति"।**

यास्कचार्य वेद की भ्रान्तिपूर्ण व्याख्या करने वाले सम्प्रदायों का उल्लेख बड़ी ईमानदारी से स्पष्ट रूप में बड़े विस्तार से करते हैं जिनमें एक ऐतिहासिक सम्प्रदाय भी हैं जो वेद में पूर्वकालिक इतिहास की घटनाओं की व्याख्या वैदिक मन्त्रों के आधार पर करते हैं। यद्यपि यास्क ने ऐसी ऐतिहासिक घटनाओं का उल्लेख अनेक मन्त्रों की यथा प्रसंग व्याख्या के अवसर पर किया है जिसका स्पष्ट खण्डन भी यास्क ने उन वैदिक मन्त्रों की व्याख्या अपनी पद्धति के आधार पर करके किया है, हम यहां पर केवल एक ही प्रसंग को प्रस्तुत करते हैं और वह है वेद में इन्द्र-वृत्र-युद्ध।

इन्द्र-वृत्र-युद्ध का विशद और स्पष्ट वर्णन ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के ३२वें सूक्त में मिलता है जिसमें २५ मंत्र हैं। सूक्त के प्रथम मंत्र का वर्णन इन शब्दों से प्रारम्भ होता है **"इन्द्रस्य नु वीर्याणि प्रवोचं यानि चकार प्रथमानि वज्री"**। अब हम इन्द्र के प्रमुख बल-पराक्रम के कार्यों का वर्णन करते हैं जो वह सर्वप्रथम करता है। इन्द्र के सर्वप्रथम बल, पराक्रम के कार्य को बतलाता हुआ वेद मंत्र का अगला चरण कहता है **'अहमहिम्'**। इन्द्र सर्वप्रथम **'अहि'** (मेघ) को मारता है। इन्द्र क्या है, अहि और वृत्र क्या है? इत्यादि का स्पष्टीकरण हम आगे सप्रमाण करेंगे। इस सन्दर्भ में इसी सूक्त के १०वें और ११वें मन्त्र को हम यहां उद्धृत करते हैं।

अतिष्ठन्तीनामनिवेश नानां काष्ठानां मध्ये निहितं शरीरम्।
वृत्रस्य निण्यं विचरन्त्यापो दीर्घ तम आशयदिन्द्र शत्रुः॥ ऋक् १.३१.१०॥

यास्काचार्य अपने अद्भुत ग्रन्थ निरुक्त में सीधे यह प्रश्न उठाते हैं—**"तत्र को वृत्रः? (निरु. २.५)**। यहां मन्त्र में पठित वृत्र कौन है? बड़ा स्पष्ट उत्तर देते हैं, **'मेघः इति नैरुक्ताः त्वाष्टोसुरः इत्यैतिहासिकाः।'** नैरुक्तों के अनुसार वृत्र मेघ है, और ऐतिहासिकों के अनुसार त्वष्टा का पुत्र असुर वृत्र है। यास्क ने यहां दोनों पक्ष बड़े ईमानदारी से स्पष्ट रख दिये हैं। वेद में इतिहास मानने वाला सम्प्रदाय यास्क के समय तक प्रखर रूप में उभर चुका था और वेद के मन्त्रों की व्याख्या ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में बड़ा मुखर हो कर करता था, यह तथ्य यास्क के इस वचन तथा अन्य वचनों से बड़ा स्पष्ट है। किन्तु यास्क भी इनके विरोध में बड़ा प्रबल स्वर खड़ा करते हैं और वेद के प्रत्येक शब्द की व्याख्या बड़े प्रामाणिक सिद्धान्तों के आधार पर करने का विज्ञान प्रतिष्ठापित करते हैं। यहां यह तथ्य स्पष्ट करने की आवश्यकता है कि यास्क से बहुत पहले से ही वेद की व्याख्या निर्वचन सिद्धान्तों पर करने की पद्धति प्रचलित थी, यास्क कोई प्रथम आविष्कारक नहीं थे इस पद्धति के, वे तो इस पद्धति के उद्धारक प्रतिष्ठाता थे, यह बात उनकेग्रन्थ निरुक्त के अध्ययन से स्पष्ट हो जाती है, यही बात यहां इति नैरुक्ताः शब्दों से भी स्पष्ट है। अस्तु। यद्यपि शतपथ आदि ब्राह्मण ग्रन्थों में इस मन्त्र का विनियोग दर्शपौर्ण मास याग केप्रसंग में दर्षेष्टि सौत्रामणि याग में किया गया है, जहाँ इस मन्त्र की याज्ञिक व्याख्या बड़ी प्रतीकात्मक है और बड़ी रहस्यमयी लगती है किन्तु याज्ञिक प्रतीकात्मक वह व्याख्या अन्ततः वही है जो यास्क ने वृत्र शब्द का अर्थ मेघ देकर की है। सायणाचार्य ने इसकी व्याख्या शतपथ ब्राह्मण में भी बड़ी भ्रामक की है। अन्यत्र ब्राह्मण ग्रन्थों में भी सामन्य पाठक को ऐसी ही लगती है। इसके लिये पूरी याज्ञिक प्रक्रिया की व्याख्या समझनी होगी

जो जैमिनि ने अपने दर्शन पूर्व मीमांसा में की है। हम यहां यास्क के आधार पर लिख रहे हैं।

जैसे वृत्र शब्द का अर्थ मेघ देकर यास्क ने भ्रम निवारण किया वैसे ही देवता और इन्द्र शब्दों का वास्तविक अर्थ क्या है, जिनके सम्बन्ध में बहुत बड़ा भ्रम हैं, वह भी यास्क ने निर्भ्रान्त स्पष्ट किया है।

देवता का वेद में क्या अभिप्राय है, यास्क ने लिखा है, **"यत्कामऋषिर्यस्यां देवतायामार्थ पत्यमिच्छन् स्तुतिं प्रयुङ्क्ते तद् दैवतः स मन्त्रो भवति"** (नि. ७/१)। देवता मन्त्र का (अर्थपति) मुख्यार्थ शीर्षक या वर्णनीय विषय वस्तु होता है। ऋषि अपनी कामना के अनुसार मन्त्र का देवता बदल ले, यह व्याख्या करना सर्वथा गलत है। यहां ऋषि की आर्थी कामना या भावना सनातन है, वह समय-समय पर बदलती नहीं है। यदि ऐसा होता तो अभी तक मन्त्रों के देवता कितनी ही बार बदलते-बदलते अनेक हो जाते, किन्तु देवता वही निश्चित हैं, क्योंकि मन्त्रों के अर्थ निश्चित हैं। देवता के सम्बन्ध में एक और भ्रान्ति का निवारण यास्क करते हैं कि देवता कोई पुरुषाकार व्यक्ति नहीं हैं। (द्र. निरु. ७.७) **अपुरुषविधानामेव सताम्...... एष चाख्यानसमयः।**

इन्द्र क्या है, यह भी यास्क ने निर्भ्रान्त स्पष्ट किया है। इन्द्र आदि देवता कोई दैत्याकार विशालकाय या पुरुष व्यक्ति विशेष नहीं है जैसा कि मध्यकालीन वेद—भाष्यकारों, पश्चिमी विद्वानों और उनकी अन्धी दासता करने वाले आधुनिक भारतीय विद्वानों ने समझ लिया है। यास्क इस सम्बन्ध में बहुत ही महत्त्वपूर्ण वैदिक विज्ञान के रहस्यों का उद्घाटन करते हें आज फिर से प्रखर रूप में उजागर करने की महती आवश्यता है।

यास्क के अनुसार वेद में तीन ही वर्णनीय विषय—देवता हैं **१. पृथ्वी स्थानीय अग्नि, २. अन्तरिक्ष स्थानीय वायु या इन्द्र, ३. द्यु स्थानीय सूर्य।" तिस्र एव देवता इति नैरुक्ताः। अग्निः पृथ्वी स्थानो वायुर्वेन्द्रो वान्तरिक्षस्थानः सूर्योद्युस्थानः।"** (निरु. ८.२)। यास्क के इस वचन के अनुसार वेद में समग्र सृष्टि मण्डल का भौतिक विज्ञान वर्णनीय विषय है। समस्त सृष्टि भौतिक विज्ञान की दृष्टि से तीन वर्गों में विभक्त है, **पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्यु।** पृथ्वी पर मुख्य भौतिक शक्ति अग्नि का कार्यकलाप है, अन्तरिक्ष, वायु या इन्द्र भौतिक शक्ति के व्यापार और कार्यों का क्षेत्र है और द्युलोक सूर्य की भौतिक शक्तियों का कार्य क्षेत्र है। एतदनुसार इन्द्र अन्तरिक्ष लोक में कार्य व्यापार करने वाली भौतिक या प्राकृतिक शक्ति है।

अन्तरिक्ष में अपना कार्य व्यापार करने वाली ६८ भौतिक शक्तियों का वर्णन वेद में किया गया जिनका उल्लेख वैदिक निघण्टु (अ. ५.४.५) में किया गया है, उन में प्रथम पांच का उल्लेख हम करते हैं, **१. वायु, २. वरुण, ३. रुद्र, ४. इन्द्र, ५. पर्जन्य (द्र. वैदिक निघण्टु अ. ५.४)**। इन सबकी परिभाषा यास्क ने अपने निरुक्त में निर्वचन और उसकी व्याख्या द्वारा की है तथा वेद मन्त्रों के उदाहरणों द्वारा स्पष्ट किया है कि ये भौतिक शक्तियाँ किस प्रकार की हैं जो अपना कार्य व्यापार अन्तरिक्ष में करती हैं जिससे इस समस्त सृष्टि की क्रियाओं प्रक्रियाओं का संचालन होता है।

वेद में इन्द्र देवता क्या है और उसका क्या स्वरूप है, यह बात इन्द्र के यास्कीय निर्वचन से स्पष्ट हो जाती है।

वैदिक इन्द्र देवता का निर्वचन निरुक्त (१०.१) में निम्न हैं—**"इन्द्र इरांदृणातीति वा, इरां ददातेति वा, इरां दारयते इति वा, इन्द्रवे द्रवतीति वेन्द्रौ रमते इति वा, इन्धे भूतानि इति वा।"** इन्द्र मेघ को फाड़कर जल के रूप में बरसने के लिये परिणत करता है, अथवा बादल को बरसा कर भूमि में अन्नादि के बीज को फाड़कर अंकुरित करता है। दुर्गाचार्य ने भी इस की यही व्याख्या की है **"वर्षक्लेदितअंकुर बीजं भिनत्ति तमन्द्रिकर्म" द्र. दुर्ग. निरु. १०.१। 'इन्दवे द्रवति'** की व्याख्या दुर्गाचार्य ने यूंकी है, **"इन्द्र सोमः तं पातुमसौद्रवति, द्रवति गत्यर्थः। सोम पानार्थमसौ द्रवति"**। अन्तरिक्ष में जब वाष्प के रूप में एकत्रित जलीयांश सोम है, उसको पीने के लिये दौड़ता है अथवा सोम में रमण करता है विचरता है, यह मेघ में स्थित वैद्युत अग्नि है जो वर्षा से पहले कौंधती है और मेघ को जल के रूप में विदीर्ण करके बरसाने के लिये संघर्ष करती है। यही बात **'इन्धे भूतनि'** भौतिक पदार्थों को यह जलाती है, से स्पष्ट की है। इन्द्र का स्वरूप यास्क के निरुक्त अ. ७, पा. ३ में स्पष्ट किया है, **"अथास्य कर्म रसानुप्रदानं, वृत्र वधो, या च का च बलकृतिरिन्द्र कर्मैव तत्"**। मेघ को रस (जल) के रूप में परिणत करके वृष्टि प्रदान करना वृत्र का वध और अन्य जो भी अन्तरिक्ष में शक्ति सम्पन्न कार्यों की घटनायें होती हैं वे सब इन्द्र के ही कार्य हैं। **'वृत्र वधः'** की व्याख्या दुर्गाचार्य ने **"मेघ वधः"** की है। इसे हम आगे स्पष्ट करेंगे। इन्द्र वह भौतिक शक्ति-वैद्युत् अग्नि है जो अन्तरिक्ष में मेघ का विदारण करके जल के रूप में प्रवाहित करती है जो वृष्टि कहलाती है। जिन वेद मन्त्रों या सूक्तों में इस भौतिक शक्ति का या इस के कार्यकलापों का वर्णन है। उनका वर्णनीय विषय इन्द्र है अतः उनका देवता इन्द्र कहलाता है। इन्द्र के कार्यों का वर्णन स्पष्ट करने के लिये हम अपने पूर्व प्रस्तुत मन्त्र पर आते हैं।

ऋग्वेद १.३२.१०वां उपरोक्त मन्त्र जलवाची 'काष्ठा' वैदिक शब्द के उदाहरण के रूप में यास्कने निरुक्त में प्रस्तुत करके इसकी व्याख्या बड़ी स्पष्ट की है। **"आपो हि काष्ठा उच्यन्ते, क्रान्त्वास्थित भवन्तीति"** (निरु. अ. २. पा. ५) 'काष्ठा' शब्द के जलवाची इस निर्वचन में यास्क ने मेघ स्थित जल के उदाहरण के रूप में यह मन्त्र प्रस्तुत किया है। **'अतिष्ठन्तीनां'** की व्याख्या दुर्गाचार्य ने **'मेघोदरं?'** से की है। मेघ में सुरक्षित इधर-उधर अन्तरिक्ष में घूमते हुए पानी को बादलों ने अपने अन्दर गुप्त रख रखा है। वृत्र अर्थात् मेघ/बादल (निरु. १.१०) पानी के भार से नीचे झुक गया है, लबालब भरा हुआ पानी अनिवेशनानां इधर से उधर विचरण कर रहा है। इस प्रकार **'इन्द्र शत्रु'** अर्थात् मेघ/बादलों की घनघोर घटा से चारों ओर गहन अन्धकार छा गया है। यह मूसलाधार वर्षा प्रारम्भ होने से पहले की स्थिति का वर्णन है। **"दीर्घतम आशयदिन्द्रशत्रु"**। ऋ. १/३२/१०

यहां मन्त्र में **'इन्द्र शत्रुः'** शब्द ध्यातव्य है। यास्क ने इस शब्द की व्याख्या यूं की है, **'इन्द्र शत्रुरिन्द्रोऽस्य शातयिता वा शमयिता वा।'** इन्द्र वह भौतिक शक्ति है जो मेघ को प्रताड़ित करती है, विदारित करती है, जल के रूप में परिणत करके वृष्टि के रूप में उसका शमन करती है। यह वैद्युत ऊर्जा है जो बिजली की कड़क के बाद बादल को पिघला कर वृष्टि के रू में प्रवाहित करती है।

यहीं पर यास्क ने प्रश्न उठाया है, **'तत्को वृत्र'?** उत्तर भी यहीं दिया है, **'मेघ इति नैरुक्ताः'**। नैरुक्त परम्परा के अनुसार मेघ ही वृत्र है। इन्द्र कैसे इस वृत्र अर्थात् मेघ का शत्रु—**"शातयिता"** या **"शमयिता"**—कहलाता है, इस उत्सुकता भरी जिज्ञासा और कौतुहल का समाधान यास्क स्वयं पेश करते हैं **"अपां च ज्योतिषश्च मिश्रीभाव कर्मणो वर्ष कर्म जायते, तत्रोपमार्थेन युद्धवर्णा भवन्ति"**। मेघस्थ जल के साथ जब वैद्युत ज्योति-अग्नि .... संघर्षण होता है तो वृत्र मेघ का जल संघात विदीर्ण होता है और मेघ जल के रूप में द्रवित होकर वृष्टि के रूप में परिणत हो जाता है। वैद्युत्—अग्नि का मेघ के साथ यही मिश्रण संघर्ष के रूप में चलता है और अन्तरिक्ष में होने वाली इसी प्राकृत घटना को इन्द्र वृत्र युद्ध उपमालंकार से कहा जाता है जो काव्य शास्त्र का प्रसिद्ध अलंकार है, वेद भी देव का अजर अमर काव्य है, **"पश्य देवस्य काव्यं न ममार जीर्यति"**। यहां इन्द्र वैद्युत्-ज्योति या वैद्युत् अग्नि है और वृत्र साक्षात् मेघ है। वैद्युत-उर्जा मेघ को जल के रूप में द्रवित करने में पूरे संघर्ष के साथ ज़ोर लगाती है और जब उसकी शक्ति मेघ पर हावी हो जाती है तो मेघ द्रवित होकर बरसने लगता है, यही वृत्र का वध है

अर्थात् मेघ का विदीर्ण होकर जल के रूप में द्रवित होना। इसी रोचक घटना को यास्क ने वर्णित करते हुए कहा है, **"विवृद्धया स्रोतांसि निवारयाञ्चकार, तस्मिन् हते प्रसस्यन्दिरे आपः"** (नि. २.५)। मेघ जल के रूप में द्रवित होकर बरसने से पहले खूब घनघोर रूप धारण करते हुए बढ़ता है, फैलता है और अन्त में इन्द्र-वैद्युत शक्ति से विदीर्ण होकर बरसने लगता है। इसीलिये इन्द्र वृत्र का शातयिता या शमयिता होने के कारण इन्द्र शत्रु कहा गया है जिसका अर्थ बहुव्रीहि समास मानने पर वृत्र या मेघ होगा, **(इन्द्र शत्रु यस्य सः इन्द्रशत्रुः वृत्र या मेघ)** यही अर्थ यहां अभिप्रेत है। अन्यथा तत्पुरुष समास मानने पर **"इन्द्रस्य शत्रुः"** इस विग्रह में वृत्र या मेघ इन्द्र का शातयिता या शमयिता बन जायेगा जो अभीष्ट नहीं है। इन्द्र शातयिता होने पर वृत्र या शातयिता या शमयिता होने पर वैद्युत्—शक्ति का ज़ोर मेघ को जल के रूप में विदीर्ण करके वृष्टि करने में असफल रहेगा, और बादल गर्ज गर्जाकर नौ दो ग्यारह हो जायेंगे। यज्ञ प्रक्रिया अनुष्ठान में इसी दोष और विकृति का वर्णन ब्राह्मण ग्रन्थों के इस वचन से होता है **"इन्द्रशत्रुर्वधस्व"** जिसमें यजमान स्वर दोष से इसका उच्चारण अन्तोदात्त तत्पुरुष समास करके करता है जो वर्षेष्टि याग-अनुष्ठान की दूषित प्रक्रिया का द्योतक है जिससे अभीष्ट फल अर्थात् वृष्टि से यजमान (जनता) वञ्चित रह जाता है। वर्धस्व शब्द मेघ के वरसने मे पहले उसके घनघोर आप्यायित रूप का द्योतक है जिसे यास्क ने 'विवृदध्या' शब्द से कहा है। इस वर्षेष्टि भाग के अनुष्ठान की प्रक्रिया का विशद विवेचन और वर्णन पूर्व मीमांसा में किया गया है, जिसे आजकल हर कोई किसी भी तरह से कर बैठता है और अभीष्ट फल नहीं मिलता। वेद में उपमा अलंकार के रूप में युद्ध का वर्णन केवल इन्द्र और वृत्र का ही नहीं है अपितु वेद में इन्द्र और अहि के युद्ध का वर्णन भी इसी युद्ध की उपमा के माध्यम से होता है क्योंकि वृत्र की भांति 'अहि' शब्द भी वेद में मेघ का वाचक है (निघ. १.१०)। इसी बात को यास्क फिर स्पष्ट करते हैं **"अहिवत्तु खलु मन्त्रवर्णाः ब्राह्मणवादश्च"** (नि. २.५)। उपमा के रूप में इन्द्र-वृत्र युद्ध की भान्ति इन्द्र अहि युद्ध भी मन्त्रों में, वेद के शाखा ग्रन्थों में और ब्राह्मण ग्रन्थों में मिलता है जिसकी यही व्याख्या है। अतः इस सम्बन्ध में कोई भ्रम या संशय न रहे, यह तथ्य यास्क ने और निरुक्त के उत्तरवर्ती स्कन्द स्वामी तथा दुर्गाचार्य आदि व्याख्याकारों ने आज से हज़ारों वर्ष पहले ही स्पष्ट कर दिया था जिसका पता प्राचीन भारतीयों को अन्तरिक्ष में काम करने वाली इन्द्र आदि भौतिक शक्तियों और वृष्टि विज्ञान की सूक्ष्म बारीकियों से भली भांति था।

अब इस इन्द्र-वृत्र युद्ध में वृत्र अर्थात् मेघ कैसे मरता है इसका स्पष्ट वर्णन अगले

मन्त्र में दिया है जो निम्न प्रकार है—

दास पत्नी रहिगोपा अतिष्ठन्निरुद्धा आपः पणिनेव गावः।

अपां बिलमपिहितं यदासीद् वृत्रं जघान्वाँ अप तद् ववार॥ ऋक्. १.३२.११॥

इस मन्त्र में अहि शब्द भी है और वृत्र शब्द भी जो दोनों मेघ वाचक हैं, यह हम सप्रमाण बता चुके हैं।

बादल के रूप में गुप्त पानी से लबालब सराबोर घनघोर घटा तनी खड़ी है। पानी उसमें ऐसे जबरदस्ती रुका खड़ा है जैसे व्यापारी बनिया (गो-आदि पशुओं को बेचने वाला) गौवों को जबरदस्ती घेरघार कर रखता है। मेघ से जल द्रवित होकर निकलने के छिद्र मानो रुके हुए हैं कि अचानक इन्द्र-वैद्युत् शक्ति के तड़ातड़ प्रहार बादल पर हुए और बादल द्रवित होकर पानी के रूप में बह निकला। बादल इन्द्र शक्ति वैद्युत्-अग्नि के आघातों से विदीर्ण होकर पानी के रूप में परिणत हो गया और बरसने लगा, यही वृत्र का हनन या वध (**वृत्रं जघन्वाँ**) है जिससे पानी के बहने के रास्ते खुल गये और वह आकाश से भूमि पर वर्षा के रूप में धराशायी गिरने लगा। यही पर्जन्य है जिसके लिये वेद में राष्ट्रगान किया गया है, **"निकामेनिकामे नः पर्जन्योऽभिवर्षतु, फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्ताम्, योगक्षेमो नः कल्पताम्"**।

हज़ारों वर्ष पूर्व यास्क के द्वारा इस वेद विज्ञान की प्रामाणिक व्याख्या करने के बाद भी मध्य काल में यह विद्या लुप्त हो गयी, जैसा कि सायण महीधर आदि के वेद भाष्यों से स्पष्ट है। पश्चिमी विद्वानों ने भी उन्हीं से सम्बन्ध प्राप्त कर के वेद विद्या को रसातल में पहुंचा दिया। ऋषि दयानन्द ने इस विज्ञान का पुनरुद्धार यास्क के आधार पर करने का बीड़ा उठाया, किन्तु पश्चिमी विद्वानों की दासता के शिकार आधुनिक भारतीय विद्वान उसी **"अन्धेनैवनीयमाना यथाऽन्धाः"** की लकीर पर चल रहे हैं। इसका एक नमूना हम यहां प्रस्तुत करते हैं। जो वेद के इस विज्ञान से सर्वथा विपरीत, प्राचीनतम प्रामाणिक व्याख्या से पराङ्मुख होकर इन्द्रादि वैदिक देवताओं का वह मिथकीय काल्पनिक इतिहास पेश करते हैं जो न केवल वास्तविकता से दूर का भी वास्ता नहीं रखता, अपितु इतिहासकारों की गर्हित मनोवृत्ति का भी परिचायक है और इतिहासकार लेखकों की भयंकर अनभिज्ञता पर आधारित है।

दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रो. डी.एन. झा ने १७ दिसम्बर ई. सन् २००१ के अंग्रेजी के हिन्दुस्तान टाइम्स में Panadox Indian Cow शीर्षक से एक लेख लिखा। इस लेख में वे इसी वैदिक देवता के सम्बन्ध में लिखते हैं—"The vedic gods for whom the

various sacrifices were preformed had no fixed mean of food, Milk, butter, oxen, goats and sheep were offered to them and these were their usual food, though some of them seem to have had thin special perferences."

``India had a special liking Regveda. 5.29. 7ab; 6.17.11b; 8 10.27.2c; 10.28.3c; 10.86ab;"

यहां सर्वप्रथम तो प्रो. झा देवता शब्द का अनुवाद `god' शब्द से करते हैं जो पूर्णतः उनकी अनभिज्ञता का परिचायक है। 'देवता' वर्णनीय विषय या शीर्षक होने से Subject-matter ; Heading होता है यह हम यास्कीय परिभाषा देवता शब्द की दे कर सिद्ध कर चुके हैं।

प्रो. झा इन्द्र की विशेष रुचि बैलों के खाने की लिखते हुए जिन वेद मन्त्रों का हवाला देते हैं, उन्हें हम यहां उद्धत कर रहे हैं—

सखा सख्येऽपचन्तूयमग्निरस्य क्रत्वा महिषाँ त्रिशतानि ॥ ऋग्वेद ५.२९.७

पचच्छतं महिषाँ इन्द्र तुभ्यम् ॥ ऋग्.६.१७.११ ॥

यदि प्रवृद्ध सत्पते सहस्रं महिषाँ अघः ॥ ऋग्. ८.१२.८ ॥

अमा ते तुभ्रं वृषभँ पचानि ॥ ऋग्. १०.२७.२ ॥

पचन्ति हो वृषभाँ अत्सि तेषाम् ॥ऋग.१०.२८.३ ॥

उक्ष्णो हि मे पञ्चदश साकं पचन्ति विंशतिम् ॥ ऋग्. १०.८६.१४ ॥

प्रो. झा की सबसे बड़ी भयंकर मूर्खता यह है कि वे न तो वैदिक भाषा को समझते हैं और न ही वेद की तकनीकी पारिभाषिक शब्दावली के अर्थों को। इसलिये वे इन्द्र को दैत्य आकार वाला महाकाय पुरुष—व्यक्ति—विशेष राक्षस जैसा समझते हैं जो पशुओं की बलि यज्ञ में लेकर खाता है। इन्द्र शब्द की परिभाषा और स्वरूप हम पहले ही यास्क के निर्वचनों, वैदिक मन्त्रों और उनकी हज़ारों वर्ष पुरानी प्रामाणिक व्याख्या के प्रमाणों के आधार पर बतला चुकेहैं कि इन्द्र वैद्युत् अग्नि की प्राकृतिकशक्ति है जिसका कार्यभार और सामर्थ्य मेघ को विदीर्ण करके, पानी के रूप में बूंद-बूंद द्रवित करके उसे वृष्टि उन्मुख करना है।

प्रो. झा द्वारा उद्धृत वेद के उपर्युक्त मंत्रों में ५ मंत्रों में 'वृषभ' और एक मन्त्र में उक्षा शब्द आया है जिन सबका अर्थ प्रो. झा ने इनसे किया है। जबकि मौलिक भाषा में 'वृषभ' का अर्थ भैंसा और 'उक्षा' का (?) होता है, प्रो. झा को तो लौकिकसंस्कृत भाषा का भी ज्ञान नहीं, वैदिक भाषा की तो बात दूर रही। प्रो. झा अपने वैदिक ज्ञान का

आधार म.म. उपाध्याय पी.वी. काणे आदि को बतलाते हैं जिनका आधार पश्चिमी विद्वान् और सायण, महीधर आदि हैं जो अत्यन्त अर्वाचीन काल की विकृत और दूषित परम्पराओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। प्रो. झा जब इतिहास की खोज में ज़मीन और आसमान की परतें उधेड़ देते हैं तो वैदिक भाषा के शब्दों के वास्तविक अर्थ को जानने के लिये कम से कम निघण्टु और निरुक्त को ही देखने का कष्ट कर लेते। अह हम उनको निघण्टु और निरुक्त तक पहुंचाते हैं जिससे उन्हें वैदिक शब्दावली के प्रामाणिक अर्थों की जानकारी मिले।

'महष' और 'उक्षा' शब्द निघण्टु में महानामों में पठित हैं जिनका अर्थ है महान् या विशाल। (द्र. निघ. ३.३)। वृषभ शब्द का अर्थ है मेघ या बादल जिसका निर्वचन पूर्वक अर्थ बतलाते हुए यास्क निरुक्त में कहते हैं **"वृषभो वर्षणात् मेघः इत्यर्थः"** अर्थात् वृषभ शब्द की व्युत्पत्ति बारिश अर्थ वाली वृष धातु से है जिसका अर्थ है वर्षा करने वाला मेघ। पच् का अर्थ मांस का पकाना नहीं अपितु अन्तरिक्ष में सूर्य की अग्नि से समुद्र का पानी वाष्प बन कर जमा हाते होते जब मेघ के रूप में परिपक्व हो जाता है, उस वर्षा केलिये तैयार परिपक्व मेघ के लिये पच् धातु का प्रयोग है। वर्षा ऋतु के दो मास अर्थात् साठ दिनों को छोड़ कर साथ केशेष दस मास अर्थात् तीन सौ दिन के लिये शतानि शब्द का प्रयोग है, न कि तीन सौ पशुओं के लिये। दूरे **दस मास=तीन सौ दिन तक अन्तरिक्ष** में जलीय वाष्प अग्नि केद्वारा मेघ के रूप में बनती हुई परिपक्व होती रहती है, पकती रहती है, तैयार होती रहती है। महिष और उक्षा शब्द मेघ के विशेषण हैं। अर्थात् विशालकाय मेघ, महान मेघ न कि पशु विशेष के वाचक। अब उपर्युक्त मन्त्रों का अर्थ स्पष्ट है। पहले मन्त्र का अर्थ है, इन्द्र अर्थात् वैद्युत ऊर्जा का मित्र अग्नि ३०० दिन तक-१० मास तक समुद्र के पानी को बादल के रूप में पकाता रहता है, बनाता रहता है, तैयार करता रहता है। अगले माह में यह दिनों की संख्या १०० है जो ग्रीष्म ऋतु में कुछ दिन और जोड़ कर बनती है। अर्थात् चैत्र, वैसाख और ज्येष्ठ इन तीन महीनों में १० दिन और मिला लो। ग्रीष्म ऋतु में अग्नि समुद्र के पानी को वाष्प के रूप में उड़ाकर अन्तरिक्ष में बादल तैयार करती रहती है, पकाती रहती है। कुछ मन्त्रों में यह संख्या पूरे ९० दिन (नवति) भी दे रखी है। इस प्रकार परिपक्व होकर महान बादल (विशालकाय घनघोर काले बादलों की घटा) अन्तरिक्ष में बनते हैं, पकते हैं, तैयार होते हैं बादलों का रंग काला और सफेद होने से महिष और उक्षा से उपमा भी दी जा सकती है। किन्तु इन दोनों शब्दों का अपना अर्थ वेद में निघण्टु के अनुसार महान या विशाल

ही है। जो मेघ का विशेषण है। वर्षा ऋतु में तैयार परिपक्व महान विशालकाय बादलों को इन्द्र वैद्युत् शक्ति विदीर्ण करके पानी के रूप में द्रवित करके वृष्टि के रूप में ज़मीन पर गिराती है, यही महान मेघ का इन्द्र द्वारा खाना है? वेद के इन पारिभाषिक शब्दों की यह व्याख्या आज से हज़ारों वर्ष पूर्व दुर्गाचार्य ने निरुक्त में यास्क द्वारा निरुक्त वायु, वरुण, रुद्र, इन्द्र और पर्जन्य इन पांच वैदिक देवताओं की व्याख्या के प्रसंग में लिखी है। ये पांचों देवता वे भौतिक शक्तियां हैं जो अन्तरिक्ष में अपना कार्य कलाप करती हैं। दुर्गाचार्य लिखते हैं—**"वाय्वात्मनैव हि मध्यमः, ऊर्जान्मासात् परतः? सार्वदिककमुदकमुपसंहरन्नोषधिवनस्पति जलाशयेभ्यः उदकमन्तरिक्षलोकस्य गर्भमुपचिनोति। स मासाष्टकेन सम्भृतोदकगर्भोविपक्वः प्रावृष प्राप्य प्रसवाय कल्पते। ... ए एष सम्भृतोदकगर्भो वायु र्विवृण्वन् मेघजालेन नभः मध्यमो वरुण सम्पद्यते ततो रुदत् रुद्रः तत इरां दरत् इन्द्रः ततो रसान् प्रार्जयत् पर्जन्यः।" दुर्गाचार्य. निरु. १०.१।** इन्द्र देवता और वैदिक शब्दावली की इतनी स्पष्ट वैज्ञानिक व्याख्या के मूल स्रोत तक पहुँचे बिना इतिहास का प्रोफ़ेसर क्या इतिहास की खोज करेगा?

∴

★ "स्वामी दयानंद द्वारा चलाया हुआ आर्य समाज रूपी आन्दोलन यदि न होता तो उत्तरी भारत में हिन्दुओं (नर-नारियों) की शिक्षा का राम ही राखा था।" **—श्रीयुत सी.वाई. चिंतामणि**

★ "मैं अवश्य ही ईसाई हो गया होता यदि मैंने 'सत्यार्थप्रकाश' और स्वामी दयानंद की जीवनी को अच्छी तरह न पढ़ा होता।"

—स्वामी सत्यदेव परिव्राजक

यजुः संहिता में मोक्ष की परिकल्पना

—डॉ. राजेन्द्र विद्यालंकार

मोक्ष, साधना का महत् या मुख्य फल है। श्री अरविन्द की दृष्टि में यह भारतीय विचारधारा का महत्तम शब्द है। विश्वचिन्तन को भारत की सर्वाधिक मौलिक देन मोक्ष की विचारधारा और मोक्ष की खोज ही है। भारतीय तथा पाश्चात्य दर्शन का विभाजक बिन्दु 'मोक्ष' ही है। विशिष्ट अवस्था का व्यापक 'मोक्ष' दुःख निवृत्यर्थ जन्म-जन्मान्तरों से साधना-निरत जीव की जीवन यात्रा का आत्यन्तिक आनन्दमय प्रवास है। मानव की मोक्ष-मार्ग में प्रवृत्ति एवं अभिरुचि का श्रेय दुःख को है। दुःख के गर्भ से ही भारतीय दर्शन का प्रसव हुआ है।[१] दुःख के स्रोत का अन्वेषण करने के लिए ऋषियों ने जीवन के विशाल परिदृश्य का सूक्ष्म अवलोकन किया। इस अवलोकन के फलस्वरूप प्रत्येक जीवन में विद्यमान दो मार्गों का सन्दर्शन ऋषियों को हुआ। एक मार्ग सांसारिक सुखों से भरपूर है और दूसरा परमानन्द से। प्रथम मार्ग दुःखों के अर्जन का है तथा द्वितीय मार्ग दुःखों के विसर्जन का। कठोपनिषद् का ऋषि इन्हें क्रमशः प्रेयस् और श्रेयस् का मार्ग कहता है।[२] वैशेषिक दर्शन इन्हें अभ्युदय और निःश्रेयस् नाम देता है।[३] परा तथा अपरा नाम से उपनिषदों में जिन दो विद्याओं का कथन किया गया है उनमें परा विद्या श्रेयस् अर्थात् मोक्ष की साधिका है और अपरा विद्या लौकिक अभ्युदय की।

दुःख विसर्जन के मार्ग का अनुसरण करते हुए मनीषियों को मोक्ष से पूर्व एक-दो अन्य दिव्य अवस्थाओं को लाभ होता है। प्रथमतः साधना-मार्ग से जाने पर अतिरञ्जनीय सिद्धियों अर्थात् विभूतियों की उपस्थिति साधकों को रमणार्थ आकृष्ट करती है, जहाँ संकल्पमात्र से समग्र ऐश्वर्यों की सम्पूर्ति आकर्षण का केन्द्र है। अन्य पक्ष में स्वर्ग की हेतुभूत विभिन्न इष्टियाँ विद्यमान है।[४] पश्चात् साधना के आगे बढ़ने पर साधक के अन्तस् में दिव्य आनन्द का संचार होने लगता है। समय आता है जब साधक इसी मार्ग से साधना की सर्वोच्च भूमि में पहुँचकर क्रमशः 'विदेहमुक्त' और 'जीवन्मुक्त' की संज्ञा को प्राप्त करता है। यही अवस्था माननीय दुःखों का आत्यन्तिक निदान है। इसीलिए भारतीय दर्शन मोक्ष से न्यून किसी अवस्था को जीवन का परमशुभ स्वीकार करने को तैयार नहीं है।

चारों संहिताओं में मोक्ष मुक्ति या इस अवस्था के वाचक दूसरे पद अपवर्ग,

निश्रेयस्, निर्वाण, कैवल्य, वैकुण्ठ आदि नहीं मिलते। वेदों में इन शब्दों के अपठित होने से कुछ विद्वानों का ऐसा विचार बन चला है कि भारत में मोक्ष-चिन्तन अपेक्षाकृत विलम्ब से प्रारम्भ हुआ। ऐसा लगता है कि वैदिक लोगों का विश्वास मोक्ष में नहीं था, वे पुनर्भव के क्षय की कल्पना तो करते थे किन्तु उनका अपुनर्भव स्वर्ग के दीर्घकालीन वास से भिन्न नहीं था। मोक्ष का सर्वप्रथम चिन्तन सांख्यदर्शन या प्राचीनतम उपनिषदों से प्रारम्भ हुआ।[५]

विभिन्न भाष्यों में 'वेद' द्वारा 'मोक्ष' या 'मुक्ति' शब्द के स्पष्ट अनुल्लेख का परिहार 'मुच्' धातु के प्रयोग और 'अमृतम्' आदि पदों को मोक्ष या मुक्ति का वाचक मानकर कियाग या है तथा वेदों को ही मोक्ष-चिन्तन का प्रथम उद्भावक माना गया है। किन्तु पं. मनोहरलाल विद्यालंकार ने वेदभाष्यकारों की इस चेष्टा का बड़े ही शुष्क एवं स्पष्ट शब्दों में खण्डन किया है। उनका मत है कि वेद में आए 'अमृत' का अर्थ मुक्ति करना परवर्ती दर्शनों का अनुकरण या साम्प्रदायिक दृष्टि का अवलम्बन है। परलोक में या मरने के पश्चात् की स्थिति अनन्त या सान्त के विवाद से युक्त कोई मुक्ति नहीं है। मुक्ति एक अनुभव है, जो प्रायः कभी न कभी प्रत्येक व्यक्ति को होता है। बड़े कष्ट में पड़ने के बाद वह चाहे शारीरिक हो या मानसिक — उससे मुक्त होने का अनुभव बड़ा सुखकर परम आनन्दमय होता है। यही मुक्ति है।[६]

इस प्रकार अनेक विद्वानों का विचार बन चला है कि वेद और वैदिक ऋषियों का उत्तरवर्ती दार्शनिक साहित्य में प्रतिपादित मुक्तिपदवाच्य स्थिति से कोई परिचय नहीं था। उनकी अधिकतम सुख की कल्पना अमृतत्व की कल्पना थी, जो निश्चय ही मोक्षावस्था न थी। पं. मनोहर विद्यालंकार ने तो यहाँ तक कहा है कि दर्शनों में व्यवहृत मोक्ष और भाष्यकारों द्वारा किए गए अर्थ मोक्ष को देखकर ही कोशकारों ने 'अमृतम्' पद के उन्नीस अर्थों में एक मोक्ष को भी सम्मिलित कर लिया।[७]

वस्तुतः एतादृश विचार वैदिक पदों की अर्थक्षेपणक्षमता का अपलाप हैं। वेद के जिन पदों का अर्थ भाष्यकारों ने मोक्ष विषयक किया है, ऐसा नहीं है कि सभी स्थलों पर उन पदों का अर्थ मोक्ष-विषयक ही हुआ हो। प्रसंग, रूपक, प्रतीत और उपमाएँ आदि शब्द की अर्थक्षेपणक्षमता को प्रभावित करते हैं। प्रमाण के रूप में स्वामी दयानन्द के ही भाष्य का अवलोकन किया जा सकता है। इस भाष्य में पठित 'अमृतम्' पद सर्वत्र मोक्ष का ही वाचक नहीं है। किसी मन्त्र में जहाँ यह मोक्ष[८] का वाचक है वहीं अन्य मन्त्रों में ईश्वर[९], जीव[१०] और नाश रहित कारण[११] का भी वाचक है। इसी प्रकार 'स्वः' पद को
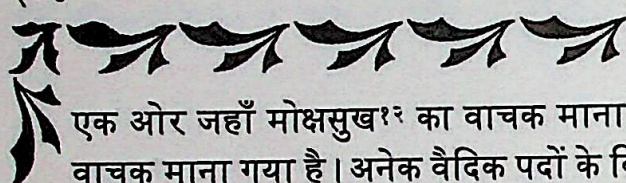
एक ओर जहाँ मोक्षसुख[१२] का वाचक माना गया है वहीं दूसरी ओर इसे ईश्वर[१३] का वाचक माना गया है। अनेक वैदिक पदों के विषय में भी यही स्थिति है। वैदिक पदों की इस विविध अर्थनिष्ठता से तैत्तिरीयोपनिषद्[१४] और यास्क सहमत हैं। पर यास्क की दृष्टि में पद के समस्त अर्थों में आध्यात्मिक अर्थ शिरोमणि हैं।[१५] इन साक्ष्यों के विद्यमान होते भाष्यकारों द्वारा विभिन्न पदों का अर्थ 'मोक्ष' करने की प्रवृत्ति को उत्तरवर्ती दर्शनों से प्रभावित कहना तथा वेद मन्त्रों में मोक्ष की परिकल्पना का अभाव सिद्ध करना वस्तुतः अयुक्त है।

वैदिक संहिताओं में अनेक पदों द्वारा मोक्ष के स्वरूप एवं उसमें प्राप्तव्य आनन्द की अतिशयता का प्रकाशन किया गया है। ऋग्वेद में 'अमृत' शब्द का प्रयोग विभिन्न विभक्तियों में २६० बार हुआ है, जो विभिन्न अर्थों का कथन करता है। मोक्षवाची 'अमृत' शब्द का प्रयोग ऋग्वेद में २६ बार, यजुर्वेद में ८ बार, सामवेद में ५ बार और अथर्ववेद में ७ बार हुआ है।[१६] वस्तुतः मोक्ष की स्थिति के व्याख्यान की जितनी सामर्थ्य 'अमृत' शब्द में है उतनी अन्य मोक्ष, मुक्ति, अपवर्ग या निश्रेयस आदि में नहीं। दुःख के कारण मोक्ष का अन्वेषण हो सका है। सब दुःखों का मूल या परमदुःख मृत्यु है। अतः यदि मृत अ+मृत हो जाए तो मानव के दुःखों का उच्छेद सम्भव है। यह उच्छेद कोई दो चार या सौ-पचास वर्ष की अल्पावधि का नहीं प्रत्युत आत्यन्तिक है, जो मोक्ष में ही सम्भव है। अतः मृतता के इस उच्छेद का अर्थ देने के लिए 'अमृत' शब्द सबसे समर्थ है। इसीलिए वेद मोक्षावस्था का कथन करने के लिए इसी शब्द को चुनते हैं।

यजुर्वेद में मोक्ष की परिकल्पना बड़ी उदात्त है। एक मन्त्र में संसार की अनित्यता के कारण यह परिकल्पना उत्पन्न हुई है। दुःख के साथ सांसारिक सुख की अनित्यता भी मोक्ष में साधक की प्रवृत्ति का कारण है। वस्तुतः दार्शनिक दृष्टि से सांसारिक सुख की अनित्यता ही दुःख है। हम कदाचित् दुःख की इससे यथार्थ परिभाषा न कर सकें। मन्त्र इस सांसारिकसुख की अनित्यता का ही हेतु देकर जीव को किसी नित्य से अपना सम्बन्ध जोड़ लेने की प्रेरणा दे रहा है।[१७] यह नित्य तत्व परमात्मा है। नित्य परमात्मा से सम्बन्ध जोड़ने का कारण सांसारिक अनित्यता है - सांसारिक सुखों की अनित्यता है। नित्य सुखों के स्रोत का अधिपति परमात्मा है।[१८] जीवात्मा अनित्य सुख से दुःखी होकर नित्य सुख की प्राप्ति के लिए ही परमात्मा से सम्बन्ध स्थापन करता है। परमात्मा तथा मोक्ष अभिन्नता रखते हैं। मोक्ष परमात्मा का आनन्द ही है, इसे उससे पृथक् नहीं किया जा सकता। इस प्रकार परमात्मा से सम्बन्ध जोड़ना या मोक्ष प्राप्त करना - दोनों का एक

ही आशय है। इस प्रकार अनित्य से पराङ्मुखता और नित्य से सम्बन्ध-स्थापना की अभिकांक्षा याजुष संहिता की मोक्षविषयक परिकल्पना का अंकुरण है।

एक याजुष मन्त्र मृत्यु से प्रार्थना कर रहा है कि तू देवयान-मार्ग से भिन्न जो (पितृयाण) मार्ग है उसका अनुसरण कर।[१९] उपनिषदों में देवयान और पितृयान मार्ग अत्यन्त ख्यात है। देवयान कठोपनिषद के श्रेयोमार्ग से साम्य रखता है तथा पितृयाण प्रेयोमार्ग से।[२०] देवयान नित्य सुख की ओर प्रवहमान है तो पितृयाण अनित्य सुख की ओर। यजुर्वेद देवयान-मार्ग में प्रवृत्त होने वाले साधक को मृत्यु न होने का आश्वासन दे रहा है, इसीलिए देवयान-मार्ग से गमन की प्रेरणा भी दे रहा है।[२१] मन्त्र के माध्यम से साधक की अमृतत्व से जुड़ने और मृत्यु से छूटने (किन्तु ठीक वैसे ही जैसे पका खरबूजा बेल से छूटता है)[२२] की प्रार्थना इसी शृंखला की कड़ी है। अमृतत्व की प्राप्ति इसी देवयान-मार्ग से है। वस्तुतः उक्त मन्त्रों की प्रार्थनाएँ प्रकारान्तर से अमृतत्व प्राप्त करने के लिए साधक को दी जा रही प्रेरणाएँ भी हैं। इन प्रेरणाओं के पीछे मोक्ष-जैसी नित्य अवस्था की ही कोई परिकल्पना है।

यजुर्वेद के एकमन्त्र का ऋषि उत्तरोत्तर उच्चता के सोपानों को चढ़ता हुआ आनन्द रूप ज्योति को प्राप्त करने की कामना कर रहा है।[२३] इस स्वर्ज्योति की प्राप्ति के पश्चात् कोई कामना शेष नहीं रह गई है।[२४] जिस सकाम की कामनाएँ इन मन्त्रों में अभिव्यक्त हो रही है वह सकाम इस 'स्वर्ज्योति' को प्राप्त कर सन्तुष्ट हो गया है, अकाम हो गया है। यह स्वर्ज्योति क्या है, जिसकी प्राप्ति के पश्चात् कोई भी कामना अवशिष्ट नहीं रह जाती। वह विद्वान् जो वेदों में मोक्ष के विचार की कोई अवधारणा नहीं मानते, मन्त्र कथित विकास के उत्तरोत्तर सोपानों, स्वर्ज्योति और इसकी प्राप्ति के बाद अकामचेता साधक के चित्त की तुलना उत्तरवर्ती दर्शनों के मोक्ष-चिन्तन से करें। यह अध्ययन हमें सहज ही इस निष्कर्ष पर ले जाएगा कि अपने मोक्ष-चिन्तन के लिए उत्तरवर्ती समस्त साहित्य वेद की इस 'स्वर्ज्योति' की परिकल्पना का ऋणी है। इसी स्वर्ज्योति को प्राप्त साधक प्रजापति की प्रजा बनकर अपने अमर होने की घोषणा यजुर्वेद में कर रहे हैं।[२५] यजुर्वेद का मन्त्र कितने अधिकार के साथ कह रहा हे कि हमने दिव्यता और स्वर्ज्योति अर्थात् आनन्द ज्योति का सम्पादन किया है, अतएव हम विज्ञान के प्रकाश तथा मोक्ष को प्राप्त करें।[२६] स्वर्ज्योति के रूप में याजुष दर्शन की मोक्षविषयक परिकल्पना अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँच गई है। यह 'स्वर्ज्योति' आनन्द-स्वरूप परमात्मा का दिव्य आनन्द ही है। यहाँ मोक्ष की प्राप्ति और परमात्मा की प्राप्ति दो नहीं हैं।

यजुर्वेद की मोक्षविषयक परिकल्पना का एकपक्ष और है। जीव से प्रश्न किया जा रहा है कि तू किसलिए है?[२७] अर्थात् तुझे किसलिए अभिषिक्त किया गया है? इस मन्त्र का एक अंश जीव को बता रहा है कि तुझे 'क' के लिए अभिषिक्त किया गया है।[२८] 'क' नाम आनन्द का है। आनन्दस्वरूप होने से ही प्रजापति को उपनिषदों ने 'क' कहा है। 'क' के लिए अभिषिक्त होने का तात्पर्य मोक्ष के लिए अभिषिक्त होना ही है। इस 'क' से ही मोक्षवाचक वैदिक शब्द 'नाक' का विकास हुआ है। जीव अपनी अभिषिक्ति से इसी उद्देश्य को सार्थक करता हुआ इस 'नाक' पर आरोहण का संकल्प कर रहा है कि मैं बृहस्पति=महान् स्वामी के उच्चतम नाक=आनन्द पर आरोहण करूँ।[२९] जीव मन्त्र में आगे अपने इस व्रत की सफलता की घोषणा भी कर रहा है कि मैंने बृहस्पति तथा इन्द्र के उत्तम तथा उच्चतम 'नाक' अर्थात् आनन्द पर आरोहण कर लिया है।[३०] अभिषिक्त जीवात्मा द्वारा 'नाक' पर आरोहण का यह व्रत मोक्ष-साधना के लिए प्रयाण कर रहे साधक के व्रत से भिन्न नहीं है। इस व्रत के पीछे भूख और प्यास से विमुक्ति पाने भर की ही भावना नहीं है। इस 'नाक' के स्वामी को मन्त्र में क्रमशः 'बृहस्पति' और 'इन्द्र' विशेषणों[३१] से सम्बोधित करना भी 'नाक' के स्वरूप एवं गुणवत्ता को प्रकाशित करता है। निश्चय ही, ये दोनों विशेषण 'नाक' को अत्यन्त विस्तृत और दिव्यैश्वर्यसम्पन्न सिद्ध कर जाते हैं। यजुर्वेद का एक मन्त्र कह रहा है कि परमेश्वर की उपासना आदि जो करते हैं वे महिमाशाली मनुष्य ही इस नाक में विराजते हैं। पूर्व समय के साधकगण भी इसी नाक में विद्यमान रहते हैं।[३२] एक मन्त्र इस साधनानिरत साधक को नाकारोहण कराने की प्रार्थना कर रहा है।[३३]

यजुर्वेद ने आत्मभावों के प्रतिकूल आचरण करने वाले मनुष्य की उपाधि आत्महन्ता निश्चित की है, और उसे मृत्यु के उपरान्त गहन अन्धकारमय लोकों को प्राप्त करने वाला निरूपित किया है।[३४] यह अन्धकारमय लोक वस्तुतः जीव की ऐसी अवस्था है जिसमें आत्मचेतना के प्रकाशन का अवकाश ही नहीं होता। इस मन्त्र में अर्थापत्ति से यह भी सिद्ध है कि आत्मभावों के अनुकूल आचरण करने वाले मनुष्य आत्मसंस्कर्त्ता हैं और उन्हें उच्चतर दिव्य लोकों की प्राप्ति होती है। यह जीव की वह अवस्था है जिसमें आत्मचेतना विशुद्ध रूप में अभिव्यक्त होती है। वेद के पास उच्चतर दिव्यज्ञान की अन्तिम परिकल्पना आनन्द से ओत-प्रोत विष्णु के अव्यक्त त्रिपादों की है।[३५] क्या इन अव्यक्त त्रिपादों में प्राप्तव्य प्रस्तावित आनन्द मोक्ष के प्रसतावित आनन्द से अवर है? इसी शृंखला का एक मन्त्र व्यापक परमात्मा के अव्यक्त त्रिपादरूप उच्चतर दिव्य पद को

'अमृत' कह रहा है—**'विद्ययाऽमृतमश्नुते।'**[३६] यह विद्या केवल आत्मचेतना या आत्मभावों का प्राखर्य नहीं है। इस विद्या केअर्थक्षेत्र में 'परमात्मज्ञान' भी सम्मिलित है। इसमें वेद का अन्तःसाक्ष्य विद्यमान है। वेद के शब्दों में वही साधक इस अमृतत्व को प्राप्त कर सकता है जो परमात्मा के स्वरूप को तत्वतः जानता हो। जो अन्धकार से परे इस 'महान् पुरुष' के ज्ञान की घोषणा न कर सके वह अयनाय अर्थात् मोक्ष का अधिकारी नहीं है।[३७] वेद यहाँ मोक्ष के साथ-साथ उसकी प्राप्ति के साधनों की सूचना भी दे रहा है। उच्चतम आनन्द की प्राप्ति के लिए वेद का एक मन्त्र अपने अध्येताओं को प्रेरणा दे रहा है कि तुमसे पूर्व उत्पन्न हुए वेदविद्या के जानने वाले परमयोगी ऋषिजन जहाँ पहुँचें उस मोक्ष पद पर तुम भी पहुँचो।[३८] एकअन्य याजुष श्रुति भी पूर्वोत्पन्न साधकों की अवस्थिति इसी पद में स्वीकार कर रही है।[३९] इस प्रकार मोक्षप्रापित के लिए वेदकी यह महती प्रेरणा है। ऐसे अन्य अनेक स्थल हैं जहाँ वेद ने अपनी मोक्षविषयक अवधारणा की रूपरेखा प्रस्तुत की है। अतः विद्वानों के पूर्वसंकेतित विचार से सहमति व्यक्त नहीं की जा सकती कि वेद के पास सुख और आनन्द की भौतिक सुख और आनन्द से अधिक कोई परिकल्पना नहीं है।

सन्दर्भ सूची

१. (क) न्यात्रसू. १.१.१-२ : **प्रमाण प्रमेयसंशयप्रोजनदृष्टान्तसिद्धान्तावयव-तर्कनिर्णयवादजल्पवितण्डाहित्वाभासच्छलजाति निग्रहस्थानानां तत्वज्ञानान्निःश्रेयसाधिगमः॥**
दुःखजन्मप्रवृत्तिदोषमिथ्याज्ञानानामुत्तरोत्तरापाये तदनन्तरापायादपवर्गः।

(ख) **सां. सू. १.१ रू अथ त्रिविधदुःखात्यन्तनिवृत्तिरत्यन्त पुरुषार्थः॥**
सां. का. १ : दुःखत्रयाभिघाताज्जिज्ञासा तदपघातके हेतौ। दृष्टे साऽपार्था चेन्नैकान्तात्यन्ततोऽभावात्॥

(ग) **मी.सू. (शाबर भाष्य) १.१.२ : स्वर्गकामो यजेत।**

२. **कठो. १.२.२ : श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेतस्तौ संपरीत्य विविनक्ति धीरः। श्रेयो हि धीरोऽभिप्रेयसो वृणीते प्रेयो मन्दो योगक्षेमाद् वृणीते॥**

३. **वै. सू. १.१.२ : यतोऽभ्युदय निश्रेयस सिद्धिः स धर्मः।**

४. **मी.सू. (शाबर भाष्य) १.१.२**

५. **भारतीय दर्शन में मोक्ष चिन्तन (प्रस्तावना भाग), पृ. ३।**

६. स्वर्ण जयन्ती स्मारिका, आर्य विरक्त (वानप्रस्थ एवं सन्यास) आश्रम, १९७८ में मनोहर विद्यालंकार का लेख, पृ. ५७-६१

७. द्र. वही, पृ. ५९

८. यजु. (द.भा.) ३.६० : अमृतात्=मोक्ष सुखात्।

९. वही २०.५ : अमृतम्=मरणधर्म रहित चेतनं ब्रह्म।

१०. वही, २९.८ : अमृतेषु=नाशरहितेषु जीवादि पदार्थेषु।

११. वही ३४.३१ : अमृतम्=नाशरहित कारणम्।

१२. वही ९.२१, १८.२९ : स्वः=मोक्ष सुखम्।

१३. वही २०.२१

१४. तै. उ. १.३.१ : अथातः संहिताया उपनिषदं व्याख्यास्यामः। पञ्चस्वधिकरणेषु। अधिलोकमधिज्यौतिषमधिविद्यमधिप्रजमध्यात्मम्।

१५. निरुक्त १.२० : अर्थ वाचः पुष्पफलमाह याज्ञदैवते पुष्पफले देवाध्यात्मे वा।

१६. वेदों में योग विद्या, पृ. ३९९

१७. यजु. ३५.४ : अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता।
गोभाज इत्किलासथ यत्सनवथ पुरुषम्।

१८. ऋक्. १.१५४.५ : विष्णोः पदे परमे मध्व उत्सः।

१९. यजु. ३५.७ : परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां यस्ते अन्य इतरो देवयानात्।

२०. कठो. १.२.२ : श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेतस्तौ संपरीत्य विविनक्ति धीरः।
रेयो हि धीरोऽभि प्रेयसो वृणीते प्रेयो मन्दो योगक्षेमाद् वृणीते॥

२१. यजु. ९.१८ : यातः पथिभिर्देवयानैः।

२२. यजु. ३.६० : त्रयम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मातृतात्।
त्रयम्बकं यजामहे सुगन्धिं पतिवेदनम्।
उर्वारुकमिव वन्धनादितो मुक्षीय मामुतः॥

२३. वही १७.६७ : पृथिव्या अहमदुन्तरिक्षमाऽरुहमनतरिक्षाद्दिवं मारुहम्।
दिवो नाकस्य पृष्ठात् स्व्ज्योर्तिरगामहम्॥

२४. वही १७.६८ : स्वर्यन्तो नापेक्षन्त आ द्यां रोहन्ति रोदसी।
यज्ञं ये विश्ववतोधारं सुविद्वांसो वितेनिरे॥

२५. वही ९.२१ : प्रजापतिः प्रजा अभूम स्वर्देवा अगन्मामृता अभूम।

२६. वही ८.५२ : सत्रस्य ऋद्धिरस्यगन्म ज्योतिरमृता अभूम।
दिवं पृथिव्या अध्याऽरुहामाविदाम देवान्त्स्वज्योतिः॥

२७. वही २०.४ : कस्मै त्वा?

२८. वही २०.४ : काय त्वा।

२९. वही ९.१० : बृहस्पतेरूत्तमं नाकं रूहेयम्।

३०. यजु. ९.१० : इन्द्रस्योत्तमं नाकंरूहेयम्।

३१. यजु. ९.१० : बृहस्पतेरुत्तमं नाकमरुहम्। इन्द्रयोत्तमं नाकमरुहम्॥

३२. वही ३१.१६ : यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥

३३. वही १२.६३ : उत्तमे नाके अधि रोहयैनम्।

३४. वही ४०.३ : असुर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसावृताः।
ताँस्ते प्रेत्यापि गच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः॥

३५. वही ३१.३ : त्रिपादस्यामृतं दिवि।
ऋक् १.१५४.४ : यस्य त्री पूर्णामधुना पदान्यक्षीयमाणा स्वधया मदन्ति।

३६. यजु. ४०.१४ : अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते।

३७. यजु. ३१.१८ : वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्ण तमसः परस्तात्।
तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय॥

३८. वही १८.५८ : तदनु प्रेत सुकृतामु लोकं यत्र ऋषयो जगमुः प्रथमजा पुराणाः।

३९. वही ३१.१६

आर्यसमाज के ओजस्वी नेता-निडर, यशस्वी संपादक : महाशय कृष्ण

—श्री विश्वनाथ, उपप्रधान, आर्य प्रादेशिक सभा

महात्मा मदनमोहन मालवीय जी जब भी कभी लाहौर आते थे तो महाशय कृष्ण जी से अवश्य मिलते थे। उनकी दृष्टि में पंजाब और सीमांत प्रान्त में महाशय कृष्ण जी हिन्दुओं के हितों के प्रमुख संरक्षक थे। मालवीय जी हमेशा उन्हें "आओ, महाभारत के मेरे कृष्ण" कहकर स्वागत करते थे।

महाशय कृष्ण जी का जन्म सन् १८८१ में पश्चिमी पाकिस्तान में, वज़ीराबाद में हुआ था। स्कूली शिक्षा-दीक्षा वहाँ हुई, इसके बाद लाहौर में इस्लामिया कालेज में प्रवेश लिया। वहाँ से बी.ए. की परीक्षा पास की। उस जमाने में बी.ए. का महत्त्व आज की पीएच.डी. से कम नहीं होता था।

यदि यह कहा जाए कि महाशय कृष्ण पंजाब के हिन्दुओं के सर्वमान्य नेता थे तो इसमें अत्युक्ति नहीं होगी। किसी भी समस्या अथवा आंदोलन में वह दिशा निर्देश देकर जनमत तैयार करते थे और यदि आंदोलन की आवश्यकता होती, तो उसमें भी सबसे पहले आप स्वयं कूद पड़ते थे। आर्यसमाज के तो वे कर्णधार सेनापति थे। वह आर्यसमाज का उदयकाल और यौवन काल था। प्रत्येक आर्यसमाजी में उत्साह और आर्यसमाज के काम को आगे बढ़ाने की उमंग थी।

आर्यसमाज केनेता तो थे ही, महाशय जी एक विशिष्ट ओजस्वी सम्पादक भी थे। उनकी लेखन-शैली में एकतेजस्विता थी। पाठक उनके सम्पादकीय पढ़ने के लिए उत्सुक रहते थे। "दैनिक प्रताप" और "साप्ताहिक प्रकाश" दोनों पत्रों के वे संचालक भी थे और संपादक भी। कहा यह जाता है कि पंजाब के हिन्दू चाहे वे नगर में रहते थे या दूर किसी गाँव में, प्रताप अवश्य खरीदते थे और सबसे पहले महाशय जी का संपादकीय पढ़ते थे। जैसे आजकल कुछ लोगों की सुबह चाय के बिना शुरू नहीं होती, उसी तरह महाशय जी के हज़ारों पाठक उनका संपादकीय पढ़कर ही अपनी सुबह शुरू करते थे। वह एक निडर संपादक थे। समझौते की प्रवृत्ति उनमें थी ही नहीं। अपनी बात के लिए वह अकाट्य तर्क देते थे और लोगों को प्रभावित करते थे। संपादकीय स्वतंत्रता के लिए उन्हें

जेल यात्रा भी करनी पड़ी। हज़ारों रुपयों की ज़मानतें भी कई बार ज़ब्त हुईं। आर्थिक कठिनाई भी उठानी पड़ी परन्तु उन्होंने अपनी वैचारिक आज़ादी पर आंच नहीं आने दी। यह सारी बात उन दिनों की है जब भारत में अंग्रेज़ों का राज्य था और पंजाब में मुस्लिम बहुल यूनियनिस्ट पार्टी की सरकार थी। पंजाब के मुख्यमंत्री सर सिकंदर हयात ख़ान थे जो महाशय जी की लेखनी का लोहा मानते थे। कई बार उन्होंने उनसे समझौता करने की कोशिश की, परन्तु महाशय जी तो अपनी धुन के पक्के थे। प्रलोभन और समझौते की गुंजाइश थी ही नहीं। उस ज़माने में हिन्दुओं का प्रतिनिधित्व करनेवाले दो प्रमुख अख़बार थे—'प्रताप' और दूसरा 'मिलाप' जिसका संचालन और संपादन महाशय खुशहाल चंद जी (बाद में महात्मा आनन्द स्वामी) करते थे। दूसरी ओर मुसलमानों के अखबार थे—'जमींदार' और 'इंकलाब'। इन दोनों खेमों में निरंतर नोक-झोंक और आक्षेप-प्रत्याक्षेप चलते रहते थे।

महाशय जी का जीवन अत्यंत सादा था। उन्होंने खादी पहनने का व्रत ले रखा था। आपको जानकर आश्चर्य होगा कि वह अपने कपड़े स्वयं धो लेते थे अपने निवास में उन्होंने यज्ञशाला बनवाई थी और जो इस ज़माने में एक नई पहल थी। प्रतिदिन हवन करना उनका नियम था, भले ही संक्षिप्त हवन करते थे। हर शनिवार व रविवार को वे लाहौर से बाहर किसी न किसी आर्यसमाज के उत्सव में भाषण देने जाते थे। उनके भाषण में सैकड़ों हज़ारों की भीड़ जुट जाती थी। लाला लाजपत राय की ही तरह उनकी भाषण देने की मुद्रा बड़ी विशिष्ट थी। हमेशा खड़े होकर भाषण करते थे। ईश्वर ने उन्हें बहुत ओजस्वी वाणी दी थी। सिंह की तरह गरजते हुए, विपक्षियों को ललकारते हुए, वह अपने दायें हाथ को खड़ा करके, अपनी तर्जनी से मानो प्रतिपक्षियों को चैलेन्ज कर रहे हों कि वैदिक धर्म के सत्य के सामने कोई नहीं टिक सकेगा।

वह सबसे अधिक अवधि तक 'आर्य प्रतिनिधि सभा' पंजाब के मंत्री रहे और आर्यसमाज के इतिहास में उन्हें यह श्रेय दिया जायेगा कि सारे पंजाब और फ्रंटीयर प्रदेश में उन्होंने आर्यसमाज की दुन्दुभि बजा दी और छोटे-छोटे नगरों और कस्बों में भी आर्यसमाज की स्थापना की। प्रतिदिन आर्यप्रतिनिधि सभा के कार्यालय, गुरुदत्त भवन में जाना उनका नियम था, वही उनकी कार्यस्थली थी।

अनेक सहयोगी आर्यसमाजी उनके घनिष्ठ मित्र थे जो उनके इशारे पर कुछ भी करने को तैयार रहते थे। एक दूसरे में इतना अधिक विश्वास था उनमें और इतना अधिक लगाव था आर्यसमाज को आगे बढ़ाने में। इन महानुभावों में पंडित विशम्भर

नाथ जी, अर्जुन देव जी बघई, लाला चरणदास पुरी (स्यालकोट), डॉ. कुलभूषण (श्रीनगर), लाला गंगाराम (अमृतसर), लाला लभूराम नेयर (लुधियाना), लाला नारायणदत्त ठेकेदार (दिल्ली), लाला देशबंधु गुप्ता (दिल्ली), घनश्याम सिंह गुप्त (स्पीकर) मध्य प्रदेश आदि अनेक नाम स्मरण आ रहे हैं।

पंजाब और लाहौर के प्रमुख आर्यसमाज का नाम था—आर्यसमाज वच्छोवाली, जो शाह आलमी दरवाजे के अंदर—तंग गलियों में एक बड़ी हवेली में स्थित था। महाशय जी का प्रत्येक रविवार को अपने घर से पैदल चलकर जाना निश्चित था। वे आर्यसमाज के सत्संग में समय से पहले पहुँचते और अन्त तक रहते थे। उस ज़माने में सभी प्रतिष्ठित आर्यसमाजी साप्ताहिक सत्संग में सम्मिलित होते थे। मुझे स्मरण है पंडित ठाकुर दत्त (अमृतधारा), सरदार मेहर सिंह जी, लाला रोशनलाल (पायनियर स्पोर्ट्स), वैद्य पंडित ठाकुर दत्त जी मुलतानी, पं. ज्ञानचंद आर्यसेवक, पं. यशपाल सिद्धांतालंकार, पं. प्रियव्रत जी, महाशय चिरंजीलाल वानप्रस्थी-सभी नियम से आते थे।

महाशय जी का घर और कार्यालय हमेशा स्थानीय और बाहर से आने वाले आर्यसमाजियों के लिए खुला रहता था। यहाँ विचार-विनिमय भी होता था और आगे के कार्यक्रम भी बनते थे। स्वामी स्वतंत्रतानंद जी, स्वामी वेदानंद जी का मैं विशेष रूप से स्मरण करना चाहूँगा, जो हर दूसरे तीसरे दिन महाशय जी से मिलने आते थे और आर्यसमाज के संबंध में चर्चा किया करते थे। उन दिनों गुरुदत्त भवन में उपदेशक विद्यालय भी चलता था, जिसके आचार्य स्वामी स्वतंत्रतानन्द जी थे। आर्यसमाज के अनेक विद्वान्, उपदेशक, प्रचारक, पुरोहित इस विद्यालय ने आर्य जगत् को दिए हैं।

महाशय जी को स्वामी श्रद्धानंद जी के प्रति बड़ी श्रद्धा और स्नेह था। गुरुकुल कांगड़ी में प्रतिवर्ष जाना, विशेष अधिवेशन में भाषण देना, धन संग्रह करने के लिए अपील करना उनके जीवन का अंग था। इस गुरुकुल के संवर्धन में और इसके उत्कर्ष में महाशय जी का बड़ा योगदान था। वह अपने इस संकल्प को पूरी तरह निभाते थे। गुरुकुल के आचार्य पंडित चमूपति जी से उनका विशेष स्नेह था। जो उर्दू, फारसी, हिंदी, संस्कृत और अंग्रेज़ी के अनुपम पंडित थे। उन्होंने आर्य जगत् को अनेक विद्वत्तापूर्ण पुस्तकें दीं। इसी प्रकार गुरुकुल के पूर्व आचार्य प्रो. रामदेव जी से भी उनकी अंतरंगता थी।

एक बार उन्हें दक्षिण भारत की यात्रा पर जाना पड़ा, जहाँ मद्रास में उन्हें एकाएक अंग्रेज़ी में भाषण करने के लिए कहा गया। कोई पूर्व सूचना नहीं, तैयारी नहीं। फिर भी

उन्होंने अपनी ओजस्वी शैली में धाराप्रवाह भाषण दिया, जिसकी अगले दिन स्थानीय अंग्रेजी समाचारों में चर्चा हुई।

महाशय जी को कई बार जेल यात्रा करनी पड़ी। १९१८ में मार्शल लॉ के दिनों में, १९३९ में हैदराबाद सत्याग्रह में, १९४२ में 'भारत छोड़ो' आंदोलन में और एक बार हिंदी सत्याग्रह के सिलसिले में भी।

उनके दोनों सुपुत्र श्री वीरेन्द्र जी और नरेंद्र जी ने भी विरासत में उनसे संपादकीय कला, निष्पक्षता और निर्भयता आदि गुण प्राप्त किए। वीरेंद्र जी तो क्रांतिकारियों के साथ मिलकर आज़ादी की लड़ाई में भाग लेते रहे और इसके कारण उन्हें अंग्रेजों के कार्यकाल में ७ बार जेल यात्रा भी करनी पड़ी। अपने जीवन की युवावस्था के सात-आठ वर्ष पंडित जवाहरलाल जी की तरह जेलों में बिताये। नरेंद्र जी अब तक प्रताप में संपादकीय लेख लिख रहे हैं। और अपने पिता जी के चरण-चिह्नों पर चलकर समाज और देश की सेवा कर रहे हैं।

महाशय कृष्ण जी को हम ताया जी कहते थे। वह मेरे पिता महाशय राजपाल जी के बड़े भाई के समान थे। इसलिए हमारे परिवार में उनका परिवार के बड़े-बुजुर्ग का स्थान और सम्मान था। उन्होंने इस दायित्व को मेरे पिता के जीवन काल में और १९२९ में उनके बलिदान के बाद, परिवार के संरक्षक के रूप में पूरी तरह निभाया।

प्रतिदिन सुबह लम्बी सैर के लिए जाना उनका दैनिक नियम था। इसमें कभी भी नागा नहीं होने देते थे। लंबा छरहरा बदन, सुदर्शन व्यक्तित्व, हाथ में छड़ी, नंगे सिर, धोती-कुर्ता सैर के समय उनकी विशिष्ट पहचान थी। सैर से लौटते समय अथवा दोपहर के भोजन के समय वे हमारे घर में थोड़े समय के लिए अवश्य जाते थे। हम बच्चों के साथ बच्चों की तरह खेलना उनके सरल स्वभाव का एक अंग था। मुझे याद है कई बार वे हमसे ताश भी खेल लेते थे। हमारा घर उनके पड़ोस में ही था। हल्के मनोरंजन से एकदम उठकर गंभीर संपादकीय लिखवाना उनके लिए सहज होता था।

अब मैं एक व्यक्तिगत बात कहना चाहता हूँ, जिसके कारण मेरे मन में उनके प्रति असीम श्रद्धा है। मेरे पिता जी का बलिदान ६ अप्रैल १९२९ को हुआ था। महाशय जी प्रति वर्ष ६ अप्रैल के दिन मेरे पिता जी पर लेख लिखते थे और यह क्रम न केवल १९४७ तक १८ वर्ष तक चलता रहा अपितु आज़ादी के बाद जब 'प्रताप' जालंधर और दिल्ली से पुनः प्रकाशित होना शुरू हुआ तो उसमें भी यह सिलसिला जारी रहा। आज इस संसार में लोग अपने निकटतम, अत्यंत प्रिय व्यक्तियों को भी एक-दो साल में भूल

जाते हैं। ऐसे में यह एक अनुपम उदाहरण है मित्रता निभाने का और बलिदान हुए व्यक्ति की स्मृति को जीवित रखने का। ऐसा उदाहरण शायद ही अन्यत्र मिले।

महाशय जी का निधन २४ फरवरी १९६३ को दिल्ली में हुआ। मैं प्रायः उनसे मिलने उनके निवास-६ कीलिंग रोड (अब टालस्टाय मार्ग) पर जाता था। निधन से एक दो दिन पहले जब मैं उनसे मिला तो उन्होंने एक बात कही, "मुझे पता है मेरा अंतिम समय निकट है। मैंने भरपूर जीवन जिया है, भरसक देश और समाज की सेवा की है। केवल एक बात मन में रह-रहकर आती है कि मैं इस समय विदा ले रहा हूँ, जब संसार में अनेक क्रांतिकारी परिवर्तन होने वाले हैं और विज्ञान अनेक उपलब्धियाँ प्राप्त कर रहा है। मुझे दीख रहा है कि एक दिन मनुष्य चाँद पर भी पहुँचेगा और कम्प्यूटर द्वारा एक ऐसी क्रांति होगी जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। मैं यह सब नहीं देख पाऊँगा।" संभवतः यह एक उस जागरूक संपादक की अंतर्वेदना थी, जो विश्व की प्रत्येक गतिविधि पर नज़र रखते थे, समय के साथ चलते थे।

"दयानंद का दर्शन सच्चाई का दर्शन था। जहां सच्चाई देखो समझ लो कि इस पर दयानंद की छाप लगी है। जाति, देश और धर्म की सेवा के लिए यदि कोई कार्य करना अभीष्ट हो तो वह निश्चित रूप से हो जाएगा क्योंकि इसके लिए दयानंद के अनुयायी मिल जाते हैं।"

—महर्षि अरविन्दु घोष

स्वतंत्रता-आन्दोलन में आर्य महिलाओं का योगदान

—प्रो. (डा.) शशिप्रभा कुमार

कन्या गुरुकुल, देहरादून में अध्यापन करनेवाली उर्मिला देवी शास्त्री, जो मेरठ की प्रसिद्ध स्वतन्त्रता-सेनानी रहीं, भी आर्य विचारधारा से प्रभावित थीं, कारण उनके पिता लाला चिरंजीलाल जी महर्षि दयानंद के परम भक्त थे। यद्यपि उर्मिला देवी की शिक्षा-दीक्षा घर पर ही हुई, परन्तु उनमें देशसेवा की लगन आर्य संस्कारों ने ही जगायी थी। आप मेरठ की उस महिला टोली की कमाण्डर थीं, जिसने नौचन्दी के प्रसिद्ध मेले में विदेशी कपड़ों का बहिष्कार-आन्दोलन चलाया था और सन् १९३० के सत्याग्रह को नेतृत्व प्रदान किया था। आपने लगभग तीन हज़ार महिलाओं को संगठित कर नगर में चौंतीस सभायें की थीं और छह घण्टों के अन्दर २२०० व्यक्तियों से प्रतिज्ञापत्र भरवाये थे तथा विदेशी कपड़ों की अस्सी प्रतिशत दुकानें तत्काल बन्द करा दी थीं। जब उन्हें छह मास के लिए कारावास जाना पड़ा, उस समय अपने दो प्यारे नन्हें-मुन्ने बच्चों की ममता को भी ताक पर रखकर उन्होंने स्वतन्त्रता-अभियान को आगे बढ़ाया। आपने लाहौर से 'जन्मभूमि' दैनिक पत्र भी निकाला और सन् १९३० में जेल में रहते हुए 'कारागार के अनुभव' नाम से अपने संस्मरण भी लिखे। सन् १९४१ में 'जन्मभूमि' के सम्पादकीय लेखों के कारण उन्हें दुबारा जेल की सज़ा हुई और उसके बाद ४ जनवरी, १९४२ को वे पुनः छह मास के लिए जेल भेज दी गईं। जीवन की अन्तिम अवस्था आने पर ही उनकी रिहाई हुई और ६ जुलाई, १९४२ को इस साहसी, स्वतन्त्रता-साधिका, आर्य-ललना का देहान्त हो गया।

उधर गुजरात में महान् ऋषिभक्त पं. आत्माराम जी अमृतसरी के पुत्र आनन्दप्रिय जी ने कन्या महाविद्यालय, बड़ौदा की स्थापना की, जहाँ कन्याओं को वीरांगना बनाने की दृष्टि से लाठी चलाना, मुग्दर घुमाना, धनुष-बाण चलाना, योगासन और प्राणायाम आदि सिखाया जाता था। 'अबला' कही जाने वाली और पर्दे में बन्द रहने वाली भारतीय नारी अब विधर्मी आक्रान्ताओं का मुकाबला करने केलिए 'सबला' और सजग बन रही थी—यह निःस्सन्देह आर्यसमाज, आर्य शिक्षण-संस्थाओं और उनके द्वारा प्रचारित आर्य विचारधारा का ही सुप्रभाव था। पं. आनन्दप्रिय जी की माता यशोदा

देवी जी तो वैदिक विचारधारा में दीक्षित थीं ही, उनकी छोटी बहन सुशीला पण्डित जी ने भी नारी-शिक्षा के क्षेत्र में अपने भाई का भरपूर सहयोग किया। उललेख्य है कि भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद जी की सचिव श्रीमती ज्ञानवती जी और केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल में उपवित्तमंत्री-पद को अलंकृत करनेवाली श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा इसी संस्था की स्नातिका थीं। अतः भारत के स्वाधीनता-आन्दोलन को गति देने में यहाँ से शिक्षा प्राप्त करने वाली आर्य महिलाओं की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही।

सन् १९३६ में पोरबन्दर में जिस आर्य कन्या गुरुकुल की स्थापना हुई, उसने भी देश के स्वाधीनता-संग्राम में अनुकूल वातावरण तैयार करने के लिए अत्यन्त सहयोग दिया। दक्षिण अफ्रीका के सफल व्यवसायी सेठ नानाजीभाई कालिदास मेहता ने अपनी कन्याओं को गुरुकुल बड़ौदा में शिक्षा प्राप्त करने भेजा था, उनमें से सुश्री सविता बहन ने गुरुकुल पोरबन्दर की आचार्या का पद संभाला और अपना सारा जीवन स्त्री-शिक्षा के लिए समर्पित कर दिया। यहाँ दी जाने वाली संस्कृत, संस्कृति और राष्ट्रभाषा हिन्दी की शिक्षा से आर्य महिलाओं में जो राष्ट्रीयता की चेतना जाग रही थी, वह धीरे-धीरे सारे समाज में संक्रान्त होने लगी थी और उसने स्वाधीनता-आन्दोलन में भी नये प्राणों का संचार होने लग गया था।

आर्यसमाज द्वारा स्थापित इन स्त्री-शिक्षा-संस्थानों का एक अच्छा परिणाम यह हुआ कि भारतीय नारी-समाज में एक नये जागरण की लहर उठ खड़ी हुई, जिसने स्त्री-जाति को अपने देश, धर्म और भाषा के गौरव का भान कराया। अतः जिन महिलाओं को विधिवत् विद्यालयीय शिक्षा प्राप्त करने का सुअवसर नहीं मिला था, वे भी आर्य विचारधारा से प्रभावित होने पर निजी स्तर पर संस्कृत एवं हिन्दी की शिक्षा लेने लगीं। ऐसी महिलाओं में एक महत्त्वपूर्ण नाम श्रीमती शाम देवी का है, जिन्होंने सर्वथा निरक्षर होते हुए भी एक आर्यसमाजी-पड़ोसिन की प्रेरणा से पंजाब विश्वविद्यालय की सर्वोच्च हिन्दी परीक्षा 'प्रभाकर' पास की और संस्कृत की 'सिद्धान्तशास्त्री' तथा 'वैद्य-विशारद' उपाधियाँ भी प्राप्त कीं। आपने अमृतसर में महिला-सुधार हेतु 'महिला सुधार-सभा' संगठित की और महिलाओं को पर्दा-प्रथा से मुक्ति दिलायी। आपने सन् १९२० के आन्दोलन में भी सक्रिय भाग लिया और तभी से मानो उनका जेल जाने का कार्यक्रम शुरू हो गया। इसके बाद तो वे सन् १९३४ तक पाँच बार जेल गईं और उन्होंने कुल मिलाकर पाँच साल की सजा काटी। अनेक राष्ट्रीय नेता और क्रान्तिकारी उनके घर आकर ठहरा करते थे और वे बड़ी चतुराई से उन्हें छिपाकर शरण देती थीं, परन्तु

साथ ही उन्हें अहिंसक क्रान्ति की प्रेरणा भी देती थीं, कारण उन पर स्वामी दयानन्द और महात्मा गाँधी का विशेष प्रभाव था।

इस प्रकार उक्त संक्षिप्त विवरण के आधार पर कहा जा सकता है कि भारतीय स्वतन्त्रता-संघर्ष में जिन महिलाओं ने पुरुषों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर भाग लिया, वे सब प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से आर्यसमाज तथा उसके संस्थापक महर्षि दयानन्द द्वारा चलाये गये नारी-जागरण के आन्दोलन से ही प्रेरित एवं प्रभावित हुई थीं। यदि यह कहा जाये कि पराधीनता और दीनता की स्थिति में जीने वाली भारतीय नारी को अपनी क्षमता, अधिकार एवं कर्त्तव्यों का बोध कराने वाले महर्षि दयानन्द ही थे तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। इसीलिए काँग्रेस और महात्मा गाँधी के आह्वान पर जितनी महिलाओं ने आगे बढ़कर सत्याग्रह और असहयोग-आन्दोलन में भागीदारी की, उसकी वास्तविक पृष्ठभूमि तो बहुत पहले ही आर्यसमाज द्वारा जन-जागरण और वैचारिक क्रान्ति द्वारा तैयार की जा चुकी थी। इसका सबसे जीवन्त प्रमाण 'बॉम्बे क्रॉनिकल' का तीन जून, १९३० ई. का वह समाचार है, जिसके अनुसार बेगम डॉ. आलम ने मुस्लिम होते हुए भी आर्यसमाज मन्दिर में महिलाओं की एक सभा आयोजित की और उन्हें विदेशी माल के बहिष्कार की शपथ दिलायी। उधर पंजाब में, जहाँ आर्यसमाज का प्रभाव और प्रचार सर्वाधिक था—लोकगीतों के माध्यम से आर्य महिलाओं की भावनायें मुखरित हो रही थीं और वे अंग्रेजों की गुलामी करने वाले अपने पतियों को मानो अप्रत्यक्ष रूप से उद्बोधित करती हुई कहती थीं—

मैंनू सूट खद्दर दा लै दे रोटी ताँ पकाँवाँगी।
नई ते साड़ी तिल्लेवाली भलके फूँक दिखाँवाँगी॥

★ ★ ★

तेरे जैसे वुजदिल वाबू आ गये अँगरेजाँ दे काबू।
झण्डा हथ स्वराज दा लै के दफ़्तर 'पिकेट' कराँवाँगी॥

निश्चय ही आर्य महिलाओं द्वारा लिखे और गाये गये ऐसे गीत और कवितायें भी समाज में उत्साह और उत्सर्ग की भावनायें भरने में सहायक हुए। लाला लाजपतराय की गिरफ्तारी पर सुशीला दीदी का लिखा पंजाबी गीत—"गया व्याहन आज़ादी लाड़ा भारत दा" छापकर सारे पंजाब में बाँटा गया था।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि अपने देश की स्वाधीनता के लिए जिन नर-नारियों ने बलिदान दिया, वे सभी 'आर्य' थे तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

'आर्यत्व' कोई जातिवाचक विशेषता नहीं, गुणवाचक संज्ञान है, अतः व्यापक दृष्टि से देखा जाये तो अपने धर्म, संस्कृति और जन्मभूमि पर मर मिटनेवाला हर नागरिक 'आर्य' है, तथापि प्रस्तुत आलेख में यही संकेतित करने का प्रयास किया है कि पराधीन भारत में स्वाधीनता-संघर्ष का जो मन्त्र महर्षि दयानन्द ने फूँका, उसकी प्रेरणा से भारतीय नारी-वर्ग में एक अद्भुत जागृति आयी तथा अपने पुरातन वैदिक स्वरूप की दिव्य झाँकी पाकर इस देश की आर्य ललनाओं ने अपनी तेजस्विता, त्याग और तितिक्षा का प्रचुर परिचय दिया। इन आर्य महिलाओं के साहसी व्यक्तित्व एवं उत्कट बलिदान का उक्त संक्षिप्त दिग्दर्शन ऋग्वैदिक वीरांगना की इस आत्मविश्वास-भरी घोषणा को सार्थक सिद्ध करता प्रतीत होता है कि "मैं राष्ट्र की ध्वजा हूँ, मैं समाज का मस्तक हूँ, मैं उग्र हूँ, मेरी वाणी में बल है। .... मेरे पुत्र शत्रुहन्ता हैं, मेरी पुत्री विशेष वर्चस्विनी है, मैं भी सम्यक् विजेत्री हूँ तथा मेरे पति का यश उत्तम है।"—

अहं केतुरहं मूर्धा अहमुग्रा विवाचनी।

★ ★ ★

मम पुत्रा शत्रुहणो अथो मे दुहिता विराट्।
उताहमस्मि संजया पत्यौ मे श्लोक उत्तमः॥ (ऋग्वेद १०/५९/२-३)

(रीडर, दर्शन विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय)

"मुझे यदि मेरी सम्पूर्ण आयु के बदले स्वामी दयानंद के पुनीत चरणों में बैठ कर उनसे एक बात करने के लिए कुछ क्षण मिल जाएं तो मैं इसको महंगा सौदा नहीं समझूंगा।"

—लाला लाजपत राय

स्वाधीनता प्राप्ति में आर्यसमाज का योगदान

—स्व. पं. इन्द्र विद्यावाचस्पति

इस इतिहास के प्रथम भाग के अन्त में हमने प्रस्तुत विषय की थोड़ी-सी चर्चा की थी। वहाँ यह बतलाया गया था कि यदि हम कहें कि १९४७ ईस्वी के अगस्त मास की १५वीं तारीख को जिस स्वाधीनता यज्ञ की पूर्ति हुई, उसका प्रारम्भ महर्षि दयानन्द ने किया था और अन्तिम आहुति महात्मा गांधी जी ने दी तो कोई अत्युक्ति न होगी। इसमें सन्देह नहीं कि गणतन्त्र राज्य की प्राप्ति में समाप्त होने वाली राज्य क्रान्ति का बीजारोपण महर्षि ने किया था। महर्षि ने तीन उपायों से भारतवासियों के हृदयों में पराधीनता से छूटने और राजनीतिक स्वाधीनता प्राप्त करने की अभिलाषा को जन्म दिया। सबसे पहला उपाय था भारतवासियों के हृदयों में अपने देश और धर्म के लिए स्वाभिमान उत्पन्न करना। जिस समय वे कार्यक्षेत्र में अवतीर्ण हुए, उस समय देश का शिक्षित समाज पाश्चात्य सभ्यता और इंग्लैण्ड की भक्ति के प्रवाह में बहा चला जा रहा था। यों सुधार की आवाज़ तो उससे पहले भी उठ चुकी थी, परन्तु वह आवाज देशवा़सियों को अंग्रेजी भाषा और अंग्रेजी विचारों का भक्त बनाकर आत्मसम्मान को घटाने वाली थी। महर्षि ने बाहर की ओर भागती हुई देशवासियों की दृष्टियों को स्वदेशाभिमान सिखाने वाले अपने उपदेशों द्वारा मानों खींचकर अंदर की ओर कर लिया। महर्षि ने लिखा—"यह आर्यावर्त देश ऐसा है कि जिसके सदृश भूगोल में दूसरा देश नहीं है। आर्यावर्त देश ही सच्चा पारसमणि है कि जिसको लोहेरूपी विदेशी छूते ही सुवर्ण अर्थात् धनाढ्य हो जाते हैं।"

दूसरे स्थान पर वे लिखते हैं, "जिस देश के पदार्थों से अपना शरीर बना, अब भी पालन होता है और आगे होगा, उसकी उन्नति तन, मन, धन से सब जने मिलकर प्रीति से करें।"

मैंने ये दो उद्धरण केवल दृष्टान्त रूप में दिये हैं। महर्षि भारतवासियों के हृदयों में स्वदेशाभिमान की जो भावना उत्पन्न करना चाहते थे, उसका सार सत्यार्थप्रकाश के एकादश समुल्लास की निम्नलिखित चार प्रस्ताविक पंक्तियों में आता है—

"सृष्टि से लेकर पांच सहस्र वर्षों से पूर्व समय पर्यन्त आर्यों का सार्वभौम चक्रवर्ती अर्थात् भूगोल में सर्वोपरि एकमात्र राज्य था। अन्य देशों में माण्डलिक अर्थात् छोटे-छोटे

राजा रहते थे क्योंकि कौरव-पाण्डव पर्यन्त यहाँ के राज्य और राज्य शासन में सब भूगोल के सब राजा और प्रजा चलते थे।"

राष्ट्र को अनुभव कराना कि वह एक दिन शक्ति सम्पन्न और स्वाधीन था और यदि वह ठीक प्रकार से यत्न करे तो फिर भी स्वाधीन हो सकता है, स्वाधीनता के शिखर पर पहुँचने का पहला कदम है।

दूसरा कदम यह है कि राष्ट्र उन कारणों को दूर करे जिन्होंने उसे पराधीन बनाकर पुराने गौरव से गिराया और संसार में अपमानित कराया है। महर्षि ने भारत के अध:पतन पर गम्भीरता से विचार किया तो देखा कि उसकी मानसिक दासता ही राष्ट्र की राजनीतिक तथा आर्थिक दासता का मूल कारण है। रोग के असली रूप को पहचान कर महर्षि ने कुशल वैद्य की भांति पहले रोग के मूल कारणों को दूर करने का उपक्रम किया और इसमें शायद किसी को ही सन्देह हो कि वे बहुत दूर तक उसमें सफल भी हुए। महर्षि के प्रत्येक विचार से सहमत न होने वाले व्यक्तियों को भी यह मानना पड़ता है कि उन्होंने अपनी शास्त्रीय आलोचना और ओजस्विनी वाणी से आर्य जाति के सदियों से बन्द पड़े विचार सागर का ऐसे ज़ोर से मंथन किया कि उसमें से अनायास विचारों की स्वाधीनता और कर्म करने की ओर प्रवृत्ति जैसे बहुमूल्य उपहारों का प्रादुर्भाव हो गया। यह माना हुआ सिद्धान्त है कि मानसिक स्वाधीनता के बिना सामाजिक स्वाधीनता और सामाजिक स्वाधीनता के बिना राजनैतिक स्वाधीनता संभव नहीं। महर्षि ने जहाँ भारतवासियों को स्वदेश के प्रति भक्तिभावना का अमृत पिलाया, वहाँ साथ ही मानसिक पराधीनता की शृंखलाओं को काट कर राष्ट्र को स्वाधीनता के मार्ग पर डाल दिया।

परन्तु वे इतने से ही सन्तुष्ट नहीं हुए। उन्होंने देश के सम्मुख सच्चे स्वराज्य का रूप भी रखा। यह देखकर आश्चर्य होता है कि महर्षि ने स्वराज्य प्राप्ति से लगभग ७० वर्ष पहले स्वराज्य का जो आदर्श सत्यार्थप्रकाश में प्रदर्शित किया था, भारत का शिक्षित समाज उस समय उस आदर्श से कोसों पीछे था। सत्यार्थप्रकाश के अष्टम समुल्लास में महर्षि ने लिखा था—

"आर्यावर्त में भी आर्यों का अखण्ड, स्वतन्त्र, स्वाधीन, निर्भय राज्य इस समय नहीं है, जो कुछ है, सो भी विदेशियों के पदाक्रान्त हो रहा है। कुछ थोड़े राजा स्वतन्त्र हैं। दुर्दिन जब आता है तब देशवासियों को अनेक प्रकार का दुःख भोगना पड़ता है। कोई कितना ही करे, परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है अथवा

मतमतान्तर के आग्रह रहित अपने और पराये पक्षपातशून्य, प्रजा पर पिता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है।"

पूर्ण स्वराज्य की इससे अच्छी व्याख्या क्या हो सकती है? इण्डियन नेशनल काँग्रेस की स्थापना सत्यार्थप्रकाश के ऊपर उद्धृत किये वाक्यों के कई वर्ष पीछे हुई। उसमें पहले केवल विदेशी राज्य में नौकरियों की मांग की गयी, फिर कई वर्षों तक इंग्लैण्ड की छत्रछाया में थोड़े बहुत प्रतिनिधित्व के अधिकार मांगे गये, आगे चलकर औपनिवेशिक स्वराज्य को अपना ध्येय बनाया गया। पूर्ण स्वराज्य की मांग १९२९ के अन्त में रावी के तट पर की गयी। जिस आदर्श पर राजनीतिक कहलाने वाले लोग २०वीं सदी का प्रथम चरण समाप्त होने पर पहुँचे, वहाँ महर्षि दयानन्द १९वीं शताब्दी के अन्तिम चरण के प्रारम्भ में ५५ वर्ष पूर्व पहुँच चुके थे। महर्षि ने स्वराज्य के जिस स्वरूप का वर्णन किया उसे हम गणराज्य का नाम दे सकते हैं। राजा प्रजा द्वारा निर्वाचित हो, शासन मन्त्रियों की सभा हो, पुरुषों और स्त्रियों के अधिकार समान ही हों, ये सब मूलभूत सिद्धान्त हैं जिन्हें देश ने गणराज्य की स्थापना के साथ स्वीकार किया, परन्तु महर्षि ने अपने ग्रन्थों में इसे पहले ही प्रतिपादित कर दिया था। ऐसी दशा में हमारा यह कहना सर्वथा उचित है कि जिस स्वाधीनता यज्ञ की पूर्ति १५ अगस्त १९४७ के दिन हुई, उसका प्रारम्भ महर्षि दयानन्द ने किया था।

श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा महर्षि केप्रमुख शिष्यों में से थे। वे काठियावाड़ के निवासी थे। उन्होंने इंग्लैण्ड जाकर बैरिस्टरी पास की थी। महर्षि का उन पर बड़ा भरोसा था। जब उन्होंने परोपकारिणी सभा की स्थापना की, तब उसके सदस्यों में श्याम जी कृष्ण वर्मा का नाम भी रखा। यद्यपि महर्षि स्वयं अंग्रेजी भाषा से सर्वथा अनभिज्ञ थे, तो भी वे भारतवासियों केलिए विदेशी भाषा का पढ़ना तथा विदेश जाकर आधुनिक विज्ञान, शिल्प आदि का अध्ययन करना आवश्यक समझते थे। इस विषय में उन्होंने यूरोप के कुछ विद्वानों से पत्र व्यवहार भी किया था। स्वामी जी ने श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा को विलायत भेजकर देश के लिए अधिक उपयोगी बनाने का विचार कई बार प्रकट किया था। स्वामी जी की मृत्यु के कुछ वर्ष पश्चात् वर्मा जी इंग्लैण्ड जाकर बस गये, वहाँ रहकर उन्होंने भारत के स्वाधीनता संग्राम में जो बहुमूल्य सहयोग दिया, वह राष्ट्रीय आन्दोलन का इतिहास जानने वालों को भली प्रकार विदित है। उन्होंने १९०५ में लन्दन में 'इण्डिया हाउस' नाम का एक केन्द्र खोला था और उसमें 'इण्डियन होम रूल सोसाइटी' की स्थापना की थी। सोसाइटी के प्रधान वे स्वयं थे। सोसाइटी की ओर से

'इण्डियन सोशियोलोजिस्ट' नाम का एक मासिक पत्र प्रकाशित होता था। उसके सम्पादक भी वर्मा जी थे। पत्र का मूल्य केवल एक आना था। यह पत्र खूब गरम राजनीति का प्रचार करता था। इंग्लैण्ड में रहने वाले भारतीय नौजवानों के लिए 'इण्डियन सोशियोलोजिस्ट' मानों राजनीति धर्मशास्त्र बना हुआ था। बीसों भारतीय विद्यार्थी वर्मा जी की दी हुई छात्रवृत्ति से इंग्लैण्ड में शिक्षा पा रहे थे। मदनलाल धींगड़ा द्वारा कर्जन वासली की लन्दन में हत्या हो जाने पर अंग्रेजी सरकार ने श्याम जी कृष्ण वर्मा जैसे क्रान्ति के नेताओं का इंग्लैण्ड में रहना कठिन बना दिया। तब वर्मा जी पेरिस चले गये और वहीं से राष्ट्रीय आन्दोलन चलाने लगे। लाला हरदयाल जी एम.ए., भाई परमानन्द ज़ी आदि प्रमुख क्रान्तिकारी भारतवासी जब विलायत में रहते थे, तब उन्हें वर्मा जी से हर प्रकार का सहारा मिलता रहता था।

काँग्रेस के प्रारंभिक युग में उसकी नीति को 'भिक्षावृत्ति' कहा जा सकता है। काँग्रेस के प्रस्तावों में महारानी विक्टोरिया के घोषणापत्र की दुहाई देकर सरकारी नौकरियों और ओहदों की मांग की जाती थी। यों काँग्रेस का उद्देश्य भारतवासियों के लिए राजनैतिक अधिकार प्राप्त करना ही था। जिन लोगों ने महर्षि दयानन्द ने पूर्ण प्रतिनिधिसत्तात्मक राज्य के उपदेशों का अमृत पान किया था, उनका हृदय ओहदों की भीख की ओर कैसे आकृष्ट हो सकता था? उन दिनों काँग्रेस में प्रवेश पाने के लिए किसी चरित्र सम्बन्धी परख की जरूरत नहीं समझी जाती थी। आर्यजनों को यह बात भी पसन्द नहीं थी, इस कारण सामान्य रूप से उन दिनों आर्यजन काँग्रेस के प्रति उपेक्षा का व्यवहार रखते रहे। परन्तु इसका यह अभिप्राय नहीं कि काँग्रेस का भारत के लिए राजनीतिक अधिकार प्राप्त करने का लक्ष्य उन्हें आकृष्ट नहीं करता था। उनमें से जो लोग राजनीतिक मनोवृत्ति के थे, वे प्रारम्भ से ही काँग्रेस के कामों में सहयोग देने लगे थे। १९९२ में प्रयाग में काँग्रेस का जो अधिवेशन हुआ, उसमें लालालाजपतराय जी और अम्बाले के बाबू मुरलीधर जी प्रतिनिधि रूप में सम्मिलित हुए थे। अगले वर्ष काँग्रेस अधिवेशन को लाहौर में निमन्त्रित करने वालों में वे भी सम्मिलित थे। लाहौर का अधिवेशन अपने ढंग का अनूठा था। श्री दादा भाई नौरोजी ब्रिटिश पार्लियामेण्ट के सदस्य होने के पश्चात् पहली बार भारत में आये थे। उनके स्वागत और काँग्रेस के अधिवेशन का प्रबन्ध करने वालों में बहुत से प्रमुख आर्यसमाजी सम्मिलित हुए। लाला लाजपतराय जी के अतिरिक्त बख्शी जयश्रीराम जी, राय मूलराज जी एम.ए., बाबू मुरलीधर आदि आर्य सज्जन स्वागतकारिणी के प्रमुख सदस्य थे।

१९०६ तक देश की राजनीति इसी प्रकार ढीली-ढाली चलती रही। सन् १९०५ में लार्ड कर्जन ने बंगाल का विभाजन करके भारत की राजनीति में मानों जान डाल दी। बंग-भंग से बंगाल के निवासियों के हृदयों को जो पीड़ा पहुँची, उसे उनहोंने ऐसे ऊँचे आर्तनाद से प्रकट किया कि सारे देश की आँखें खुल गयीं। देशवासियों को यह अनुभव होने लगा कि दासता सचमुच एक महान् अभिशाप है। बंग-भंग का आन्दोलन देश भर में फैल गया। जिन प्रान्तों में उसने बहुत उग्र रूप धारण किया, उनमें से एक पंजाब भी था। उस समय पंजाब का राजनीतिक नेतृत्व पूरी तरह लाला लाजपतराय जी के हाथों में आ चुका था। उनके प्रभावशाली शब्दों ने सारे प्रांत को आवेश की पराकाष्ठा तक पहुँचा दिया था। उनकी उस गर्जना के कारण ही उनका 'पंजाब-केसरी' नाम पड़ा। वे ऋषि दयानन्द के पक्के शिष्य थे। स्वभावतः उनकी गर्जना का आर्यसमाजियों पर विशेष प्रभाव पड़ा। बंग-भंग के कारण पंजाब में जो आन्दोलन हुआ, उसके नेताओं में हम अनेक आर्यसमाजियों के नाम पाते हैं। रावलपिण्डी में जो काण्ड हुए, उनके लाला हंसराज साहनी आदि सभी नेता आर्यसमाजी थे। लाहौर के राष्ट्रीय कार्यकर्त्ताओं में भी आर्यसमाजी बहुत बड़ी संख्या में थे। जब लालाजी के बढ़ते हुए प्रभाव से डरकर सरकार ने उन्हें माण्डले के किले में नजरबन्द कर दिया, तब सरकार की सबसे अधिक कड़ी दृष्टि आर्यसमाजियों और आर्यसमाज की संस्थाओं पर पड़ी। यह समय आर्यसमाजियों के लिए बड़ी कड़ी परीक्षा का था। सरकार के अन्तरंग हलकों में यह प्रस्ताव चक्कर काटने लगा था कि जो आर्यसमाजी सरकारी नौकरी में है, यदि वे आर्यसमाज से त्यागपत्र न दें तो उन्हें नौकरी से अलग कर दिया जाय। कुछ लोगों की तरक्कियां रोक दी गयीं और दो चार को नौकरी से अलग भी किया गया परन्तु सन्तोषपूर्वक कहा जा सकता है कि किसी एक भी आर्यसमाजी ने नौकरी की रक्षा के लिए समाज की सदस्यता का त्याग नहीं किया।

काँग्रेस के द्वितीय युग में

काँग्रेस के दूसरे युग का प्रारम्भ उस समय हुआ जब रौलेट ऐक्ट के विरोध में महात्मा गाँधी ने सत्याग्रह की घोषणा की। सत्याग्रह के मूल सिद्धान्त दो थे—पहला सत्य, दूसरा अहिंसा। इन दोनों सिद्धान्तों का पालन वही मनुष्य कर सकता था, जो चरित्रवान् हो। यह विचार परम्परा आर्यसमाजियों को प्रिय थी क्योंकि यह उनके जीवन सम्बन्धी विचारों से मेल खाती थी। मूल सिद्धानतों की इस समानता का परिणाम यह हुआ कि आर्यसमाज के प्रमुख नेता श्रीस्वामी श्रद्धानन्द जी ने, जो इससे पूर्व काँग्रेस

की रीति नीति के कठोर समालोचक थे, एक तार द्वारा महात्मा जी को यह सूचना भेज दी कि "मैंने सत्याग्रह की प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर कर दिये हैं।" सत्याग्रह में स्वामी जी का सम्मिलित होना मानो एक सिग्नल था। देशभर में हज़ारों आर्यसमाजियों ने सत्याग्रह की सेना में अपने नाम लिखा लिए। जहाँ उन्हें सत्याग्रह का मूल रूप धर्मानुकूल प्रतीत होता था वहाँ साथ ही महात्मा जी का ऊँचा जीवन भी अपनी ओर आकृष्ट करता था। सत्याग्रह की घोषणा से लेकर पंजाब में मार्शल-लॉ और अमृतसर में काँग्रेस-अधिवेशन की समाप्ति तक के विस्तृत इतिहास को देखें तो उस समय के उत्तरीय भारत के स्वाधीनता संग्राम के सिपाहियों में हमें आर्यसमाजियों की अधिक संख्या मिलती है। पंजाब के डॉ. सत्यपाल, पं. रामभजदत्त आदि नेता आर्यसमाजी थे। मुफस्सिल शहरों में भी आर्यसमाज के प्रमुख अधिकारियों ने आगे बढ़कर आन्दोलन में भाग लिया। परिणाम यह हुआ कि जब पंजाब में मार्शल-लॉ लगाया गया तो प्रायः मार्शल-ला वाले सभी शहरों में न केवल आर्यसमाज के अधिकारियों पर मुसीबतें ढाई गयीं, आर्यसमाज की संस्थाओं पर भी वार किये गये। अनेक आर्यसमाजियों पर मार्शल-लॉ का प्रहार हुआ।

डी.ए.वी. कालेज के सब छात्रों पर जो अत्याचार किये गये, उनका वृत्तान्त सरकारी और काँग्रेसी जांच कमेटियों की रिपोर्ट में पढ़ें तो रोमांच हो आते हैं। होस्टल के सब छात्रों को गोरे सिपाहियों के पहरे में, सिर पर बिस्तर रखकर, मई की धूप में दो तीन मील चलने पर बाधित किया जाता था ताकि वे रात को किले में सोयें। जहाँ किसी छात्र की चाल ढीली हुई कि गोरी सेना की गोली और संगीन की नोक उसकी पीठ पर आ धमकती थी। गुजरांवाला में एक गुरुकुल स्कूल था। उस पर भी मार्शल-लॉ के अधिकारी की कुदृष्टि पड़ गयी और वह सब कुछ किया गया जिसकी मार्शल-लॉ में गुंजाइश थी।

देश के अन्य भागों में भी आर्यसमाज के सदस्यों ने पहले सत्याग्रह में और फिर काँग्रेस में सहयोग देना आरंभ कर दिया।

१९१९ के अंत में अमृतसर में काँग्रेस का जो अधिवेशन हुआ, उसकी स्वागत योजना के चलाने वाले यदि सौ फ़ीसदी नहीं तो पचहत्तर फ़ीसदी आर्यसमाजी अवश्य थे। स्वागताध्यक्ष श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी के व्यक्तिगत प्रभाव और परिश्रम के बिना अमृतसर में काँग्रेस का अधिवेशन शायद ही हो सकता। स्वभावतः उनके चारों ओर जो कार्यकर्त्ता एकत्र हुए थे आर्यसमाजी थे। काँग्रेस के इतिहास में यह पहला ही अवसर था। जब स्वागताध्यक्ष ने अपना भाषण राष्ट्रभाषा हिन्दी में पढ़ा। वह भी काँग्रेस को

आर्यसमाज की एक देन ही थी।

क्रांतिकारी-दल में आर्यसमाजी

यूरोप में क्रांतिकारी दल को संगठित करने में श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा ने जो प्रमुख भाग लिया उसकी चर्चा पहले कर आये हैं। भारत में उससे पूर्व ही क्रान्तिकारी दल जन्म ले चुका था। सम्भव है, कुछ लोग क्रान्तिकारी दल की कार्यप्रणाली से सहमत न हों, परन्तु इस दल के सदस्यों की ओजस्विनी देशभक्ति तथा अद्‌भुत साहसिकता से कोई भी भारतवासी इन्कार नहीं कर सकता। इसमें भी कोई सन्देह नहीं कि स्वराज्य की उपलब्धि में उन लोगों के बलिदान से बहुत सहायता मिली।

आर्यसमाजी विचार रखने वाले क्रान्तिकारियों में से पहला नाम मदनलाल धींगड़ा का है, जिसने लन्दन में कर्जन वायली की हत्या की थी। अदालत में बयान देते हुए युवक मदनलाल ने कहा था, "मुझ जैसे निर्धन और मूर्ख युवक पुत्र के पास माता की भेंट के लिए अपने एक सीस के अतिरिक्त और हो ही क्या सकता है और इसी से मैं अपने एक सीस की श्रद्धांजलि माता के चरणों में चढ़ा रहा हूँ। भारत में इस समय केवल एक ही शिक्षा की आवश्यकता है और वह है मरना सीखना। और उसके सिखाने का एकमात्र ढंग स्वयं मरना है। मेरी ईश्वर से यही प्रार्थना है कि मैं बार-बार भारतमाता की गोद में जन्म लूं और उसी के कार्य में प्राण देता रहूँ। वन्दे मारतम्॥"

भाई परमानन्द जी उन आर्य विद्वानों में से थे जो अपने आरंभिक जीवन में अनेक विदेशों में वैदिक धर्म का प्रचार करने गये थे। वे पंजाब में क्रान्तिवाद के मुखिया बनकर सरकार के कोप भाजन बने और काले पानी में जन्म भर की कैद भोगने के लिए भेजे गये। भाई बालमुकुन्द जी भाई परमानन्द जी के चचेरे भाई थे। आपने डी.ए.वी. कालेज से बी.ए. की परीक्षा पास की। १९१०-११ ईस्वी में पंजाब में राजनीतिक अशांति का जो बवन्डर उठा, उसने बहुत से नवयुवकों को क्रान्तिकारी बना दिया। भाई बालमुकुन्द जी भी उन नौजवानों में थे। लाहौर षडयन्त्र केस के सिलसिले में पकड़े गये। दीनानाथ नाम के एक मुखबिर के बयानों पर जिन अनेक नौजवानों को फांसी का हुक्म दिया गया, उनमें बालमुकुन्द जी भी हैं। जब उनकी नवविवाहिता पत्नी को विदित हुआ कि पतिदेव को फांसी मिल गयी तो वे उठीं, स्नान किया और कपड़े और गहने पहनकर एक चबूतरे पर जा बैठी और वहीं बैठे-बैठे प्राण त्याग दिये। वह भी मातृभूमि की वेदी पर एक बहुमूल्य बलिदान ही था। इसी हल्ले में महात्मा हंसराज जी के सुपुत्र बलराम जी भी पकड़े गये थे। पंजाब में अन्य क्रान्तिकारी नौजवान जेलों में भेजे गये या फांसी चढ़ाये

गये उनमें से अनेक आर्यसमाजी थे।

१९२४-२५ ईस्वी में उत्तरप्रदेश में क्रान्तिकारी दल का विस्तृत संगठन तैयार हो गया था। उस दल केअनेक कारनामों में से काकोरी की डकैती सवसे अधिक प्रसिद्ध है। उस दल के प्रमुख नेता श्री रामप्रसाद 'बिस्मिल' कट्टर आर्यसमाजी थे। आपके दूसरे साथी श्री मास्टर गेंदालाल जी भी आर्यसमाजी विचार रखते थे। बिस्मिल वहुत छोटी आयु से ही क्रान्तिकारी विचारों से प्रभावित हो गये थे। उन्होंने सरकारी अड्डों या खजानों पर किये गये कई आक्रमणों में भाग लिया। अन्त में लखनऊ के समीप काकोरी के स्थान पर जो सनसनीखेज डाका डाला गया उसके नेता के रूप में रामप्रसाद जी भी पकड़े गये। बिस्मिल कवि भी थे। 'बिस्मिल' उनका कविता का ही उपनाम था। जेल में प्रायः अपना बनाया जो गीत गाया करते थे, उसके अन्तिम पदों में एक देशभक्ति की सच्ची तड़पन पायी जाती है। पर यह था—

अब न पिछले बलबले हें, और न अरमानों की भीड़।
एक मिट जाने की हसरत, बस दिले बिस्मिल में है।

फांसी पर चढ़ते हुए बिस्मिल ने यह गीत गाया था—

मालिकतेरी रजा रहे, और तू ही तू रहे।
बाकी न मैं रहूँ, न मेरी आरजू रहे।

इसी समय अन्य भी कई स्थानों में स्वाधीनता प्राप्ति के लिए क्रान्तिकारी दलों की स्थापना हुई। उनके सदस्यों में हम अनेक आर्यसमाजी युवकों के नाम पाते हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा के क्षेत्र में

राष्ट्रीय जागृति और उस द्वारा स्वराज्य की प्राप्ति को आर्यसमाज की एक बड़ी देन गुरुकुल की शिक्षा प्रणाली के रूप में मिली। गुरुकुल की स्थापना १९०० ईस्वी में गुजरांवाला में हुई। १९०२ में वह गंगा के तट पर कांगड़ी ग्राम के समीप एक शिक्षणालय के रूप में प्रतिष्ठापित हुआ। प्रारम्भ से ही गुरुकुल के मूल सिद्धान्त ऐसे स्वीकार किये गये थे जो पूर्णरूप से राष्ट्रीय भावना के लिये हुए थे। छात्रों का आश्रम में गुरुओं की संरक्षा में निवास गुरुकुल शिक्षाप्रणाली का पहला आवश्यक अंग था। उनका वेश भारतीय और सीधा-सादा था। छात्रों को सब अर्वाचीन और नवीन विषयों की शिक्षा राष्ट्रभाषा हिन्दी में दी जाती थी। संस्कृत वाङ्मय और आर्यधर्म प्रत्येक छात्र की शिक्षा के आवश्यक अंग थे। गुरुकुल की शिक्षा-प्रणाली का सबसे मुख्य लक्ष्य चरित्र निर्माण था। ये ही विशेषताएँ हैं, जो किसी जाति को राष्ट्र बनाने वाली शिक्षा में होनी

चाहिए। गुरुकुलों में यह पहले से विद्यमान थी। गुरुकुल कांगड़ी के पश्चात् देशभर में अनेक गुरुकुलों की स्थापना हुई। सभी में उन्हीं शिक्षा के मूल सिद्धान्तों को स्वीकार किया गया, जिनका निर्देश महर्षि दयानन्द ने अपने ग्रन्थों में किया था। १९०६ और १९१९ के राजनीतिक उत्थान के समय जाति ने राष्ट्रीय शिक्षा के महत्व को समझ कर अंग्रेजी शिक्षणालयों के बहिष्कार और राष्ट्रीय शिक्षणालयों की स्थापना का आयोजन किया। कई केन्द्रों में राष्ट्रीय शिक्षणालय खोले गये। परन्तु वे राजनीतिक आन्दोलन के उत्थान और पतन के प्रभाव से न बच सके। जब राजनीतिक आन्दोलन प्रबल हुआ, तब वे राष्ट्रीय शिक्षणालय समाप्त हो गये। उन सारे झोंकों को सहकर यदि कोई शिक्षणालय न केवल जीवित रहे, अपितु निरन्तर उन्नति करते रहे, वे गुरुकुल ही थे। उन्होंने सरकार से सर्वथा स्वाधीन राष्ट्रीय शिक्षा के दीपक को प्रज्वलित रखा। आज स्वाधीन भारत की सरकार इस सत्य को स्वीकार करे या न करे, स्वराज्य मिलने से पूर्व उसके नेता मुक्त कण्ठ से यह घोषणा करते रहे कि गुरुकुल सच्चा राष्ट्रीय शिक्षणालय है और उसकी आधारभूत पद्धति ही राष्ट्र की मानसिक दासता की एक मात्र औषधि है।

समाज-सुधार

यह सर्वसम्मत बात है कि हमारे देश के नैतिक अधःपतन का मुख्य कारण सामाजिक बुराइयाँ थीं। जन्मगत जात-पांत के बन्धन, छुआछूत का भयंकर रोग और स्त्रियों की अशिक्षा और सामाजिक हीनता आदि रोगों के घातक कीटाणुओं ने जाति को ऐसा निर्बल कर दिया था कि वह किसी आक्रान्ता के आक्रमण का सामना नहीं कर सकती थी। यह भी स्पष्ट सत्य है कि ज्यों-ज्यों जाति के इन रोगों का निवारण होता गया त्यों-त्यों हम स्वाधीनता के समीप पहुँचते गये। जब राज्य क्रान्ति का अन्तिम दौर शुरू हुआ, तब यह स्पष्ट हो चुका था कि यद्यपि सामाजिक रोग सर्वथा नष्ट नहीं हुए थे, वे जड़ से हिल अवश्य चुके थे। इससे शायद आर्यसमाज का कोई कट्टर विरोधी भी इन्कार न करे कि जात-पात के जाल को काटने, छुआछूत के भूत को भगाने और स्त्रियों को सुशिक्षित और समुन्नत करने में आर्यसमाज ने अगुआ का काम किया है। अर्वाचीन भारत में महर्षि दयानन्द पहले सुधारक थे जिन्होंने सर्वसाधारण जनता में सामाजिक जागृति पैदा की। महात्मा गांधी जी का सत्याग्रह यज्ञ सफल न हो सकता यदि महर्षि दयानन्द ने उससे लगभग ९० वर्ष पूर्व समाज-सुधार का मंगलाचरण न किया होता। भारत के बड़े भाग में समाज सुधार की योजनाओं को कार्यान्वित करने का श्रेय आर्यसमाज को देना ही पड़ेगा।

यदि २०वीं सदी के प्रारम्भिक ४० वर्षों केइतिहास पर दृष्टि डालें तो हम देखेंगे कि उत्तरीय भारत के प्रायः सभी प्रान्तों में आर्यसमाज के कार्यकर्त्ता समाज-सुधार के अग्रदूत बने हुए थे। एक समय था जब बड़ौदे की रियासत शिक्षा प्रचार और समाज सुधार में बहुत आगे बढ़ी हुई मानी जाती थी। जानकार लोगों को मालूम है कि महाराज सयाजीराव गायकवाड़ को सुधार की ओर प्रेरित करने का बहुत सा श्रेय उनके मानसिक गुरु स्वामी नित्यानन्द जी महाराज को था और उनकी सुधार सम्बन्धी योजनाओं को कार्यान्वित करने वाले राज्यरत्न पण्डित आत्माराम जी अमृतसरी थे। दोनों ही विद्वान् आर्यसमाजी थे। इसी प्रकार अन्यत्र भी जहाँ कहीं समाज सुधार की समस्या कठिन हो जाती थी, वहाँ आर्यसमाज के कार्यकर्ता मैदान में कूद पड़ते थे।

स्वराज्य की अन्तिम मुहिम

मैं इस लेख में बतला चुका हूँ कि सत्याग्रह के पहले दौर में आर्यसमाजियों ने असाधारण उत्साह से भाग लिया क्योंकि वह आन्दोलन उन्हें धार्मिकता की भावना से ओत-प्रोत मालूम हुआ। १९२२-२३ में आन्दोलन के शिथिल हो जाने पर एक नई परिस्थिति उत्पन्न हो गयी। यूरोपियन महायुद्ध के विजयी मित्र दल ने खिलाफत का खात्मा करके भारत के खिलाफ आन्दोलन को लगभग समाप्त कर दिया। सर्वसाधारण मुसलमान जनता खिलाफत के नाम पर ही संगठित होकर महात्मा गांधी के सत्याग्रह में सम्मिलित हुई थी। खिलाफत का अन्त हो गया, इस कारण साधारण मुसलमान जनता का रुख काँग्रेस की ओर से हट गया परन्तु उनका संगठन दृढ़ हो चुका था और उन पर मौलानाओं की प्रधानता चरम सीमा तक पहुँच गयी थी। इस परिस्थिति ने भारत में साम्प्रदायिक संघर्ष उत्पन्न कर दिया। मलाबार, मुलतान आदि स्थानों पर हिन्दुओं पर भयंकर आक्रमण हुए। जीवित संस्था होने के कारण आर्यसमाज ने उन आक्रमणों का शान्तिपूर्ण उपायों से प्रतिरोध खड़ा किया। इससे पहले मुसलमान नेताओं में और फिर उनकी ऐनक से देखने वाले कुछ राजनीतिक नेताओं ने आर्यसमाज पर दोषारोपण करना आरम्भ कर दिया। जेल से बाहर आने पर मौलाना मुहम्मद अली और शौकत अली जैसे बाहर से राष्ट्रवादी परन्तु हृदय से कट्टर सम्प्रदायवादी मुसलमान नेताओं केकथन पर विश्वास करके महात्मा जी ने भी आर्यसमाज को दोषी ठहरा दिया और अपने मत को बड़ी शीघ्रता से 'यंग इण्डिया' के स्तम्भों में प्रकाशित कर दिया। महात्मा जी के उस एकपक्षीय लेख ने आर्यजनों के हृदयों को बहुत पीड़ा पहुंचायी। लेख में वस्तुतः आर्यसमाज केसाथ अन्याय किया गया था। इस कारण महात्मा जी के पीछे

से कई लेखों और नोटों द्वारा उसके मार्जन करने की चेष्टा की। परन्तु उस लेख के बोये हुए सब काँटे सिमट न सके। उस लेख के सुदूरवर्ती परिणामों में हम स्वामी श्रद्धानन्द जी और महाशय राजपाल जी की हत्याओं की गिनती कर सकते हैं। इन सारी घटनाओं का परिणाम यह हो जाता है कि आर्यसमाज के सदस्य राष्ट्रीय आन्दोलन से विमुख हो जाते यदि उनकी राष्ट्रीय भावना बहुत गहरी न होती। उनकी राष्ट्रीयता केवल राजनीतिक नेताओं के सामयिक लेखों पर आश्रित नहीं थी। वह महर्षि दयानन्द की सिखलाई हुई निष्कलंक देशभक्ति पर आश्रित थी। अतः कुछ राष्ट्रीय नेताओं के व्यवहार से असन्तुष्ट होकर भी आर्यजन देश के स्वाधीनता संग्राम से अलग न हुए। वे निरन्तर २५ वर्षों तक स्वराज्य की उन सब लड़ाइयों में तन, मन, धन से पूरा सहयोग देते रहे, जिनका नेतृत्व महात्मा जी ने किया। मैं एक भी ऐसे आर्यसमाजी को नहीं जानता कि जिसने कुछ अदूरदर्शी राष्ट्रीय नेताओं के दुर्व्यवहारों के कारण स्वाधीनता यज्ञ में अपनी बलि देने में संकोच किया हो। यह दृढ़तापूर्वक कहा जा सकता है कि स्वराजय की अन्तिम मुहिम की सफल समाप्ति तक महर्षि दयानन्द के शिष्य अपना धर्म समझ कर सेना की अगली श्रेणी में लड़ते रहे।

हैदराबाद के स्वतन्त्रीकरण में आर्यसमाजियों का हाथ

स्वतन्त्रता की घोषणा के पश्चात् फिर एक ऐसा समय आया जब आर्यजनों ने अपनी अद्‌भुत देशभक्ति का परिचय दिया। जब योरुप के देश टर्की के खलीफा का अन्त कर रहे थे, तब भारतवर्ष के मुसलमानों ने अंग्रेजी सरकार के सामने यह प्रस्ताव रखा था कि वह हैदराबाद के निज़ाम को संसार भर के मुसलमानों का खलीफा मान ले। निज़ाम ने उस समय उस प्रस्ताव का विरोध नहीं किया था। उस समय से यह वात स्पष्ट हो गयी थी कि भारत के मुसलमान और हैदराबाद का निज़ाम इस वात में सहमत हैं कि यदि अवसर मिले तो हैदराबाद के शासक को भारत से अलग ऊंचे पद का अधिकारी बनाया जाय। अंग्रेजों के भारत से विदा होने पर उन लोगों के दिल का सोचा हुआ भूत जाग उठा और निज़ाम तथा उसके साथियों ने भारत से अलग आज़ादी का झण्डा खड़ा कर दिया। निज़ाम के ग़रीब प्रजाजनों का रक्त चूसकर एकत्र किए हुए स्वर्ण भण्डार की सहायता से रज़ाकारों कीं एक आततायी सेना खड़ी की गयी जिसने रियासत के हिन्दू निवासियों को लूटना और मारना प्रारम्भ कर दिया। भारत सरकार ने पुलिस कार्रवाई शुरू करने से पहले हैदराबाद के हिन्दुओं की दशा बहुत ही शोचनीय हो जाती यदि आर्यसमाज के कार्यकर्ता सिर पर कफन बांधकर मैदान में न कूद पड़ते। उन थोड़े

से संकटमय दिनों में आर्य नवयुवकों ने रजाकारों का जो मुंहतोड़ जवाब दिया, उसने परिस्थिति को काफी संभाले रखा। हैदराबाद के स्वतन्त्रीकरण में उन नौजवानों ने जो प्रशंसनीय कार्य किया, वह यद्यपि प्रकट इतिहास का भाग नहीं है, तो भी वह विस्मरणीय नहीं समझा जा सकता।

आर्यसमाजियों ने अपने देश की स्वाधीनता के लिए जितने बलिदान किए है, उनका प्रेरक कारण कोई स्वार्थ नहीं था, अपितु धर्म था। वैदिकधर्मी प्रतिदिन प्रार्थना करता है, **"अदीनाः स्याम शरदः शतम्"** दासता में रहना उसके धर्म के प्रतिकूल है। इसी भावना से प्रेरित होकर गलतफहमियों के शिकार बनकर भी आर्यजन देश के प्रति अपने कर्तव्य का पालन अब तक करते रहे हैं और आशा है कि आगे भी करते रहेंगे। नौकरियों, उपाधियों या पदों की इच्छा से न वे अब तक प्रेरित हुए और न आगे प्रेरित होंगे। वे स्वाधीनता को धर्म समझकर उसके लिए लड़ते रहे हैं। विश्वास रखना चाहिए कि भविष्य में भी राष्ट्र पर संकट आने की दशा में वे उसी विशुद्ध भावना से कार्यक्षेत्र में उतरेंगे। महर्षि दयानन्द के अनुयायियों को यही शोभा देता है।

असहयोग और सत्याग्रह आन्दोलनों में पंजाब के आर्यसमाजियों का कर्तव्य

महात्मा गांधी के असहयोग आन्दोलन के आह्वान के बाद १९२०-२१ ई. में देश में जो लहर चली, उससे उत्तर भारत में यह बात पूर्णतः स्पष्ट हो गई कि राष्ट्रवादी और आर्यसमाजी का होना एक ही बात है या ये एक दूसरे के पूरक हैं। आर्यसमाजी होने का अर्थ ही राष्ट्रीयता से परिपूर्ण एक ऐसे जुझारु व्यक्ति के रूप में लिया जाता था जो ब्रिटिश गुलामी के जुए को उतार फैंकने के लिए सदा कटिबद्ध रहता है।

स्वामी श्रद्धानन्द, भाई परमानन्द, लाला लाजपतराय, भगतसिंह के चाचा अजीत सिंह, चौधरी रामभज दत्त, बख़्शी जेसाराम, रायबहादुर मूलराज, रायज़ादा भगतराम, हंसराज साहनी, अमोलक राम एवं लालचन्द आदि आर्यसमाजी नेता ही थे जिन्होंने पंजाब में काँग्रेस को बढ़ाया। आर्यसमाज के नेता होने के साथ साथ ये काँग्रेस आन्दोलन के भी नेता थे। इसी से आर्यसमाज की राष्ट्रीयता को जहाँ बल मिला, वहाँ आर्यसमाजियों की देशभक्ति की भावना पर लोगों के विश्वास में वृद्धि भी हुई।

आर्यसमाज के धार्मिक, शैक्षणिक और सामाजिक क्षेत्रों में कार्य का तथा रूढ़ियों

और अन्धविश्वासों को समाप्त करने के आन्दोलन का राष्ट्रीय चेतना जगाने में महत्वपूर्ण हाथ रहा। आर्य समाज ने न केवल वैचारिक क्रान्तियों को ही जन्म दिया अपितु उसे क्रियात्मक रूप भी प्रदान किया। ऊपर लिखे व्यक्तियों के अतिरिक्त सर चौधरी छोटूराम, आर्य कन्या महाविद्यालय जालन्धर के संस्थापक लाला देवराज जी, डी.ए.वी. संगठन के संस्थापक लाला हंसराज, बख़्शी टेकचन्द, डॉ. गोकुलचन्द नारंग, डॉ. गोपीचन्द भार्गव, श्री भीमसेन सच्चर, राय बहादुर बद्रीदास, लाला जगतनारायण लाल, (जो बाद में उग्रवादी अकालियों की गोली के शिकार बने), लाला खुशहाल चन्द (महात्मा आनन्द स्वामी), अमरनाथ विद्यालंकार (जो अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी के महामन्त्री रहे), पण्डित सत्यदेव विद्यालंकार, महाशय कृष्ण, आचार्य रामदेव आदि सब आर्यसमाजी नेता थे। जिन्होंने पंजाब तथा देश के राजनैतिक जीवन को प्रभावित किया।

पंजाब के प्रमुख आर्यसमाजी नेता महाशय कृष्ण की स्वतन्त्रता संग्राम में प्रमुख भूमिका रही। पेशे से महाशय जी लेखक व पत्रकार थे। सर्वप्रथम वे आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के अंग्रेज़ी पत्र "आर्य" के सम्पादक बनाए गए। उनकी लेखनी इतनी तीव्र और चुटीली थी कि लन्दन के एक समाचार पत्र ने उन्हें अग्नि सम्पादक (फायरी एडिटर) की संज्ञा दी थी।

आज़ाद हिन्द फौज को समर्थन

स्वतन्त्रता संघर्ष के सिलसिले में आजाद हिन्द फ़ौज द्वारा किए गए कार्य का आर्यसमाज ने खुलकर समर्थन किया, तथा भारत सरकार से आज़ादी के इन दीवानों को गिरफ़्तारी से मुक्त करने व उन पर कोई अभियोग न चलाने का अनुरोध किया। उत्तर प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा ने इस सम्बन्ध में २६-१२-४५ को अपनी एक बैठक में जो प्रस्ताव स्वीकार किया, उसका कुछ अंश इस प्रकार है—

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश की अन्तरंग सभा सरकार से यह अनुरोध करती है कि सन् १९४२ ई. में व उसके पश्चात् ब्रह्मा, मलाया और अन्यत्र बनी इण्डियन नेशनल आर्मी (आजाद हिन्द फौज) के सदस्यों को जिन परिस्थितियों में ये सेनाएं बनी थीं, उन्हीं को ध्यान में रखते हुए, युद्धबन्दी समझें तथा इस सेना के सदस्यों के विरुद्ध १५-११-४५ को दिल्ली में जो अभियोग आरम्भ हुआ है, उसे वापस लिया जाए। यह सभा मांग करती है कि इन सब सैनिकों को तत्काल मुक्त किया जाए।

उत्तर प्रदेश की आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा स्वीकृत यह प्रस्ताव सम्पूर्ण आर्य जनता के विचार को सूचित करता है। सभी आर्यसमाजी आज़ाद हिन्द फ़ौज के समर्थक व प्रशंसक थे। इस फ़ौज के अफ़सरों व सैनिकों में भी आर्यसमाजियों की संख्या कम न थी। दिल्ली में आज़ाद हिन्द फ़ौज के जिन तीन बड़े अफसरों पर मुकद्दमा चलाया गया था, उनमें एक श्री सहगल आर्यसमाजी परिवार के थे, इसी प्रकार सामान्य सैनिकों में जो बहुत से गढ़वाल आदि के क्षेत्रों के थे, आर्यसमाज के साथ उनका घनिष्ठ सम्बन्ध था।

जून १९४० ई. में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा फरवरी १९४४ ई. में संयुक्त प्रांत (उत्तर प्रदेश) की आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा स्वीकार किये गये। जिन प्रस्तावों का ऊपर उल्लेख किया गया है, उनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि एक संगठन के रूप में भी आर्यसमाज के लिए देश की राजनैतिक गतिविधि के सम्बन्ध में पूर्णतया तटस्थ रह सकना सम्भव नहीं रहा और उसने सामयिक समस्याओं पर अपने विचार प्रकट करने में संकोच नहीं किया।

★ "आर्य समाज दयानंद की कीर्ति है। आर्य समाज के विरोधी भी स्वीकार करेंगे कि इस ने भारत माता की बड़ी सेवा की है। आने वाली पीढ़ियाँ दयानंद का मूल्य आर्य समाज के काम से ही आंकेंगी। ऐसे व्यक्तित्व का कोई व्यक्ति यदि अपमान करेगा तो मैं उसे पाप समझूंगा।" —महात्मा गांधी

★ "जर्मन संन्यासी मार्टन लूथर पाश्चात्य 'नवयुग' की उपज था और गुजराती संन्यासी दयानंद भारतीय 'नवयुग' की। दोनों अपने अपने ढंग से नूतन प्रवाह के प्रतिनिधि बने। लूथर ने क्षमा पत्रों पर प्रहार किया, दयानंद ने मूर्ति पूजा के विरुद्ध आवाज़ उठाई। लूथर का नारा था 'बाइबल की ओर मुड़ो' दयानंद का नारा था 'वेदों की ओर आओ'।

—प्रो. ग्रेसफोल्ड एम.ए.

राष्ट्र धर्म

—स्व. आचार्य प्रेमभिक्षु, मथुरा

ऋषि दयानन्द की योग-साधना चरम उत्कर्ष पर है। उन्हें १८-१८ घण्टे की समाधि में निमग्न रहने का अभ्यास हो चुका है। प्रातः का झुटपुटा है। गंगातीर पर समाधि में निमग्न ऋषिराज ने नेत्र खोले ही हैं कि उनकी दृष्टि गंगा की लहरों में प्रवेश कर रही एक देवी पर पड़ती है। यह माँ है, अपने नन्हें से शिशु की लाश को उसने एक चीर से ढाँप रखा है। यह माता अपने हृदय-खण्ड उस मृत बालक को तो गंगा की लहरों में बहा देती है, किन्तु कफन के रूप में जिस चीर को लपेट कर वह लाई थी, उसे वह न बहा सकी। बहाती भी कैसे? उसी चीर से उसे अपनी लाज जो ढाँपनी थी। इस करुण दृश्य को देखकर आचार्य दयानन्द की आँखें गंगा-यमुना बन गईं। वे रो रहे थे।

मित्रो और माताओ! यह वही तो बालक है जिसने १४ वर्ष की आयु में अपनी सगी बहिन को मृत्यु-मुख में जाते देखा था तब उसकी आँखों में एक भी आँसू न था, सभी परिजन कहते थे—यह कैसा पत्थर हृदय है। यह वही तो नवयुवक है जिसने २२ वर्ष की भरी जवानी में पिता के वात्सल्य को ठुकराया था, माँ की गोद को सूना किया था—चल पड़ा था अनन्त की अनजानी राहों में। तब भी इसकी आँखों में एक भी आँसू न था। फिर आज यह करुण क्रन्दन जिसे लक्ष्य कर कविवर रंग जी ने लिखा था—

रे, सदियों के बाद हिमालय आँसू भर कर रोया।

क्या रहस्य है, इस रोदन का है? यही कि ऋषि ने जन-जन की पीर को अपनी पीर बना लिया, जन-जन के आँसू को अपना आँसू बना लिया। और वह चिन्तन में डूब गया—आखिर मेरा यह महान् राष्ट्र जो कभी विश्व का गुरु था और था चक्रवर्ती साम्राज्य, उसकी यह दीन-हीन, गलित-पलित दशा क्यों? जिस भारत को कभी सोने की चिड़िया कहा जाता था, मेरा वह गौरवशाली राष्ट्र जो पारस बटिका था जिससे विदेशी रूपी लोहा छूकर सोना बन जाता था, आज उसकी मांओं को लाज ढकने तक को वस्त्र नहीं? हा, हन्त!! आखिर यह पतन और पराभव क्यों? विश्व का चक्रवर्ती शासक आज विदेशियों द्वारा पदाक्रान्त और पराधीन क्यों? और इन सभी प्रश्नों का उसे एक ही उत्तर सूझ पड़ा—वेद विद्या के लोप जन्य अज्ञान। मेरे महान् राष्ट्र के पतन के एक-एक

दृश्य उस देवता की आँखों में झूल गये। उसके अन्तच्चक्षुओं ने देखा किस प्रकार धर्मराज कहलाने वाले युधिष्ठिर ने पवित्र वेदों की शिक्षा—**'अक्षैर्मा दीव्यः कृषिमित्कृषस्व'** अर्थात् जुआ मत खेल खेती कर—को भुलाकर—**"दण्डः प्रजा सर्वा, दण्डः धर्म विदुर्बुधः"** के शास्त्रीय वचन को भुलाकर इतिहास में महान् कहे जाने वले अशोक ने पापियों के लिये कालरूप अपनी तलवार को सुलाकर शक-हूण और यवनों के लिये भारत विजय का मार्ग प्रशस्त किया? किस प्रकार धर्म के नाम पर मूढ़ता और अन्ध विश्वास का शिकार बन सिन्ध के राजा दाहिर ने मुहम्मद बिन कासिम के मुकाबिले में जीती बाज़ी को हार दिया? किस प्रकार मूर्तिपूजा के पाप के फलस्वरूप मन्दिरों में एकत्रित राष्ट्र की समस्त पूँजी को हमने लुटवा दिया? किस प्रकार मूर्ति में विश्वास कर भारतीय राजा हाथ पर हाथ धरे बैठे रहे और महमूद गज़नवी यह कहते हुए कि मैं मूर्ति को वेचने नहीं तोड़ने आया हूँ, सोमनाथ मंदिर की मूर्ति के टुकड़े टुकड़े कर असंख्य रत्न, हीरे-जवाहरात, मोती-मूँगे ऊँटों पर लाद-लादकर ग़ज़नी ले गया? किस प्रकार पृथ्वीराज वेदोक्त क्षात्र धर्म की उपेक्षा कर मुहम्मद ग़ौरी का १६ बार क्षमा करता रहा और अन्त में अपना और राष्ट्र का सर्वनाश कर बैठा? किस प्रकार वर्ण व्यवस्था को जन्मगत जाति-पांति में बदल कर पानीपत के युद्धों में हमारी हार हुई? किस प्रकार वैदिक राजनीति को भुलाकर हमने व्यापारी के रूप में आये अंग्रेज़ को आश्रय दिया और अन्त में अपने महान् राष्ट्र की स्वतन्त्रता को गंवा बैठे? किस प्रकार मातृ-शक्ति के निरादर, छूत-छात की पापपूर्ण मान्यता और चूल्हे-चौके के अन्धविश्वास में फंसकर राष्ट्र की स्वतन्त्रता को चौका लगा बैठे? किस प्रकार 'मुझे क्या और तुझे क्या है?' की संकीर्णता और अयज्ञीय वृत्ति को अपनाकर हमने अपनों को बेगाना बना दिया? किस प्रकार 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' विश्व के आर्यकरण के अपने लक्ष्य और ऐतिहासिक गौरव को भुलाकर हम अपनों को ही धक्के दे-देकर अनार्य एवं म्लेच्छ बनाते रहे?

किस प्रकार एक ईश्वर और उसके मुख्य नाम ओ३म् की जगह अनेक ईश्वरों की कल्पना, सर्वव्यापी प्रभु को सातवें आसमान, चौथे आसमान या क्षीर सागर में शयन करने वाला या एक देशीय माना, सर्वान्तिर्यामी-अजन्मा प्रभु को माँ के गर्भ से जन्म लेने वाला मानना, एक वैदिक धर्म-मानव धर्म की जगह अनेक मत-मतान्तरों की कल्पना, एक धर्मग्रन्थ की जगह अनेकों पन्थाई ग्रन्थ, एक अभिवादन-नमस्ते के स्थान पर अनेकों विचित्र-विचित्र अभिवादन और इन सबसे उत्पन्न मानव-मानव के बीच भेद-भाव की दीवारें—ये सम्पूर्ण चित्र ऋषिराज के नेत्रों में तैर गये। उनका अन्तर कराह उठा। इस

सम्पूर्ण दुरावस्था का मूल राष्ट्र के प्रथम और प्रबलतम शत्रु अज्ञान को पाकर ऋषिराज ने समाधि के आनन्द को 'हवि' बनाते हुए मानो कहा—**"इदं राष्ट्राय स्वाहा, इदं न मम"** और सचमुच वह महर्षि १८ घण्टे के समाधि सुख को त्यागकर पाखण्ड-खण्डिनी पताका लेकर कर्त्तव्य-क्षेत्र में कूद पड़ा।

कहा था, उस योगिराज ने एकबार, जिससे उन्होंने योग शिक्षा ली थी—"दयानन्द, तुम किस प्रजा-प्रेम के बखेड़े में पड़ गये हो, लगता है तुम्हें अपनी मुक्ति के लिये एक और जन्म धारण करना पड़ेगा।" याद है आपको, देव दयानन्द ने क्या उत्तर दिया था, इसका? उन्होंने कहा था—"महाराज, क्षमा करें। अब मुझे अपनी वैयक्तिक मुक्ति की खोज नहीं है। मेरे महान् राष्ट्र केकरोड़ों मानवों को और मत-मतान्तरों की पगडन्डियों में उलझ रही सम्पूर्ण विश्व की सम्पूर्ण मानव प्रजा को मुक्ति पथ पर परम पवित्र वेद के राजपथ पर लाते-लाते मैं तो स्वयं ही मुक्त हो जाऊँगा। मुझे अपनी वैयक्तिक मुक्ति के लिये अब किसी पृथक् अनुष्ठान की आवश्यकता नहीं।"

धन्य हो, ऋषिराज! यही तो है **"मह्यं दत्वा व्रजत् ब्रह्म लोकम्'** की जीवन्त व्याख्या। यही तो है व्यक्तित्व का विराट् रूप! यही है—मंत्र के उपदेशानुसार वृहत् सत्य और महान् ऋत का संदर्शन। यही है मित्रो! संकल्प की उग्रता, राष्ट्र-धर्म की दीक्षा, तपोमय जीवन का वरण और यज्ञ भावना की राष्ट्रीय जीवन में प्रतिष्ठापना।

राष्ट्र के गौरव की रक्षा के लिये, राष्ट्र की स्वतन्त्रता और सम्मान के लिये अपने और अपने परिवार के हितों को बलिदान करने वाले नर पुंगव ही अमर हैं। मरहिन्द की दीवार में चिने हुए गुरुगोविन्द सिंह के लाडले ज़ोरावर सिंह और फ़तह सिंह तथा १२ वर्षीय वीर बालक हकीकतराय का आत्म-बलिदान आज भी **'इदं राष्ट्राय स्वाहा, इदं न मम'** का सन्देश दे रहा है।

अपने सतीत्व और राष्ट्रीय सम्मान की रक्षार्थ १४ हज़ार देवियों का जीवित चिता-दहन—कैसा अनूठा राष्ट्र धर्म है? उदयपुर के शिशु महाराणा की रक्षा के लिये अपने इकलौते पुत्र को अपनी ही आँखों के सामने चेहरे पर किञ्चित् भी विभ्रम की रेखा लाये बिना आहुत करने वाली पन्नाधाय और महाराणा प्रताप एवं शक्तिसिंह के बीच तलवारें खिंच जाने पर राज्य कुल की रक्षार्थ अपने जीवन को ढेर कर देने वाले पुरोहित प्रवर तुम दोनों इतिहास केपृष्ठों में अमर हो। युग युग तक तुम्हारी यशोगाथा भावी पीढ़ियों को राष्ट्रधर्म का पुनीत सन्देश देती रहेगी। सच में मर कर जीने की कला उन्होंने सीखी थी।

वीर शिरोमणि युवक लक्ष्मण ने भगवत्प्रेम से प्रेरित हो एकान्त साधना के विचार से वन की राह ली। गुरु गोविन्द सिंह को इनकी वैराग्य वृत्ति का ज्ञान हुआ तो तुरन्त इन्हें खोजते हुए नर्मदा के तट पर जहाँ यह युवक भस्म रमाये तपस्या-लीन था, पहुँचे। और बड़े ही करुणा भरे स्वर में बोले—"मेरे प्यारे लक्ष्मण वीर, क्या तुम नहीं जानते प्यारी प्यारी मातृभूमि, पितृभूमि-पुण्यभूमि भारत माता आज म्लेच्छों द्वारा पदाक्रान्त हो रही है, गोमाता के गले पर छुरी चल रही है और आर्य (हिन्दू) जाति विनाश के कगार पर खड़ी है, इधर तुम हो कि अपने स्वधर्म-क्षात्रधर्म को त्याग कर यहाँ भस्म रमाये बैठे हो। मेरे प्यारे! प्रभु प्यारे से प्रीति करने की यह रीति नहीं है। याद रखो, भगवान् का हज़ारों बार नाम पुकारने से भगवान् प्रसन्न नहीं होते, भगवान् का प्यार पाने का साधन है भगवान् की आज्ञा का पालन करना। प्रभु की आज्ञा है—गोघातक, अन्यायी को सीसे की गोली से मार दो। यह भी मत भूलो कि योगी योग-साधना द्वारा जिस परम गति को पाता है एक आदर्श ब्राह्मण प्रभु समर्पित कर्त्तव्य भावना से वेद प्रचार द्वारा अज्ञान-नाश करके उसी दिव्य स्थिति को प्राप्त करता है। इतना ही नहीं एक आदर्श क्षत्रिय कर्त्तव्य बुद्धि से राष्ट्र रक्षार्थ जब आततायी का शिरच्छेदन करता है तो वह भी समान रूप से प्रियतम प्रभु की गोद पाने का पूर्ण अधिकारी है। तुम गुण-कर्म स्वभाव से क्षत्रिय हो। क्षात्र धर्म तुम्हारा 'स्वधर्म' है। अत: आओ, मेरे साथ—मिटती हुई आर्य जाति को बचाने के लिये। जाति के रक्षण, राष्ट्र के रक्षण के लिये अपने सर्वस्व की आहुति ही सच्ची प्रभु पूजा है।

यही वीर लक्ष्मण बन्दा बैरागी के नाम से इतिहास के पृष्ठों में अमर हो गये हैं। जीवन भर वे स्वदेश और स्वजाति के लिये जूझते रहे। अत्याचरी मुस्लिम़ शासकों के छक्के छुड़ा दिये इस महावीर ने। पर अन्त में साधन-शून्य होने पर ये पकड़े गये। इनके इकलौते पुत्र का शिर भाले से छेदकर इनकी छाती पर दे मारा गया। जलते हुए सँडासों से इस स्थितप्रज्ञ का माँस नोचा जा रहा था। निकलते हुए रक्त के फ़व्वारे से अञ्जलि भर कर ये बार बार रक्त को अपने मुख से लपेटते हैं। किसी ने पूछा—बन्दा यह तुम क्या कर रहे हो? वीर बन्दा का उत्तर था—"शरीर से रक्त निकलने के कारण चेहरे पर लाली का न रहना स्वाभाविक है, मैं यह लाल-लाल रक्त इसलिये लपेट रहा हूँ ताकि मातृभूमि के लिये बलिदान देते समय मेरे चेहरे पर लाली बनी रहे, फीकापन न दिखाई पड़े।" धन्य हो राष्ट्रवीर—मृत्युञ्जयी बन्दा!

राष्ट्र धर्म में दीक्षित प्रणवीर प्रताप की उग्रता-तेजस्विता, उनका तप और यज्ञ

भावना भी कितनी स्पृहणीय है! हल्दीघाटी की लाल भूमि युगों युगों तक इस महावीर के शौर्य की गाथा गाती रहेगी। आपको याद होगा किस प्रकार प्रताप का दूत अकबर के दरबार में प्रताप की पगड़ी उतार कर ही प्रणाम करता है।

खाऊं न परतन्त्रता की स्वर्ण की मैं थालियों में।
भले हैं स्वतन्त्रता के दोना ढाक-पात के॥

महाराणा प्रताप का यह उग्र प्रण बलिपथ के राहियों का सदैव आदर्श बना रहेगा।

एक आदर्श वैश्य किस प्रकार राष्ट्र यज्ञ में हविर्दान कर सकता है? महाराणा प्रताप आज मेवाड़ की भूमि को त्यागने क लिए विवश हो गये हैं। वे ज्यों ही घोड़े को एड़ देकर आगे बढ़ाना चाहते हैं कि एक वृद्ध पुरुष उनके घोड़े की लगाम थाम लेता है, कहता है—"महाराणा! आप पर घोरसे घोर कष्ट आये, वन-वन मारे मारे फिरे। आपने ही नहीं महारानी ने भी, घास की रोटियों पर गुज़ारा किया, ऐसे भी अवसर आये जब घास की रोटियों को भी वन बिलाव ले गया। प्यारे बच्चों को भूख से बिलबिलाते आपने देखा, पर तब भी आपने प्यारे मेवाड़ को नहीं त्यागा, आज आप उसे क्यों छोड़ने लगे हैं?"

मानो, अन्तर का क्षोभ आँखों के रास्ते से चू पड़ा। धीर-वीर महाराणा अब बच्चों की भाँति रो रहे थे। रुँधे कण्ठ से वे बोले—"भामाशाह, मन्त्रिप्रवार! आप तो जानते ही हैं कि मेवाड़ की चप्पा चप्पा भूमि मुझे प्राणों से भी अधिक प्रिय है। फिर आज जो मैं उसे त्यागने लगा हूँ, उसका एकही कारण है—मेरे पास अकबर की सेना से युद्ध करने का कोई साधन शेष नहीं रह गया।" यह कोई गल्प नहीं है, इतिहासकार बताते हैं कि भामाशाह ने उस समय अपने सम्पूर्ण जीवन की अर्जित सम्पूर्ण सम्पदा को महाराणा के चरणों में भेंट करते हुए मानो यज्ञ की भाषा में कहा—**"इदं राष्ट्राय स्वाहा, इदं न मम"** यह धन मेरा नहीं, मेरे राष्ट्र का है। अहा, वैदिक त्यागवाद का, यज्ञ भावना का, **त्यक्तेन भुञ्जीथाः** की वैदिक शिखा को अपने जीवन में उतारने का कैसा ज्वलन्त आदर्श है।

भामाशाह का भौतिक शरीर आज कहाँ है? **"भस्मान्तं शरीरम्"** वह तो भस्म हो गया। पर इस 'राष्ट्र यज्ञ' द्वारा राष्ट्र धर्म की पालना द्वारा उसने मृत्यु को जीतकर अमर जीवन पा लिया। भारत ही नहीं विश्व के इतिहास में वह 'दानवीर' भामाशाह के नाम से अमर हो गया। यही तो है जीवन जीने की कला।

"वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिताः" वेद माँ के इस सन्देश को क्रियान्वित करने वाले पुरोहित प्रवर वशिष्ठ और विश्वामित्र ने जहाँ राष्ट्र रक्षार्थ राम लक्ष्मण को और महर्षि

अगस्त्य ने महावीर हनुमान को तैयार किया, जहाँ गुरुवर्य सन्दीपनि ने योगेश्वर कृष्ण को राष्ट्र धर्मा की दीक्षा दी, वहाँ समर्थ गुरु रामदास ने शूर शिरोमणि छत्रपति शिवा को और वर्तमान में वेद प्रचार द्वारा अज्ञाननाश के व्रत के रूप में ही 'गुरु दक्षिणा' ग्रहण कर आचार्य प्रवर महाराज दण्डी जी के युग निर्माता ऋषि दयानन्द को दीक्षित कर अपने आचार्यत्व को धन्य कर लिया।

भगवान् राम, योगेश्वर कृष्ण, महर्षि दयानन्द आदि के जीवन में तो मन्त्र में वर्णित सातों विशेषतायें थीं ही, छत्रपति शिवाजी के ऋताचरण का भी एक अनूठा उदाहरण तब मिलता है—जब उनके एक सैनिक अफ़सर लूट में परम रूपवती गौहरबानू शहजादी को भी एक तोहफ़े के रूप में वीर शिवा के समक्ष प्रस्तुत करते हैं और महावीर शिवाजी उसमें अपनी माता जीजाबाई का दर्शन करते हुए कहते हैं—

होती जो इतनी सुन्दर मम जीजाबाई माता।
तो रूप-रंग सुन्दर इतना ही मैं भी पाता॥

अपने 'स्व' को राष्ट्र की आत्मा के साथ जोड़ देने की दीक्षा लेने वाले राष्ट्र वीरों को कितना सत्यशील, कितना ऋताचारी, कितना संयमी कितना तेजस्वी और कितना तपस्वी होना चाहिये—वेद माँ की इस सत्प्रेरणा को हम राष्ट्र पिता महात्मा गांधी, अमर सेनानी नेताजी सुभाष, अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द, पं. लेखराम, ला. लाजपतराय, भाई परमानन्द, महावीर सावरकर, शहीदे-आज़म सरदार भगतसिंह, सुखदेव, अशफ़ाक़, महान् क्रान्तिकारी चन्द्रशेखर आज़ाद और वीर शिरोमणि रामप्रसाद बिस्मिल के साथ ही महारानी लक्ष्मीबाई, वीरमाता दुर्गावती, वीर तात्या टोपे एवं मंगल पांडे आदि शतसहस्र बलिदानी वीरों के पावन चरित्र में चरितार्थ हुआ पाते हैं। सच में वे बृहत् सत्य से, महान् ऋत से, अमर जीवन के रहस्य से परिचित थे तभी तो फाँसी के तख़्ते पर जाते हुए बिस्मिल का वज़न बढ़ गया था, वे यज्ञ करना नहीं भूले थे और वीर भगतसिंह मस्ती के साथ गा रहे थे—

सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है।
देखना है ज़ोर कितना बाज़ु-ए-कातिल में है॥

कैसी अपूर्व मस्ती थी, कैसी उग्रता थी उनके संकल्प में जिससे वे हँसते हँसते मौत का स्वागत कर सके और उनके कण्ठों से ये स्वर फूट सके—

शहीदों की चिताओं पर जुड़ेंगे हर बरस मेले।
वतन पर मरने वालों का, यही बाकी निशां होगा॥

ठीक ही लिखा है कवि ने—

जिसने मरना सीख लिया है, जीने का अधिकार उसी को।

अथवा

मृत्यु को जो जन्म समझे मैं उसे जीवन कहूँगा।
जो पुरातन को नया कर दे उसे नूतन कहूँगा॥

मित्रो और माताओ! जब हम राष्ट्र धर्म या राष्ट्र प्रेम की बात करते हैं तो उसका अर्थ केवल राष्ट्र की धरती से प्रेम करना ही नहीं होता। वेद माता बताती है—**"तिस्रो देवी मयो भुवः इडा सरस्वती मही"** अर्थात् इडा=संस्कृति, सरस्वती=ज्ञान सम्पदा या भाषा और मही=भूमि, ये तीन देवियाँ किसी भी राष्ट्र को सुख-सम्पन्न बनाती हैं।

विदेशी और विधर्मियों से भूमि को स्वतन्त्र करा लेना ही पूर्ण स्वतन्त्रता नहीं है। स्व भाषा, स्व संस्कृति एवं स्व सभ्यता की स्वतन्त्रता भी उतनी ही आवश्यक है, मित्रो और माताओ! सदियों के बाद हमारे शत-सहस्र वीरों के अमर बलिदानों, तप-त्याग और ईश कृपा से भौतिक स्वतन्त्रता तो प्राप्त कर ली है। हमारी भूमि तो विदेशियों के चंगुल से मुक्त हो गई, पर बौद्धिक दासता ने हमें और भी अधिक जकड़ लिया है। हमारी महान् संस्कृति की मान बिन्दु गोमाता का वध आज भी चल रहा है। हमारे घरों में मम्मी-डैडी, पप्पू-पापा तथा चिण्टू-मिण्टू-पिण्टू के दुर्भाग्य पूर्ण प्रयोग हमारी बौद्धिक दासता का डिण्डमघोष कर रहे हैं। बच्चों के जनम दिन को केक काट कर मनाया जाता है, उन्हें ईसाइयों के कान्वेण्ट स्कूलों में शिक्षा दिलाना बड़प्पन का चिह्न माना जाता है। अनेक परिवारों में विवाह आदि के निमन्त्रण पत्र और दुकानों के नाम पट अंग्रेज़ी में छपे होते हैं। नौकरियों में भी अंग्रेज़ी पढ़े लिखों को अधिक महत्व दिया जाता है। हमारा आचार-व्यवहार, खान-पान, रहन-सहन, वेश-भूषा सब कुछ अंग्रेज़ियत से आक्रान्त है।

मित्रो और माताओ! एक बार किसी ने गांधी जी से पूछा कि आप में और नेहरू जी में कितना फर्क है? गांधी जी मुस्कराये और कहा कि बहुत थोड़ा—"मैं चाहता हूँ कि अंग्रेज़ भले ही यहाँ रहता आवे (आखिर वह भी इन्सान है) पर अंग्रेज़ियत-विदेशी सभ्यता यहाँ नहीं रहे, जबकि नेहरू जी चाहते हैं कि अंग्रेज़ तो भारत की भूमि से चला जावे, पर अंग्रेज़ियत बनी रहे।" कितने थोड़े शब्दों में कितना बड़ा अन्तर है, यह। दुर्भाग्य से हमारी बागडोर नेहरू जी और नेहरू पन्थियों के हाथ में रही उसी का दुष्फल आज की हमारी यह बौद्धिक दासता है। कवि ने ठीक ही लिखा है—

जिसको न निज भाषा तथा निज देश पर अभिमान है।
वह नर नहीं, नर पशु निरा है और मृतक समान है॥

सज्जनो, आयें हम मृत अवस्था को त्यागें, जागें और युग के आह्वान को सुनें। हमें अपनी भाषा, अपने देश, अपनी संस्कृति और सभ्यता पर अभिमान हो। तो आओ, हम आज की कथा को विराम देने से पूर्व अपने महान् राष्ट्र को फिर विश्व गुरु बना सकने, अपने अमर शहीदों के स्वप्नों, उनके अरमानों को पूरा कर सकने और वैदिक संस्कृति को विश्व संस्कृति के रूप में प्रतिष्ठित कर सकने के लिये अपनी आत्मीयता को विस्तृत करें। कहें कि हमारा जीवन केवल हमारे और हमारे परिवार के लिये नहीं, हमारे राष्ट्र के लिये है। हमारे राष्ट्र की भूमि, जल, वायु से बना हमारा जीवन हमारे राष्ट्र का जीवन है। उसकी भूमि, उसकी संस्कृति-सभ्यता, उसकी भाषा और ज्ञान-सम्पदा की रक्षा करना और रक्षार्थ अपना तन-मन-धन सर्वस्व होम देना हमारा पुनीत कर्त्तव्य है। यह महान् यज्ञ है, श्रेष्ठतम् प्रभु-पूजा है। इस बृहद् सत्य, शाश्वत सत्य के रक्षार्थ हम ऋताचारि बनें, तपस्वी और तेजस्वी बनें, दृढ़ संकल्प की दीक्षा लें और यज्ञ भावना को, त्याग भावना को अन्तर में जगायें। मेरे पड़ौसी की पीर मेरी पीर बने, उसके आँसू मेरे आँसू बनें और उसकी खुशी मेरी खुशी बने। यज्ञोपवीत के सूत्रों का शाश्वत सन्देश मूर्त हो उठे—न कहीं अज्ञान की अँधियारी रहे, न अन्याय की कालिमा और न अभाव का ताण्डव। हमारे पास जो भी ज्ञान-बल और धन है, वह सबका है, और सबके लिये है। यदि ऐसा हम कर सके तो वह समय दूर नहीं है जब—

कहेगा जगत् फिर से एक स्वर में सारा।
वही पूज्य भारत गुरु है हमारा॥

कृतित्व : शरर जी कलमकार के रूप में

(क) पद्यात्मक रचनाएँ

(ख) गद्यात्मक रचनाएँ

जय दिग्विजयी जय पुण्यधाम

(स्वामी श्रद्धानन्द से)

हे तेजस्वी, हे परिव्राट,
हे सत्य निष्ठ, हे पूर्ण काम
हे आर्य जाति की धवल कीर्ति,
तुमको वन्दन, तुमको प्रणाम
तुम आर्य जाति के प्रहरी सजग
तुम भारत माता के सपूत
तुम दयानन्द के भक्त प्रवर
तुम नवल क्रान्ति के अग्रदूत
तुम सत्य-अहिंसा के साधक
साधना लीन, जीवन ललाम
किस को भूला है? दिल्ली में
असुरों का ताण्डव नृत्य प्रबल
सम्मुख देखा बन्दूकों को
खोला तुमने निज़ वक्षस्थल
बलिहारी उस बलि भावना के,
नत मस्तक थे गोरे तमाम
था कवच संगठन का पहना
शुद्धि का शस्त्र सजा कर में,
रण में निकले तुम रणंजयी
रिपु दमन कर लिया पल भर में
कण कण से गूँजी स्वर लहरी
जय दिगविजयी जय पुण्य धाम
हे आर्य जाति की धवल कीर्ति
तुमको वन्दन, तुमको प्रणाम!

उठ, जाग जाग! मेरे कुमार

उठ, जाग जाग! मेरे कुमार
ओ बाल सूर्य, ओ दिव्य ज्योति
टुक खोल आँख, पलकें उघार—
उठ जाग.....
ओ जननी के अभिमान जाग
निज देश जाति के प्राण जाग
ओ जीवन के अर्मान जाग
संस्कृति के गौरव गान जाग।
तेरे जगने से नव प्रभात का कण-कण में फिर हो विहार।
उठ जाग......
अपने वैभव से परिचित हो
जग को निज पौरुष दिखला दे
अपनी गौरव गरिमा फैला
रश्मि समूह निज चमका दे
तेरे चरणों में लोट-लोट जाए धरती का अन्धकार।
उठ जाग.....
हे जल कण तू है महासिन्धु
तुझको गर्जन करना होगा
मेरे वामन! तुझ विराट का
जग को पूजन करना होगा
तेरे भ्रूइंगित में बन्दी, जग का स्मित् क्रन्दन, चीत्कार।
उठ जाग........
राणा प्रताप का साहस तू
अभिमन्यु का पौरुष महान्
तू दयानन्द की दिव्य दृष्टि
तू राम कृष्ण सा गुण निधान
तू वज्र तुल्य भीषण प्रहार
उठ, जाग जाग! मेरे कुमार।

शत शत प्रणाम

हे तुंग हिमालय-शृंग-तुल्य उज्ज्वल महान्!
गम्भीर, परम पावन चरित्र, गंगा-समान
हे ब्रह्मचर्य साकार दिव्य जीवन अनूप!
पाखंड, दम्भ के लिये, उग्र विद्रोह-रूप
हे दया, अहिंसा, सत्य, न्याय के चमत्कार
हे अबला, दीन, अनाथ, दलित के चीत्कार
हे रत्नाकर से शान्त, बिजलियों से विह्वल
हे प्रखर तेज में सूर्य, चन्द्रमा से शीतल
निर्भीक तपस्वी, परिव्राट, कोपीन धारि!
आचार्य सुचिंतक दयानन्द हे ब्रह्मचारि!
हे जगहित निज जीवन अर्पित करने वाले!
विष पी पी कर भी, पर पीड़ा हरने वाले
हे तेजस्वि, हे क्रान्तदर्शी, हे सत्यकाम!
युग पुरुष हमारा शत-शत है तुमको प्रणाम!

ऋषिवर तेरा जय जय कार

तेरी जाग्रति के प्रताप से, जाग उठा संसार
सिहरन जागी मस्त पवन में,
कलियाँ जाग उठीं उपवन में
फूलों की मुस्कानें जागीं, भ्रमरों की गुंजार! ऋषिवर.......
अन्धकार की टूटी माया
नव विहान जग में मुस्काया
सत्यालोक जगा जन मन में, हटा तमस का भार। ऋषिवर.......
वेदध्वनि से विश्व निनादित
हो सुरभि से अग जग सुरभित
तेरी जाग्रति से पाया, मानवता ने उपहार। ऋषिवर.......
टंकारे का मन्दिर जागा
आज मूल में शंकर जागा
करुणा जागी तपन शमन को, जगा जगत का प्यार
ऋषिवर तेरा जय जय कार

कवि से

लेखनी से काम कवि कब तक करोगे?
आज तो तलवार का युग आ गया है।
आज तक तुमने बहारों के तराने
गा लिये पर्याप्त, सारा विश्व जाने
तुमने दी फूलों को मदमाती जवानी
और कलियों को सुगन्धी के ख़ज़ाने
किन्तु केवल कल्पनाओं में विरचकर
तुम कहीं ध्रुव सत्य को ही भूल जाओ
इसलिये उतरो कवि! नभ से धरा पर
अब धरा से प्यार का युग आ गया है।
आज तो तलवार.....
लौट ही जाएं न उपवन से बहारें
है यही भय फिर कहीं पतझड़ न आये
मुस्कराते फूल ज्वाला में न झुलसें
और कवियों की जवानी सड़ न जाये
बाग़ के माली! उठो, पलकें उघारो
रक्त दे देकर हर इक बूटा निखारो
फूल की मुस्कान से खिलवाड़ होली
रक्त से सत्कार का युग आ गया है।
आज तो तलवार....
जागरण का शंख बढ़कर फूंक दो तुम
जिसको सुन पलकों से तन्द्रा भाग जाए
जिसकी ध्वनि भूकम्प को साकार कर दे
करवटें ले ले के कण-कण जाग जाए
जिस का स्वर रोमाँच से भर दे धरा को
और हो विस्तीर्ण नभ जिससे निनादित
अब न मदमाते लजीले गीत गाओ
आज तो हुंकार का युग आ गया है।
आज तो तलवार का.......

एकाकी चलो रे

मैं अकेला ही बढ़ूँगा
मेरे पथ को रोक सकती हैं तो रोकें आपदाएं
मेरा साहस तोड़ सकती हैं तो तोड़ें यातनाएं
वेदनाओं की घटा मैं मुस्करा कर चीर दूँगा
मैं अकेला ही.......
नैशतम से कौन कहता है कि मैं घबरा गया हूँ
मैं चमक कर सूर्यसम कई बार तम को खा गया हूं
आज भी मैं ही जगत को प्रात का सन्देश दूँगा
मैं अकेला ही.......
मुझको क्या चिन्ता नहीं जो आज अपने साथ राही
मैं उछलता और बढ़ता ही रहा इनके बिना ही
लक्ष्य साधन के लिये सर्वस्व अर्पण कर टलूँगा
मैं अकेला ही......
विश्व के ये भोग वैभव, ये जगत की लालसाएँ
इनसे कह दो अब न सज धज कर मेरे मन को लुभाएं
मैंने पीड़ा में लिया है जन्म, पीड़ा में जिऊंगा
मैं अकेला ही.......

श्रद्धानन्द को शत्-शत् वंदन

गांधी जी के सत्य शोध की प्रबल साधना
महामना की भावभीनी सांस्कृतिक अर्चना
टण्डन जी का श्रद्धामय वह भारती वन्दन
लाला लाजपत का मुखरित तेजस्वी जीवन
गोखले की निज देश प्रेम की पूत भावना
वह स्वराज्य के लिये तिलक की सतत् साधना
यह सब सद्गुण चमक उठे जिस एक व्यक्ति में
ईसा का प्रतिरूप अग्रणी शील भक्ति में
जिसे दे गया दयानन्द-दर्शन नव जीवन
उस बलिदानी श्रद्धानन्द को शत्शत् वन्दन।

कब मातम किया है?

हर डगर पर हमने दीपक ही जलाये
बढ़ते तूफ़ानों का कब मातम किया है?
घुप अँधेरे में खुली थी आंख अपनी
विष भरे वातावरण में सांस ली थी
मार्ग के कांटों ने भी पग पग पे रोका
औ' निशा काली धरोहर में मिली थी
किन्तु हम कब कण्टकों से रुक सके हैं?
कब हमारे धैर्य ने है हार मानी?
पत्थरों में भी खिलाये फूल हमने
विश्व में चाहे कोई मौसम रहा है।
बढ़ते तूफ़ानों का कब मातम किया है।
काल ने हो क्रुद्ध ली अपनी परीक्षा
सत्य का सम्बल लिये बढ़ते रहे हम
अपने पौरुष से सदा तूफान मोड़े
आँधियों से भी सदा लड़ते रहे हम
घोर झंझावात से लोहा लिया है।
हो विजय नगरी कि पटियाले की धरती
आर्य जन के रक्त से रंजित हैं अब तक
शौर्य गाथायें निनादित आज भी हैं
जिनका स्वर ऊंचा, कभी मध्यम रहा है
हमने कब मातम किया है?
आज फिर पाखंड का है बोलबाला
सत्य है सहमा हुआ सा बेसहारा
वेद की मशअल लिये हम चल पड़े हैं
आओ जिसको साथ देना हो हमारा
वेद के आलोक से जग जगमगाए
आओ इस बढ़ते तमस से जूझ जाएँ
सत्य के साधक, कहां विश्राम तुझको
सत्य का पथ तो सदा दुर्गम रहा है
हमने कब......मातम किया है?

उसे भुलाना केवल भ्रम है

जो स्वराज्य का सर्वप्रथम उद्घोषक था प्रेरक था
श्रद्धानन्द गोखले तिलक गांधी का मार्ग दर्शक था
जिस की सिंह गर्जना सुन भारत ने ली अंगड़ाई
जिसकी विह्वलता बिस्मिल ने सावरकर ने पाई
वह योद्धा जो बढ़ते तूफ़ानों से लड़ जाता था
जिसे गुलामी चुभती थी, और दम्भ नहीं भाता था
लाला लाजपत की वाणी में जिसका तेज भरा था
क्रान्तिकारियों की नस नस में लोहू बन उमड़ा था
पग पग पर जो झंझावातों से बढ़कर टकराया
जिसे फ़िरंगी अपने षड्यंत्रों से हिला न पाया
उसी ऋषि की याद आज का दिवस पुनः लाया है
उसके सफल प्रयासों से यह दिन हमने पाया है
भारत के उज्ज्वल भविष्य का दयानन्द सम्बल है
उसे भुलाना नेताओं का कोरा भ्रम है छल है।

आर्य समाज

मेरे जीवन के उपवन में जब बसन्त बनकर तुम आए
कलियां झूम उठीं, फूलों ने करवट ली, जागे मुस्काए
भ्रमर-गान से उपवन गूँजा, चहक-चहक पक्षी हर्षाए
नव बसन्त के अभिनन्दन को, मिल जुल बन्दनवार सजाए
मलयानिल बह चला यज्ञ की प्रिय सुगन्धि को लिपटाए
साम गान की तानें मचलीं, हृत् तन्त्री को मुग्ध बनाए
मिटी निशा अज्ञान तिमिर की, मलिन दीप नक्षत्र बुझाए
वेद-भानु फिर उदय हुआ, जन मानस कमल खिले, मुस्काये
सत्य स्नेह के सिंचन से, कण-कण ने जीवन दीप जलाये
मिला ज्ञान आलोक, हृदय के सारे संशयशूल मिटाये
जिसकी करुणा से पाया सब उस ऋषिवर की दया धन्य है
रे समाज, मेरे समाज प्यारे समाज तू सदा धन्य है।

आर्य वीरों से

हम जीवन का मूल्य चुकाएं
आर्य लोग हम अन्धकार को चीरें, आगे बढ़ते जाएँ
आर्यवीर की शान न जाए, होठों से मुस्कान न जाए
प्राण भले ही जाएं, लेकिन जीवन का अरमान न जाए
ज्यों ज्यों शूल चुभें इस पथ में त्यों त्यों पग बढ़ते ही जाएं। हम जीवन....
जीने का अधिकार उसे है जो जीवन की कीमत भर दे
मृत्यु से वह बच सकता है जो मरने से पहले सर दे
आओ जीवन के लोभी जग को मरना जीना सिखलाएं। हम जीवन.....
विजय चरण उनके छूती है जिनके प्राण हथेली पर हों
लक्ष्य सिद्धि तब ही संभव है रण में जूझने वाले नर हों
स्वयं निमन्त्रित करें आपदाओं को, जो दुःख में मुस्काएं। हम जीवन .....
प्रण कर लो, हम जीवन देकर भी, भारत का मान रखेंगे
कंटक पूरित पथ हो कितना, दयानन्द के वीर बढ़ेंगे
गिरि गहवर, नाला, घाटी चीरेंगी वीरों की सेनाएं। हम जीवन ....

श्रुति का गान करो रे!

नक्षत्रों से आलोकित यह नभ का प्रांगण
हरा भरा यह स्नेह सिक्त धरती का बाना
ऊषा का लाना सलज्ज स्मित अधर बिम्ब पर
अरुण सारथी का गुलाल चहुँ दिश बिखराना
रवि शशि की यह आंख मिचौनी रैन दिवा की
चाँदी-सी सरिता का बल खा खा इठलाना
सौरभ पूरित वर्णवर्ण सुमनों के आंचल
मलय पवन का श्रान्त पथिक को धीर बँधाना
किसी सुकोमल कवि का है यह काव्य मनोहर
बादल के अवगुण्ठन में शशि का मुस्काना
देखो उस कवि को जानो यदि जान सको रे
उसके दिव्य काव्य मय श्रुति का गान करो रे।

आर्यवीरों से सम्बोधन

अब भी बात बना सकते हो
तुम चाहो तो उजड़े उपवन में बसन्त को ला सकते हो!
गिरने दो ये सूखी कलियां
झड़ने दो ये पीले पत्ते
जाने दो निर्गन्ध पुष्प ये
इनके जीवन के दिन बीते।
आख़िर सोचो इनसे क्या उपवन में शोभा ला सकते हो?
नई क्रान्ति से डरो न किंचित
मोह छोड़ दो जीर्ण शीर्ण से
देखो, नेत्र खोल कर देखो
नव युग झांक रहा है पीछे
बोलो इस के स्वागत में तुम क्या क्या साज सजा सकते हो
अब भी बात बना सकते हो
अटल नियम है जग सृष्टा का
मिटे रात, प्रात मुस्काये
नया कहां से आ सकता है,
अगर पुराना भी रह जाए?
धायँ धायँ जलने दो गत को, तुम शव से क्या पा सकते हो?
मत प्रवाह रोको झरनों का
इससे पानी सड़ जाएगा
कोमल किसलय फूटेंगे जब
पीला पत्ता झड़ जाएगा।
वर्तमान का साथ निभाकर गत वैभव तुम पा सकते हो
डरो नहीं तुम क्रान्ति-क्रिया से
यह झटके आते रहते हें
सूर्य रश्मि है सुलभ उन्हें
जो तारों की मृत्यु सहते हैं
तुम तारों का मोह छोड़ दो
नव प्रभाव तुम पा सकते हो
अब भी बात बना सकते हो।

जीवित का ईश्वर

धिक्-धिक्! मानव रूप धारि! जड़ की उपासना?
प्राण युक्त हो, प्राण हीन से सतत् याचना?
पेट पीठ हो एक प्राणि का भूखों मर मर
लम्बोदर की पूजा फिर भी भारत भू पर?
तड़प-तड़प जाएँ जीवित जाग्रत प्रतिभाएं
षटरस व्यंजन का जड़ पत्थर भोग लगाएं
इतना अत्याचार घोर पाखंड आडम्बर
शव समान जीवित, शव जीवित के आसन पर?
रे नर! यूं पाषाण हृदय तू हुआ कहां से
हुआ न विचलित मानवता की दीन दशा से।
है विचित्र यह मोह, न जाने कब से जारी
जीवित से वैराग्य और जड़ पर बलिहारी
क्या कहिये इस ज्ञान शून्य जग की जड़ता पर
जड़मति के हैं जड़ उपास्य, जीवित का ईश्वर।

शंकर-आराधक

रे रे मन्दिर के पुजारि! शंकर-आराधक
जीवन से मुख मोड़, कहां बैठा है साधक?
खोज रहा है किसको इस तम के प्रसार में,
क्या दिखाई देता है तुझको अन्धकार में,
रे साधक! क्या साध लिये तू रुका यहां है?
तेरा प्रियतम आंख खोलकर देख कहां है?
किस के सम्मुख सीस झुका, कर जोड़ रहा है
शंकर तो सड़कों पर कंकर तोड़ रहा है
बैठा है जिस के वियोग में आहें भरता
चला रहा है हल, वह जग का पालन कर्ता
धवल दुग्ध सम वस्त्रों से यह किस का पूजन?
अरे पुजारी, दूध दीप से किस का अर्चन?
तेरा शिव तो बाहर श्रम कण से रंजित है
धूलि-धूसरित है वह शीतातप-ताड़ित है
आना भी चाहे भीतर, कैसे आयेगा,
बन्द किवाड़ों से वह कैसे घुस पायेगा?
त्याग त्याग यह आडम्बर प्रतिमा पूजन का
जन सेवा से है विकास, मानव जीवन का।

मूल शंकर से

जो तुम न जागते, दुनिया में जाने क्या होता?
तड़पते फूल बहारों में बांकपन[१] के लिये
तरसती रहती नज़र नूर की किरन के लिये
जहालतों[२] के समन्दर उमड़ उमड़ आते
शबे-सियह[३] के अँधेरे सहर[४] को डस खाते
नज़ारे[५] चीख के मर जाते, दीदावर[६] के लिये
कदम भटकते तरस जाते राहगुज़र[७] के लिये
जनाज़ा[८] उठता हर इक सिम्त आदमियत[९] का
निशान पाते न भूले से भी अखुवत[१०] का
कोई भी सुनता न फ़रयाद बेनवाओं[११] की
जहां[१२] में चलती फ़क़त संगदिल[१३] खुदाओं की
अज़ाब[१४] फ़िर्का परस्ती के कौन सह पाता?
बशर[१५] खुदा से भी बेज़ार हो के रह जाता
जगाता जज़बाए हुब्बे[१६]-वतन को कौन यहां?
उठाता हसरते-दारो-रसन[१७] को कौन यहां
बशर बशर के लिये भेड़िया बना होता
सितमगरी[१८] में हर इक बुत खुदा बना होता
जो तुम न जागते, दुनिया में जाने क्या होता?

१. निखार, २. अज्ञान, ३. अंधेरी रात, ४. सुवह, ५. दृश्य, ६. दर्शक, ७. मार्ग, ८. अर्थी, ९. मानवता १०. प्रेम, ११. दीनहीनों, १२. संसार, १३. पत्थरदिल, १४. यातना, १५. मनुष्य, १६. देशप्रम, १७. बलिदान होने की भावना, १८. अत्याचार।

आर्य समाज

क्यों न तेरे गीत गाऊं?
मेरे जीवन में तेरी करुणा से सुन्दर प्रात आया।
मेरा पथ तेरे ही पुण्यालोक से है जगमगाया
तेरे जैसा कारुणिक मां, मैं न जगती भर में पाऊँ।
क्यों न तेरे गीत गाऊँ ?
ज्ञान का अमृत पिला कर, मृत्यु से मुझको उबारा
पग थिरकते चल पड़े माँ जब दिया तूने सहारा
तेरे चरणों से लिपटकर क्यों न मन को शान्त पाऊं?
क्यों न तेरे गीत गाऊँ ?
मेरे उपवन में वसन्त आया तो तेरी ही कृपा से।
पुष्प ने यदि गन्ध को पाया तो तेरी ही कृपा से
आज मैं सर्वस्व देकर भी कहां यह ऋण चुकाऊं।
क्यों न तेरे गीत गाऊँ ?

कवि से

जन जन में नव जीवन भर दो
क्रान्तदर्शी कवि! निज प्रतिभा से महाक्रान्ति का पाठ अमर दो।
कोमल कमल कवच बन जाएं खड्ग धार धर ले शाखाएं
दल दल दलन करे अरि दल का वाणी का वह तेज प्रखर दो
जन जन में नव जीवन भर दो
दयानन्द का तत्व ज्ञान दो, तुम प्रताप का स्वाभिमान दो
नस नस में हो रक्त शिवा का, वैरागी की ज्वाला भर दो
जन जन में......
कवि वर उस स्वर में तुम गाओ, संघर्षों का लोक बसाओ
सुप्त बवंडर जाग उठें फिर, आज विश्व को विह्वल कर दो
जन जन में......
कड़क उठे दामिनी गगन में भड़कर उठे वह्नि कण कण में
पाप-पुंज पावन हो जाए एक अँगार धधकता धर दो
जन जन में नव जीवन भर दो।

मेरी दुर्बलता

एक मित्र कल मिले और यों बरसे मुझ पर
अरे, खाक पाया है तुम ने एम.ए. होकर
देखो वह लाला जो दसवीं फ़ेल रहा है
एम.एल.ए. बन धन दौलत में खेल रहा है
क्या आनन्द आता तुम भी एम.पी. बन जाते
खुद भी करते ऐश, मित्र भी मौज़ उड़ाते
अब भी मन में जंचे तो राजनीति में आओ
प्रजातंत्र के सदकेसोया भाग्य जगाओ
क्या पाते हो कालेज में झक मार-मार कर
आते हो बेसुध से होकर और हारकर
इतने सारे गुट हैं, तुम इक में मिल जाओ
चढ़ते सूरज की कर लो पूजा, सुख पाओ
तक़रीरें तो कर लेते हो लम्बी चौड़ी
गाली देने की भी कला सीख लो थोड़ी
फिर देखो व्याख्यान अनोखा रंग जमाए
जै जै कार करे जनता, ताली पिट जाए
सुन कर मैंने कहा, मित्रवर बात भली है
तुझे नहीं मालूम कि मुझमें बड़ी कमी है
निस्सन्देह नहीं काइल मैं धूमधाम का
कार्य मुझे करना है वीरवर लेखराम का
मेरे सम्मुख वेद धर्म का क्षेत्र खुला है
कौन चलेगा इस पर कितना मार्ग कड़ा है?
दयानन्द का मिशन सत्य को सत्य बताना
चीर प्रलोभन प्रतिकूलों में कदम बढ़ाना
और भुला देना क्या इससे स्वार्थ सधेगा
तेरी राजनीति में मित्रवर निभ न सकेगा
खूब कहा धन दौलत जोड़ूं आत्मा बेचूं?
एक जन्म की सोचूं, जन्म जन्म की दे दूं?
जगहित छोड़ूं, एक घटक ही से बंध जाऊँ?
अपने और पराए की रेखा चमकाऊँ?
धन्यवाद प्रिय मित्र, यह मुझसे हो न सकेगा
दयानन्द और वेद कहाँ मन से उतरेगा?

स्वामी सर्वानन्द जी

एक सन्त जो सेवा में दिन रात रमा है
शत्रु मित्र की संज्ञाओं से दूर खड़ा है
जो विरक्त है वीतराग है, सदा शान्त है
किसी प्रलोभन से भी होता नहीं भ्रान्त है
सत्य दया से जिसका मानस ओत प्रोत है
जिसका जीवन आदर्शों का सतत स्रोत है
मन में जिसके राग द्वेष का भाव नहीं है
क्षोभ नहीं दुःखों से, सुख का चाव नहीं है
जो स्वतन्त्र-आनंद स्वामि का परम शिष्य है
दयानन्द का भक्त, देश का प्रिय भविष्य है
तपः पूत साधू योगी, कर्मठ अलबेला
जन समूह में मिल कर भी जो दिखे अकेला
सरल-सरल मन जिस का, सरस सरस है जीवन
सर्वानन्द उस संन्यासी को शतशत वन्दन

सत्यार्थ प्रकाश

आइना[१] चेहरे का हर दाग़ दिखा देता है
उसकी फ़ितरत[२] का तक़ाज़ा[३] है, यह शिकवा[४] कैसा?
आप सत्यार्थ के दर्पण से बिदकते क्यों हैं?
अपने चेहरे को ही धो डालिये, गुस्सा कैसा?
जिसकी तालीम[५] ने ज़ंजीरे-गुलामी तोड़ी
जिसको बेदारी-ए-गुलशन का सहीफ़ा कहिये
ऐसे सत्यार्थ की अज़्मत से जो मुनकिर है बशर
उसको ग़द्दार न कहिये, तो भला क्या कहिये?
पढ़ के सत्यार्थ में खण्डन को, न घबरायें जनाब!
रद्दे-बातिल से[६] अयां[७], और सदाकत[८] होगी
फूल और कांटे हैं दोनों ही चमन की ज़ीनत[९]
ऐसे कांटों से ही फूलों की हिफ़ाज़त[१०] होगी।

१. दर्पण २. स्वभाव ३. आग्रह ४. गिला ५. शिक्षा ६. असत्य का खण्डन ७. प्रकट ८. सत्य ९. शोभा १०. रक्षा।

स्वामी समर्पणानन्द जी

(पूर्वनाम : पं. बुद्ध देव विद्यालंकार)

वाग्मी, वह वेद का विद्वान, प्रतिभा का धनी
आर्य मर्यादा का पोषक, त्याग तप में अग्रणी
छीन लेता था हृदय जो झूमती आवाज़ से
बात करता था अनोखी और नये अन्दाज़ से
जाने था माधुर्य या वाणी में उसकी चमत्कार
सजल नेत्रों से जिसे सुनते थे श्रोता बार-बार
गर्जना उसकी कंपा देती थी अरिदल का हृदय
तर्क था जिस का अडिग और थी अटल जिसकी विजय
शास्त्र चर्चा में उसे वादी हिला सकते न थे
सामने आते तो थे, पर ताब ला सकते न थे
कवि हृदय, वह सरल चित, भाया न जिसको ताम झाम
जिसकी मस्ती पर निछावर विश्व का वैभव तमाम
आर्य गौरव, स्वामी श्रद्धानन्द का वह लाडला
जो यहां आलोक भरने के लिये तिल तिल जला
जिसकी इक इक सांस में ऋषिराज के अरमान थे
जिसके शिष्यों में तपस्वी कृष्ण से विद्वान थे
था समर्पण जिसको प्रिय, अभिरुचि थी जीवन दान में
गूंजती है जिसकी स्वर लहरी अभी तक कान में
एक बुलबुल, था जो कल शृंगार इस उद्यान का
"शाख पर बैठा, कोई दिन चहचहाया, उड़ गया।"

आर्यों का शिकवा

(१)

ताइरे-ग़म[1] क़फ़से-दिल[2] से रिहा करते हैं
अपनी आहों को बुलन्दी पे ज़रा करते हैं
खूने-दिल से पले अर्मान जुदा करते हैं
अपने माबूद[3] से थोड़ा सा गिला करते हैं
प्यारे भगवान! ज़रा दर्दे-निहानी[4] सुन ले
ग़म-नसीबों[5] की ज़ुबानी यह कहानी सुन ले

(२)

चमने-दह्र[6] को दी तूने गुहर की सूरत
आदमी उस में बनाया गुले-तर की सूरत
ऋग्-यजु-साम दिये शमसो-क़मर[7] की सूरत
उम्र इन्सान को दी शम्मे-सहर[8] की सूरत
बू-ए-गुल-बन के तू हर फूल में जाँ[9] बन बैठा
लहक सब्ज़े में तो बुलबुल में फ़ुग़ाँ[10] बन बैठा

(३)

आँख इन्सान ने खोली तो अजब मंज़र[11] था
यानी मामूरा-ए-हस्ती[12], का खुला दफ़्तर था
गर्चे आलम[13] का हर इक ज़र्रा तेरा मज़हर[14] था
शिर्को-इल्हाद[15] मगर दहर में जल्वागर था
कोई कहता था, जहाँ कुछ भी नहीं 'माया' है
कोई कहता था, यह सब यूं ही बना आया है।

१. दुःख रूपी पक्षी २. हृदय रूपी पिंजरा ३. इष्टदेव ४. अन्तर्वेदना ५. अभागों ६. संसार रूपी उद्यान ७. सूर्य और चन्द्रमा ८. प्रातःकालीन दीपक ९. जीवन १०. क्रन्दन ११. परिदृश्य १२. संसार १३. संसार १४. द्योतक १५. बहुदेवतावाद

(४)

तूने देखा कि तेरे चाहने वाले आये
हाथ में वेदे-मुक़द्दस[१] को सँभाले आये
सामने तीरो-तबर बर्छियाँ भाले आये
हम ज़माने को तेरे दर पे झुका ले आये
वेद-मन्त्रों की हर इक सिम्त सदा गूँज उठी
नग़्मा-ए-'ओ३म्' से दुनिया की फ़िज़ा[२] गूँज उठी

(५)

फिर भी कई आए यहां तेरे पयम्बर[३] बन कर
पीर, अवतार, वली, कृष्ण भी अक्सर बनकर
पैकरे-लुत्फ़[४] कभी, रश्के-सितमगर[५] बनकर
राह गुकमर्दा[६] बहुत आये हैं रहबर बनकर
आसमानों पे कोई तुझको बिठा देता था
ईंट पत्थर को कोई रुतबा तेरा देता था

(६)

तेरी रहमत जो रही, सबको पछाड़ा हमने
अर्सा-ए-जंगे-मुबाहिस[७] में लताड़ा हमने
बामे-अंजुम[८] पे अलम[९] 'ओ३म्' का गाड़ा हमने
गुलशने-कुफ़्र उजाड़ा तो उजाड़ा हमने
हम कभी इज़्ज़तो-दौलत के न शैदाई थे
हाँ! तेरी चश्मे-इनायत[१०] के तमन्नाई थे

१. पवित्र वेद २. वातावरण ३. दूत ४. दयालु ५. अत्याचारी ६. पथभ्रष्ट ७. शास्त्रार्थ के मैदान में ८. सितारों की छत पर ९. ध्वज १०. कृपादृष्टि

(७)

हम तेरी राह में मरने को जिया करते थे
शम्मे-तौहीद[१] पे बढ़-बढ़ के जला करते थे
ज़हर के प्यालों को हँस-हँस के पिया करते थे
वार पिस्तौल के सीनों पे सहा करते थे
शौक से करते थे बर्दाश्त हर इक ख्वारी[२] को
सह न सकते थे मगर 'वेद' से ग़द्दारी[३] को।

(८)

आज गो हममें वही शौके-शहादत[४] भी है
तेरे वेदों से 'दयानन्द' सी उल्फ़त भी है
खूने-दिल में वही रंगत भी, हरारत[५] भी है
अपनी तकदीर पलट देने की जुर्रत भी है
पर तेरे हुस्ने-दिल-आरा ने अदाएं बदलीं
हम वफ़ादार रहे, तूने निगाहें बदलीं

(९)

थे अगर कोई सदाकत के परिस्तार[६] तो हम।
हैं अगर बन्दे-मसाइब[७] में गरिफ़्तार[८] तो हम।
थे कोई तेरी तजल्ली के तलबगार[९] तो हम
आज हैं चश्मे-ग़ज़ब[१०] के जो सज़ावार[११] तो हम
फिर न कहना कि तेरे वेद के शैदा[१२] न रहे
कुफ़्र[१३] तो खुश है कि ईमान का खटका न रहे।

१. एकेश्वरवाद का दीपक २. अपमान ३. विश्वासघात, कृतघ्नता ४. बलिदान की उत्सुकता ५. गरमी ६. पुजारी ७. आपत्तियों का बन्धन ८. फंसे हुए ९. प्रकाश के इच्छुक १०. कोप दृष्टि ११ योग्य, अधिकारी १२. दीवाने १३. नास्तिकता

(१०)

बुत परस्तों की बरसती हैं जफ़ाएँ[१] हम पर।
अहले-इस्लाम की पड़ती निगाहें हम पर।
बर्क़[२] गिरती है जो बन बन के बलाएं हम पर।
ग़मो-अन्दोह[३] की छाई हैं घटाएं हम पर।
वक्फ़[४] ग़ैरों के लिये रहमते-यज़दानी[५] है
अपनी किस्मत में अलम सोज़[६], पशेमानी[७] है

(११)

तू ही बतला कि तेरी धूम मचाई किसने?
कल्बे-मुलहिद[८] में तेरी आग लगाई किसने?
बुत कदों में शमे-तोहीद[९] जलाई किसने?
चढ़ के मिम्बर[१०] पे ऋचा वेद की गाई किसने?
हम ही दीवाने थे, अलमस्त थे, सौदाई थे
और तो पेट के बन्दे या तमाशाई थे

(१२)

कुशताए तेग़े-जफ़ाकार[११] अगर हैं, हम हैं?
दौलते-दुनिया से नादार[१२] अगर हैं, हम हैं
ख़स्ता-तन[१३], सौखता[१४] दिल, ख़्वार अगर हैं हम हैं
चश्मे-आलम[१५] में चुभे ख़ार[१६] अगर हैं, हम हैं
क्या तेरी भक्ति का इनआम यही होता है?
क्या तेरे भक्तों का अंजाम[१७] यही होता है?

१. अत्याचार २. बिजली ३. दुख ४. नियत (रिज़र्व) ५. ईश्वर की कृपा ६. दुःख, जलन ७. पछतावा ८. नास्तिक के मन में ९. एकेश्वरवाद का दीपक १०. मस्जिद में भाषण देने का स्थान ११. अत्याचार से पीड़ित १२. दरिद्र १३. दुर्बल शरीर १४. दुःखी मन १५. संसार की दृष्टि में १६. कांटे १७. परिणाम, अंत

(१३)

तुझ से मुंह मोड़ा या हम वेद के काइल[१] न रहे
क्या ख़ता[२] की जो तेरे लुत्फ़[३] के काबिल न रहे?
हम तो हरगिज़ तेरे अहकाम[४] से ग़ाफ़िल न रहे।
बहरे-आफ़ात[५] में भी तालिबे-साहिल[६] न रहे।
फिर तिरी आर्यों पर चश्मे-ग़ज़ब, क्या मानी?
वक्फ़ ग़ैरों पे इनायात[७] हों सब क्या मानी?

(१४)

तुझ को मुश्किल नहीं, बिगड़ी को बना दे दम में।
तू परेकाह[८] से ही कोह[९] हिला दे दम में।
शाखे़-शब[१०] से गुले-खुर्शीद[११] उगा दे दम में।
दस्ते-रहमत[१२] तेरा मुर्दों को जिला दे[१३] दम में।
आये रहमत पे जो तू, कतरे को तूफ़ां कर दे।
मोरे-बेमाया[१४] को सदरशके-सुलेमाँ[१५] कर दे

(१५)

यह तमन्ना[१६] है चमन अपना बायाबाँ[१७] न रहे।
कुफ़्र के ख़ौफ़ से सहमा हुआ ईमां न रहे
बारिशे-गुल जो रहे, तंगीए-दामाँ न रहे।[१८]
बुते-बेजां[१९] का पुजारी कोई इन्सां न रहे
फिर नमस्ते की सदाओं से जहाँ गूंज उठे,
वेद मन्त्रों से 'शरर' कौनो-मकां[२०] गूंज उठे।

१. मानने वाला २. अपराध ३. कृपा ४. आदेश ५. दुःखों के समुद्र में ६. तट के अभिलाषी ७. कृपाएं ८. दूब के तिनके से ९. पर्वत १०. रात्रि रूपी शाखा ११. सूर्य रूपी फूल १२. कृपा का हाथ १३. जीवित कर दे १४. क्षुद्र चींटी को १५. जिस पर महाराजे भी ईर्ष्या करें १६. इच्छा १७. उजाड़ १८. दामन छोटा न हो १९. निर्जीव मूर्ति २०. सकल विश्व

जवाबे-शिकवा

(१)

कौम ने दिल की तड़प अपनी अयाँ[१] कर डाली
दरे-महबूब पे रग रग ही ज़ुबाँ कर डाली
ताबे-गोयाई[२] न पाई तो फ़ुग़ाँ कर डाली
लबे-शाइर से हर इक बात बयाँ कर डाली
आहे-सोज़ाँ जो ज़रा की तो जहाँ काँप गया,
पर्दा-ए-अब्र[३] से खुर्शीद ने मुँह ढाँप लिया।

(२)

वुसअ़ते दश्त[४] में, दरियाओं में, कोहसारों में
अब्र में, बर्क़[५] में, खुर्शीद में, सय्यारों[६] में
खोजा आहों ने सरे-अर्श, कभी ग़ारों में
ख़ालिके-दहर को, फूलों में कहीं ख़ारों में
वाए-हसरत कि निशाँ तक भी न पाया उसका
गर्चे आलम में हर इक जा पे था चर्चा उसका

(३)

दफ़अतन आई सदा, चीरती अफ़लाक[७] तमाम
क्या बशर यूं ही ज़माने के हैं बेबाक[८] तमाम
हो चुका है क्या गरीबाने-वफ़ा चाक तमाम
खत्म कर डाली जो शिकवों पे ही इदराक[९] तमाम
काश! तुम वाकिफ़े-आदाबे-वफ़ा[१०] भी होते
काश! तुम महरमे-असरारे-बक़ा[११] भी होते

१. प्रकट २. बोलने की शक्ति ३. बादलों केपर्दे से ४. विस्तृत वन ५. बिजली ६. सितारों ७. आकाश ८. निर्भीक ९. बुद्धि १०. वफ़ादार ११. नित्य ज्ञान का रहस्य जानने वाले

(४)

तुम ने चाहा कि मिटे कुफ़्र भी माया भी रहे
वेद प्रचार भी हो शोहरतो-चर्चा भी रहे
गर बने तालिबे-हक, तालिबे[१]-दुनिया भी रहे
वेद देखे भी नहीं, वेद के शैदा[२] भी रहे
लब से हक, दिल से पर असनाम[३] की चाहत न गई
"रिन्द के रिन्द रहे, हाथ से जन्नत न गई"

(५)

आज तुम मग़रबी तहज़ीब के दीवाने हो
धर्म क्या चीज़ है? इस राज़ से बेगाने हो
नाम को शम्म-ए-दयानन्द के पर्वाने हो
मुझ पे रौशन है जो तुम वेद के मस्ताने हो
वेद अल्मारियों में बन्द पड़े रहते हैं
रात दिन मन्दिरों पर कुफ़्ल जड़े रहते हैं

(६)

आर्य जन थे जो सदाकत के परिस्तार[४] रहे
हर घड़ी बादा-ए-तौहीद से सरशार[५] रहे
उम्र भर ज़ालिमों से बरसरे-पैकार[६] रहे
कब तुम्हारी तरह शोहरत के तलबगार रहे?
अपने आबा[७] के सुनाते हो फ़साने कैसे?
जब चलन उन का नहीं उनके तराने कैसे?

१. इच्छुक २. दीवाने ३. बुतों ४. पुजारी ५. ईश्वर भक्ति के नशे में मस्त ६. युद्धरत ७. पूर्वजों

(७)

ज़िन्दगी उनकी थी, ताबिन्दा[१] सितारे की तरह
तुम मगर बुझ गये जलते ही शरारे[२] की तरह
आह सुन कर वे तड़प उठते थे पारे की तरह
फ़िक्र[३] से दूर हो तुम राज दुलारे की तरह
कुफ़्र के फन्दों में तुम, बन्दा-ए-तौहीद[५] थे वो
तुम तो जुगनू भी नहीं, ग़ैरते-ख़ुर्शीद[६] थे वो

(८)

जिन के सीनों में नहीं ज़ज़्बा-ए-ईमाँ, तुम हो
जिन के नालों में नहीं दर्द का दर्मां[७], तुम हो
जिनकी आहों में नहीं बिजलियाँ पिन्हाँ[८], तुम हो
जिनकी अर्वाह[९] में है सोज़ का फुकदाँ[१०] तुम हो
वाए-हसरत कि भला तुम से किसी का न हुआ
ख़्वाब शर्मिन्दा-ए-ताबीर[११] ऋषि का न हुआ

(९)

तालिबे-रहमते-हक़[१२] तुम में कोई गर होता
तुम न यूं होते न यूं हिन्द का मंज़र[१३] होता
काश! तुम में भी कोई आर्य मुसाफ़िर होता
वेद की राह में मर मिटने को मुज़्तर[१४] होता
फिर यह मुमकिन ही न था, वेद का जयकार न हो
मिह्रे-ताबाँ[१५] भी चढ़े, दूर शबे-तार[१६] न हो

१. चमकाया हुआ २. चिन्गारी ३. चिन्ता ५. ईश्वर भक्त ६. सूर्य से भी अधिक प्रकाशमान ७. दवाई ८. छिपी हुई ९. आत्माओं १०. अभाव ११. स्वप्न साकार होना १२. ईश दया का इच्छुक १३. दृश्य १४. विह्वल १५. चमकता सूर्य १६. अंधेरी रात

(१०)

काफ़िरों ने तो मेरे वेद से ग़द्दारी की
तुमने फिर कौन सी बतलाओ वफ़ादारी की?
दमे-तकरीर[१] ग़मे-बेवा में ख़ूंवारी की
घर में छोड़ी न कसर कोई सितमगारी की
दर हकीकत दिले-मजनूँ में वह जज़्बा ही नहीं
हुस्न रुसवा है, मगर इश्क में सौदा ही नहीं

(११)

जिन के अस्लाफ़[२] के सीने थे मुहब्बत के अमीं[३]
घर की तकरार से फ़ुरसत उन्हें मिलती ही नहीं
जुर्रतो-अद्लो-सदाकत[४] में जो थे अर्शनशीं[५]
उनकी औलाद है अब कारे-ज़लालत[६] की मकीं[७]
काँप उठते हैं सदा सुन के जो शमशीरों[८] की
वे भी नाज़ाँ[९] हैं कि औलाद हैं हम वीरों की

(१२)

वेदे-अकदस[१०] का ख़ज़ाना ही जिन्हें सौंपा हो
तुम ही बतलाओ उन्हें इससे भी बढ़ कर क्या हो?
क्यों न उस शख़्श की बद किस्मती का शुहरा[११] हो
जो लबे-नहर[१२] पे बैठा हो, मगर प्यासा हो
होश में आओ! तुम्हें तकती है मंज़िल देखो
डूबते क्यों हो? वह है सामने साहिल देखो

१. व्याख्यान के समय २. पूर्वज ३. केन्द्र अमानतदार, 'ट्रस्टी' ४. न्याय व सत्य ५. आकाश पर स्थित ६. अपमान के गर्त में ७. बसने वाली ८. तलवारों ९. गर्व युक्त १०. पवित्र वेद ११. प्रसिद्धि १२. नदी के तट पर

(१३)

आर्यो! तर्क की तलवार चलाना सीखो
बात जो मुँह से कहो, करके दिखाना सीखो
बहरे-जज़्बात[१] में तूफ़ान उठाना सीखो
अपनी तदबीर[२] से तकदीर बनाना सीखो।
पूछता कोई नहीं आज नसल[३] की ख़ूबी
देखी जाती है जमाने में अमल[४] की ख़ूबी

(१४)

तुम ने दुनिया को सदाकत[५] का सबक देना था
नौएइन्साँ[६] को अखुवत[७] का सबक देना था
भूल बैठे हो, मुहब्बत का सबक देना था
बुज़दिलो, जुर्रतो-ग़ैरत[८] का सबक़ देना था।
क्या तुम्हारे मगर अतवार[९] हैं? सोचो दिल में,
क्या पनपने के ये आसार[१०] हैं? सोचो दिल में।

(१५)

तुम अगर चाहो तो मुश्किल को भी आसां कर लो
हां मगर कतरा-ए-ईमान[११] को तूफ़ां कर लो
आग तौहीद[१२] की सीनों में फ़िरोजां[१३] कर लो
बुत परस्तों को तो दम भर में परेशां कर लो।
ख़ौफ़ मत खाओ जो अग़यार[१४] हूँ सिर पर लाखों
एक चिन्गारी जला सकती है छप्पर लाखों।

१. भावों का समुद्र २. पुरुषार्थ ३. वंश ४. आचरण ५. सत्य ६. मानव जाति ७. प्रेम, सहनशीलता ८. वीरता तथा स्वाभिमान ९. रंग ढंग १०. चिह्न ११. श्रद्धा की बूंद १२. एकेश्वरवाद १३. प्रज्वलित १४. शत्रु।

(१६)

कुछ तो सोचो कि थी वैरागी[१] में जुर्रअत[२] कैसी
और नाबूद[३] हुई तुम में शुजाअत कैसी
थी दयानन्द को वेदों से मुहब्बत कैसी
हिन्दी भाषा से तुम्हें आज है नफ़रत कैसी?
इसी बल बूते पे शिकवों पे उतर आते हो?
इतने जाहिल[४] हो जहालत[५] पे भी इतराते हो?

(१७)

अब भी मिल जाओ अगर मौजे-परेशां[६] होकर
ख़सो-ख़ाशाक[७] बहा सकते हो तूफ़ां होकर
फिर चमक सकते हो तुम नैयरे-रख़शां[८] होकर
कल्बे-मुलहिद[९] में मचल सकते हो ईमां होकर।
हां! मगर पहले कलेजों में उजाला कर लो
वेद के नूर से रौशन तहो-बाला[१०] कर लो।

१. बंदा वीर वैरागी २. साहस, वीरता ३. लुप्त ४. मूर्ख ५. मूर्खता ६. विफरी हुई लहर ७. तिनके, घासफूस ८. चमकता सूर्य ९. नास्तिक के हृदय में १०. नीचे से ऊपर तक सम्पूर्ण

गुणानां वा विशालानां सत्काराणां च नित्यशः।
कर्त्तारः सुलभा लोके विज्ञातारस्तु दुर्लभाः॥

(स्वप्नवासवदत्तम्)

अर्थात् महान् कार्यों के करने वाले तो प्रायः मिल जाते हैं किन्तु इन तपस्वियों के महान् कार्यों का कृतज्ञता पूर्वक स्मरण करने वाले व्यक्ति दुर्लभ हैं।

एक साधक का परिचय

प्रो. उत्तम चन्द जी शरर, डी.ए.वी. कालेज, करनाल

किसी साधक के परिचय के लिये उसका जन्म स्थान तथा जन्म तिथि जानना आवश्यक नहीं, यह क्रम तो जन-साधारण में ही चलता है। साधक का परिचय तो उसकी साधना द्वारा ही उपयुक्त होता है। मैंने प्रिं. ज्ञानचन्द जी में एक साधक का रूप देखा है और साधक प्रायः मूल साधनों में रहता है, अतः उसके जन्म स्थानादि का परिचय देने की मैं आवश्यकता अनुभव नहीं करता। मोती किसी समुद्र तथा सीप का हो, सबके लिये प्यारा तथा मूल्यवान् होता है। प्रिं. ज्ञानचन्द जी की साधना का प्रारम्भ मैंने तब पाया जब वे महात्मा हंसराज जी के तप से प्रभावित होकर केवल गुज़ारा मात्र लेकर दयानन्द कालेज के आजीवन सदस्य बने। वे अच्छे से अच्छा वेतन लेकर किसी भी कालेज में धन कमा सकते थे, परन्तु महर्षि दयानन्द और महात्मा हंसराज की श्रद्धा तथा तप ने उन्हें वैभव पर लात मारने की क्षमता प्रदान कर दी, और उन्होंने आनन्द पूर्वक समस्त जीवन तप की भट्टी में झोंक दिया।

केवल इतना ही नहीं, आर्य समाज के इस तपस्वी को हैदराबाद सत्याग्रह में यातनाएं झेलते भी देखा। एक प्रिंसिपल, साधारण बन्दी का कष्ट प्रसन्नता से झेलता है, इसमें उसका तपस्वी जीवन ही एक मात्र संबल रहा, ईश्वर विश्वास तथा आर्य समाज की श्रद्धा मान्य आचार्य प्रवर का प्रेरणा स्रोत बनी रही। हर सामाजिक कार्यकर्ता इस तथ्य से अच्छी प्रकार परिचित है कि व्याख्यान देना प्रतिभा की मांग करता है तो दान एकत्रित करना नम्रता की अपेक्षा रखता है। आचार्य जी आंग्ल, उर्दू, हिन्दी आदि कई भाषाओं के विशेषज्ञ हैं। ईश्वर ने उन्हें प्रभावशाली व्यक्तित्व प्रदान किया है, इसके साथ ही वाणी का माधुर्य भी उनके शुभ कार्यों से उन्हें प्राप्त है। उनके व्याख्यानों में कथा प्रसंगों में वाणी का अस्तित्व सार्थक होता है। हृदय की भावनाएं क्रमशः श्रोताओं को मुग्ध करती उनके हृदय में स्थान पाती हैं। आध्यात्मिक प्रवचन, उपनिषद् कथा, वेद कथा उनकी हृत् तन्त्री की झंकार होते हैं। विद्वत्ता तथा भावनाओं का सुन्दर योग प्रवाहमयी भाषा में जनता को मन्त्र मुग्ध कर देता है, परन्तु इस सबसे बढ़कर उनकी नम्रता उन्हें जनता के हृदयासन पर आसीन कर देती है। एक बार सत्संग के पश्चात् जनता ने आग्रह किया कि उनके नाम के साथ "महात्मा" शब्द जोड़ा जाये परन्तु नम्रता

की मूर्ति प्रिं. ज्ञानचन्द जी ने उत्तर में कहा "मैं तो साधारण मनुष्य हूं, मुझमें महात्मा का कोई गुण नहीं अतः महात्मा कह कर मुझे लज्जित न किया जावे।"

लाखों रुपये दान के स्थान स्थान से एकत्रित कर दयानन्द-कालेज, तथा दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय के विशाल भवन तथा सम्पत्ति जोड़ना, इसी तपस्वी फ़कीर का काम है, और सचमुच जो अपनी कोठियां नहीं बनाता वही समाज के भवन खड़े कर सकता है, और फिर इतनी बड़ी दान राशि को एकत्रित कर स्वयं अपने लिये कुछ भी न सोचना, मन की कितनी उदात्त भावना तथा पवित्रता का परिणाम हो सकता है, मनोविज्ञान विद् विद्वान् इसका अनुमान भली प्रकार कर सकते हैं।

ऋषि दयानन्द तथा वेद के सत्य सिद्धान्तों का प्रसार आचार्य जी की सदा की अभिलाषा रही है। उसी अभिलाषा ने देश विभाजन के पश्चात् दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय का रूप लिया। देश के विभिन्न प्रान्तों के युवक इस विद्यालय से अपनी प्रतिभा को जागृत कर दयानन्द की श्रद्धा को मन में संजो वेद प्रचार में जुट रहे हैं और अब तो आर्यों का एक मात्र यही उपदेशक विद्यालय है जो प्रचार के साधन के साथ साथ आर्यसमाज का कीर्ति स्तम्भ भी है।

किन शब्दों में प्रिं. ज्ञानचन्द जी की साधना का अभिनन्दन किया जावे। कोई शब्द श्रद्धामयी तपस्या का क्या बखान करे? कवि के ये शब्द ही मान्य आचार्य जी के सम्बन्ध में शायद कुछ कह सकें :

जयन्ति ते सुकृतिनो श्रद्धायुक्ता मनस्विनः।
नाऽस्ति येषां यशःकाये जरा मरणजं भयम्॥

"वीरों की उठती तरंग बन
सागर की मचली उमंग बन
अमर फाग का दिव्य रंग बन
लहरा लहरा ध्वजा ओ३म् की
हम सब तुझ पर प्राण वार दें
जननी पर जी-जान वार दें
सुख सम्पत् सम्मान वार दें
यह वर दे जा ध्वजा ओ३म् की"

बौनों का चिन्तन

सिर को ऊँचा किये चौड़ी छाती के साथ वृक्ष ने कहा—स्वाभिमान ही जीवन है, उसके चरणों में पड़ी कलम ने हाथ मटका कर कहा "ग़लत", जीवन ही स्वाभिमान है, आप मरे जग परलो।

थोड़ी देर में धीरे-धीरे चलने वाली वायु ने तूफ़ान का रूप धारण कर लिया। आंधी तीव्रता से आई। वृक्ष ने पूरे साहस के साथ उसका मुकाबला किया, वह न डरा, न अपने स्थान से हिला, न शीश झुकाया। आंधी से लोहा लेता रहा, परन्तु घास... वह तो दण्डवत प्रणाम करती रही थी जैसे धरती से चिपक गई हो। कुछ काल पश्चात, कड़क की अचानक ध्वनि हुई, वृक्ष टूट चुका था। आंधी ने अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लिया था और वह थोड़ी देर बाद शान्त हो गई थी।

आँधी के शांत होते ही घास ने धरती से सिर उठाया और बोली "सचमुच आप मरे जग परलो।"

इससे चिड़िया चहचहाती हुई बोली
"बौनों का चिन्तन ही बौना होता है।"

अपनी तलाश

मैं कब से ईश्वर के दर्शन का इच्छुक था। आखिर एक दिन मेरा सौभाग्य कि मुझे मार्ग में भगवान मिल गये, परन्तु लगा कि वह कुछ भयभीत थे। मिलते ही मेरे नमस्कार से पूर्व बोले-मुझे कहीं छिपने का स्थान बताओ, कुछ लोग मुझे अपनी तिजोरी में बन्द करना चाहते हैं जिससे मैं जैसे तैसे निकल कर भाग आया हूँ।

मैं नमस्कार करना भूल गया विह्वल होकर बोला, मेरे इष्टदेव शीघ्र ही कहीं भाग जाओ नहीं तो आपके साथ मैं भी कहीं तिजोरी का बन्दी न बना दिया जाऊँ। आज मैं आप को खोजता हूँ, कल स्वयं मुझे अपने आप को खोजना पड़ेगा।

मैं सोचता रह गया

प्रातः का समय था, अभी प्रकाश और तम गले मिल रहे थे, कि मेरे घर की दीवार पर चिड़िया आ बैठी! उसने अपने सुन्दर गीतों से सारे घर में सरसता भर दी। आंगन तो जैसे जगमगा उठा। मेरा ध्यान आकृष्ट करने के लिये यह पर्याप्त था। मैंने स्पर्धा युक्त चिड़िया को देखा और पूछा, ओ भाग्यशालिनी, तुम यह गीत कहाँ से सीख पाईं? आकाश में उड़ान भरने का आनन्द भी तो तुम्हारे भाग्य में है।

मेरी बात सुनकर चिड़िया ने गीत बन्द कर दिया और बोली उड़ान तो सब ले सकते हैं, और गीत भी किसी जाति विशेष की बपौती नहीं, इसके लिये चाहिये इसका चिन्तामुक्त मन! मनुष्य तो स्वयं अपने मन पर स्वनिर्मित चिन्ताओं का बोझ लादने में आनन्द अनुभव करता है उसे मन की यह सरलता और गीतों का सौन्दर्य कैसे प्राप्त हो?

हल्की फुल्की चिड़िया चहचहा कर उड़ गई। और मैं भारी मन से इस सत्य पर सोचता रह गया।

उधार का सौन्दर्य

रात्रि तारों से जगमगा रही थी। इतने में आकाश के दूसरे सिरे से चन्द्रमा ने झांका। सितारों ने आवाज़ दी और वह धीरे-धीरे चढ़ता हुआ सभा की शोभा बन गया।

एक तारे ने मुस्करा कर कहा, देवता ज़रा जल्दी आया करो। तुम से ही तो सभा की शोभा है, इतनी प्रतीक्षा क्यों कराते हो?

दूसरे सितारे ने आंख मटका कर कहा—सौन्दर्य प्रतीक्षा कराता ही रहता है। चन्द्रमा मौन भाव से यह सब सुन रहा था।

पहले ने हंसते हुए फिर कहा—"तभी तो आरम्भ के दिनों में पर्दा, ओढ़ लेते हैं, ज़रा सी झलक को तरसती आँखों को लुभाते हैं।"

बात काटते हुए दूसरा बोला और पर्दा उठाते भी हैं तो कितनी प्रतीक्षा के पश्चात्।

ध्रुव कब से यह चाटुकारिता सुन रहा था, उससे रहा न गया, बोला—"सौन्दर्य हो तो अपना। उधार के सौन्दर्य का क्या मूल्य? उधार का सौन्दर्य तो इसी बनावट पर जीवित रहता है।"

चुभती बात सुन कर चन्द्रमा का मुख पीला पड़ गया।

तेज और आयु

सारी रात के शासन के पश्चात् प्रातःकाल के कुछ पूर्व अन्धेरे ने कुछ बड़ हांकते हुए कहा, मेरा साम्राज्य कितना विस्तृत और कितना शान्त है।

इतने में आकाश में ऊषा का आंचल लहरा उठा और धरती के एक कोने में लजाती और मुस्कराती दुल्हन के समान सुन्दर लालिमा चुपचाप आ कर बैठ गई। अंधेरे ने उसे देखा तो उसकी भवें तन गईं, तड़प कर बोला मेरी आज्ञा के बिना तुम यहाँ कैसे प्रविष्ट हो पाईं?

लजाते हुए लालिमा बोली "दादा" मैं तो एक कोने में बैठी हूं और आपकी छत्रछाया के लिये धन्यवाद करती हूँ।

अंधेरे का क्रोध भड़क उठा, "यहाँ से तुम तत्काल निकल जाओ, मेरे साम्राज्य में विघ्न डालने का तुम्हारा कोई अधिकार नहीं।

कोलाहल सुनकर आकाश की खिड़की से सूर्य ने नीचे झांका, उसे देखते ही अन्धेरे का रंग पीला पड़ गया। और वह चुपचाप भाग खड़ा हुआ। खिलखिलाते हुए धूप ने हाथ फैला कर कहा—"दादा! जरा ठहरो, यह तो बाल सूर्य है इससे क्या भय? पीछे देखे बग़ैर अन्धेरा बोला, "पगली तुम क्या जानो तेजस्वी का तेज आयु से नहीं मापा जाता"।

जीवन क्या है?

सामने छत पर खड़ा एक बच्चा पतंग उड़ा रहा था, उसके मुख पर हास था, थोड़ी थोड़ी देर में पतंग की उड़ान केसाथ उसमें उत्साह और आनन्द भर जाता था। सचमुच उत्साह आनन्द का कारण है और पतन दुःख का, बच्चे के आनन्द को देखकर लगा कि जीवन आनन्द है।

एक सज्जन मिले जो पत्नी के वियोग में दुःखी थे। उनकी पत्नी सप्ताह पूर्व मायके गई थी। बोले—सारा घर उजड़ गया है। झाड़ू तक कोई नहीं लगाता, मुझे भोजन के लिये क्या-क्या कष्ट झेलना पड़ता है यह मैं जानता हूँ, कहते-कहते उन्होंने ठंडी सांस भरी, और मैंने अनुभव किया, जीवन तो दुःखमय है। सामने से एक चिड़िया फुदकती देखी। उसकी चोंच में कुछ तिनके थे। वह कहीं से उन्हें उठा कर अपना नीड़ बना रही थी। वह परिश्रम कर रही थी। मुझे लगा जीवन सतत् परिश्रम का नाम है। अन्तर से आवाज़ आई वस्तुतः जीवन न केवल दुःख है न अकेला परिश्रम और न अकेला आनन्द। जीवन इन तीनों की त्रिवेणी का नाम है।

परिचित का मोह

मैं दैनिक सैर का अभ्यस्त हूँ अत: एक सड़क विशेष से अधिक परिचित हो गया। सड़क के साथ कुछ दूरी पर एक गन्दा नाला पड़ता है। वहाँ से गुजरने वालों को उसकी दुर्गन्ध से भी दो चार होना पड़ता है।

कुछ काल पूर्व नगर पालिका ने उसी मोड़ पर एक पार्क बनवा दिया जिसके सुन्दर पुष्प अपनी सुगंध से आने जाने वालों को मुग्ध कर देते हैं।

मैं सड़क से निकलता हूँ तो साथ एक पार्क अपनी मोहक सुगन्ध से मुझे निमन्त्रित करता है। पार्क में खेलते बच्चों की किलकारियां भी अपना आकर्षण रखती हैं। परन्तु सड़क पर चलते मेरे अभ्यस्त पग आगे बढ़ जाते हैं पार्क की ओर मुड़ते ही नहीं।

मन कहता है फूलों की सुगन्धि का आनन्द ले लूं फिर सोचता हूँ इन बच्चों में मेरा क्या काम? देखने वाले क्या कहेंगे। ऐसा सोचकर नाले की दुर्गन्धि समेट मैं आगे बढ़ जाता हूँ और अब तो दुर्गन्धि की अनुभूति और नासिका ने समझौता कर लिया है।

स्वाभिमान व सहृदयता

विस्तृत आकाश में उड़ान भरते भरते मेघ खण्ड को पर्वतराज की गोद में विश्रामस्थल मिला। प्यार से पर्वत ने पूछा "काफ़ी थक गये होगे। मेघखण्ड ने उत्तर दिया "दादा" दूर की यात्रा करके आया हूँ थकान तो होती ही है। पर्वत बोला तुम भी तो टिक कर नहीं बैठ सकते, वायु का हल्का सा थपेड़ा तुम्हें चंचल बनाने को पर्याप्त है। मुझे देखो कितने झंझावात आते हैं और गुज़र जाते हैं पर मैं अपने स्थान पर अडिग हूँ। लजाते हुए मेघ बोला मैं आपकी समता कहां कर सकता हूँ अभिमान मुक्त पर्वत बोला "तुम में स्वाभिमान भी तो नहीं। इतने हल्के क्यों बन जाते हो। मेघ यह सब सुनता रहा और कुछ देर पश्चात् विनम्रता से बोला—"दादा" स्वाभिमान तो मुझे भी प्रिय है। जब मैं धूप से झुलसी धरती पर जा कर बरस जाता हूँ। तो धरती रोमांचित हो उठती है, तृषित पशु पक्षी चहचहाने लगते हैं। किसान के नेत्र प्रेम और आनन्द से भर जाते हैं, खेती लहलहा उठती है, और धरती की कोख हरी हो जाती है फूलों के मुख पर मुस्कान खेलने लगती है। "दादा" यह सब मंगल देख कर मुझे जो आनन्द आता है उससे थकान की तो बात क्या स्वाभिमान भी तुच्छ सा लगता है। सहृदयता के इस आनन्द को आप नहीं जानते।

पर्वतराज ने सुना तो उसका अभिमान टूट गया और वह मौन रह गया।

विनम्र प्रार्थना

प्रभो! प्रभो! तुझ से मेरी विनम्र प्रार्थना है कि यदि मेरे नेत्र संसार की चकाचौंध के सौन्दर्य में तेरे मनोरम सौन्दर्य की अवहेलना करें, तो मुझ से दर्शन-शक्ति छीन लेना। मेरे श्रोत्र विश्व के वाद्यों के सम्मोहन में तेरी करुणा भरी मधुरवाणी एवं मुस्कान के आनंद की अवहेलना करें तो कृपा कर के मुझसे श्रवण शक्ति वापस ले लेना। हे वाचस्पति! यदि मेरी वाणी सांसारिक वैभव की दासता में तेरी महिमा का गान भुला दे, तो मुझे गूंगा बना देना। हे सर्वप्रिय प्रियतम! मैं जानता हूं कि नरक की यातना सहना कठिन है, परन्तु तेरी करुणा की अवहेलनां का पाप उससे भी अधिक दुस्सह्य है।

शब्दों का अभाव

समुद्र को अपनी गम्भीरता एवं गहराई पर घमंड है, परन्तु वह मेरे मन की गहराई को नहीं माप सकता। वायु एवं विद्युत की तीव्रता की सीमा नहीं, परन्तु मेरा मन इनसे कहीं अधिक गतिशील एवं शक्तिशाली है। सूर्य संसार में प्रकाश का वितरक है, परन्तु मेरे मानस सूर्य के प्रकाश के अभाव में उसका अस्तित्व सार्थक नहीं।

प्रभो! तूने मन रूपी इतना सशक्त, गम्भीर एवं प्रकाश का पुञ्ज साधन अपनी करुणा से प्रदान करके, संसार के समस्त वैभव से मुझे मालामाल कर दिया, तेरी करुणा का वर्णन किन शब्दों में करूं?

वर्तमान तथा भविष्य

आकश की बुलन्दी पर चमकते हुए एक नक्षत्र ने धरती के कणों को घृणा की दृष्टि से देख कर कहा "तुम्हारा जीवन कितना नगण्य है? अंधकार में विलीन, तुच्छता की पराकाष्ठा है। मुझे देखो, देवों के लोक में जगमगा रहा हूँ, क्या तुम्हें अपने अस्तित्व पर ग्लानि नहीं होती? अंधकार में विलीन धरती का एक कण बोल ही उठा। मित्र! इतनी गर्वोक्ति से काम न लो, थोड़ी प्रतीक्षा करो, हमारी तपस्या को तुच्छता का नाम न दो। कुछ ही काल के पश्चात् हमारा तप, पूर्व दिशा से प्रकाश पुञ्ज बनकर उगेगा, जिस के तेज को, तुम सहन न कर सकोगे, और संसार की दृष्टि से ओझल हो जाओगे। वह प्रकाश पुञ्ज धरती और आकाश को जगमगा देगा। तब धरती पर सोना बरस जाएगा और तुम्हारी दृष्टि में तुच्छ लगने वाले रजकण चमक उठेंगे। स्वर्ण खंड बन जाएंगे।

मित्रवर! तुम्हारा वर्तमान विलासमय है और भविष्य अंधकारमय! हमारा वर्तमान तपोमय और भविष्य जाज्वल्यमान! बस इतना अन्तर है।

वीर हक़ीक़त की याद

जब कोई गुलचीं किसी अधखिली कली को तोड़कर मसल देता है या कोई नादान पक्षी अपनी तेज़ चोंच के प्रहार से किसी कच्चे फल को डाली से अलग कर देता है या कोई पथिक घर से निकलते ही आंधी तथा तूफ़ान का शिकार हो जाता है तो हे मासूम शहीद, हमें बरबस ही बचपन में हुई तेरी शहादत की याद आ जाती है। जब जब कोई मांझी, तूफ़ान की चिन्ता न करते हुए अपनी छोटी सी नौका समुद्र में उतार देता है। जब जब भी सूर्य की नन्ही किरन, चारों ओर फैले सशक्त अन्धकार से युद्ध छेड़ देती है, या रात्रि के सन्नाटे में किसी पक्षी की आवाज़ गूँज जाती है, या कोई मचलता हुआ झरना, पर्वतीय चट्टानों को चीर कर गुनगुना उठता है तो ऐ अत्याचार की शक्तियों से अकेले जूझने वाले निहत्थे वीर! हमें बरबस तेरी याद आती है।

आकाश और धरती

दूर बहुत दूर एकान्त में आकश ने धरती का माथा चूमा और कहा "देवि! दिन रात दौड़ती हो, क्या तुम्हें थकान नहीं होती? कभी विश्राम भी ले लिया करो।"

रुके बग़ैर धरती एक साँस में बोली "देवता! कर्त्तव्य पालन में एक ऐसा आनन्द है, जिसके प्राप्त होने पर सारी थकान उतर जाती है।"

जीवन मृत्यु

बाग़ में पत्तों ने तालियाँ बजा कर सूचना दी कि बसन्त आ गया है, सुनते ही हरियाली झूम उठी। वातावरण में मस्ती छा गई। पवन ने आते ही अपने मित्र फूल को गुदगुदाया। नींद से चौंक कर पुष्प ने अपने मित्र को देखा तो खिलखिला उठा। हँसी की आवाज़ सुन कर कली ने घूंघट का एक कोना हटा पुष्प को कनखियों से देखा और मुस्करा दी।

उद्यान के मादक वातावरण को देखकर किनारे पे खड़े एक ठूंठ ने कहा, मित्रो! क्यों इतना प्रसन्न हो रहे हो, यह बसन्त चार दिन का है फिर कोई पतझड़ का झोंका आएगा और तुम्हें धराशायी कर देगा, फिर तुम्हारी वही दशा होगी जो आज मेरी है, मृत्यु की लपेट से कोई नहीं बच सकता।

ठूंठ ने बात समाप्त ही की थी कि धरती की परत को चीर कर एक अंकुर ने सिर उठाया और कहा "दादा! तुम्हारी बात अन्तिम नहीं है। तुम्हें पता होना चाहिये कि जिंदगी मौत के परदों को चीर कर संसार को फिर स्वर्ग बना दिया करती है।"

स्त्री पुरुष

स्त्री प्रेम है, मासूमितयत है करुण है। पुरुष कठोरता का रूप और दर्प का पुतला, पौरुष का एक मात्र अधिकारी है। दोनों में पर्याप्त अन्तर है। एक में सहन शक्ति है विनम्रता है, परन्तु चंचलता नहीं स्थिरता है। दूसरे में कठोरता है प्रखर अहं है, परन्तु स्थिरता नहीं, चंचलता है। स्त्री अपनी अश्रु धारा से वह कार्य कर सकती है जो पुरुष असिधारा से नहीं कर सकता। स्त्री अपनी मन्द मुस्कान से जिस स्वर्ग की रचना कर सकती है पुरुष अपने पूरे पौरुष बल से उसे प्राप्त नहीं कर सकता। स्त्री की नीची चितवन पाप गर्त में गिरे पुरुष को उबारसकती है। शक्ति का महत्व है, परन्तु प्रेम का साम्राज्य हृदय तक है। आश्चर्य है कि आज प्रकाश के युग में भी प्रेम विनम्रता तथा करुणा शासित है और दर्द, कठोरता और उच्छृंखलता शासक।

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः
सत्यव्रतारहितमानमलापहाराः।
संसारदुःखदलनेन सुभूषिता ये-
धन्या नरा विहित कर्मपरोपकाराः॥

वदनं प्रसाद सदनं सदयं हृदयं सुधामुचो वाचः।
करणं परोपकरणं येषां केषां न ते वंद्याः॥

जिन का मुख मण्डल प्रसन्न, हृदय दयापूर्ण, वाणी सुधामयी, कार्य परोपकार परक होते हैं उनकी वन्दना कौन नहीं करता।
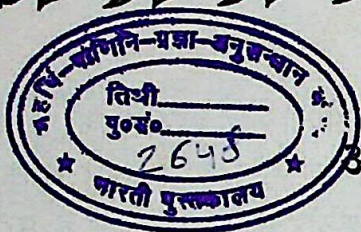
आर्य वीर विजय

—उत्तम चन्द शरर

(संचालक सार्वदेशिक आर्य वीर दल, हरियाणा)

(आर्य वीर विजय पत्रिका के प्रथम अंक में दिया शरर जी का सन्देश)

आर्य वीर दल, हरियाणा का मासिक पत्र 'आर्य वीर विजय' आपके सम्मुख है। इसका स्पष्ट सन्देश गीता के इस श्लोक में कहा गया है **"यत्र योगेश्वरो कृष्णाः यत्र पार्थ धनुर्धरः, तत्र श्री विजयः भूतिः ध्रुवा नीतिमतिः मम!"** जहां श्री कृष्ण की नीति तथा अर्जुन के बाण, मिल जाते हैं, वहाँ पर विजय तथा हर प्रकार का सौभाग्य होता है" आर्यत्व तथा वीरत्व विजय के ज़ामिन हैं। केवल आर्यत्व, कोरी शालीनता, शक्तिहीन, उच्चता, पंगु होती है, सुलझे विचारों के स्वामी सिर की रक्षा के लिए भुजाओं का होना आवश्यक है। इतिहास इस सत्य का साक्षी है कि कृष्ण को अर्जुन की आवश्यकता सदा रही है। चाणक्य चन्द्रगुप्त की खोज में रहा है, समर्थ गुरु रामदास शिवा के बिना असमर्थ से लगते हैं। आर्यत्व की रक्षा केलिये वीरत्व, क्षात्रत्व चाहियें, यह तथ्य कल भी सत्य था, आज भी सत्य है और भविष्य के लिए भी सत्य रहेगा।

आर्य जाति ने सहस्रों वर्षों से इस सच्चाई को भुला दिया। जैन, बौद्ध मत जो हिंसा तथा जातिवाद की प्रतिक्रिया में उत्पन्न हुए, हर स्थिति में अहिंसा का प्रभाव हमारे मन पर छोड़ गये, हम अपनी शालीनता के गर्व में क्षात्र धर्म को हेय समझ बैठे परन्तु शालीनता को तो सज्जन व्यक्ति ही पहचानता है, दुष्ट दानव नहीं? दिनकर के शब्दों में—

'दनुज कब शिष्ट मानव को भला पहचानता है?
विनय को नीति कायर की सदा वह जानता है?'

'नालन्दा विश्वविद्यालय में सैकड़ों युवक बख़तयार ख़िलजी की तलवार से कट गये केवल अहिंसा के चामत्कारिक परिणाम के विश्वास में। सोमनाथ का भव्य मन्दिर इसी क्षात्रत्व के अभाव में एक लुटेरे के हाथों ध्वस्त हुआ और इतिहास से कुछ भी न सीखने के आग्रह में १९६२ में चीन के आक्रमण का शिकार भारत देश हुआ। आज आवश्यकता है कि देश के नवयुवकों को विलासिता के पंक से निकाला जाये उन्हें वीरता की कथाएं सुनाई जाएं, देशभक्ति की भावना उनमें जगाई जाए। स्वतन्त्रता की रक्षा के लिये सुप्त पड़े प्रहरियों को जागरूक किया जाए, ऋषि दयानन्द ने यह कार्य आधुनिक युग में किया,

उसने पूर्ण अहिंसा का मार्ग भी देखा, दुष्टों के दलन का रास्ता भी उसके सम्मुख था। प्रथम को उसने ब्राह्मणों केलिये बनाया और दूसरा मार्ग क्षत्रियों के लिये प्रशस्त किया, उसने गांधी तथा बुद्ध के समान सब को पूर्ण अहिंसक, भिक्षु बनाने की बात नहीं कही, दयानन्द की दृष्टि में क्षत्रिय का महत्व ब्राह्मण से कम नहीं और राज्य कार्य तो वह केवल क्षत्रियों को ही देता है, ब्राह्मण संन्यासी हो सकता है, क्षत्रिय का संन्यास युद्ध क्षेत्र में विजयी होने या कट मरने में है। ऋषि ने क्षात्रत्व से उदासीनता को पाप माना है क्षत्रिय का धर्म हर मूल्य पर युद्ध को जीतना है। वे स्वयं संन्यासी थे परन्तु क्षत्रियों के महत्व को मानते थे तभी तो उन्होंने अजमेर में एक सर फिरे मियां को उत्तर में कहा था कि "यदि मैं औरंगजेब के काल में होता तो भी चुप न रहता, किसी शिवा को थपकी देकर खड़ा कर देता।' इन्हीं विचारों का पोषक और प्रसारक है "आर्य वीर विजय"।

आशा है आर्य जनता इसका हृदय से स्वागत करेगी। मैं श्री वेद प्रकाश जी मन्त्री ह.प्रा. आर्य वीर दल का आभारी हूँ जिनके सतत् प्रयास से आज हम इस पत्र को अपने सम्मुख पाते हैं। आर्य वीरों से भी दो शब्द मुझे कहने हैं। आर्य वीर दल स्वामी श्रद्धानन्द तथा महात्मा हंसराज का स्मारक है। 'आर्य वीर' क्रांति का पुञ्ज होता है। हमारा कर्त्तव्य है कि आर्य जाति की उदासीनता तथा शिथिलता को दूर करके इसकी धमनियों में ठण्डे पड़े रक्त को क्षात्रत्व की भावनाओं से खौला दें। जाति में संगठन, वीरत्व तथा आर्यत्व के पुनीत विचारों को जगाएं। स्थान-स्थान पर दल की शाखाओं द्वारा अपने कर्त्तव्य की पूर्ति करें। मासिक "आर्य वीर विजय" आर्य वीरों को सदैव यह सन्देश देता रहेगा, "वयं राष्ट्रे बलिहृताः स्याम्।"

> **"आर्य समाज ने राष्ट्रीय भावनाओं व राष्ट्रीय आत्मविश्वास को बल प्रदान किया और भारतीयों को अपनी सहायता आप करने का ढंग सिखाया।"**
>
> **—जर्मन लेखक श्री हंस कोहन**

आर्य संस्कृति का रक्षक : आर्य वीर दल

—प्रो. उत्तमचन्द शरर

प्रत्येक राष्ट्र की अपनी संस्कृति होती है, और वह संस्कृति राष्ट्र का मेरु दण्ड कही जा सकती है। संस्कृति के विनाश पर राष्ट्र का विनाश स्वाभाविक है। भारत देश की अपनी संस्कृति है और वह है "वैदिक संस्कृति"। वैदिक संस्कृति पर समय की धूल चढ़ती गई, कभी जैन, बौद्ध वाद की अहिंसा का प्रवाह इसे अपने बहाव में ले गया, कभी अद्वैतवाद, शून्यवाद तथा दुःखवाद ने इस पर अपना रंग चढ़ाया और कभी इस्लाम तथा ईसाईमत का विदेशी पुट इसमें सम्मिलित हो गया। देश के तत्कालीन नेताओं ने इसे अनिवार्य जाना और प्रतिमा पूजन, बाल विवाह, सती प्रथा, छूतछात न जाने कितनी विभीषिकाओं को अपना धर्म मान बैठे। इन कुप्रथाओं से राष्ट्र को कितनी हानि हुई, कितनी बार इन भ्रमों तथा अज्ञान के कारण भारत को पराधीन होना पड़ा, कितनी बार अपनी बहू-बेटियों का अपमान सहन करना पड़ा, इसका साक्षी मुहम्मद बिन कासिम के आक्रमण से लेकर अंग्रेजी राज्य तक का भारत का इतिहास है। स्वामी दयानन्द ने इस मिश्रित संस्कृति के दोष देखे, परिणाम भी देखे और सारे भारत के विरोध पर भी इसे ठुकरा कर मूल वैदिक संस्कृति की स्थापना के लिये आर्य समाज को स्थापित किया। आर्य समाज ने देश में, समाज में, धार्मिक क्षेत्र में जो क्रान्तिकारी परिवर्तन किया है विज्ञ महानुभाव उससे परिचित हैं।

आज वैदिक संस्कृति का रक्षक आर्य समाज कुछ प्रमाद ग्रस्त हो रहा है। उसे वैदिक विचार में अपने पुत्रों-पुत्रियों को स्नान कराने की आवश्यकता भूल सी गई है। आज उसमें वृद्ध महानुभाव जैसे-तैसे गाड़ी के जुएं को खींच रहे हैं। आर्यों के अपने बच्चे वेद की पवित्र विचारधारा से परिचित नहीं हो रहे हैं। इस अवस्था में आर्य समाज के भविष्य की कल्पनामात्र से मन भयभीत हो जाता है, आख़िर इन वृद्ध महानुभावों के पश्चात् वैदिक संस्कृति का रक्षक कौन होगा? क्या यह राष्ट्र एक बार फिर संप्रदायवाद के भ्रमों का शिकार होगा? प्रश्न होता है कि आर्य समाज के उज्ज्वल भविष्य का उपाय? हमारा उत्तर है—आर्य वीर दल। आर्य वीर दल अपने कौशल से युवाओं को आर्य समाज के समीप लाता है, कितने विधर्मी माता पिता की सन्तान आर्य वीर दल के सम्पर्क से आर्य समाजी बनी है, दूसरे शब्दों में राष्ट्र की संस्कृति की रक्षक बनी है।

कुछ और दल भी राष्ट्र में कार्य कर रहे हैं परन्तु दुर्भाग्य से वे वैदिक संस्कृति के मूल तत्त्वों से परिचित नहीं, वे उन भ्रमों तथा अज्ञान परक अन्धविश्वासों का न केवल समर्थन करते हैं, अपितु पालन भी। मुहम्मद बिन कासिम ने जादुई झंडे को गिरा कर ध्वज को देवता मानने वालों का मनोबल गिरा दिया था, और हार कर भी जीत पाई थी, सहस्रों युवकों का वध हुआ, देश पराधीन हुआ, परन्तु वैदिक संस्कृति से अपरिचित दल आज भी ध्वज को प्रणाम करते हैं और उसे गुरु मानते है। ऐसी दशा में देश कितना सशक्त हो, पर भय लगता है कि हमारे अज्ञान से इतिहास स्वयं को फिर न दोहराये।

आर्य वीर दल युवकों में सैनिक भावना भरने के साथ साथ उन्हें अपनी मूल संस्कृति से परिचित भी कराता है, जिससे युवकों के बाजू तो बलिष्ठ होते हैं, हृदय और बुद्धि भी बलवान तथा सशक्त होती है।

अंतः संक्षेप में कहा जाये तो यह कहेंगे। १. राष्ट्र को बचाना है, तो आर्य वीर दल को अपनाओ। २. राष्ट्र रक्षक आर्य समाज को बचाना है, तो आर्य वीर दल को अपनाओ। ३. और स्वयं युवकों को विलासिता से बचाना हो तो आर्य वीर दल को अपनाओ।
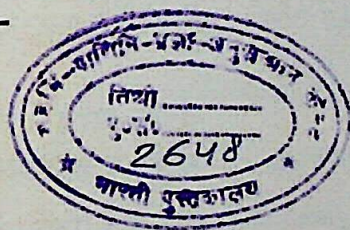
"स्वामी दयानंद जी का सबसे बड़ा अवदान यही है कि उन्होंने राष्ट्र को विवशता के गर्त में गिरने से बचा लिया। उन्होंने वास्तव में भारत की स्वतंत्रता की नींव रखी।"

—सरदार पटेल के अंतिम भाषण से

(लौहपुरुष स्वा. स्वतंत्रानंद सरस्वती जीवन चरित से साभार)

सूक्ति सौरभ
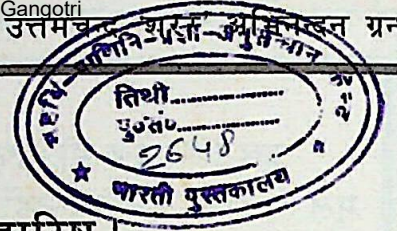
इन्द्रियाणां विचरतां विषयेष्वपहारिषु।
संयमे यत्नमातिष्ठेद्विद्वान्यन्तेव वाजिनाम्॥

अर्थ—जैसे योग्य सारथि घोड़ों को वश में रखता है, कुपथ में नहीं जाने देता, इसी प्रकार मनुष्य बुद्धि द्वारा मन और इन्द्रियों को वश में रखे, इन्हें विषयों में फंसने से सदा रोकने का प्रयत्न करे॥

वेदोपकरणे चैव स्वाध्याये चैव नैत्यके।
नानुरोधोऽस्त्यनध्याये होममन्त्रेषु चैव हि॥

अर्थ—प्रत्येक मनुष्य को वेद का पठन-पाठन, स्वाध्याय, यज्ञ, सध्या आदि नित्य कर्म करने में कभी भी नागा नहीं करनी चाहिए। ऐसे नित्य के शुभ कर्मों को प्रत्येक स्थिति में करना चाहिए।

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्या यशो बलम्॥

अर्थ—नम्रता, सुशीलता और अभिवादन करने का जिसका स्वभाव है, जो सदा विद्वानों और वृद्धों की सेवा करता है, उसकी आयु, विद्या, यश और बल—ये चारों बढ़ते हैं॥

यथा वायुं समाश्रित्य वर्तन्ते सर्वजन्तवः।
तथा गृहस्थमाश्रित्य वर्तन्ते सर्व आश्रमाः॥

अर्थ—जैसे वायु के आश्रय से सब जीव जीवित रहते हैं, वैसे ही गृहस्थियों के आश्रय से ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी और साधु-संन्यासियों का जीवन-निर्वाह होता है॥

सन्तोषं परमास्थाय सुखार्थी संयतो भवेत्।
सन्तोषमूलं हि सुखं दुःखमूलं विपर्ययः॥

अर्थ—सुख चाहने वाला व्यक्ति अत्यन्त सन्तोष को धारण करे। अधिक धन संग्रह न करे। क्योंकि सन्तोष सुख का आधार है और असन्तोष दुःख का मूल है॥

नात्मानमवमन्येत पूर्वाभिरसमृद्धिभिः।
आमृत्योः श्रियमन्विच्छेन्नैनां मन्येत दुर्लभाम्॥

अर्थ—धनवान मनुष्य जब निर्धन हो जाए तो वह न दुःखी हो और न चिन्ता करे, और न मन में हीन भावना आने दे। किन्तु पुनः उच्च भावना से दृढ़ता से धन कमाने के लिए पुरुषार्थ करे॥

नाम : श्री उत्तम चन्द

उपनाम : 'शरर'

पिता : ला. मंगू राम बजाज

माता : श्रीमती उत्तमी देवी

जन्म वर्ष : नवम्बर १९१६

जन्म स्थान : गांव-सीतपुर
तह.-अलीपुर
ज़ि.-मुज़फ़्फ़रगढ़ (पा.

शिक्षा : प्राज्ञ, एम.ए.
(हिन्दी, संस्कृत)

अध्यापन :

१९४८ से ५८ तक रोहतक

१९५८ से ६८ तक पानीपत

१९६८ से ७० तक लुधियाना

१९७० से ७८ तक करनाल

सम्प्रति : सेवानिवृत्त प्राध्यापक,
आर्योपदेशक

प्रकाशित कृतियाँ :

(क) मौलिक कृतियाँ—

१. आर्यों का शिकवा

२. जवाब शिकवा

३. फूल और काँटे

४. इन्द्रधनुष

(ख) अनूदित कृतियाँ—

५. जवाहरे-जावेद

६. सामगान

७. चंद ग़लतियों का अज़ाला

सम्मान : स्वतंत्रता सेनानी
तथा आर्योपदेशक रूप मे
ताम्रपत्र प्राप्त तथा देश
भर की विभिन्न संस्थाओं
से सम्मानित।

"प्रो. उत्तम चन्द 'शरर' उस पीढ़ी के आर्य हैं, जब कोर्ट कचहरी में गीता पर हाथ रख कर शपथ लेना और 'मैं आर्य समाजी हूँ' कहना एक समान था .... जिस पीढ़ी के लिए माँ की लोरी से संन्यास की दीक्षा तक लक्ष्य, निष्कर्ष, सिद्धि सब कुछ आर्य समाज था।"

"शरर" साहब के प्रवचनों में भावों का लालित्य, विचारों की गरिमा और शायरी की मिठास घुली-मिली रहती है जिस पर हर पीढ़ी के पुरुष फ़िदा होते हैं, महिलाएं झूमती रहती हैं। उन को सुनना अपने आपको बड़भागी श्रोता बनाना है।"

—प्रो. चंद्रभानु आर्य

"शरर जी की वाणी बोलती है, लेखनी बोलती है और इनसे अधिक उनका जीवन बोलता है। वह एक ऐसे पुष्प हैं जो समूचे उपवन की शोभा हैं।"

—डॉ. राम प्रकाश

"शरर जी ने आज तक जिन मानदण्डों को मज़बूती से पकड़े रखा है वे अपने आप में अभिनन्दनीय हैं, अनुसरणीय हैं। उनकी वाणी प्रेरक, उनके तर्क प्रखर और व्यक्तित्व सहज है।"

—डॉ. राजे[illegible]

प्रकाशक

प्रो. उत्तमचंद 'शरर' अभिनंदन समारोह समिति,
पानीपत